Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गंगा-पुस्तकमाला का १०१वाँ पुष्प

Mna

A very grand book it should be studied by every young boy girls. [illegible]

मा

(मौलिक सामाजिक उपन्यास)

लेखक

विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक'

(चित्रशाला, मिलन-मंदिर आदि के रचयिता)

Vishambar Nath Sharma

मिलने [illegible]

गंगा [illegible]

३ [illegible]

लखन [illegible]

द्वितीयावृत्ति

सजिल्द ३॥)] सं० [illegible]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गंगा-पुस्तकमाला का १०१वाँ पुष्प

Mna

A very grand book it should be studied by every young boy & girls.

मा

(मौलिक सामाजिक उपन्यास)

लेखक

विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक'

(चित्रशाला, मिलन-मंदिर आदि के रचयिता)

Vishambar Nath Sharma

मिलने [redacted]

गंगा [redacted]

३ [redacted]

लख [redacted]

द्वितीयावृत्ति

सजिल्द ३॥)] सं० १ [redacted]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

acc 13081

Sri Dularalal Barghaw Lahnow

प्रकाशक

श्रीदुलारेलाल भार्गव

अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय

लखनऊ

शाखाएँ और सोल एजेंसियाँ—

गंगा-ग्रंथागार	सिविल लाइंस, अजमेर
गंगा-ग्रंथागार	१९५।१, हरीसन रोड, कलकत्ता
गंगा-ग्रंथागार	सराफ़ा बाज़ार, सागर
गंगा-ग्रंथागार	कोटगेट, बीकानेर
गंगा-ग्रंथागार	नीलकंठ स्ट्रीट, दरियागंज, दिल्ली
गंगा-ग्रंथागार	४२८, लैमिंगटन रोड, बंबई
गंगा-ग्रंथागार	जसवंत-बिल्डिंग्ज़, जोधपुर

तथा प्रचारक—सैकड़ों जगह

मुद्रक

श्रीदुलारेलाल भार्गव

अध्यक्ष गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस

लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

निवेदन

[द्वितीयावृत्ति पर]

हमारे मित्र कौशिकजी हिंदी के बहुत ही प्रतिष्ठित उप-
यास और कहानी-लेखक हैं। उनकी कहानियाँ और उपन्यास
ोग बड़े चाव से पढ़ते हैं। इसलिये इस पुस्तक का हमें
ीघ्र ही दूसरा संस्करण निकालना पड़ा। अब की बार
के दोनो भाग हमने एक में कर दिए हैं, और मूल्य भी
म कर दया है। साल-भर से यह श्रेष्ठ उपन्यास अप्राप्त
ा, इसलिये जिन हदी-प्रेमियों को न मिल सका हो, वे क्षमा
रके अब इसकी प्रति शीघ्र मँगा लें। कारण, अब की बार
ोड़ी ही प्रतियाँ हमने छपवाई हैं।

कवि-कुटीर
२१।७।३४

उलगलाल भार्गव

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहला खंड

एक-एक
ऐसत बात

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहला परिच्छेद

एक ठंडी साँस लेकर सावित्री बोली—"बहन, मेरे ऐसे भाग्य हाँ, जो पुत्र का मुँह देखूँ !"

सावित्री की सखी शांता मुँह बनाकर कहने लगी—"क्यों, भाग्य यों नहीं, अभी तेरी उम्र ही क्या है ? बहुत होगी, तीस वर्ष की होगी। फिर इतनी उम्र में क्या लड़के नहीं होते ? बहन, तू तो ऐसी बातें करती है कि—"

शांता की बात पूरी होने के पूर्व ही सावित्री बोल उठी—"जिनके होने होंगे, उनके होते होंगे, मेरे तो अब होने से रहे।"

'तू तो पागलों की-सी बातें करती है ! देख, अभी परसाल ही मेरी चाची के पहली लड़की हुई है ; उनकी उम्र कुछ न होगी, तो चालीस से कम न होगी—बहन, सच बात तो यह है कि सब कर्मों की बात है, तीस-चालीस पर कुछ नहीं। जिन्होंने अच्छे कर्म किए हैं, उनके होते ही हैं, चाहे चालीस की हों या पचास की।"

"हाँ, तू भी क्या बातें करती है ? कहने लगी कर्म—हुँह— मैं ...ती हूँ।"

"कुछ नहीं ... सच कहती है।"

"मुझे तो आशा नहीं रही।"

...हीं रही ; भला, यह भी कोई बात है।"

...ती, तू तो हवा में महल बना रही है, और मुझे एक-एक ...रस के समान दिखाई दे रहा है। एक अनिश्चित बात ...के बैठ रहना बड़ी ...

...न रहेगी, तो करेगी ... कोई अपने बस की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बात है ? भरोसा करके तो बैठना ही पड़ेगा, और तू कर ही सकती है ?"

"कर क्यों नहीं सकती ?"

"क्या कर सकती है ?"

"तुझे जब तक सारी बातें खोलकर न सुनाऊँगी, तब तक समझ में मेरी बात नहीं आवेगी।"

"तो फिर बता न, क्या बात है ?"

"सुन, यह तो तू जानती ही है कि उनकी (सावित्री के की) उम्र चालीस के ऊपर है, और आजकल जो समय है, उ देखते चालीस के ऊपर पहुँच जाने पर आदमी का चल-चलाव जाता है। आजकल जब जवानों ही का कोई ठीक नहीं, तो बूढ़ों कौन कहे। अच्छा, अब यदि भगवान् न करे, कल को उनकी अ मिच गईं, तो मेरी क्या दशा होगी ?"

"क्या दशा होगी !"

"और क्या, मुझे कहीं बैठने का ठिकाना रहेगा ?"

"क्यों, रहेगा क्यों नहीं ? ईश्वर का दिया सब कुछ है। दू है, जायदाद है, यह सब कहाँ चला जायगा ? क्या वह छाती धर ले जायँगे ?"

"उँह, यही तो तुझे ख़बर नहीं ; अरी पगली, [illegible] कहत मुझे एक कौड़ी नहीं मिलेगी।"

"क्यों नहीं मिलेगी ?"

"यह सब तो देवर-जेठ छीन लेंगे।"

"क्यों, वे क्यों छीन लेंगे ?"

"अरी, यह आजकल का क़ानून है कि देवर-जेठ के आ हक़ नहीं होता—न-जाने [illegible] गोड़े ने यह क़ानून चला [illegible] शांता [illegible] ऊई बहन,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उलटा क़ानून—आग लगाऊँ इस निगोड़े क़ानून को !? ।"

यह क़ानून चलाया, उस निगोड़मारे ने यह न सोचा निधी हो गई, देवर-जेठों को सब मिल जायगा, तो स्त्रियाँ क्या खाकर ।

भगवान्, क्षमा-क्षमाकर कोई मरे, और जे कोई जाय—और तिन में रात-दिन अपने मर्दों के साथ जलती-मरती हैं, उन्हें एक कौड़ी न मिले, वाह रे क़ानून, ऐसा अनोखा क़ानून तो आज तक सुना नहीं—तो क्यों बहन, स्त्रियों को कुछ भी नहीं मिलता ।"

"केवल रोटी-कपड़ा मिलता है ।"

"ख़ैर, चलो इतना भी बहुत है ।"

सावित्री भृकुटी चढ़ाकर बोली—"हूँ—बहुत है, तेरे लिये बहुत होगा ।"

"बहुत तो नहीं, पर कुछ न मिलने से इतना मिलना भी बहुत है—आख़िर किया क्या जाय ?"

"किया क्यों नहीं जाय, जो आज मेरे पुत्र होता, तो मुझे कोई सोच ही न था ।"

"क्यों, सोच क्यों नहीं था ?"

"फिर तो देवर-जेठों को एक कौड़ी नहीं मिल सकती, सब लड़के को मिलता ।"

"क्या यह भी कोई क़ानून है ?"

"हाँ—जो पुत्र हो, तो सब उसी को मिलता है, देवर-जेठों को कुछ नहीं मिलता ।"

शांता आँखें विस्फारित करके मुस्किराती हुई बोली—"ओहो—अब मैं सब समझ गई । हाँ बहन, ऐसी दशा में तेरा पुत्र के सोच करना ठीक ही है ।"

"अब तू ही बता, ऐसी दशा में केवल आशा पर भरोसा करके बैठना कहाँ तक ठीक है ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उदास करके बोली—"नहीं बहन, ऐसी दशा में तो यह बात है ? तु मैं फिर तुझसे पूछती हूँ कि तू कर ही क्या सकती है ?"

सकती मैं भी सोच रही हूँ, क्या करूँ, क्या न करूँ।"

...ा, उनसे भी कभी यह चर्चा चलाई ?"

"नहीं, अभी तक तो चलाई नहीं, डर लगता है—वह अपने जी में कहेंगे कि यह हर समय मुझे मरा ही मनाया करती है।"

"नहीं, इस ढंग से कह कि वह ऐसा न सोच सकें।"

"देखो, आजकल में कहूँगी । (ठंडी साँस भरके) मैंने एक राह निकाली है, तू भी उस पर विचार करके देख कि वह ठीक है या नहीं।"

"कौन-सी राह ?"

"यह तो मैं समझ चुकी कि अब मेरे पुत्र होना नहीं—इस कारण अब अपनी बचत के लिये यही ठीक है कि कोई लड़का गोद ले लूँ। क्यों, तेरी क्या सलाह है ?"

"हूँ" कहकर शांता कुछ क्षण तक चुपचाप बैठी सोचती रही ; तत्पश्चात् बोली—"हाँ, यही ठीक है, इसे छोड़ और हो ही क्या सकता है ?"

सावित्री ने कहा—"और कुछ नहीं हो सकता ।"

शांता जाने के लिये तैयार होने का भाव दिखाती हुई बोली—"तो फिर जो कुछ करना हो, जल्दी कर डाल ।"

"मैं आज ही कल में उनसे कहती हूँ ।"

शांता ओढ़ने की चादर उठाकर बोली—"अच्छा, तो अब आज्ञा दो, तीन बज गए, वह आते होंगे ।"

सावित्री मुस्किराकर बोली—"वह तो कहीं चार-पाँच बजे आवेंगे क्या आजकल दफ्तर जल्दी बंद हो जाता है ?"

"नहीं, जल्दी तो नहीं बंद होता ।"

"तो फिर ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"अभी उनके जलपान के लिये कुछ बनाना-बनूना है।"

शांता उठ खड़ी हुई, साथ ही सावित्री भी उठकर खड़ी हो गई, और बोली—"अब कब मिलोगी?"

चादर ओढ़ते हुए शांता ने उत्तर दिया—"तीन-चार दिन में आऊँगी।"

दूसरा परिच्छेद

बाबू व्रजमोहनलाल कपूर मध्यम श्रेणी के आदमी हैं। [illegible] के खत्री-समाज में आपका अच्छा आदर है। आप कपड़े का दूसरे का वंश करते हैं, कुछ जायदाद भी है। इन दोनों से आपको [illegible] सहायक और मासिक की आमदनी हो जाती है। आप पढ़े-लिखे तो [illegible] ये तो पुत्र को नाईंथ-क्लास तक अँगरेज़ी जानते हैं, हिंदी तथा उर्दू [illegible] गृहस्थी का एक लिख-पढ़ सकते हैं, किंतु निरंतर व्यवसाय की चालें [illegible] कारण और उम्र में चालीस के ऊपर होने से कुछ सांस [illegible] के हँसने पर कुछ रखने के कारण आपमें बुद्धि की कुछ अधिक कमी नहीं [illegible] बात थी?" बाबू साहब को संसार में आए हुए चालीस वर्ष के लग [illegible] कहावत हुई कि और आजकल का जल-वायु देखते हुए यह वह अवस्था है [illegible] पुत्र का आवश्यक [illegible] वन के उद्यान से निकलकर बुढ़ापे की मरु-भूमि में पैर [illegible] किंतु गृहस्थी के भार अथवा और किसी चिंता ने आपके चेहरे [illegible] नहीं? बुढ़ापे का रंग आवश्यकता से कुछ अधिक फेर दिया है।

बाबू साहब के परिवार में छ मनुष्य हैं—एक स्वयं आप, दूसरी [illegible] मोच [illegible] की स्त्री, तीसरा छोटा भाई, जिसकी वयस २५ वर्ष के लग [illegible] न मैं उन [illegible] छोटे भाई की स्त्री, पाँचवीं एक विधवा भ्रातृ-वधू [illegible] बुरे-भले उपाय [illegible] भाग और छठी एक विधवा बहन, वयस [illegible] कि यदि पुत्र हो, बड़ी [illegible] तिरिक्त एक भाई और हैं। वह आप [illegible] यदि न हो, तो हरि-इच्छा। [illegible] किंतु इलाहाबाद-ज़िले की किसी तहसी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust
संसार में हरएक मनुष्य को तो सब सुख मिलते ही नहीं, बहुत-से आदमी ग़रीब होते हैं, तो क्या वे संसार में रहते नहीं, या वे रुपए के लिये दिन-रात रोया ही करते हैं ? हमारी दूकान के चपरासी ही को देख लो। उसके तीन-चार लड़के हैं, किंतु रुपया न होने से वे ही लड़के उसे दुःखदायी हो रहे हैं।"

सावित्री सूखी हँसी हँसकर बोली—"भगवान् की माया भी समझ में नहीं आती। जहाँ लड़कों की चाह नहीं, वहाँ तो लड़कों के ढेर लगे हैं, और जहाँ चाह है, वहाँ चूहे का बच्चा तक नहीं—वाह रे ईश्वर !"

"यही तो तमाशा है। अब उस चपरासी के हृदय से कोई पूछे। सच पूछो, तो उसकी दरिद्रता उन लड़कों के कारण और भी बढ़ गई है।"

सावित्री मुँह चढ़ाकर बोली—"अजी, बैठो भी, कहने लगे, लड़कों के कारण बढ़ गई—हुँह—भगवान् करे, अच्छे रहें, सयाने होकर चारों कमाएँगे, तब उसे जान पड़ेगा कि हाँ, लड़के भी संसार में कोई पदार्थ होते हैं।"

ब्रजमोहन हँसकर बोले—"तुम भी क्या बातें करती हो ? बाबा मरेंगे, तब बैल बटेंगे, जब तक वे सयाने होंगे, तब तक तो उनके कारण उस बेचारे के सब करम हो जायँगे।"

"तो फिर सेवा ही से मेवा मिलता है।"

"वाह री सेवा, और वाह रे मेवा।"

"तो तुम्हारा-सा कठोर जी सबका तो है नहीं।"

"मेरा जी कठोर है ?"

"और नहीं तो क्या !"

"खैर, तुम यही समझो।"

सावित्री गंभीर होकर बोली—"अच्छा, ये बातें तो हुआ ही करेंगी—अब तुम्हें एक काम करना पड़ेगा।"

"कौन-सा काम ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"पहले यह बताओ कि तुमने कभी यह भी सोचा कि—ईश्वर वह दिन मुझे न दिखावे—यदि कल को तुम्हारी आँखें मिच गईं, तो मेरी क्या दशा होगी ?"

"क्यों, क्या दशा होगी ?"

"घस्सू की चाची का हाल तो तुम्हें मालूम ही है, बस, समझ जाओ।"

व्रजमोहन कुछ क्षण तक सिर झुकाए कुछ सोचते रहे, तत्पश्चात् बोले—"तुम्हारा यही मतलब है न कि मेरे पश्चात् तुम्हारे देवर सब छीन-छान लेंगे और तुम्हें कष्ट देंगे ?"

"और क्या, यह तो होगा ही।"

"हूँ" कहकर व्रजमोहन फिर चिंता में पड़ गए।

सावित्री ने कुछ क्षण तक पति के बोलने की प्रतीक्षा करके कहा—"क्या तुम्हें इसमें कुछ संदेह है ?"

व्रजमोहन बोल उठे—"नहीं, संदेह तो नहीं है, किंतु—"

"किंतु क्या ?"

"ऐसा हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता।"

"मान लो, ऐसा ही हुआ।"

"अच्छा, तो तुम्हारा मतलब क्या है ? क्या तुम यह चाहती हो कि पुत्रोत्पत्ति के लिये मैं दूसरा विवाह—"

सावित्री कानों पर हाथ रखकर जल्दी से बोल उठी—"हे भगवान्, मैं ऐसी बात सुनना तक नहीं चाहती, मुझे मर जाना स्वीकार है, पर सौत का मुँह देखना—"

सावित्री की बात पूरी होने के पहले ही व्रजमोहन बोल उठे—"तभी फिर तुम क्या चाहती हो, खुलकर कहो न।"

"हाँ, यही चाहती हूँ कि अपने जीते-जी कोई ऐसा प्रबंध कर दो मेरी दुर्दशा न हो।"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"दुर्दशा क्यों होगी ? तुम्हें रोटी-कपड़ा तो मिलेगा ही।"

"हे भगवान्, क्या तुम यह समझते हो कि मैं ये सारी बातें रोटी-कपड़े ही के लिये कर रही हूँ ? रोटी-कपड़े की मुझे क्या चिंता है ? रोटी-कपड़ा देने को तो अभी राधे (सावित्री का छोटा भाई) ही काफ़ी है। मैं यह चाहती हूँ कि तुम्हारी गाढ़ी कमाई, मेरी और तुम्हारी जोड़ी हुई गृहस्थी तीन-तेरह न हो। भला, सोचो तो सही, जो धन-दौलत हमने एक-एक पैसा करके, पेट काट-काटकर, इकट्ठा की है, और जिसकी इस समय तुम्हारी दया से मैं सोलौ (सोलहो) आने की मालिक बनी बैठी हूँ, वही तुम्हारे पीछे बरात की फुलवारी के समान लुट जाय, और मैं बैठी टुकुर-टुकुर देखा करूँ; यह सब भला मुझसे कैसे देखा जायगा ?"

ब्रजमोहन का मुख अधिक गंभीर हो गया, उनकी भौहें तन गईं। उनके मुख का भाव देखने से मालूम होता था कि उनके हृदय पर सावित्री के शब्दों का बड़ा प्रभाव पड़ा है।

सावित्री फिर कहने लगी—"जिसके पास चार पैसे होते हैं, उसे भी उनका मोह होता है। फिर भला हमें-तुम्हें अपनी इतनी बड़ी गृहस्थी का मोह क्यों न होना चाहिए ? दूर क्यों जाओ, अपने भाई तहसीलदार ही को न देख लो, इतना कमाते-धमाते हैं, किंतु तुम्हें भी कभी चार रुपए भेजते हैं ? जो कुछ करते हैं, अपने ही बाल-बच्चों के लिये करते हैं। तुमसे तो उलटे कुछ ले ही लेते हैं। संसार में कोई किसी का मीत नहीं, सब अपना ही भला चाहते हैं; लेने के लिये सब खड़े हो जाते हैं, देने को कोई भी नहीं।"

ब्रजमोहन एक लंबी साँस छोड़कर बोले—"निस्संदेह तुम्हारी बात बहुत ठीक है। मैंने इन पर कभी विचार ही नहीं किया। न कभी तुमने ही कुछ चर्चा चलाई।"

"चर्चा क्या चलाती ? मैं तो आसरे-भरोसे में रहे

CC-0. Public Domain. Digitized by eGangotri

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"कल की बातों से तो ऐसा ही जान पड़ता था।" अथवा

व्रजमोहन कुछ गंभीर होकर बोले—"नहीं, नहीं, यह तुम्हारा भ्रम है। बात यह है कि मैं जिस काम को करता हूँ, पहले उसकी छान-बीन कर लेता हूँ।"

"ख़ैर, यों ही सही। ख़ूब छान-बीन कर लो। रघुनाथप्रसाद के पास कब जाओगे?"

"बस, अब जाता हूँ" कहकर व्रजमोहन अपनी बैठक में चले आए। बैठक में बनवारीलाल बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे। बड़े भाई के आने पर हुक्का उनकी ओर सरका दिया। व्रजमोहनलाल हुक्के की निगाली हाथ में लेकर बनवारी से बोले—"ज़रा बदलू को तो बुलाओ।"

बनवारी ने आवाज़ देकर बदलू को बुलाया। बदलू के आने पर व्रजमोहनलाल ने उससे कहा—"कोचवान से कहो, गाड़ी जोत लावे।"

बदलू के चले जाने पर बनवारी ने भाई से पूछा—"कहीं जाइएगा क्या?"

व्रजमोहनलाल ने हुक्का पीते-पीते केवल "हूँ" कर दिया।

दस मिनट तक व्रजमोहनलाल चुपचाप हुक्का पीते रहे। तत्पश्चात् उसे छोटे भाई की ओर खिसकाकर बोले—"तुम चलकर दूकान खुलवाओ। मैं ग्यारह बजे तक आऊँगा। और देखो, आज जाते ही रामसरन-रामविलास के यहाँ हिसाब उतारकर भेजना। उन्होंने आज भुगतान देने को कहा था। और, बुलाक़ीदास के यहाँ भी आदमी जाना।"

"बुलाक़ीदास के यहाँ आज भेजने से क्या होगा? उन्होंने तो कल का वादा किया है।"

"हाँ, ठीक है, मुझे ख़याल नहीं रहा। उनके यहाँ न भेजना।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और, कल श्यामू बाबू के यहाँ आदमी भेजा था, उन्होंने क्या कहा ?"

"पंद्रह दिन में देने को कहा है। पर वह देवें-दिलावेंगे नहीं, उन पर नालिश करनी पड़ेगी।"

"मैंने तो तुमसे पहले ही कहा था, पर तुम न माने।"

"क्या कहूँ, मैंने मित्र समझकर उनका विश्वास किया था, किंतु—"

"भैया, तुम अभी बच्चे हो, क्या जानो ! भला, ऐसे मित्रों का विश्वास करना चाहिए ? हरे राम-राम ! ये सब मतलब के यार हैं। फिर दस-पाँच रुपए की बात होती, तो कोई चिंता नहीं थी, देते-देते न देते-न देते। हर हुज्जा। कोई परवा नहीं थी। परंतु एकदम से ८०) रु० का कपड़ा उठा दिया। खैर, अब तो जो होना था, हो ही गया, पर आगे ध्यान रखना। ऐसा लड़कपन कभी न करना।"

बनवारी सिर नीचा करके बोला—"नहीं, अब क्या हर एक से धोका खाऊँगा ?"

उसी समय बदलू ने आकर कहा—"बाबूजी, गाड़ी आ गई।"

"अच्छा, कपड़े लाओ" कहकर ब्रजमोहनलाल खड़े हो गए। ब्रजमोहनलाल कपड़े पहनकर गाड़ी पर आ बैठे, और कोचवान से कहा—"वकील साहब के यहाँ चलो।"

"बहुत अच्छा" कहकर कोचवान ने रास हिलाई। जब तक गाड़ी चलती रही, तब तक ब्रजमोहनलाल रात की बातों पर विचार करते रहे। कभी सावित्री की बातें याद करके मन-ही-मन उसकी दूरदर्शिता की सराहना करते, कभी यह सोचकर कि उनके मरने के पश्चात् उनकी गाढ़ी कमाई छोटे भाई हड़प जायँगे, उनके माथे पर बल पड़ जाते, कभी अपनी संतान-हीनता पर ठंडी साँसें भरते इत्यादि इत्यादि। यदि गाड़ी चलती रहती, तो वह न-जाने कब तक विच

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सागर में गोते खाते रहते, किंतु उनके सौभाग्य-वश कहिए अथवा दुर्भाग्य-वश गाड़ी रुक गई। गाड़ी रुकते ही ब्रजमोहनलाल चौंक-से गए, कोचवान से बोले—"क्या पहुँच गए?"

"हाँ हुज़ूर", सुनकर गाड़ी से उतरे, और वकील साहब के मकान में पहुँचे।

बाबू रघुनाथप्रसाद वकील इनके सहपाठी और मित्र थे, इसलिये यह अपनी भली-बुरी सब बातें उनसे कह दिया करते थे। इनके मुक़द्दमे की पैरवी भी रघुनाथप्रसाद ही किया करते थे।

उस समय वकील साहब अपने मवक्किल से बातचीत करने में मग्न थे, इसलिये ब्रजमोहनलाल चुपचाप एक कुर्सी पर बैठ गए।

वकील साहब के मवक्किलों में से एक ने कहा—"मौक़े-वारदात पर तो कोई आदमी था नहीं।"

वकील साहब मुँह बनाकर बोले—"न हो, इससे होता क्या है, आपको दो-चार आदमी ऐसे तो मिल सकते हैं, जो अदालत में आपकी जानिब से गवाही दे सकें?"

"ऐसे आदमी दो-चार क्या, कितने ही मिल सकते हैं, मगर जब उन्होंने कुछ देखा ही नहीं, तो वे क्या—।"

कुछ बिगड़कर वकील साहब बोले—"देखा हो या न देखा हो, इससे कुछ मतलब नहीं, हम जो कुछ उन्हें सिखावें, उनको वह कह देना चाहिए। बस, काफ़ी है।"

"हाँ, यह तो हो सकता है।"

"तो बस, काफ़ी है। अब आप तशरीफ़ ले जा सकते हैं। परसों इतवार है, आप उन लोगों को हमारे पास लाइएगा।"

यह कहकर वकील साहब दूसरे आदमी की ओर घूमकर बोले—"हाँ साहब, आपकी आज तारीख़ है। कहिए, मेहन-ताना लाए?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"आधा मेहनताना तो दे ही चुका हूँ। आज फ़ैसला हो जाने दीजिए, बक़िया मेहनताना और शुकराना साथ-ही-साथ—"

"अब आप राग छाए। इस बात से मुझे सख़्त नफ़रत है। मैं तो खरा व्यवहार रखता हूँ। पहले बक़िया मेहनताना लाइए, फिर बात कीजिए। मेरे पास फ़िज़ूल वक़्त नहीं है।"

"बही-खाता अदालत ने तलब किया था, सो लेता आया हूँ।"

किंतु वकील साहब ने उस बेचारे की बात ही न सुनी, तीसरे मवक्किल की ओर घूमकर बोले—"हाँ साहब, आप क्या कहते हैं?"

उसने कहा—"मेरे बयान-तहरीरी दाख़िल होंगे।"

"ओ, ठीक है" कहकर वकील साहब सामने तख़्त पर बैठे हुए दो मुहर्रिरों में से एक की ओर देखकर बोले—"मुंशीजी, आपके बयान-तहरीरी ले लीजिए; (मवक्किल से) लाइए साहब, लिखा दीजिए।"

इतने में उसी दूसरे मवक्किल ने जेब से पचीस रुपए निकालकर वकील साहब के सामने रख दिए, और बोला—"लीजिए बक़िया मेहनताना। आप मानते ही नहीं, मजबूरी है।"

वकील साहब हँसकर बोले—"आप भी ग़ज़ब करते हैं। निकालकर रख ही दिए। मैंने तो फ़क़त दिल्लगी में कहा था, आप कुछ नामो-तिबर थोड़े ही हैं। ख़ैर, हाँ, तो बही-खाता आप ले आए हैं न?"

"हाँ, लाया हूँ।"

"तो बस ठीक है, आप लाइए और ठीक ग्यारह बजे कचहरी आ जाइएगा, क्योंकि जहाँ तक मेरा ख़्याल है, आपका मुक़द्दमा अव्वल वक़्त पेश होगा।"

"मैं साढ़े दस ही बजे आ जाऊँगा।"

"और भी अच्छी बात है।"

मवक्किल से बात कर चुकने पर अँगड़ाई लेते हुए वकील सा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ने अपने चारो ओर नज़र डाली। सामने व्रजमोहनलाल को बैठे देख मुस्किराकर कुछ उच्च स्वर से बोले—"अरे! आप कब आए? मैंने देखा ही नहीं।"

व्रजमोहनलाल ने भी मुस्किराकर उत्तर दिया—"मुझे आए पंद्रह मिनट हुए होंगे, किंतु आप अपने असामियों से बातचीत कर रहे थे, इसलिये मैंने आपका ध्यान आकर्षित करना उचित न समझा।"

"कहिए, घर में सब कुशल है?"

"सब आपकी दया है।"

"यार, तुम भी झूठों के सिरताज हो! सनीचर को थिएटर चलने का वादा किया था। मैं साढ़े आठ बजे तक राह देखता रहा, पर आपका पता ही नहीं।"

"उस दिन दूकान से देर को उठा, इसी कारण न आ सका।"

"भले आदमी, कभी-कभी तो दूकान का पिंड छोड़ दिया करो। आख़िर यह कमा-कमाकर किसके लिये रख रहे हो? कोई लड़का-बाला भी तो नहीं।"

वकील साहब के अंतिम वाक्य व्रजमोहनलाल के हृदय से टकरा गए। उनके अंतस्तल से एक दीर्घ निःश्वास निकली। मुख मलिन हो गया। उस मलिनता को शुष्क मुस्किराहट के नीचे दबाने की चेष्टा करते हुए व्रजमोहनलाल बोले—"कमाना-धमाना क्या, किसी-न-किसी प्रकार जीवन के दिन काट रहे हैं।"

"हूँ, जीवन के दिन काट रहे हो? यह नहीं कहते कि लाखोंपके वारे-न्यारे कर रहे हो। यार, अब तो मेरा भी जी चाहत मिलेगा वकालत छोड़कर यही काम करूँ।"

"अरे, कहीं ऐसा ग़ज़ब भी न करना! इसमें क्या धरा एक प्रश्न मर दूकान में पिसोगे; रात के ग्यारह बजे छुट्टी मिले जरा मनुष्य के वकालत की-सी पैदा नहीं।" यह स्वभाव है कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह अपनी कष्ट-संचित कमाई को—चाहे उसके चले जाने अथवा रहने से उसे कोई हानि-लाभ न हो—सहज में नहीं त्याग सकता।"

वकील साहब हँसकर बोले—"हाँ, यह बात तो ठीक ही है। ख़ैर, अब मैं आपके प्रश्न का उत्तर देता हूँ। जो कुछ आपके पास नगद रुपया है, उसे आप अपनी स्त्री के नाम से किसी बैंक में जमा कर दीजिए। ज़ेवर पर किसी का अधिकार हो नहीं सकता। वह स्त्री की संपत्ति है। रही जायदाद, उसमें से भी आप एक मकान उसके रहने के लिये उसके नाम लिख सकते हैं।"

"और उसके सिवा जो मकानात हैं, उनका क्या होगा? और दूकान के बारे में आपकी क्या राय है?"

"उन मकानात और दूकान पर आपके भाइयों का अधिकार होगा।"

"और दूकान ही में सारा रुपया लगा है। नगद क्या है, दो-चार हज़ार पड़े रहते हैं।"

"दूकान में कितना रुपया लगा होगा?"

"नगद तो पचास हज़ार लगा है, किंतु माल ८०-९० हज़ार से कम का नहीं रहता।"

"ख़ैर, उसे जाने दीजिए। पचास हज़ार नगद दूकान में है; क्यों न?"

"हाँ।"

"उसकी केवल यह युक्ति हो सकती है कि या तो आप दूकान उठा डालिए, और वह रुपया भी अपनी स्त्री के अधिकार में दे दीजिए, और या—"

वकील साहब की बात काटकर ब्रजमोहनलाल बोले—"दूकान उठा डालना तो असंभव है। एक तो बड़ी बदनामी होगी, दूसरे घर का ख़र्च चलना दूभर हो जायगा; क्योंकि जब तक मैं जीवित हूँ, मुझे अपनी शान और ठाट-बाट रखने ही पड़ेंगे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"मकानात से आपको कितनी आमदनी है ?"

"अजी, यही कोई डेढ़ सौ मासिक, और वह भी तब, जब कोई मकान खाली न रहे।"

"ख़ैर, सवा सौ का औसत रख लीजिए।"

"हाँ, सवा सौ रखिए। किंतु इस आमदनी से मेरा ख़र्च नहीं चल सकता। मेरा ख़र्च तो इस समय चार-पाँच सौ रुपए मासिक का है।"

"तो ऐसी दशा में दूकान का उठा डालना निस्संदेह कठिन है। ख़ैर, दूसरी युक्ति यह हो सकती है कि आप दूकान से थोड़ा-थोड़ा रुपया खींचते रहें, और उसे अपनी स्त्री के नाम से कहीं जमा करते रहें।"

"हाँ, यह भी हो सकता है, किंतु—"

"किंतु क्या ?"

"यह बात मुझे कुछ अच्छी नहीं लगती।"

"तो इसके अलावा और आप क्या चाहते हैं ?"

"कोई और युक्ति नहीं निकल सकती ?"

"मेरी समझ में तो इससे अच्छी और कोई युक्ति नहीं।"

"हम लोगों ने एक युक्ति सोची है।"

वकील साहब मुस्किराकर बोले—"तो कहिए, सारा परामर्श गाँठकर आप मेरे पास आए हैं !"

ब्रजमोहनलाल ने भी मुस्किराकर कहा—"किंतु जब तक आपकी मुहर न लग जाय, तब तक वह परामर्श कार्य-रूप में परिणत नहीं हो सकता।"

वकील—"अच्छा, कहिए, आपने क्या सोचा है ?"

ब्रजमोहन—"हमारी स्त्री का कहना है कि यदि कोई लड़का गोद ले लिया जाय, तो सब बातों का भय जाता रहे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वकील साहब मुँह बनाकर बोले—"हाँ, यह भी हो सकता है, किंतु मेरी समझ में यह कोई अच्छी युक्ति नहीं।"

व्रजमोहनलाल कुछ हतोत्साह होकर बोले—"क्यों, इससे हानि क्या है?"

"हानि यह है कि मान लीजिए, वह लड़का दुश्चरित्र निकल गया, तो?"

"यह तो कोई बात नहीं। जब अच्छी शिक्षा दी जायगी, तो दुश्चरित्र कैसे निकल सकता है?"

"यह न कहिए। अच्छा, हमें भी जाने दीजिए। मान लीजिए, उसकी अपनी मा अर्थात् आपकी स्त्री से न बनी।"

"अजी, नहीं, कम उम्र का लड़का लिया जायगा। जब वह उसे पाले-पोसेगी, लाड़-प्यार करेगी, तो उसे भी कुछ प्रेम हो ही जायगा।"

"हाँ, हो सकता है। किंतु दोनो ही बातों की संभावना है। उसे सच्चरित्र बनाना, उसके हृदय में अपने प्रति प्रेम उत्पन्न करना, यह सब आप दोनों ही पर निर्भर है।"

"निस्संदेह, आपका यह कथन ठीक है। तो आपकी समझ में यह युक्ति भी अच्छी है?"

"हाँ-हाँ, अच्छी क्यों नहीं।"

"तो बस, यही ठीक है।"

"आपके छोटे भाइयों के लड़के-बड़के हैं?"

"बनवारी के तो अभी कोई लड़का-बड़का हुआ नहीं। उसके गौना अभी परसाल ही हुआ है। हाँ, केदारनाथ के एक लड़का और दो लड़कियाँ हैं।"

"जब एक ही लड़का है, तो क्या हो सकता है?"

"मैं आपका अभिप्राय नहीं समझा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"मेरा मतलब यह है कि यदि उनके दो लड़के होते, तो उन्हीं में से एक को आप गोद ले लेते। यह अधिक अच्छा रहता।"

"हाँ, किंतु जब है ही नहीं, तो क्या किया जाय?"

"एक बात का और ध्यान रखिएगा।"

"वह क्या?"

"जहाँ तक हो सके, तीन-चार वर्ष से अधिक उम्र का लड़का न लीजिएगा। किसी ग़रीब का लड़का हो, पितृहीन हो, और उसके भाई-बहन जहाँ तक संभव हो, कम हों।"

"इससे क्या लाभ?"

"मेरी बात मानिए, लाभ आपको स्वयं मालूम हो जायँगे।"

"आख़िर कुछ तो बताओ।"

"अच्छा, बताए देता हूँ, तुम भी न क्या याद करोगे! सुनो, कम उम्र होने का लाभ तो तुम्हें मालूम ही है, और वह यह कि उसे जैसी चाहोगे, शिक्षा दे सकोगे। ग़रीब होने से यह लाभ होगा कि एक तो ग़रीब अपना लड़का सहर्ष दे देगा, क्योंकि वह देखेगा, तुम्हारे यहाँ जाने से उसके लड़के को सब प्रकार के सुख मिलेंगे। दूसरे, इतनी बड़ी संपत्ति का मालिक होगा। पिता और भाई-बहन न होने का यह लाभ होगा कि जितना ही उस लड़के के, उसके निज के, नाते-रिश्तेदार कम होंगे, उतना ही अधिक वह आपका होकर रहेगा।"

ब्रजमोहनलाल प्रसन्न-मुख होकर बोले—"वास्तव में ये बातें तो आपने बड़े मार्के की बताईं।"

उसी समय घड़ी ने टन-टन करके ९ बजाए। ब्रजमोहनलाल अपनी टोपी उठाकर बोले—"अच्छा, अब मैं आपका अधिक समय न लूँगा, क्योंकि आपको कचहरी जाना है, और मेरा काम भी पूरा हो गया।"

कहकर ब्रजमोहनलाल उठ खड़े हुए। वकील साहब भी उठे, और ब्रजमोहनलाल की पीठ पर हाथ मारकर बोले—"अब कब मिलोगे?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"आज कौन दिन है ? बृहस्पति। अच्छा, अब इतवार ही को मिलूँगा। दोपहर में सोते तो नहीं हो ?"

"नहीं।"

"तो बस, दोपहर ही में आऊँगा।"

यह कहकर ब्रजमोहनलाल वकील साहब से बिदा हुए।

चौथा परिच्छेद

"चंदो, चंदो।"

"हाँ भैया।"

"ज़रा यहाँ तो आना।"

"आई" कहने के कुछ क्षण पश्चात् विधवा चंद्रमोहनी अपने भाई ब्रजमोहनलाल के पास आई।

उस समय ब्रजमोहनलाल अपनी पत्नी के कमरे में अकेले बैठे हुए थे। चंदो के आने पर उन्होंने कहा—"ज़रा बैठो, तुमसे कुछ बात करना है।"

कुछ कौतूहल-भरे नेत्रों से भाई की ओर ताकती हुई चंदो उनके सामने बैठ गई, और बोली—"कहो, क्या बात है ?"

ब्रजमोहनलाल कुछ देर तक सिर झुकाए चुपचाप बैठे रहे। तत्पश्चात् सिर उठाकर बोले—"तुमसे कुछ सलाह लेनी है।"

"कैसी सलाह ?"

"तुम्हें यह तो मालूम ही होगा कि तुम्हारी भावज पुत्र के लिये कितनी चिंतित रहती है ?"

बड़े भाई के मुख से एक ऐसी बात सुनकर, जो स्त्रियों के उस हृदयगत भाव से संबंध रखती है, जिसे हम लज्जा अथवा संकोच कह सकते हैं, चंदो सिर नीचा करके सकुचाती हुई बोली—"हाँ, उन्हें चिंता तो बहुत कुछ है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ब्रजमोहनलाल समझ गए कि चंदो इस विषय पर बातचीत करने में संकोच करती है। अतएव वह बोले—"देखो चंदो, यह मैं जानता हूँ कि मेरा इस विषय पर तुमसे बातचीत करना हमारे नाते के कुछ विरुद्ध पड़ता है, किंतु आगे जो कुछ मैं कहना चाहता हूँ, वह साधारण बात है। उस पर खुलकर बातचीत करने में तुम्हें कुछ संकोच न करना चाहिए। सुनो, तुम्हारी भाभी के अब पुत्र होने की कोई आशा नहीं, इस कारण हमने एक युक्ति सोची है।"

चंदो बोल उठी—"जो युक्ति आपने सोची है, वह मैं कुछ-कुछ समझ गई।"

"भला क्या समझीं ? कहो तो।"

"दूसरा विवाह—"

ब्रजमोहनलाल ज़ोर से हँस पड़े। फिर अकस्मात् गंभीर होकर बोले—"नहीं, यह कोई युक्ति नहीं। एक दुर्बल आशा के भरोसे पराई बेटी का जीवन नष्ट करना बड़ी बुरी बात है। मैं ऐसा कदापि नहीं कर सकता।"

चंदो कुछ विस्मित होकर बोली—"तो फिर कौन-सी युक्ति है ?"

"लड़का गोद लेने की।"

"ऐं ! लड़का गोद लेने की ?"

"हाँ, लड़का गोद लेने की। यह कोई नई बात नहीं, बहुत लोग ऐसा करते हैं। क्यों, तुम्हें क्या यह नापसंद है ?"

"नहीं, नापसंद क्यों होगी। आप मुझसे अधिक समझदार हैं, जब आप ठीक समझते हैं, तो ठीक ही है।"

"मैं केवल यह पूछना चाहता हूँ कि तुम्हें यह बात स्वीकार है न ?"

"स्वीकार क्यों नहीं, अच्छी बात है, कोई नाम चलानेवाला तो ना ही चाहिए।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"अच्छा, अब यह बताओ कि तुम्हारी जान में कोई लड़का है ?"

"मेरी जान में ?"

"हाँ, मेरा मतलब है कि तुम्हारी सुसराल के रिश्ते-नाते में कोई ऐसा लड़का मिल सकता है ?"

सुसराल का नाम सुनते ही चंदो ने एक ठंडी साँस ली, और बोली—"मेरी जान में तो कोई नहीं है।"

"खैर, कोई और प्रबंध किया जायगा।"

"पुरोहितजी से कहो, वह कोई-न-कोई बता देंगे।"

ब्रजमोहनलाल प्रसन्न होकर बोले—"यह तुमने ठीक कहा। मुझे इसका ध्यान ही नहीं था। निस्संदेह वह अवश्य बता सकेंगे।"

उस समय सावित्रीदेवी छम-छम करती हुई आ पहुँचीं, और मुस्किराकर बोलीं—"यह चुपके-चुपके क्या सलाह हो रही है ?"

चंदो उठ खड़ी हुई, और मृदु हास्य करके बोली—"सारी सलाहें तुम्हारे ही लिये हो रही हैं।" इतना कहकर चंदो चली गई। चंदो के चले जाने पर सावित्री ने पति से पूछा—"सब ठीक हो गया ?"

"हाँ, ठीक ही है।"

"अभी और किसी से सलाह करना बाक़ी है ?"—ये वाक्य सावित्री ने कुछ व्यंग-पूर्वक कहे।

"अरे, सलाह काहे की ? सलाह तो मुख्य हमारी-तुम्हारी है। इन लोगों के कानों में भी भनक डालनी थी, सो डाल दी। चंदो एक बात अच्छी सोची।"

"वह क्या ?"

"उसने कहा कि पुरोहितजी से कहो, वह भाई-बिरादरी में आते जाते हैं। वही कोई लड़का ढूँढ़ देंगे।"

"हाँ, यह तो ठीक कहा।"

"तो बस, अब यह काम तुम्हारा है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"हाँ, कह तो मैं दूँगी, पर तुम्हारे भी कहे बिना ठीक न होगा।"

"हाँ-हाँ, मैं भी कह दूँगा।"

"तो आज ही बुलाकर कह देना चाहिए।"

"आज ही कह दो। बदलू को भेजकर उन्हें बुलवा लो।"

सावित्रीदेवी को तो एक-एक क्षण एक-एक वर्ष के बराबर बीत रहा था। उन्होंने उसी दम पुरोहितजी को बुलवाया। पुरोहितजी के आने पर सावित्री ने उनसे सारा कच्चा चिट्ठा कह सुनाया।

पुरोहितजी सब सुन चुकने पर बड़े प्रसन्न हुए। बोले—"वाह बहूजी, यह तुमने बहुत सुंदर सोचा। और क्या, जीवन का कोई भरोसा नहीं। जो अपने जीते-जी हो जाय, वही अच्छा। गरुड़-पुराण में लिखा है कि जिसके पुत्र नहीं, उसकी मुक्ति नहीं होती। इससे बढ़कर और क्या हो सकता है? नाम-का-नाम चलेगा, और पिंडदान करनेवाला भी हो जायगा।"

सावित्रीदेवी बोलीं—"हाँ, यही सोचकर तो मैंने उनसे बहुत कहा-सुना। वह तो इन बातों को मानते-वानते नहीं; पर ख़ैर, मेरे कहे-सुने से राज़ी हो गए।"

"इन्हीं पर क्या है बहूजी, ये जितने अँगरेज़ी पढ़े-लिखे हैं, कोई नहीं मानते। और, सच पूछो, तो जब से यह अँगरेज़ी चली, सारा धर्म-कर्म उठ गया। क्या किया जाय, समय की बात है। ख़ैर, वह जैसी तरह माने, मान तो गए, यही बहुत है।"

"और क्या, यही बहुत है। अच्छा, तो अब लड़का ढूँढ़ना तुम्हारे ज़िम्मे है।"

"ऐसा लड़का लो कि चित्त प्रसन्न हो जाय। यह जान ही न पड़े कि गोद का है या पेट का।"

"देखने-सुनने में भी अच्छा हो।"

"अजी, चाँद का टुकड़ा लो! लड़कों की क्या कमी है? एक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नहीं, पचास दे सकता हूँ। और बहू, गोद के और पेट के की कोई बात नहीं, सारी बात चित्त की है। जिससे चित्त प्रसन्न रहे, जो सुशील निकले, वही अपना। वह पेट ही का हुआ और कपूत निकल गया, तो किस काम का! सारी उम्र का दुःख और नाम डूबे, सो अलग। शास्त्र में भी सुशील ही की प्रशंसा लिखी है, चाहे गोद का हो या पेट का। गोद का अच्छा निकल गया, तो सारे वंश को स्वर्ग में ले जाता और पेट का भी यदि कपूत हो गया, तो सारा वंश नरक में जाता है।"

सावित्री ठंडी साँस भरकर बोली—"ठीक ही है, इसमें क्या झूठ है?"

सावित्री ने जिह्वा से तो यह कह दिया, किंतु मन-ही-मन बोली—"वह चाहे जैसा हो, पेट का पेट ही का है।"

पुरोहितजी चलने के लिये उद्यत होकर बोले—"तो मैं शीघ्र ही लड़का ढूँढ़ दूँगा, तुम निश्चित रहो।"

"बाबूजी से भी बात कर लेना।"

पुरोहितजी हँसकर बोले—"क्या आवश्यकता है? मेरे लिये तो दोनों एक-से हैं, जैसी तुम, वैसे बाबूजी। और, मेरे जी की जो पूछो, सो मैं तो तुम्हीं को मालिक समझता हूँ। इन बातों को ये अँगरेज़ी-पढ़े नहीं समझते बहू।"

"ख़ैर, मैंने कह दिया। तुम्हारा जी चाहे, पूछ लो, न जी चाहे जाने दो।"

"ख़ैर, देखा जायगा" कहकर पुरोहितजी सावित्रीदेवी से विदा हुए।

बाहर आकर ब्रजमोहनलाल के कमरे में पहुँचे। पुरोहितजी को देखते ही ब्रजमोहनलाल बोले—"आइए पुरोहितजी, भीतर हो आए?"

"हाँ, हो आया, ईश्वर जाने, मुझे तो बड़ी प्रसन्नता हुई।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ब्रजमोहनलाल कुछ उदास होकर बोले—"फिर क्या किया जाय पुरोहितजी, भगवान् ने हम पर कृपा ही नहीं की।"

"तो क्या चिंता है बाबूजी? वह सब एक ही बात है। जिसे अपना समझ लो, जिससे प्रेम हो जाय, वही अपना है। मैंने देखा है, सगे पिता-पुत्रों में जब प्रेम नहीं होता, तो वे पराए से भी बत्तर (बदतर) हो जाते हैं।"

"हाँ, यह तो ठीक ही है। सच पूछो, तो मेरी इच्छा तो नहीं थी, पर बनवारी की भाभी न मानीं। उसे रात-दिन यही खटका लगा रहता है कि कल को कहीं मेरी आँखें मुँद गईं, तो—"

पुरोहितजी मुँह बनाकर बीच ही में बोल उठे—"हरे राम-राम! यह भी भला, कोई बात है? ईश्वर आपको चिरायु करे। ऐसा सोचना निरी मूर्खता है। इसीलिये तो कहा है कि स्त्रियों की समझ बड़ी ओछी होती है। स्त्रियों की समझ शास्त्रों में भी निंद्य कही गई है।"

"स्त्रियाँ तो कुछ ऊँच-नीच समझती ही नहीं। उन्हें तो जो धुन सवार हुई, वह सवार हुई, और पुरुष को आगा-पीछा सोचकर काम करना पड़ता है।"

"यही बात है। आपका कहना यथार्थ है। स्त्रियाँ ऊँच-नीच बिलकुल नहीं समझतीं।"

"अब हम लोगों ने पढ़ा-लिखा है, तो किस दिन के लिये? बिना सोचे-समझे काम कर बैठें, तो हमारा पढ़ना-लिखना किस काम का?"

"इसमें कोई संदेह नहीं। और, बाबूजी, मैं तो फिर भी अँगरेज़ी की प्रशंसा करूँगा। इसके पढ़ने से आदमी के चार आँखें हो जाती हैं। क्यों न हो, राज-विद्या (भाषा) है कि दिल्लगी। राज-विद्या की शास्त्रों ने भी प्रशंसा की है।"

पुरोहितजी की बातों पर कुछ विशेष ध्यान न देते हुए ब्रजमोहन-लाल अपनी ही कहते गए—"मैंने तो लौकिक बातों को सोच-वि[illegible]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कर ऐसा करना स्वीकार किया, क्योंकि मुक्ति-वुक्ति का तो मैं क़ायल नहीं। साफ़ बात यह है कि मुझको यह सब ढकोसला मालूम होता है।"

पुरोहितजी दाँत निकालकर सिर खुजाते हुए बोले—"हाँ, एक प्रकार से आपका कहना भी ठीक ही है। काहे से कि कोई देख तो आया ही नहीं कि मरने के पश्चात् क्या होता है, क्या नहीं होता। जो कुछ शास्त्रों में लिखा है, उसी के अनुसार लोग कहते हैं। और, मेरे मन की जो पूछिए, तो मेरा तो यह विश्वास है कि ईश्वर की माया कौन जान सकता है? जिसकी माया बड़े-बड़े योगी और ज्ञानी भी न जान सके, उसकी माया मनुष्य कैसे जान सकता है?"

"यही बात है पंडितजी।"

"तो अब चलता हूँ।"

"हाँ, जाइए। परंतु तनिक चेष्टा करके शीघ्र ही ढूँढ़ लीजिएगा!"

"शीघ्र ही लीजिए, आज के आठवें-दसवें दिन ही लीजिए।"

"लड़के के विषय में मुझे कुछ कहना-सुनना नहीं। आप स्वयं समझदार हैं।"

"आप निश्चित रहिए, आपका चित्त प्रसन्न हो जाय, तब कहिएगा।"

"हाँ, एक बात का ध्यान रखिएगा—लड़का तीन-चार वर्ष से अधिक का न हो, और किसी ग़रीब का हो, अनाथ हो, तो और भी अच्छा।"

पुरोहितजी कुछ देर तक विचार करके बोले—"अच्छी बात है जहाँ तक हो सकेगा, ऐसा ही ढूँढ़ दूँगा।"

पाँचवाँ परिच्छेद

अब हम अपने पाठकों का ध्यान एक दरिद्र परिवार की ओर आकर्षित करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

एक तंग, गंदी गली में एक छोटा और पुराना मकान है। मकान के दो भाग हैं। एक भाग में स्वयं मालिक-मकान रहते हैं, और दूसरे में घासीराम कपूर नाम के एक सज्जन। इनके परिवार में केवल पाँच मनुष्य हैं। एक स्वयं घासीराम, दूसरी उनकी पत्नी, तीसरा उनका ज्येष्ठ पुत्र, जिसकी आयु इस समय आठ वर्ष के लगभग है, चौथी एक पाँच वर्ष की कन्या, और पाँचवाँ सबसे छोटा पुत्र, जिसकी वयस तीन वर्ष के लगभग होगी। घासीराम एक कपड़े की दूकान पर २५) रुपए मासिक वेतन पर काम करते हैं। मकान का जो भाग इनके अधिकार में है, वह दोमंज़िले पर है। उसमें दो बड़ी-सी कोठरियाँ, कोठरियों के आगे उन दोनों के बराबर एक दालान और दालान के एक ओर टट्टरों से घिरा हुआ थोड़ा-सा स्थान है, जो रसोई बनाने के काम आता है। कोठरियों में से एक में तो दो-तीन काठ के संदूक हैं। संदूकों पर दो-चार मैली गठरियाँ रक्खी हैं। दो खूँटियों में डोर बँधी है, उस पर कुछ साफ़ और कुछ मैले कपड़े लटक रहे हैं। दूसरी कोठरी में दस-बारह छोटी-बड़ी हाँडियाँ, दो-तीन पंक्तियों में, एक के ऊपर एक रक्खी हैं।

प्रातःकाल आठ बजने के निकट थे। लाला घासीराम दालान में एक फटी-टूटी चटाई पर बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे। उनकी स्त्री भोजन बना रही थी। बड़ा लड़का अपनी बहन के साथ छज्जे पर खेल रहा था। छोटा अपने पिता के चारो ओर घूम-घूमकर आनंद प्राप्त कर रहा था।

इतने में बहन और भाई में खेलते-खेलते कुछ झगड़ा हो गया। भाई ने बहन के दो-तीन चाँटे रसीद किए। बालिका चीत्कार करके "दादा", "दादा" कहती हुई पिता की ओर भागी।

उनकी स्त्री इस समय भोग के सुरूर में शांति-पूर्वक हुक्के का आनंद ले रही थी। संबंधिका के चीत्कार से उनकी शांति और आनंद में विघ्न हो गया। बस, फिर क्या था, मारे क्रोध के आग हो गईं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गए। हुक़्क़े की निगाली निकालकर पहले एक तो बालिका के जमाई, और बोले—"हरामज़ादी, जब देखो, उसी के पास घुसती है जाके, हज़ार दफ़े कह दिया, उसके साथ न खेला कर ?"

इसके पश्चात् लड़के की ओर यह कहते हुए दौड़े—"खड़ा तो रह बदमाश, आज बिना तेरी हड्डी तोड़े न मानूँगा। जब देखो, तब हाथ चला बैठता है।" जब तक वह उसके पास पहुँचें-पहुँचें, तब तक वह भागकर नीचे गली में हो रहा। घासीराम अपना-सा मुँह लेकर रह गए। पहले तो कुछ देर खड़े नीचे देखते रहे, कदाचित् इस प्रतीक्षा में हों कि वह अपने आप भले लड़के की तरह लौट आवे, और दो-चार निगालियाँ खाकर उन्हें संतुष्ट कर दे; किंतु जब वह न आया, तो यह कहते हुए कि "अच्छा बच्चा, क्या रोटी खाने न आओगे ?" अपने स्थान पर लौट आए।

रसोईघर से उनकी स्त्री ने पुकारकर पूछा—"क्या हुआ ?" घासीराम ने उत्तर दिया—"हुआ क्या, इन हरामज़ादों के मारे घर में एक घड़ी भी चैन से बैठना दूभर है। जब से पैदा हुए, सब लीप दिया। इन हरामज़ादों को मौत भी नहीं आती !"

उनकी स्त्री बोली—"हे भगवान् ! तुम्हारी न-जाने कैसी आदत है। ऐसे मुँह-भरके कह देते हो। न-जाने कौन घड़ी कैसी होती है।"

घासीराम हुक़्क़े में निगाली लगाते हुए बोले—"हो ससुरी घड़ी, मर जायँगे, चले जायँगे। इनसे सुख ही क्या है, और रात-दिन की दाँता-किलकिल लगी रहती है। इस शंभुआ के मारे तो नाक में दम है न पढ़ना न लिखना। रात-दिन लड़ाई-झगड़ा किया करता है। का बाहर किसी से लड़ेगा, कहीं बहन-भाइयों से मार-पीट करेगा। बस यही इसका धंधा है।"

उनकी स्त्री बोली—"अरे, फिर लड़के तो सभी ऐसे [illegible]रिवार की [illegible] जाय, अभी नासमझ हैं। जब समझ आवेगी, तो आप [illegible]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घासीराम ने स्त्री को कुछ उत्तर न दिया, किंतु आप-ही-आप बैठे बड़बड़ाने लगे। बड़बड़ाना इनका स्वभाव था। किसी एक बात को लेकर घंटों अपने-ही-आप बैठे बड़बड़ाया करते थे। एक घूँट हुक्के का पीते और पाँच मिनट तक बड़बड़ाते। बड़बड़ाने में यही कह रहे थे कि "सुधर चुके। ये पाजी क्या सुधरेंगे। वे सुधरनेवाले कोई और ही होते हैं। होनहार बिरवे के चिकने-चिकने पात। मेरी आँखों में तो इन बातों से ख़ून उतरता है। भाग गया, नहीं तो आज हड्डी-पसली तोड़ डालता। हाँ, मैं और तरह का आदमी हूँ।"

उधर बालिका एक निगाली खाकर एकदम सन्नाटे में आ गई। चुपचाप एक कोने में जाकर बैठ गई, और भयभीत तथा अश्रु-पूर्ण नेत्रों से पिता की ओर ताकने लगी। छोटा लड़का भी पिता के सामने चुपचाप बैठा हुआ था, कभी अपनी भगिनी और कभी पिता की ओर देख-देखकर इस गड़बड़ का कारण जानने के लिये अपने नन्हे-से मस्तिष्क पर ज़ोर दे रहा था।

घासीराम ने हुक्का एक ओर खिसकाकर स्त्री से पूछा—"अरे, इतना दिन चढ़ गया, और अभी रोटी नहीं बनी?"

स्त्री ने उत्तर दिया—"बस, अब तवा चढ़ाती हूँ, जब तक तुम नहाओगे, हो जायगी।"

यह सुनकर घासीराम उठे, और एक अधमैली-सी धोती लेकर नीचे पाइप में नहाने चले गए। नीचे जाकर नहाने के पूर्व गली में झाँककर देखा, और यह कहते हुए कि "बनारसीदास के यहाँ गया होगा (गाली), अच्छा, देखा जायगा" पाइप के पास लौट आए।

नहा-धोकर रसोई में जा पहुँचे।

उनकी स्त्री की वयस ३५ वर्ष के लगभग होगी। शरीर सुडौल था, [illegible]-संबंधी परिश्रमों के कारण कृश हो जाने से उसका सुडौल[illegible] हो गया था। तंग सोच, परंतु कुछ मानिक थी। वे

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोल, गालों पर कुछ तो अर्द्ध-वयस्क होने से और कुछ दरिद्रदेव की कृपा से हलकी झुर्रियाँ, आँखें बड़ी-बड़ी और अत्यंत करुणा-पूर्ण। सरसरी निगाह डालने से तो अब भी श्रीमतीजी सुंदर कही जा सकती थीं, किंतु सूक्ष्मदर्शी आँखों के लिये यह बात छिपी नहीं रह सकती थी कि श्रीमतीजी के सौंदर्य-उद्यान को चिंता-राक्षसी ने समय के पहले ही बड़ी बेदर्दी से रौंद डाला है! किंतु इतना होते हुए भी उनके मुख पर सौम्य भाव का इतना आधिक्य था कि सहृदय देखनेवाले के हृदय में उनके प्रति स्नेह, करुणा तथा सहानुभूति का स्रोत बहने लगता था। घासीराम रसोई-घर में पहुँचकर एक छोटे-से पटरे पर उकड़ूँ बैठ गए। उनकी स्त्री ने एक पीतल की थाली में दाल-रोटी परोसकर उनके आगे रक्खी।

थाली की ओर देखकर घासीराम की भौंहें चढ़ गईं। कुछ बिगड़कर बोले—"ऐं, ख़ाली दाल-रोटी! न तरकारी है, न भात?" शंभू की मा एक ठंडी साँस भरकर बोली—"चावल थे कहाँ? तरकारी भी कल से नहीं आई।"

घासीराम ने बड़बड़ाना आरंभ किया। खाते जाते थे, साथ ही बड़बड़ाते भी थे।

भोजन समाप्त हो जाने पर हाथ-मुँह धोकर पहले एक चिलम का आनंद लूटा, तत्पश्चात् दूकान जाने के लिये कपड़े पहने। दूकान चलती बेर स्त्री से बोले—"देखो, आज शंभुआ खाने को न पावे—बस, यही इसका उपाय है—दिन-ब-दिन बिगड़ता ही जाता है।" यह कहकर दूकान जाने के लिये चल दिए।

रास्ते में लंबे-लंबे डग धरते चले जा रहे थे, उसी समय उनकी दृष्टि एक व्यक्ति पर पड़ी। झट बोल उठे—"पा लागूँ [illegible]रू।" यह व्यक्ति और कोई नहीं, वही हमारे परिचित पुरोहितजी थे। [illegible] आय, [illegible] देकर बोले—"ओहो, घासीराम, कहो सब कुश

CC-0. In Public Domain. Funding by K.S. Mukhopadhyay

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घासीराम रुककर बोले—"सब आपकी दया है।"

पुरोहितजी कुछ मुस्किराते हुए बोले—"बहुत दिनों बाद देख पड़े। दूकान जा रहे हो क्या?"

"हाँ, दूकान ही जा रहा हूँ। कहिए, आप तो अच्छी तरह?"

"हाँ, जो है सो अच्छा ही है। सब ईश्वर की कृपा है। आजकल कहाँ रहते हो?"

"वहीं, जहाँ पहले रहता था।"

"बहू अच्छी तरह है?"

"हाँ, अच्छी है।"

"और बाल-बच्चे भी आनंद-पूर्वक?"

"हाँ, सब अच्छे हैं।"

"अच्छा, तो जाओ, दूकान को देर होती होगी।"

यह कहकर पुरोहितजी चल दिए, किंतु दो-तीन पग चलकर फिर लौट पड़े, और बोले—"अरे भाई घासीराम, तुम्हारे कोई लड़का भी तो है?"

"लड़के तो आपकी दया से दो हैं, और एक लड़की भी है।"

पुरोहितजी सिर खुजलाकर बोले—"यह तो मुझे मालूम है। मेरा तात्पर्य है कि कोई छोटा लड़का भी तो है, जो अभी साल-डेढ़ साल हुए, पैदा हुआ था।"

"हाँ, तीन साल का है।"

पुरोहितजी कुछ क्षण तक विचार में पड़े रहे। तत्पश्चात् बोले—"अब आज किस समय मिल सकते हो?"

"क्यों, कुछ काम है क्या?"

"हाँ, काम है। कुछ तुम्हारे ही काम की बात है।"

काम का नाम सुनकर घासीराम की आँखें चमकने लगीं। उत्कंठा से बोले—"जब आप कहिए, और जहाँ कहिए।"

CC-0. In Public Domain. Funding by MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"दूकान पर तो तुम्हें छुट्टी न रहती होगी ?"

"आजकल तो कुछ ऐसा विशेष काम है नहीं। आप आना चाहें, तो आ सकते हैं।"

"अच्छा, तो मैं दो बजे के बाद आऊँगा।"

यह कहकर पुरोहितजी चल दिए।

ठीक ढाई बजे पुरोहितजी घासीराम के पास पहुँचे।

घासीराम ने जब से लाभ का नाम सुन लिया था, तभी से उनके पेट में चूहे कूदने लगे थे। पुरोहितजी को देखते ही शीघ्रता से उठे, और उन्हें एकांत में ले गए।

पुरोहितजी बोले—"हाँ, तो तुम्हारा छोटा लड़का तीन वर्ष का है ?"

"हाँ, तीन वर्ष का। तीन महीने बाद चौथे में पड़ेगा।"

"अच्छा, बुरा न मानो, तो कहूँ, तुम्हारे लाभ की बात है।"

"बुरा मानने की क्या बात है ? आप निस्संकोच कहिए।"

"व्रजमोहनलाल को तो तुम जानते ही हो ?"

"वही, जिनकी कपड़े की दूकान है ?"

"हाँ, वही, बड़े आदमी हैं, और तुम्हारी बिरादरी हैं।"

"हाँ-हाँ, अच्छा, फिर ?"

"वह एक लड़का गोद लेना चाहते हैं। लड़के तो बहुत मिलते हैं, वह धनाढ्य आदमी हैं, उन्हें लड़का देने में कौन संकोच करेगा ? किंतु मेरा विचार है कि जहाँ तक संभव हो, अपने किसी मित्र का लड़का दूँ। मुझे तुमसे विशेष प्रेम है, और इसी कारण मेरी इच्छा है, यदि तुम्हें कोई आपत्ति न हो, तो....."

घासीराम बोल उठे—"नहीं, नहीं, मुझे तो कोई आपत्ति नहीं, किंतु...।"

पुरोहितजी घासीराम के स्वभाव को भली भाँति जानते थे। उन्हें मालूम था कि घासीराम उन मनुष्यों में है, जो दाम लिये

CC-0. Public Domain. Funding by MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कुछ कर सकते हैं। रुपया उनके लिये ईश्वर से भी अधिक है। ईश्वर है किस चिड़िया का नाम? केवल नाम-ही-नाम सुनते हैं, आँखों से तो कभी दिखाई नहीं पड़ता, और न आवश्यकता पड़ने पर कुछ काम देता है। यदि मान भी लिया जाय कि ईश्वर कोई चीज़ है, तो हुआ करे, अपने घर ख़ुश रहे, हमसे क्या? हम तो ईश्वर को तभी सर्वोपरि मान सकते हैं, जब वह आवश्यकता पड़ने पर हमें बाज़ार से अन्न दिलवा दे, कपड़ा दिलवा दे। विपत्ति पड़ने पर उससे हमारी रक्षा करे। कोरी बातों से तो हम उस पर विश्वास नहीं कर सकते। हमारा ईश्वर तो रुपया ही है, जो क्षण-क्षण पर हमारी रक्षा करता है। भूक लगने पर झट भोजन दिलवा देता है। ओह, रुपए की शक्ति का कुछ ठिकाना है! इसके आगे सब सिर झुका देते हैं! जो रात-दिन ईश्वर पर व्याख्यान दिया करते हैं, उन्हें भी इसके बिना दिन में तारे दिखाई पड़ने लगते हैं। ईश्वर के बिना तो किसी को भी तारे नहीं दिखाई पड़ते। संसार-भर इसी के फेर में है। राजा से लेकर कंगाल तक इसके दास हैं। रुपया न हो, तो राजा का राजत्व समाप्त ही समझिए।

मनुष्य अपने को चैतन्य कहते हैं, बड़े गर्व से कहते हैं, बड़े अभिमान से कहते हैं, और जड़ और चैतन्य में बड़ा भेद मानते हैं। भेद ही नहीं, अपने को जड़ से उत्कृष्ट कहते हैं, श्रेष्ठ कहते हैं। चैतन्य का सामना भला कहीं जड़ कर सकता है? जड़ जड़ ही है। रुपया जड़ है, मनुष्य चैतन्य। किंतु चैतन्य जड़ का दास है, मनुष्य रुपए का दास है। इससे अधिक लज्जा की बात और क्या हो सकती है? हमारे पुराणकार बड़े बुद्धिमान् थे। वे जानते थे कि रुपए को जड़ रखने से चैतन्य को उसके आगे झेपना पड़ेगा, इसी कारण उन्होंने जड़ को भी लक्ष्मी का रूप देकर चैतन्य कर दिया। ठीक चैतन्य यदि चैतन्य का दास हो, तो कोई हानि नहीं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ये विचार घासीराम की प्रकृतिवाले मनुष्यों के हैं। पुरोहितजी भी इन्हीं विचारों के आदमी थे। अपने समान प्रकृतिवाले मनुष्य को लोग शीघ्र पहचान लेते हैं। पुरोहितजी भी घासीराम को भली भाँति जानते थे।

पुरोहितजी बोले—"किंतु का क्या अर्थ ?"

घासीराम बोले—"मुझे तो कोई आपत्ति नहीं, किंतु शंभू की मा कदाचित् स्वीकार न करे।"

"यदि वह ऐसा करे, तो बड़ी मूर्ख है। लड़का कहीं चला तो जायगा ही नहीं। एक शहर, एक जाति। जब चाहोगे, उसे देख सकोगे। उससे मिल सकोगे। इसके अतिरिक्त लड़के के दिन भी फिर जायँगे, और तुम्हें भी बड़ी सहायता मिला करेगी।"

"भला, यह तो बताओ, पहले कुछ नक़दी भी मिलेगी या नहीं ?"

पुरोहितजी हँसकर बोले—"मिलेगी नहीं, तो क्या यों ही। यह भी भला, कोई बात है ?"

"भाई, सुनो, मैं तो राज़ी हूँ। मैं तो आप बाल-बच्चों के मारे तंग हूँ। ख़र्च की तंगी अलग मारे डालती है। उधर उनकी किच-किच से अलग नाक में दम है। मुझे तो स्वीकार है। किंतु केवल बात इतनी ही है कि शंभू की मा कदाचित् स्वीकार न करे, क्योंकि श्यामू (छोटे लड़के का नाम) को वह बहुत चाहती है।"

पुरोहितजी कुछ क्षण तक सोचकर बोले—"यदि तुम ढंग से समझाओ, तो अवश्य मान जायगी। कहना, लड़का तो आँखों के सामने ही रहेगा, कहीं चला थोड़े जायगा। उसे भी सुख रहेगा, और तुम्हारे भी दुख-दरिद्र दूर हो जायँगे।"

"अच्छा, कहूँगा।"

"हाँ, ज़रा ढंग से कहना, और मैं भी कल-परसों आऊँगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घासीराम प्रसन्न-मुख होकर बोले—"हाँ, यह ठीक रहेगा। ज़रा आप भी आकर समझा दीजिएगा।"

"अवश्य आऊँगा" यह कहकर पुरोहितजी चलने के लिये उद्यत हुए। उन्हें बिदा होता देख घासीराम सिर खुजलाते हुए बोले—"भला, यह तो बता देते कि कितना..."

पुरोहितजी कुछ बिगड़कर बोले—"भइ, तुम भी न-जाने कैसे आदमी हो। कह दिया कि तुम्हारे दुख-दरिद्र दूर हो जायँगे। अब रह क्या गया? मैं तुम्हारी भलाई चाहता हूँ या बुराई?"

घासीराम ने कुछ सिटपिटाकर उत्तर दिया—"नहीं, आप भला, बुराई क्यों चाहेंगे? मैंने तो वैसे ही....अच्छा, ख़ैर, देखा जायगा।"

छठा परिच्छेद

रात को भोजन इत्यादि से छुट्टी पाकर जब लड़के-बच्चे सो गए, तो घासीराम हुक्का भरके अपनी शय्या पर आए, और लेटकर हुक्का गुड़गुड़ाने लगे। कुछ क्षण पश्चात् उनकी स्त्री भी अपनी शय्या पर, जो पास ही बिछी थी, आई। उस शय्या पर छोटा लड़का पहले ही से सो रहा था। शंभू और उसकी छोटी बहन एक खटोले पर अलग सो रहे थे।

कुछ क्षण तक दोनो चुपचाप रहे। इसके पश्चात् घासीराम एक ठंडी साँस भरके बोले—"क्या कहें, कोई डौल ही नहीं लगता। इस नौकरी से तो मैं तंग आ गया। मिलने को कुल पचीस रुपए, और काम दिन-भर करना पड़ता है।"

शंभू की मा ने इसका कुछ उत्तर न दिया। वह केवल एक दीर्घ निःश्वास लेकर रह गई।

घासीराम फिर बोले—"इन लड़कों के मारे और भी तंगी है। तुम्हारा-तुम्हारा ख़र्च तो ख़ैर चल भी सकता है, कि इन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चल सकता। कंगाली में लड़के-बच्चे अधिक दुःखदायी होते हैं। ईश्वर यदि बाल-बच्चे दे, तो धन दे, नहीं तो निस्संतान ही रक्खे।"

शंभू की मा नम्रता-पूर्वक बोली—"जो कंगाल के लड़के-बच्चे न हों, तो उसका जीना अकारथ है। उसके लिये संसार में रह ही क्या गया? किसके लिये जिए, किसका मुँह देखकर रहे? रुपए-पैसेवालों के लिये तो बहुत-सी बहलाने की बातें होती हैं। उनका धन उनके लिये सब कुछ कर सकता है। पर कंगाल के लिये संसार में कुछ नहीं।"

घासीराम नाक-भौं चढ़ाकर बोले—"यही तो तुम्हारी भूल है। लड़के-बाले ग़रीब के लिये एक ऐसा बोझ होते हैं, जिससे उसकी दरिद्रता बढ़ती ही जाती है। उनका ख़र्च इतना बढ़ जाता है कि वह कभी उबरने ही नहीं पाता।"

"यह ठीक है कि बाल-बच्चों के पालने-पोसने में ग़रीब को बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है, पर साथ ही यह आशा भी रहती है कि जो एक लड़का भी अच्छा निकल गया, तो सारे दुःख दूर हो जायँगे, और यही आशा कंगाल के जीने का सहारा होती है।"

"अरे, यह सब कहने की बातें हैं।"

इसके पश्चात् कुछ क्षण तक दोनो चुप रहे।

घासीराम दूध के दो-चार घूँट पीकर बोले—"आज लालता-प्रसाद मिले थे।"

"कौन लालताप्रसाद?"

"पुरोहितजी।"

"हाँ, पुरोहितजी। वह तो बहुत दिन से नहीं आए! (ठंडी साँस भरकर) और आकर करें भी क्या?"

"एक लड़के की खोज में घूमते थे। मुझसे भी कहा कि [illegible] बताओ।"

कहूँगा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"ब्याह के लिये ढूँढ़ते होंगे ?"

"नहीं, ब्याह के लिये नहीं । एक व्रजमोहनलाल हैं । बड़े अमीर आदमी हैं । हमारी बिरादरी भी हैं । वह एक लड़का गोद लेना चाहते हैं । उन्हीं के लिये ढूँढ़ते थे ।"

"भला, अपना लड़का कोई काहे को देने लगा ?"

"देने को क्या हुआ ? देने में कोई हानि तो है नहीं, लाभ ही है ।"

"शंभू की मा कुछ विस्मित होकर बोली—"लाभ कैसा ?"

"यही कि लड़के के दिन फिर जायँगे । सारी संपत्ति का मालिक होगा । वह उसे पढ़ावें-लिखावेंगे । उसके मा-बाप को भी सहायता मिला करेगी ।"

"ऐसी सहायता किस काम की ?"

"उन्होंने यह भी कहा कि तुम्हीं अपना छोटा लड़का दे दो ।"

घर में अंडी के तेल का दीपक टिमटिमा रहा था । उसके क्षीण आलोक में घासीराम ने देखा, उनका वाक्य सुनकर उनकी स्त्री का चेहरा तमतमा उठा, उसके माथे पर बल पड़ गए । उसने कहा—"हमको कंगाल जानकर उन्हें ऐसा कहने का साहस हुआ; पर उन्हें यह पता नहीं कि अभी हमारा मन इतना कंगाल नहीं हुआ कि रुपए के लोभ में आकर अपने कलेजे का टुकड़ा बेच डालें ।"

यह कहकर शंभू की मा ने बड़े गर्व से अपने निद्रित छोटे पुत्र की ओर देखा ।

घासीराम कुछ क्षण तक चुप रहकर फिर बोले—"मेरी समझ में तो यदि ऐसा हो भी जाय, तो हानि ही क्या है ?"

उनकी स्त्री आश्चर्यान्वित होकर बोली—"ऐं ! तुम्हारा ऐसा जी ! क्या तुम्हें अपने बच्चों का कुछ भी मोह...."

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घासीराम बीच ही में बोल उठे—"अरे, तुम तो समझती नहीं। भला ऐसा हो सकता है कि किसी को अपने बाल-बच्चों का मोह न हो? पर बात यह है कि इसी के सुख के लिये ऐसा विचार है। देखो, यदि यह उनके यहाँ रहेगा, तो अच्छा खायगा, अच्छा पहनेगा, पढ़े-लिखेगा, और अंत में एक अच्छी संपत्ति का मालिक होग। हमारे यहाँ क्या है? न अच्छा खाना, न अच्छा कपड़ा। पढ़ा-लिखा भी नहीं सकते। अधिक-से-अधिक यह होगा कि मुड़िया अथवा हिंदी पढ़कर कहीं मुनीमी-ठनीमी करे। बस।"

"केवल एक को सुख मिला, तो क्या? हमारे और भी तो दो बच्चे हैं।"

"उनके लिये भी प्रबंध हो जायगा। मैं उनसे कुछ-न-कुछ मासिक लेने की बात ठीक कर लूँगा। उसी से इनका पालन-पोषण होगा।"

"यह कुछ नहीं। हमें कुछ नहीं चाहिए। हमारे ये दो लाल जीते रहें। बस!"

अब घासीराम कुछ बिगड़कर बोले—"क्यों नहीं चाहिए? इनके खाने-पहनने को कहाँ से आवेगा? मुझमें इतनी तथा नहीं, जो इनका पालन-पोषण कर सकूँ। पचीस रुपयों में अपना ही पेट नहीं चलता, इनके लिये कहाँ से आवे? मैंने तो यह निश्चय कर लिया है कि इसे व्रजमोहन को दे दूँगा।"

घासीराम की स्त्री का मुख पीला पड़ गया। उसकी छाती धड़कने लगी, नेत्र अश्रु-पूर्ण हो गए। उसने सोते हुए बालक को उठाकर इस प्रकार हृदय से लगा लिया, मानो उसे भय था कि कहीं वह उसी समय उससे अलग न कर दिया जाय।

घासीराम कुछ नम्र होकर फिर कहने लगे—"सूखा प्रेम से काम नहीं चलता। माता-पिता को चाहिए, जिसमें संतान को सुख मिले, वही करें।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कभी-कभी परमार्थ में भी गहरा स्वार्थ घुसा होता है। जिसे बड़े-से-बड़े बुद्धिमान् सच्चे हृदय से परमार्थ मानने को तैयार हो जाते हैं, जिन बातों में लोगों को दूसरों की भलाई के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं दिखाई पड़ता, उनमें भी इतना विकट स्वार्थ होता है कि यदि वह खोलकर रक्खा जाय, तो स्तंभित हो जाना पड़े। मनुष्य स्वार्थ का पुतला है। घासीराम की उपर्युक्त बातें सुनकर कौन कह सकता था कि वह अपनी संतान की भलाई नहीं चाहते? उनकी बातों से स्पष्ट मालूम होता था कि केवल अपने बच्चे को सुखी करने के लिये, उसका भविष्य उज्ज्वल बनाने के लिये वह ऐसा कह रहे हैं; किंतु क्या वास्तव में यही बात थी? कदापि नहीं। उनका उद्देश्य केवल यह था कि उन्हें आर्थिक सहायता मिलेगी, जिससे वह अपना जीवन आनंद से व्यतीत कर सकेंगे, और उनके सिर से कम-से-कम एक बालक के पालन-पोषण का बोझ उतर जायगा।

सुलोचना ने बड़े विनीत स्वर में कहा—"भला, इतना तो सोचो कि जिनके लिये मैंने नौ महीने तक न-जाने कितने कष्ट सहे, जिन्हें मैंने अपना लहू पिला-पिलाकर पाला, जिनका मुख देख-देखकर इस कंगाली में भी मैं अपने को भाग्यवती समझती हूँ, और जिन पर भरोसा रखकर मैं हवा में महल बनाया करती हूँ, उन कलेजे के टुकड़ों को दूसरे को कैसे दे दूँ? इनका मुँह देख-देखकर मैं चने चबाकर भी सुखी रह सकती हूँ, किंतु इनके बिना मुझे पकवान [illegible] रहना भी स्वीकार नहीं।"

[illegible]ठीक है—इन्हें चीथड़े पहने हुए देखकर तू अपने को [illegible] समझती है। इन्हें पेट-भर भोजन न मिलता देख तू सुखी [illegible] सुलोचना, बातों से तेरे कलेजे में ठंडक पड़ती है। पर जब इन्हें दिन-[illegible] मान [illegible] बेर अच्छा भोजन मिलेगा, तरह-तरह के कपड़े पहनेंगे,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गाड़ी पर चढ़े घूमेंगे, तब तेरा जी जलेगा, तुझे दुख होगा, क्यों? इसी को तू मोह कहती है, इसी का नाम तूने प्रेम रक्खा है?"

सुलोचना स्तंभित हो गई। वह नहीं समझ सकी कि इसका क्या उत्तर दे। घासीराम ने उसके प्रेम का जो चित्र खींचा, वह उसे इतना भयानक प्रतीत हुआ कि कुछ क्षण के लिये उसने अपनी आँखें बंद कर लीं।

घासीराम ने देखा, तीर निशाने पर लगा है। वह फिर कहने लगे—"यह तो वही बात हुई कि तुमने इन्हें अपने मनोरंजन की वस्तु समझ रक्खा है। तुम्हारी दृष्टि में ये खिलौने हैं। तुम्हारे पास ये चाहे टूटें या फूटें, चाहे कीचड़ में भरे रहें, किंतु अपने मनोरंजन के लिये तुम्हें यह सब स्वीकार है। और, यदि दूसरा इन्हें लेकर साफ़-सुथरे रक्खे, चमकदार बनाए रहे, टूटने-फूटने भी न दे, तो यह तुम्हें स्वीकार नहीं। उसमें तुम्हें सुख मिलता है, और इसमें दुख। इसे प्रेम नहीं कहते, स्वार्थ कहते हैं। तुमको चाहिए कि केवल अपने ही सुख को न देखो, उनका भी सुख देखो, उनकी भी भलाई सोचो।"

सुलोचना बालक को बड़े प्रेम-पूर्वक छाती से लगाए हुए थी। जान पड़ता था, वह उसे हृदय के अंदर रखने की चेष्टा कर रही है। उसने रुँधे हुए कंठ से बड़े करुण स्वर में कहा—"मैं तुम्हारी बात मानती हूँ। मैं यह समझती हूँ कि इसे वहाँ पूरा सुख मिलेगा, यहाँ वह सुख नहीं मिल सकता, पर क्या करूँ, ममता नहीं मानती। मेरा जी यही कहता है कि इसे मेरे पास रहने से सुख मिलेगा। वही है, और मुझे इसके पास रहने में।"

"फूँक दो ऐसी ममता को, और ऐसे जी को। इसे [illegible] कहते, शत्रुता कहते हैं।"

"नहीं-नहीं, ऐसा न कहो। देखो, यह तुम्हारा भी [illegible]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

क्या तुम्हें इससे कुछ भी प्रेम नहीं ? क्या तुम्हें इससे अलग होने में कुछ भी दुःख न होगा ? क्या तुम्हें इसका चाँद-सा मुँह याद न आवेगा ? अभी जब दूकान से आते हो, तो यह तुम्हें देखते ही तुम्हारी ओर दौड़ता है। तुम इसे गोद में लेकर, इसकी प्यारी-प्यारी बातें सुनकर प्रसन्न होते हो। फिर ये बातें कहाँ सुनोगे ?"

प्रायः अत्यंत कठोर पदार्थ में भी कोई स्थान विशेष ऐसा होता है, जो अपने समूह की कठोरता से कम कठोर होता है। घासीराम का हृदय इस बच्चे के लिये इतना कठोर था कि वह उसे त्यागने के लिये तैयार थे, किंतु नितांत प्रेम-शून्य न था। अपने पुत्र के लिये उनके हृदय में कुछ प्रेम अवश्य था, चाहे वह केवल इसीलिये हो कि उससे उनका मनोरंजन होता था। उनके हृदय का वह स्थान, जिसमें प्रेम का यह अंश छिपा हुआ था, उनके हृदय का मर्म-स्थान था। सुलोचना ने इसी स्थान को लक्ष्य करके उपर्युक्त बात कही। सुलोचना की बात उनके हृदय में लगी, उन्हें कुछ कष्ट हुआ। उन्होंने उस कष्ट को छिपाने की चेष्टा की। हठी मनुष्य जिस बात को अपने हृदय में ठीक समझता है, प्रत्यक्ष में उसका भी विरोध करने से नहीं हिचकिचाता। क्यों ? केवल इसलिये कि कहीं उसका पक्ष दब न जाय। घासीराम भी इसी प्रकृति के थे। उन्होंने हृदय में सुलोचना की बात का मर्म समझा, उसे महसूस किया ; किंतु केवल अपना उद्देश्य सिद्ध करने के लिये प्रत्यक्ष में उसे न माना। उन्हें सुलोचना पर क्रोध भी आया, क्योंकि उन्होंने समझा, सुलोचना उन्हीं के अस्त्र-शस्त्र से उन्हें परास्त करना चाहती है। उन्होंने सोचा, सुलोचना को ऐसी बात कहने का क्या अधिकार है, जिसका प्रभाव उनके हृदय पर पड़ सके। सुलोचना उनकी पत्नी है। वह सुलोचना के पति हैं। अतएव सुलोचना को चुपचाप उनकी बात मान लेनी चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह कर्कश स्वर में सुलोचना से बोले—"ये बातें छोड़ो, और जो मैं कहता हूँ, उसके अनुसार कार्य करो। मैं जो उचित समझता हूँ, वही तुमको भी करना चाहिए। मुझे भी अपने पुत्र से प्रेम है, मैं भी उसे आँख की ओट नहीं करना चाहता, किंतु यह निरा स्वार्थ है। उसको सुख पहुँचाना हमारा कर्तव्य है। इस कारण अपने सुख को लात मार देना चाहिए। माता-पिता का यही धर्म है। अच्छा, अब मुझे नींद आ रही है, मैं तो सोता हूँ, कल पुरोहितजी आवेंगे, उन्हीं के सामने बातचीत होगी।"

यह कहकर बासीराम लेट रहे।

सुलोचना उसी प्रकार बालक को हृदय से लगाए बैठी रही। उसने अपने पति का निर्णय समझ लिया था। वह अपने पति की प्रकृति भली भाँति जानती थी। उसे मालूम था कि बासीराम जिस बात पर अड़ जाते हैं, उसे बिना किए नहीं छोड़ते। इस समय उसके दुःख का अंत नहीं था। उसने समझ लिया था कि उसके कलेजे का टुकड़ा शीघ्र ही उससे अलग कर दिया जायगा। उसकी आँखों में इस समय विश्व दुःखमय था, दीपक की हिलती हुई शिखा से वह समझ रही थी कि दीपक भी उसके दुःख पर अपना सिर धुन रहा है। यदि वह प्रसन्न होती, तो कदाचित् उसे प्रतीत होता कि दीपक भी उसके हर्ष से हर्षित होकर नाच रहा है, मनुष्य का हृदय ही ऐसा है। जब वह प्रसन्न होता है, तो संसार उसे प्रसन्नतामय दिखाई पड़ता है, और जब वह दुखी होता है, तो संसार भी दुःखमय जान पड़ता है। वह सोच रही थी—"अच्छा होता, जो यह पैदा ही न होता, और पैदा होकर भी यदि मर जाता, तो भी अच्छा था; मुझे संतोष तो हो जाता। किंतु यह दुःख कैसे सहा जायगा कि यह जीता-जागता मेरी गोद से खींचकर दूसरे को दे दिया जाय। उन्हें मैं अपना बच्चा क्यों दूँ? वे धनी हैं, तो बने रहें। उनका धन उन्हें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुबारक रहे। वह अपने धन के बल से मेरा बच्चा छीनते हैं, यह उनका बड़ा अन्याय है। ग़रीबों को प्रलोभन देकर उनसे उनकी इच्छा के विरुद्ध काम कराना अन्याय नहीं, तो और क्या है ? शंभू के बाप का जी तो पत्थर का है—उन्हें क्या ? पर वह तो कहते हैं कि लड़के को सुख मिलेगा, अच्छा खाना मिलेगा, अच्छा कपड़ा पहनेगा, नौकर-चाकर लगे रहेंगे, घोड़ा-गाड़ी रहेगी—ये सब बातें तो अच्छी ही हैं। मैं तो भगवान् से यही चाहती हूँ कि मेरे बच्चों को ऐसा ही सुख मिले, पर मिले मेरी ही गोद में रहकर। उन्हें सुख मिला, और मुझे दुःख, तो यह किस काम का ? पर यह तो अपना ही सुख देखने की बात हुई, जिसे शंभू के बाप स्वार्थ कहते हैं। मेरी आँखें तो इन्हें सुखी देखकर ही ठंडी हो सकती हैं। फिर दुःख क्यों ? जब इसे सब प्रकार का सुख मिलेगा, तो इससे अच्छी बात और क्या हो सकती है ? बात तो अच्छी है ; पर...पर...क्या करूँ, मन नहीं मानता। इसे अलग करते छाती-सी फटती है। यह बुरी बात है, नहीं मैं तो तैयार हो जाती।"

इसके पश्चात् उसे लड़के के भविष्य का ध्यान आया—उसकी आँखों के सामने लड़के के उज्ज्वल भविष्य का चित्र खिंच गया। उसने देखा—लड़का ख़ूब हृष्ट-पुष्ट है, अच्छे-अच्छे वस्त्र पहने है, गाड़ी पर चढ़ा चला जा रहा है, साथ में एक नौकर भी है। बालक अपनी इस दशा में बड़ा प्रसन्न है। उसका मुख कमल की तरह खिला हुआ तथा सुंदर है। इसी प्रकार के सुखों में पलकर तथा लिख-पढ़कर वह जवान हुआ है। उसका विवाह बड़ी धूम-धाम से हुआ। बहू आई है, वह भी सुंदर गहनों से लदी हुई है। अब लड़का घर-बार का मालिक है। घर का ताला-कुंजी, रुपया-पैसा, सब उसी के हाथ में है। इसी दशा में वह उसके (सगी मा के) पास आता है, उसके लिये अच्छी-अच्छी चीज़ें भेंट देने को लाता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आह, यह देखकर उसका कलेजा कितना ठंडा होता है, उसे कितनी प्रसन्नता होती है !

इस दृश्य को देखकर सुलोचना मुग्ध हो गई। उसका हृदय गद्-गद हो गया। फिर उसने सोचा, यदि यह मेरे ही पास रहा, तो क्या होगा ? सीन बदला। उसने देखा, बालक मैले-कुचैले कपड़े पहने गली में आवारा लड़कों के साथ खेल रहा है। कोई उसे थप्पड़ मारता है, कोई दुतकारता है। लड़का बाहर अच्छी-अच्छी चीज़ें देखकर मा के पास आकर पैसा माँगता है। मा के पास पैसा नहीं निकलता। वह उसे बहला-बहलूकर उसका मन उस ओर से फेरना चाहती है। लड़का नहीं मानता, रोता है, मचलता है। इस रोने-मचलने पर उसे मार खानी पड़ती है। लड़का कुछ पढ़ता-लिखता भी नहीं ; कभी स्कूल जाता है, कभी नहीं जाता। कभी उसके पास पुस्तक नहीं, कभी काग़ज़ का टोटा, कभी फ़ीस की चिंता। इन सब बातों से उसकी शिक्षा में बाधाएँ पहुँचती हैं। कुछ थोड़ा-बहुत पढ़-लिखकर तैयार भी हुआ, तो कहीं पंद्रह-बीस की नौकरी मिलती है। लड़का दिन-भर पिसकर शाम को घर आता है। इस परि-श्रम से उसका मुख मलिन रहता है। खेलने-खाने के दिनों में ही लड़का गृहस्थी के जंजाल में फँस जाता है। लड़के का विवाह नहीं होता। हो कहाँ से—ग़रीब को कौन अपनी बेटी दे ? देगा भी, तो कोई ग़रीब ही। ऐसी दशा में बहू के पास भी गहनों-कपड़ों का अभाव है।

सुलोचना इस दृश्य को देखकर भयभीत हो गई। उसकी आँखों से आँसू निकल पड़े। उसने सोचा—नहीं-नहीं, मैं नहीं चाहती कि मेरे बच्चे की यह दशा हो। मुझे चाहे कितना ही दुःख मिले, पर यह सुखी रहे। यही मेरा भी सुख है। तो क्या मुझे ऐसा करना ही पड़ेगा ? इसके उत्तर में किसी ने उसके हृदय में कहा—"हाँ, करना ही पड़ेगा। यदि लड़के को सुखी करना चाहती हो, तो करना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ही पड़ेगा।" किंतु इससे मुझे बड़ा दुःख होगा। उत्तर मिला—"होने दो। लड़के की ओर देखो, लड़के के सुख के लिये अपने दुःख पर मत ध्यान दो।" भला, ऐसा कौन है, जो दूसरे के सुख के लिये आप दुःख भोगे? उत्तर मिला—"लड़का दूसरा नहीं, वह तेरा ही हृदय है, तेरा प्राण है। इसके सुख में ही तुझे सुख है। लोग तो दूसरों के लिये दुःख भोगते हैं।" कौन दूसरों के लिये दुःख भोगता है? उत्तर मिला—"देख, इस दीपक को देख। इसमें तेल और बत्ती को देख। आप जल रहे हैं, और तुझे आलोक दे रहे हैं। दूसरों के लिये इससे अधिक दुःख भोगना और क्या होगा।"

सुलोचना ने "उफ़्" कहकर आँखें बंद कर लीं। कुछ क्षण पश्चात् उसने आँखें खोलीं, और सोते हुए बालक का मुख चूमकर बोली—"मेरे कलेजे के टुकड़े, तुझे जिससे सुख मिलेगा, मैं वही करूँगी।"

इतना कहते ही भाद्र-मास के मेघ की तरह उसकी आँखों से अश्रु-धारा फूट निकली।

सातवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन सवेरे सात बजे के पश्चात् पुरोहित लालताप्रसाद घासीराम के घर पर पहुँचे। घासीराम उस समय ठंडाई छान रहे थे। पुरोहितजी को देखकर उन्होंने प्रणाम किया, और एक चटाई पर बिठाया। पुरोहितजी कुछ मुस्किराकर बोले—"विजया छन रही है?"

घासीराम हँसकर बोले—"और क्या, इसके बिना तो मुझे एक क्षण भी चैन नहीं।"

"अच्छा है, आजकल तो इसकी बहार ही है। बहू कहाँ है?"

"रसोई की तरफ़ होगी।"

"कहो, कुछ ज़िकर आया था?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"हाँ, आया था, मैंने ही ज़िकर उठाया था।"

"अच्छा, फिर ?"

"मैंने तो आपसे कहा ही था कि वह न मानेगी। वही बात हुई।"

पुरोहितजी कुछ गंभीर होकर बोले—"तो क्या उसने नाहीं कर दी ?"

"बिलकुल ! पर उसकी नाहीं से क्या आता-जाता है—मैं तो राज़ी हूँ।"

पुरोहितजी कुछ क्षण तक चुपचाप बैठे रहे। इतनी देर में घासीराम ने ठंडाई तैयार करके पुरोहितजी से पूछा—"लीजिएगा थोड़ी-सी ?"

"मैं बहुत कम पीता हूँ।"

"अजी, थोड़ी-सी ले लीजिए। थोड़ी-सी में क्या होगा।"

पुरोहितजी ने भी थोड़ी-सी लेकर पी। घासीराम भी पीकर उठे, और हुक्का लेकर पुरोहित के पास बैठ गए।

पुरोहितजी बोले—"तो फिर क्या सलाह है ?"

"सलाह क्या, मैं तो राज़ी हूँ, श्यामू की मा को आप समझा-बुझाकर देखिए, मान जाय, तो अच्छा ही, नहीं तो फिर देखा जायगा।"

इतना कहकर घासीराम ने चिल्लाकर कहा—"श्यामू की मा, ज़रा-सी आग तो दे जाओ !"

श्यामू की मा तवे में आग लेकर आई। पुरोहितजी पर दृष्टि पड़ते ही उसके मुख की रंगत बदल गई। माथे पर बल पड़ गए। पुरोहितजी ने पूछा—"कहो बहू, अच्छी तरह ?"

सुलोचना ने कुछ रुखाई से उत्तर दिया—"हाँ, अच्छी ही-सी हूँ।"

घासीराम चिलम भरते हुए बोले—"यह शंभुआ आज सवेरे ही से कहाँ उड़ गया ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"क्या जानूँ, कहीं गया होगा।"

पुरोहितजी बोले—"आज यहाँ लड़के नहीं दिखाई पड़ते।"

घासीराम बोल उठे—"शंभुआ तो आज सबेरे ही से ग़ायब है। वे दोनो उधर रसोईं की तरफ़ खेल रहे हैं।"

सुलोचना तवा लेकर जाने लगी। उसी समय पुरोहितजी बोले—"बहू, तुमसे कुछ काम था। क्या रोटी चढ़ाने जा रही हो?"

सुलोचना के कुछ उत्तर देने के पूर्व ही घासीराम बोल उठे—"अजी, अभी तो रोटी में देर है। अभी सात ही तो बजे हैं।"

पुरोहितजी ने कहा—"अच्छा, तो थोड़ी देर बैठकर मेरी दो-दो बातें सुन लो।"

"उधर से जाकर श्यामू को ले आऊँ, तो फिर बैठूँ"—यह कहकर सुलोचना चली गई।

इधर पुरोहितजी ने घासीराम से कहा—"भइ, किस तरह बात उठाऊँ। मुझे तो डर लगता है कि कहीं बहू अप्रसन्न....."

"अजी नहीं, अप्रसन्न होने की क्या बात है? अच्छा, आप न कहिएगा; मैं ही कहूँगा।"

उसी समय सुलोचना श्यामू को गोद में लिए आ पहुँची। साथ-साथ लड़की भी आई।

सुलोचना कुछ दूर पर सामने बैठ गई, और बोली—"कहो, क्या कहना है।"

घासीराम बोले—"कहना-सुनना क्या है, वही कलवाली बात तय करने के लिये आए हैं।"

सुलोचना ने रात को जो कुछ स्थिर किया था, वह सब स्वप्नवत् हो गया। सबेरे उठते ही श्यामू की मीठी-मीठी बातें सुनकर उसका विचार फिर बदल गया, और उसने सोच लिया था कि चाहे जो हो, मैं श्यामू को अपनी आँखों की ओट कभी न होने दूँगी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुरोहितजी कहने लगे—"बहू, तुमने घासीराम से सब सुन ही लिया होगा, मुझे उन बातों के दुहराने की कोई आवश्यकता नहीं। अब मैं केवल यह जानना चाहता हूँ कि तुम्हारी क्या इच्छा है?"

पुरोहितजी पर एक तीव्र दृष्टि डालकर सुलोचना बोली—"मेरी इच्छा पूछते हो? पुरोहितजी, भगवान् की दया से तुम्हारे भी एक लड़का है। मेरी इच्छा जानना चाहते हो, तो अपने उस लड़के की मा से पूछो। अपनी घरवाली से पूछो; देखो, वह क्या कहती है।"

पुरोहितजी सन्न हो गए। वह नहीं समझ सके कि इसका क्या उत्तर दें।

सुलोचना फिर कहने लगी—"मा के जी को मा ही समझ सकती है, बाप कभी नहीं समझ सकता। मेरे जी को तुम नहीं समझ सकते। मा का जी पत्थर का होता है; इसीलिये कहती हूँ कि अपनी घरवाली से पूछो।"

पुरोहितजी सिर खुजलाते हुए बोले—"बहू, यह तो तुम्हारा कहना सब ठीक है, परंतु बात यह है कि पिता का जी इतना कड़ा भी नहीं होता कि अपने पुत्र के दुःख-सुख का ध्यान न रक्खे।"

सुलोचना बोली—"सुख-दुख की तो बात ही नहीं है। बात तो यह है कि मा की इच्छा लड़के को अपने से अलग करने की हो सकती है, या नहीं! सुख-दुख तो दूसरी बात है।"

अब पुरोहितजी का साहस कुछ बढ़ा। बोले—"पर मैं तो केवल सुख-दुख की बात कह रहा हूँ। यह मैं मानता हूँ कि मा लड़के को कभी अलग न करना चाहेगी, पर साथ ही मा को यह भी तो देखना चाहिए कि अलग करने में लड़के को सुख मिलता है, या पास रखने में? मेरी समझ में तो मा का कर्तव्य यह है कि लड़के सुख पर दृष्टि रक्खे, चाहे लड़का पास रहे, चाहे दूर। यह मैं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि इसे किसी प्रकार का दुःख मिलना तो दूर रहा, अनेकों प्रकार के सुख मिलेंगे। पढ़ेगा-लिखेगा, खाने-पहनने की कुछ कमी न रहेगी, और अंत में सारी संपत्ति का मालिक होगा। प्रेम को जो कहो, तो तुम यह बात आप सोच सकती हो कि जिसका हृदय लड़के के लिये व्याकुल रहता है, वह एक लड़का पाकर उससे कितना प्रेम करेगी। व्रजमोहन की स्त्री इस समय लड़के के लिये अधीर हो रही है। इस समय यदि उसे मिट्टी का लड़का भी दिया जाय, तो वह उससे प्रेम करे। फिर जब वह स्वजाति का सुंदर बालक पावेगी, तो कितना प्रेम करेगी।"

सुलोचना हँसी। उस हँसी में घृणा थी, अविश्वास था। उसने कहा—"प्रेम करेगी! मैं मानती हूँ, प्रेम करेगी, पर उसी तरह, जैसे एक बालक अपने खिलौने से प्रेम करता है। मा अपने बच्चे को खिलौना नहीं समझती, वह उसे अपनी आत्मा समझती है, अपना प्राण समझती है। ऐसा प्रेम वह कहाँ से लावेगी। कोई भी नहीं ला सकता, उसी पर क्या है!"

पुरोहितजी हँसकर बोले—"यह तो न कहो, मैंने ऐसी-ऐसी स्त्रियाँ देखी हैं, जो पराए लड़के को अपने पेट के लड़के से अधिक चाहती हैं।"

सुलोचना—"चाहती होंगी।"

पुरोहितजी सोचने लगे कि यह गाँठ सुलझती नहीं दिखाई पड़ती। सुलोचना किसी प्रकार यह बात स्वीकार न करेगी। यद्यपि वह स्वयं मन में सुलोचना की बातों को बहुत कुछ ठीक मान रहे थे, किंतु स्वार्थ-भाव ने हृदय को इतना घेर लिया था कि उस पर सुलोचना के हृदयोद्गारों की पूरी चोट नहीं पड़ती थी।

अंत को पुरोहितजी बोले—"ख़ैर, तुम्हारी ख़ुशी, यदि तुम्हारी इच्छा नहीं है, तो जाने दो, और कहीं देखूँगा। मैं उनसे वादा कर आया हूँ कि कोई-न-कोई लड़का अवश्य दूँगा। मैंने तो सोचा था कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अपने मित्र ही की संतान मिले, क्योंकि इस समय उनकी संपत्ति डेढ़-दो लाख के लगभग है।" पुरोहितजी ने यह अंतिम तीर छोड़ा था। घासीराम तो इसकी चोट से तड़प गए, किंतु सुलोचना के हृदय में पुत्र-प्रेम की इतनी गर्मी थी कि यह तीर वहाँ तक पहुँचते-पहुँचते ठंडा हो गया।

सुलोचना उठकर जाने लगी। पुरोहितजी ने साहस करके फिर कहा—"बहू, इसे ज़रा फिर सोच लेना, कोई जल्दी नहीं है। अभी मैं चार-छ दिन ठहरा रहूँगा। मैं ईश्वर को साक्षी देकर कहता हूँ कि मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि यह लाभ तुम्हें ही हो। तुम्हारी ही संतान इसका सुख भोगे।"

सुलोचना ने इसका कोई उत्तर न दिया। चुपचाप चली गई। पुरोहितजी घासीराम से बोले—"भाई, बहू तो मानेगी नहीं, यह निश्चय है।"

घासीराम बिगड़कर बोले—"न मानेगी, तो सिर पर हाथ धरकर रोवेगी भी—मैं और तरह का आदमी हूँ। भइ, मेरी तो राय है कि तुम उनसे जाकर ठीक-ठाक कर लो। इस झोल में न पड़ो। अरे हाँ, जितना ही छानोगे, उतना ही किरकिरापन निकलेगा।"

पुरोहितजी—"अजी, ठीक क्या करना है? ठीक तो हई है। मुझे केवल यह सोच-विचार है कि अगर बहू का जी दुखा, तो मैं उनको मुँह दिखाने लायक़ न रहूँगा।"

घासीराम नाक-भौं चढ़ाकर बोले—"अजी, बैठो भी। कहने लगे मुँह दिखाने लायक़ न रहूँगा। इसमें मुँह न दिखाने की कौन बात है? कुछ तुम इसका बाप मार रहे हो। सच पूछो, तो तुम इसके साथ बड़ा उपकार कर रहे हो; पर यह न-जाने कैसी औंधी खोपड़ी की स्त्री है कि समझती ही नहीं।"

पुरोहितजी—"हाँ, यह बात तो ठीक ही है, मैं तो तुम्हारे भले ही की कह रहा हूँ। एक लाख की संपत्ति कुछ थोड़ी नहीं होती।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घासीराम तिलमिलाकर बोले—"भाई, तुम आज ही जाकर उनसे ठीक कर लो। समझे, ऐसा न हो, कोई दूसरा खड़ा हो जाय।"

पुरोहित—"अरे राम कहो—यह काम तो मेरे ही हाथों होगा। बिना मेरी सलाह कुछ नहीं हो सकता।"

घासीराम प्रसन्न होकर बोले—"तो फिर क्या डर है। रही शंभू की मा की बात, तो उससे तुम बेफ़िक्र रहो। मैं उसे किसी-न-किसी प्रकार राज़ी कर लूँगा।"

"अच्छा, तो मैं चलता हूँ।" यह कहकर पुरोहितजी उठ खड़े हुए। चलते-चलते उन्होंने कहा—"तो मैं ठीक करूँगा?"

घासीराम—"हाँ-हाँ, ठीक कर लो।"

पुरोहित—"ऐसा न हो, पीछे नाहीं कर दो, और मेरी बात जाय।"

घासीराम—"नहीं गुरू, भला, ऐसा हो सकता है?"

पुरोहितजी चल दिए।

पुरोहितजी के चले जाने के पश्चात् घासीराम बड़बड़ाते हुए सुलोचना के पास पहुँचे। उस समय सुलोचना आटा गूँद रही थी। दोनो भाई-बहन रसोई के सामने थोड़ी दूर पर खेल रहे थे।

घासीराम हुक्का लेकर रसोई के पास जा बैठे, और बोले—"देखो शंभू की मा, तुम्हारी ये बातें अच्छी नहीं हैं। कहा मानो, हठ न करो। हठ करने से कोई लाभ न होगा। समझीं?"

सुलोचना ने उत्तर दिया—"क्या कहूँ, तुम तो कुछ सोचते-समझते नहीं, तुम्हें तो इस समय...क्या कहूँ, कुछ कहते नहीं बनता।"

घासीराम बिगड़कर बोले—"हाँ-हाँ, मैं तो नासमझ हूँ, उल्लू हूँ। तुम्हीं तो एक बड़ी समझदार हो। तुम्हें अपने बाल-बच्चों का भी कुछ ध्यान है? ऐसा अच्छा अवसर मिल रहा है, तुम उसे हाथ से खो रही हो और उलटा मुझी को उल्लू बनाती हो। वाह!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यह अच्छी रही। याद रक्खो, तुम न मानीं, तो अच्छा न होगा। मैं तो यह काम करूँगा ही।"

सुलोचना की आँखों में आँसू आ गए। करुण स्वर में बोली—"तो कर लो, मैं क्या मना करती हूँ? तुमने तो आँखों पर ठीकरी रख ली। इतना भी नहीं सोचते कि नाते-रिश्तेदार सुनेंगे, तो क्या कहेंगे?"

घासीराम—"नाते-रिश्तेदार भला क्या कह सकते हैं? मैं कोई ऐसा काम तो कर ही नहीं रहा हूँ, जो आज तक किसी ने न किया हो। दुनिया में न-जाने कितने लड़के गोद लिए जाते, और कितने दिए जाते हैं।"

सुलोचना—"दुनिया की भली चलाई। दुनिया में चोरी भी तो होती है, पाप भी तो होता है। फिर इससे क्या?"

घासीराम—"तो लड़का गोद देना चोरी है, पाप है—क्यों?"

सुलोचना—"चोरी-पाप नहीं है, तो कोई भला काम भी नहीं है।"

घासीराम—"क्या कहूँ, न-जाने तुम्हारी कैसी उलटी समझ है। अपनी क़सम, कभी-कभी तुम्हारी समझ पर मुझे बड़ा क्रोध आता है। तुम इतना नहीं सोचतीं कि हमारा लड़का लाखों की संपत्ति का मालिक होगा। हमारे दुख-दलिद्दर भी दूर हो जायँगे, और हमारे दूसरे लड़के भी पढ़-लिख जायँगे।"

घासीराम के हठ और दुख-दरिद्र दूर हो जाने की बात ने सुलोचना को फिर कुछ डगमगाया। वह इस पर फिर विचार करने लगी।

घासीराम कहने लगे—"लड़का भी कहीं सात समुंदर पार नहीं जाता, जो देखने को तरस जायँगे। एक शहर—एक जगह, जब चाहे देखा करना, और जब उनसे हमारा यह संबंध हो जायगा, तो आना-जाना भी रहेगा ही। फिर न-जाने तुम क्यों हिचकती हो?"

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलोचना एक ठंडी साँस भरके बोली—"यह तो सब ठीक है, पर—"

घासीराम—"पर क्या ?"

सुलोचना—"क्या कहूँ, मेरा जी किसी तरह नहीं मानता कि श्यामू को अपने से जुदा करूँ।"

घासीराम ताड़ गए कि सुलोचना कुछ-कुछ राह पर आ रही है। उन्होंने बड़े स्नेह-पूर्वक कहा—"देखो, सोच लो। तुम्हारी 'हाँ' पर सब अच्छा-ही-अच्छा है, और 'नहीं' पर सब बुरा-ही-बुरा। भला, जी भी कोई ऐसी चीज़ है, जो क़ाबू में न आवे। अपने जी के पीछे तुम सब गुड़ गोबर किए डाल रही हो। ऐसा जी भला किस काम का ? अच्छा, तुम इस पर सोच लो। शाम को बातचीत होगी। तुम रोटी बनाओ, तब तक मैं ज़रा शंभू को देखूँ, न-जाने पाजी आज सबेरे से कहाँ चला गया। इसके मारे और भी नाक में दम है।"

यह कहकर घासीराम सुलोचना के पास से चले आए।

आठवाँ परिच्छेद

उसी दिन शाम को लालताप्रसाद व्रजमोहनलाल के घर पहुँचे। व्रजमोहनलाल तो उस समय दूकान पर थे। उन्होंने सावित्री को अलग ले जाकर कहा—"बहू, लड़का तो एक मिला है, और ऐसा मिला कि देखकर तुम्हारा चित्त प्रसन्न हो जायगा। चाँद का टुकड़ा है।"

सावित्री प्रसन्न होकर बोली—"इसीलिये तो मैंने यह काम तुम्हें सौंपा है। तुमसे अच्छा और कोई इसे कर भी नहीं सकता था।"

पुरोहित—"उसका पिता तो बिलकुल राज़ी है, पर..."

सावित्री कुछ हतोत्साह-सी होकर बोली—"पर क्या ?"

पुरोहित—"पर उसकी मा राज़ी नहीं होती। वह उसे बड़ा प्यार करती है, क्योंकि सबसे छोटा वही है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यद्यपि इस समय स्वार्थ ने सावित्री के हृदय को अंधा कर दिया था, उसमें किसी बात को स्वयं देखने की शक्ति बहुत कम हो गई थी, किंतु जब कोई बात उसके हृदय से टकराती थी, तो उसे थोड़ी देर के लिये कुछ ज्ञान हो आता था। सावित्री स्त्री थी, उसका हृदय भी उतना ही कमज़ोर था, जितना स्त्रियों का होता है। यद्यपि वह स्वयं माता न थी, परंतु उसका हृदय एक माता का हृदय बनने की योग्यता रखता था। उसमें वे भाव अंतर्निहित थे, जो एक माता के हृदय में हुआ करते हैं, केवल उनका विकास नहीं हुआ था। पुरोहितजी की बात सुनकर उसके हृदय ने तुरंत कहा—"निस्संदेह कोई सच्ची माता अपना पुत्र बेचना स्वीकार न करेगी। यदि उसकी माता ऐसा करती है, तो कोई पाप नहीं करती।"

अंतःकरण सदैव न्याय की ओर झुकने के लिये तैयार रहता है, किंतु स्वार्थ उसे ऐसा करने से रोकता है। सावित्री ने अंतःकरण की बात पर कुछ ध्यान न दिया। वह पुरोहितजी से बोली—"जान पड़ता है, उसे यह पता नहीं कि हम....."

पुरोहितजी शीघ्रता-पूर्वक बोले—"नहीं, यह तो मैंने सब बता दिया। उसे तुम्हारी संपत्ति तथा वैभव का सब हाल मालूम हो गया; पर फिर भी, वह राज़ी नहीं होती।"

सावित्री—"बस, इतनी ही उसकी भूल है। अच्छा, फिर ?"

पुरोहित—"अभी तो कुछ-कुछ आशा है। लड़के के बाप ने कहा है कि मैं राज़ी कर लूँगा।"

सावित्री—"उसके कोई भाई-बहन भी है ?"

पुरोहित—"हाँ, एक बड़ी बहन तथा एक बड़ा भाई है।"

सावित्री—"बड़े की उम्र क्या है ?"

पुरोहित—"बड़ा तो सात-आठ बरस का होगा। दूसरे, वह बिचारा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हुआ है, अभी से दिन-दिन-भर ग़ायब रहता है। तुम्हारे लायक़ तो छोटा ही है।"

सावित्री उत्सुक होकर बोली—"क्या कहूँ, मैं किसी प्रकार उसे देख सकती, तो अच्छा होता।"

पुरोहित—"यह क्या बड़ी बात है। जब चाहो, देख लो।"

सावित्री—"उसे यहाँ ला सकते हो?"

पुरोहित—"लाने को क्या हुआ?"

सावित्री—"एक बात और है। यदि उसकी मा से मेरी बातचीत हो सकती, तो मैं उसे चुटकी बजाते राज़ी कर लेती। स्त्री को स्त्री जल्दी राह पर ला सकती है।"

पुरोहित—"तुम्हारा यह कहना भी ठीक है। पर वह भला यहाँ काहे को आने लगी। हाँ, यदि तुम्हीं उसके यहाँ जाओ, तो हो सकता है। पर वे हैं बड़े ग़रीब। बाप एक दूकान पर २५) का नौकर है।"

सावित्री ने सोचा, मैं, और उसके यहाँ जाऊँ! यह बात मेरी मर्यादा के प्रतिकूल है। उसने पुरोहितजी से कहा—"भला, मैं उसके यहाँ कैसे जा सकती हूँ? बाबूजी इस पर कभी राज़ी न होंगे।"

पुरोहित—"मेरी समझ में तो कोई अनुचित बात नहीं, क्योंकि जब तुम उसका लड़का गोद लेने को तैयार हो, उससे संबंध जोड़ना चाहती हो, तो ऐसी दशा में जाना कोई बुरी बात नहीं।"

सावित्री—"हाँ, यह बात भी तुम्हारी ठीक ही है। अच्छा, आज रात को बाबूजी से पूछूँगी। देखूँ, वह क्या कहते हैं।"

पुरोहित—"मुझे पूरा भरोसा है कि यदि तुम उससे मिलोगी, तो वह राज़ी हो जायगी। और, सुनो, जब जाना, तो उसके बच्चों के लिये कुछ मिठाई, कुछ खिलौने लेती जाना। इससे उसको राज़ी करने में सहायता मिलेगी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सावित्री—"जाना क्या, क्या मैं अकेली जाऊँगी ? तुम्हें भी साथ चलना पड़ेगा। आख़िर उसका घर कौन बतावेगा ?"

पुरोहित—"हाँ-हाँ, जो यह मुझे ध्यान ही न रहा। अच्छा, मैं चलूँगा, जब जाने का विचार हो, मुझे बुलवा लेना।"

सावित्री—"जो बाबूजी राज़ी हो गए, तो कल ही चली चलूँगी। भला, किस समय चलना ठीक होगा ?"

पुरोहित—"मेरी समझ में तो दोपहर ही में चलना ठीक है। सबेरे तो वह बेचारी रोटी-पानी में लगी रहती है। दोपहर को एक सुविधा यह भी रहेगी कि लड़के का बाप दूकान चला जाता है। वह अकेली रहती है, तुम्हें बातचीत करने, उठने-बैठने की स्वतंत्रता रहेगी।"

सावित्री—"अच्छा, तो कल बारह बजे घर आ जाना।"

पुरोहित—"पहले बाबूजी से तो पूछ लो।"

सावित्री—"वह सब पूछा हुआ ही-सा है। मेरी बात वह टाल नहीं सकते। कल मैं ज़रूर-ज़रूर चलूँगी।"

पुरोहित—"अच्छा, तो कल बारह बजे आ जाऊँगा।"

यह कहकर पुरोहितजी चले गए।

रात को सावित्री ने व्रजमोहनलाल से सारा हाल कहा, और वासीराम की स्त्री से मिलने की आवश्यकता भी समझा दी। व्रजमोहनलाल के हृदय में भी वही प्रश्न उठा, जो पहले सावित्री के मन में उठा था। उन्होंने कहा—"एक साधारण आदमी के घर पर बिना जान-पहचान के दौड़े जाना तुम्हें शोभा न देगा। उसी को बुलाने की चेष्टा क्यों नहीं करतीं ?"

सावित्री—"वह भला क्यों आने लगी। उसे क्या पड़ी है ? हाँ, जो वह लड़का देने पर राज़ी होती, तब तो चली आती। पर जब राज़ी ही नहीं, तो काहे को आवेगी ? भला, जो मैं ही चली जाऊँ, तो क्या बुराई है ? अपना काम है, जाना ही चाहिए। दूसरे, जब हम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उसका लड़का ले रहे हैं, उससे नाता जोड़ रहे हैं, तो फिर जाने में क्या बुराई है ? मेरी समझ में तो कोई बुराई नहीं। पुरोहितजी भी यही बात कहते थे।"

स्वार्थ में पड़कर मनुष्य प्रायः वह काम कर बैठता है, जो बिना स्वार्थ के वह कभी न करता। व्रजमोहन अथवा सावित्री से ऐसी आशा कभी नहीं हो सकती थी कि वे एक सामान्य आदमी के घर पर जायँ, चाहे इसके लिये स्वयं वह आदमी ही प्रार्थना करे। परंतु आज अपने काम के लिये—स्वार्थ के लिये—बिना बुलाए ही जाने के लिये तैयार हैं।

व्रजमोहनलाल भी अंत को राज़ी हो गए, और उन्होंने सावित्री को जाने की आज्ञा दे दी।

दूसरे दिन सबेरे ही से सावित्री जाने की तैयारी करने लगी। दो रुपए की बढ़िया पँचमेल मिठाई मँगवाई, दो-तीन रुपए के अच्छे-अच्छे खिलौने मँगवाए। शान जमाने के लिये अपने बढ़िया कपड़े निकाले। ज़ेवरों से अपने को गोंदनी के वृक्ष की तरह लादा। अपनी दासी को भी साफ़-सुथरे कपड़े पहनाए। ठीक साढ़े ग्यारह बजे सज-सजाकर तैयार हो गईं। अब उन्हें एक-एक पल भारी हो गया। जब तक पुरोहितजी आवें-आवें, तब तक तीन बेर बुलावा भेजा। बारह बजे के पश्चात् पुरोहितजी आए। पालकीगाड़ी पहले ही से जुती खड़ी थी। सावित्री अपनी दासी-सहित गाड़ी में बैठीं। पुरोहितजी कोचवान के पास बैठे।

जिस समय ये लोग घासीराम के घर पहुँचे, उस समय सुलोचना खा-पी चुकने के पश्चात् बर्तन इत्यादि माँजकर उठी थी। पुरोहितजी ने जाकर सावित्री के आने की सूचना दी। सुलोचना ने पुरोहितजी पर एक तीव्र दृष्टि डालकर ठंडी साँस खींची। परंतु मुँह से कुछ न कहा। उसने शीघ्रता-पूर्वक एक सफ़ेद धोती निकालकर पहन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जी, और सावित्री के बैठने के लिये एक गद्दा बिछाकर उस पर एक चादर बिछा दी। इसके पश्चात् पुरोहितजी से सावित्री को बुला लाने के लिये कहा।

सावित्रीदेवी नाक पर सुगंधित रूमाल रक्खे हुए पहुँचीं। सावित्री को यह विश्वास था कि सुलोचना उनकी तड़क-भड़क देखकर स्तंभित हो जायगी, उससे कुछ कहते-सुनते बन न पड़ेगा, और अंत को वह बड़ी ख़ुशी से अपना लड़का देने को तैयार हो जायगी। इस विचार ने सावित्री के मुख पर अभिमान का गहरा रंग फेर दिया था; परंतु जिस समय सुलोचना से उसकी चार आँखें हुईं, उसका सारा अभिमान काफ़ूर हो गया। वह बुरी तरह झेपी। उसके हृदय में यह विचार आया कि कहीं सुलोचना अपने जी में यह न कहे कि जान न पहचान, अपने मतलब के लिये दौड़ी चली आई। याचना करनेवाला चाहे जितना अभिमानी हो, उसके हृदय में चाहे कितना ही आत्मगौरव हो, कम-से-कम याचना करते समय वह उस व्यक्ति के सामने, जिससे वह याचना करता है, अपनी लघुता का अवश्य अनुभव करता है।

सावित्री अपनी झेप मिटाने के लिये बोली—"बहन, मेरे आने से तुम्हें कोई कष्ट तो नहीं हुआ?"

इसमें संदेह नहीं कि सुलोचना सावित्री के आने की सूचना पाकर प्रसन्न नहीं हुई थी, क्योंकि उसने उसके आने का तात्पर्य समझ लिया था। किंतु शिष्टाचार के नाते उसे यह कहना ही पड़ा—"नहीं बहन, भला, यह भी कोई बात है? तुम्हारे आने से तो मेरा घर पवित्र हो गया। हमारे ऐसे भाग कहाँ, जो तुम-सरीखी हमारे घर आवें।"

इन शब्दों ने सावित्री की झेप मिटाने में बहुत कुछ सहायता दी। उसने समझा, सुलोचना ने ये शब्द शुद्ध हृदय से कहे हैं।

सुलोचना ने सावित्री को आदर-पूर्वक बैठाया, और स्वयं सामने एक चटाई पर बैठ गई।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलोचना के दोनो छोटे बच्चे भी वहीं आ गए, और मा के कंधे पर हाथ रखकर तथा मुँह में उँगली डालकर कौतूहल-पूर्ण नेत्रों से सावित्री को देखने लगे। सावित्री के इशारे से दासी ने मिठाई की चंगेर सुलोचना के सामने रख दी। सुलोचना बोली—"ओह, इसकी क्या ज़रूरत थी? तुमने नाहक़ फ़िक्र की।"

सावित्री—"नहीं बहन, इसमें फ़िक्र की क्या बात थी।"

मिठाई देखते ही दोनो बच्चे चंगेर की ओर बढ़े।

लड़की बोली—"अम्मा, लड्डू।"

श्यामू बोला—"अम्मा, बलफी।"

सुलोचना ने उन दोनो को एक-एक चीज़ दे दी, दोनो प्रसन्न होकर खाने लगे। सावित्री ने बच्चों की ओर देखकर कहा—"आओ मुन्ने, यहाँ आओ। यह देखो, आओ, हमारे पास आओ, तो दें।" यह कहकर सावित्री ने श्यामू को खिलौने दिखाए। श्यामू खिलौना देखकर ख़ूब हँसा, और धीरे-धीरे सावित्री की ओर चला। कुछ दूर चलकर ठिठक गया, और सुलोचना के मुख की ओर देखने लगा। सावित्री ने फिर कहा—"आ मुन्ने, दौड़ आ। बड़ा राजा बेटा है। आ, यह खिलौना ले।" श्यामू फिर चला, किंतु थोड़ी दूर चलकर फिर ठिठक गया। श्यामू की बहन ने जो यह सब देखा, तो तुरंत दौड़कर सावित्री के पास पहुँच गई, और बोली—"लाओ, हमें गुड़िया लाओ।" सावित्री ने उसे एक खिलौना दिया। यह देखकर श्यामू का साहस भी बढ़ा, वह भी दौड़कर सावित्री के पास आ गया। सावित्री ने गोद में लेकर उसके हाथ में एक खिलौना दिया। श्यामू को देखकर सावित्री मुग्ध हो गई। उसने मन-ही-मन सोचा—पुरोहितजी सच कहते थे, यह लड़का मेरे ही योग्य है।

सावित्री ने पूछा—"क्यों बहन, कोई और लड़का भी है?"

सुलोचना—"हाँ, एक इन दोनो का बड़ा भाई है। बड़ा खिलाड़ी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है। दिन-भर पड़ोस के घरों में खेला करता है। आज सवेरे तो था, अभी खा-पीकर चला गया है।"

सावित्री—"उसे कहीं पढ़ने-लिखने क्यों नहीं भेजतीं?"

सुलोचना एक ठंडी साँस भरके बोली—"क्या करें बहन! पेट ही से नहीं बचता, पढ़ावें-लिखावें कहाँ से?"

सावित्री सोचने लगी कि किस प्रकार बात उठानी चाहिए? वह इसी चक्कर में पड़ी थी, कुछ कहने के लिये उसका साहस नहीं होता था। अंत को बहुत कुछ सोच-विचारकर उसने कहा—"बहन, क्या कहूँ, कहते लाज लगती है। तुम कहोगी, अपने मतलब की बात कहती हैं, पुरोहितजी ने तुमसे कुछ कहा था?"

सुलोचना—"हाँ, कहा तो था।"

सावित्री—"हाँ, मुझसे वह कहते थे कि तुम यह समझती हो कि लड़के को किसी प्रकार का कष्ट....."

सुलोचना—"नहीं बहू, यह तो कोई बात नहीं। तुम्हारे यहाँ कष्ट होगा, तो सुख कहाँ होगा? सच पूछो, तो मेरे घर से अधिक सुख मिलेगा। पर बात यह है कि मेरा तो यही एक खिलौना है, इसी से दिन-रात जी बहलाया करती हूँ। बड़ा लड़का जो है, वह घर में बैठता नहीं। बाप दूकान गए नहीं कि वह भी निकल जाता है। बहन, तुम समझ सकती हो, हम ग़रीबों के जी बहलाने को और क्या रक्खा है। इन्हीं से जी बहलाया करती हैं।"

सावित्री—"हाँ बहन, यह बात तो तुम्हारी ठीक ही है। बहन, ग़रीबी-अमीरी तो चली ही जाती है। अमीर भी पाव-भर आटा खाता है और ग़रीब भी। सच पूछो, तो तुम बड़ी भागवान हो। जिसके घर में बच्चे हैं, उससे बढ़कर कोई भागवान नहीं। वह अमीर ही हुए, तो क्या हुआ। बच्चों की लालसा रुपयों से तो पूरी नहीं होती। क्या कहूँ बहन, भगवान् हमारी सुनता ही नहीं। जो आज

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हमारे कोई लड़का-बच्चा होता, तो हम दूसरों के बच्चे लेने के लिये क्यों तरसते। बहन, तुम्हारी राज़ी से हमारी राज़ी है। हमारा कुछ ज़ोर तो है नहीं।"

यह कहकर सावित्री लगी आँसू बहाने। आँसू बहाते हुए बोली—"बहन, तुम्हारी बदौलत हमारे घर में भी चाँदना हो जाता, तो अच्छा था। जी बहलाने की जो कहो, तो यह कहीं चला तो जायगा ही नहीं। तुम्हारा जब जी चाहे, बुला लिया करना। जब तक चाहना, अपने पास रखना, वह भी तुम्हारा ही घर है। वहीं चली आया करना। जब तक जी चाहे, मेरे पास रहना।"

सावित्री की दशा पर सुलोचना को बड़ी दया आई। उसका हृदय पहले ही से डगमगा रहा था। गत रात्रि को घालीराम ने भी बहुत कुछ समझाया-बुझाया था, बड़े-बड़े सब्ज़ बाग़ दिखाए थे। अब इस समय सावित्री की दशा देखकर उसका हृदय पसीजने लगा।

सावित्री फिर बोली—"एक बात और है। मैं तुमसे कहती हूँ, मैंने तो आज से तुम्हें अपनी बहन समझ ही लिया। लड़का दो, चाहे न दो, तुम्हारी ख़ुशी है, पर अब यह नाता नहीं टूटेगा। हाँ, तो एक बात और है—ज़रा मेरे पास आ जाओ।"

सुलोचना सावित्री के पास आ बैठी। अशिक्षित स्त्रियाँ प्रायः पेट की हलकी होती हैं। थोड़ी-सी जान-पहचान ही में अपने जी की सारी बातें कह डालती हैं। सावित्री ने भी सुलोचना से अपने घर का सारा कच्चा चिट्ठा कह सुनाया। तत्पश्चात् बोली—"अब तुम्हीं बताओ, क्या तुम यह बात चाहोगी कि तुम्हारी जोड़ी-सँगोड़ी गृहस्थी तुम्हारे देवर-जेठ ले जायँ?"

सुलोचना बोली—"नहीं बहन, अपनी गृहस्थी कौन लुटाना चाहेगा?"

सावित्री—"भगवान् तुम्हारा भला करे। मैं तो रोती हूँ, तो किस

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लिये ? सारा रोना तो इसी का है। अब जो तुम लड़का दे दोगी, तो उससे यह होगा कि उनका (व्रजमोहन का) नाम भी चलेगा। और, भगवान् वह दिन न दिखावें—वह दिन देखने के पहले ही मैं मर जाऊँ—जो कहीं उनको कुछ हो गया, तो मेरी गृहस्थी तो बच जायगी।"

सुनने की अपेक्षा देखने का प्रभाव अधिक पड़ता है। अभी तक तो सुलोचना व्रजमोहनलाल के वैभव का हाल सुन ही रही थी, अब सावित्री के आने से उसने अपनी आँखों से देख लिया। इसके अतिरिक्त सावित्री ने घुल-घुलकर ऐसी मीठी बातें कीं कि सरल-हृदया सुलोचना पूर्णतः पसीज गई। उसने कई बार चाहा कि सावित्री से कह दे—अच्छा, ले जाओ। तुम्हारा ही होकर जी जाय। परंतु यह बात मुँह तक आकर रह जाती थी, कहने का साहस नहीं होता था। उसे मालूम होता था कि कोई भीतरी शक्ति उसकी जिह्वा पकड़ लेती है। सुलोचना सावित्री द्वारा परास्त की जा रही थी। उसके पुत्र-प्रेम की शक्ति, जिसका निवास-स्थान एक कमज़ोर हृदय था, अनेक बाहरी प्रतिकूल शक्तियों द्वारा दबाई जा रही थी। उसकी यह शक्ति बहुत कुछ दब गई थी, उसके दबाए जाने का काम पहले ही से आरंभ हो चुका था। अब केवल मुख से 'हाँ' न निकलने देना यही उस शक्ति का सँभाल लेना-मात्र था।

बातें करते-करते सावित्री ने पूछा—"क्यों बहन, श्यामू के बाप क्या महीना पाते हैं ?"

सुलोचना—"पचीस रुपए पाते हैं।"

सावित्री—"ओहो ! बहुत कम पाते हैं। हमारी दूकान पर तो मुनीम पचास-साठ रुपए तक पाते हैं।"

उसी समय श्यामू का बड़ा भाई शंभू हाँफता हुआ आ पहुँचा। उसके कपड़े धूल में भरे हुए थे। उसने आकर पहले तो सावित्री को सिर से पैर तक देखा, देखकर कुछ सोचता रहा, इसके पश्चात्

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छोटे भाई और बहन को मिठाई खाते देख अपनी माता से बोला—"अम्मा, मुझे भी मिठाई दो।"

सुलोचना बोली—"बस, मिठाई खाने के लिये आ पहुँचा। यों तो दिन-दिन-भर पता नहीं लगता।"

सावित्री बोली—"दे दो, बच्चे हैं। (शंभू से) बेटा, थोड़ी देर मा के पास भी बैठा करो। दिन-दिन-भर बाहर रहना अच्छा नहीं होता। देखो तो, कुरते में कितनी मट्टी भरी है। भला, कोई धूल में खेलता है।"

शंभू ने सावित्री की ओर फिर उसी प्रकार ताका, परंतु मुँह से कुछ न कहा। उसकी मा ने मिठाई की दो-तीन चीज़ें उसके हाथ में रख दीं। शंभू लेकर बाहर की ओर चल दिया। सुलोचना ने कहा—"क्यों रे, फिर बाहर चला!"

शंभू—"अभी आ जाऊँगा" कहता मिठाई खाता हुआ चला गया।

सावित्री बोली—"इसे पढ़ने बिठा दो, नहीं यह बिगड़ जायगा।"

सुलोचना ठंडी साँस लेकर बोली—"देखो, अब कुछ-न-कुछ करना ही पड़ेगा।"

सावित्री कुछ क्षण तक ठहरकर बोली—"बहन, बुरा न मानो, तो एक बात कहूँ।"

सुलोचना विस्मित होकर बोली—"कौन बात?"

सावित्री—"तुम इसे पढ़ने बिठा दो, इसकी पढ़ाई का ख़र्च मैं दूँगी।"

सुलोचना मन-ही-मन प्रसन्न हुई। परंतु इस प्रसन्नता में कुछ अंश संकोच का भी था। संकोच इसलिये था कि उसका हृदय किसी का एहसान लेने का अभ्यस्त न था। उसने सावित्री की बात का कोई उत्तर न दिया।

सावित्री ने उसे चुप देखकर कहा—"क्यों बहन, क्या बुरा मान गईं?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलोचना हँसकर बोली—"नहीं, बुरा क्यों मानूँगी, इसमें बुरा मानने की क्या बात है? मैं यह सोचती थी कि अभी यह क्या पढ़ेगा। साल-छ महीने और ठहर जाओ।"

सावित्री—"देर करने ही में तो बुराई है। बस, तुम इसे आज-ही-कल में बिठा दो। कोई सोच-विचार न करो।"

सुलोचना का संकोच उलटी साँसें लेने लगा—उसने दबी ज़बान से कहा—"अच्छा, बिठा दूँगी।"

कुछ देर तक और बातचीत करने के पश्चात् सावित्री ने कहा—"अच्छा, बहन, अब मैं जाऊँगी। हाँ, तो क्या इच्छा है? मेरा दुःख तो तुम सुन ही चुकीं, अब उसे दूर करना-न करना तुम्हारे हाथ है।" यह कहकर सावित्री ने अपनी जाकट की जेब से २५) रु० निकाले, और सुलोचना के सामने रखकर बोली—"ये रुपए रख लो, शंभू को जल्दी ही कोई अच्छा मूहरत देखकर पढ़ने बिठा देना।"

सुलोचना की आँखों में आँसू छलछला आए। उसी समय सावित्री बोली—"हाँ तो, बहन, एक बात कह दो 'हाँ' या 'नहीं'।"

"अच्छा, बहन, तुम्हीं रक्खो, तुम्हारा ही होकर जी जाय"—इधर तो सुलोचना के मुँह से यह वाक्य निकला, और उधर आँखों से आँसुओं की धारा फूट निकली।

नवाँ परिच्छेद

अब व्रजमोहनलाल ने अपने मित्रों तथा संबंधियों में लड़का गोद लेने की घोषणा कर दी। संसार में अनेक प्रकृतियों के लोग हैं। बहुतों ने उनके इस कार्य को उचित समझा, और बहुतों ने अनुचित। अनुचित समझनेवालों में भी ऐसे एक-ही-दो निकले, जिन्होंने व्रजमोहनलाल के मुँह पर इसे अनुचित कहा हो; अधिकांश ने मुँह पर उचित ही कहा, परंतु पीठ-पीछे बात पड़ने पर बोले—"भई, हमें तो व्रजमोहन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

का यह काम अच्छा नहीं लगा। उन्हें लड़का गोद लेने की आवश्यकता ही क्या थी, घर में भगवान् के दिए भाई-भतीजे सब मौजूद हैं, एक छोटा भाई पास ही रहता है, उसका ब्याह-गौना सब उन्होंने ही किया है, समझते, तो वही बेटे से अधिक था—कम-से-कम गोद लिए हुए से तो अच्छा ही था। पर न-जाने उन्हें क्या सूझी।"

एक दूसरे महाशय बोले—"समझें क्या? भैया, बात असल में यह है कि ललाट का लिखा नहीं मिटता। यह धन-दौलत जो इकट्ठा की है, वह भी तो ठिकाने लगा चाहे; जिसके भाग्य का होगा, उसे इसी बहाने मिलेगा।"

"अरे, भाग्य-वाग्य क्या—बुढ़ापे में अपनी दुर्दशा करावेंगे। लड़का अच्छा हुआ, तो ख़ैर, कोई बात नहीं, नहीं, तो यही होगा कि यह धन-दौलत भी तीन-तेरह हो जायगी, और दुर्दशा होगी, सो अलग। लाख कुछ हो, अपना अपना ही है, और पराया पराया ही—पराए पूत से सुख मिलना ज़रा टेढ़ी खीर हो जायगी।"

"यही बात है भाई साहब! आजकल अपने से तो सुख मिलता ही नहीं, पराए सुख देंगे? हुँह!"

जो इस कार्य को बुरा नहीं समझते थे, वे कहते थे—चलो अच्छा है, बेचारे का नाम तो किसी प्रकार चलेगा। इतना रुपया-पैसा पैदा किया, तो किस दिन के लिये? अपने मन की न करे? भाई-भतीजों की जो कहो, तो उनके लिये क्या कमी है, पढ़ा-लिखा दिया, शादी-ब्याह कर दिए। अब अपना कमावें-खावें। उसकी जो इच्छा होगी, करेगा—किसी के बाप का इजारा है?

रात के ९ बज चुके थे। ब्रजमोहनलाल के छोटे भाई बनवारी-लाल अपने कमरे में बैठे हुए अपनी स्त्री से बातचीत कर रहे थे। बनवारीलाल कह रहे थे—"चलो होगा, अपने से क्या। उनकी जो इच्छा हो, करें।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बनवारीलाल की स्त्री चंद्रमोहनी बोली—"वाह ! ऐसी इच्छा किस काम की ? घर का रुपया-पैसा बाहर फेंक देना ! यह भी कोई अच्छी बात है ? छोटे भाई-भतीजों के मुँह से छीनकर पराए लड़के को दे देना—यह तो आज तक कहीं सुना नहीं।"

बनवारी—"तो फिर किया क्या जाय ? क्या उनसे लड़ें ? वह आप समझदार हैं, दुनिया की ऊँच-नीच देखे बैठे हैं। जब उन्हीं की समझ में यह बात नहीं आती, तो और कौन समझा सकता है ?"

चंद्र०—"तो देना हो, तो अपनी चीज़-वस्त (वस्तु) दें। इस धन-दौलत में क्या तुम्हारा कोई भी हिस्सा नहीं है ?"

बनवारी—"पिताजी ने मरते समय दस-दस हज़ार रुपए तीनों भाइयों को बाँटा था। जिसमें से मँझले भैया (तहसीलदार) ने तो अपना ले लिया, ख़ाली मेरा दस हज़ार उनके पास है।"

चंद्र०—"और मकान ?"

बनवारी—"जिस मकान में रहते हैं, इसमें तो तीनों का हिस्सा है, क्योंकि यह पिताजी ही का बनवाया हुआ है। बाक़ी और मकान बड़े भैया के ख़रीदे और बनवाए हुए हैं, उनमें हमारा दोनों भाइयों का कोई हिस्सा नहीं।"

चंद्र०—"और दुकान में किसका रुपया लगता है ?"

बनवारी—"यह मुझे नहीं मालूम, न मैंने इस विषय में कभी पूछा, और न उन्होंने बताया।"

चंद्र०—"तुमने अपने रुपए कभी माँगे ?"

बनवारी—"तुम तो पागलों की-सी बातें करती हो। उन्होंने मुझे पाल-पोसकर इतना बड़ा किया, पढ़ाया-लिखाया, ब्याह-शादी की, मैं तो उन्हें अपने बाप के बराबर ही समझता रहा। भला, मैं उनसे रुपया माँगता। माँगूँ, तो वह अपने जी में क्या कहेंगे ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चंद्र०—"मँझले जेठजी ने माँगा था, या इन्होंने अपने-ही-आप दे दिया ?"

बनवारी—"जब वह तहसीलदार हुए, और अलग रहने लगे थे, तभी शायद बड़े भैया ने अपने-ही-आप दे दिया था।"

चंद्र०—"ख़ैर, बड़े जेठजी ने अभी तक जो किया, सो अच्छा ही किया; पर अब उनकी मत ठिकाने नहीं रही। ले बताओ, घर में छोटे भाई के होते हुए लड़का गोद लेने चले। हुँह, मेरी समझ में तो तुम अब किसी बहाने से अपना रुपया निकाल लो, तो ठीक है; नहीं तो गड़बड़ हो जायगी। जीवन का कोई भरोसा नहीं। कल को इनकी आँखें मुँद गईं, तो फिर एक कौड़ी न मिलेगी, जिठानीजी से यह आस नहीं कि वह हँसी-ख़ुशी दे दें।"

बनवारी—"देंगी नहीं, तो जायँगी कहाँ ? कोई छिपी-मुँदी बात तो है नहीं; दुनिया जानती है, पिताजी के हाथ का लिखा हुआ वसीयत-नामा धरा है। मँझले भैया मौजूद हैं, वह खड़े-खड़े दिलवा देंगे।"

चंद्र०—"लड़ाई-झगड़ा होकर मिला भी, तो उससे क्या लाभ, आपस में मन-मैले होना कोई अच्छी बात है ? इससे अभी हँसी-ख़ुशी मिल जाय, तो अच्छा है। साँप मरे, न लाठी टूटे।"

बनवारी—"हाँ, यह बात भी तुम्हारी ठीक ही है, पर मैं कैसे कहूँ ? ऐसा न हो, वह अपने जी में बुरा मान जायँ।"

चंद्र०"—किसी बहाने से कहोगे, तो काहे को बुरा मानें होके

बनवारी हँसकर बोले—"कौन बहाना ढूँढ़ूँ [illegible] !"

बेटे का ब्याह तो करना ही नहीं है, औ[illegible] का मुँह भारी हो गया, काम है।"

बेटी-बेटे के ब्याह की बात [illegible]-पूर्वक कहा—"अच्छा, तो तुम उसने सिर नीचा कर लिया [illegible] चुके, और अभी यही नहीं जाना कि बनवारीलाल फिर बो[illegible]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उन्हीं का पहनता हूँ, जेबख़र्च के लिये भी वह देते ही हैं—फिर और कौन बहाना ढूँढ़ूँ ?"

चंद्रमोहनी कुछ क्षण तक सोचकर बोली—"भला, जो मेरे लिये गहना बनवाने का बहाना करके लो, तो ?"

बनवारीलाल कुछ चौंककर बोले—"हाँ, ख़ूब याद दिलाई। तुम्हारे लिये जो गहना-कपड़ा बना है, वह भी तो काटेंगे !"

चंद्र०—"वह भी काटेंगे ?"

बनवारी—"क्यों, काटेंगे नहीं, तो क्या छोड़ देंगे ? गहने-कपड़े में कुछ न लगा होगा, तो चार-पाँच हज़ार लगा होगा। यह सब क्या वह अपने पास से थोड़ा ही देंगे ? यों उनकी इच्छा की बात दूसरी है, चाहे एक पैसा न काटें।"

चंद्र०—"तो इस हिसाब से तुम्हारे हिस्से के पाँच-ही-छ हज़ार बचे।"

बनवारी—"और क्या। और, जो कहीं ब्याह का सारा ख़र्च काटा, तो एक हज़ार और निकल जाएँगे।"

चंद्र०—"उँह ! अब दुनिया-भर के ख़र्च काटेंगे ? ऐसे तो तुम्हें इतने दिन खिलाया-पहनाया, वह भी काट लें—पढ़ाई-लिखाई में ख़र्च किया, वह भी काट लें। ब्याह का ख़र्च काटेंगे, तो वह भी तो देना पड़ेगा, जो मेरे मायके से मिला है, वह क्या कुत्तों के पेट बनाया जायगा ?"

पूछा, और न [illegible] "हिसाब-किताब होगा, तो देना ही पड़ेगा।"

चंद्र०—"तुमने अपने [illegible] बात और हो सकती है।"

बनवारी—"तुम तो पागल [illegible]

[illegible]झे पाल-पोसकर इतना बड़ा किया, [illegible] एक अलग दूकान करा दें।"

[illegible], मैं तो उन्हें अपने बाप के बराबर ही [illegible]गी। अभी मुझे दुकान के [illegible]से रुपया माँगता। माँगूँ, तो वह अपने [illegible] में वह यह बात कभी न

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मानेंगे, और जो मान भी गए, तो यह बात हमारे लिये भी ठीक न रहेगी, क्योंकि जब काम करने के ढंग ही अच्छी तरह नहीं मालूम, तो उससे लाभ के बदले हानि होने का डर है।"

चंद्र०—"तुम्हारी मत भी अनोखी है! ढंग नहीं मालूम, तो क्या हुआ? बड़े जेठजी कहीं सात समुंदर पार तो चले ही नहीं जायँगे। रहोगे तो एक ही घर में; जो बात समझ में न आवे, उनसे पूछ लिया करना।"

बनवारी—"मेरी समझ में नहीं आता कि तुम इतनी चिंतित क्यों हो? लड़का ही गोद लेते हैं न?—तो लेने दो, इससे हमारा क्या बिगाड़ होगा? हमारे हिस्से के रुपए तो दूध पी रहे हैं, वह कहीं नहीं जा सकते—चाहे एक नहीं, दस लड़के गोद लें। एक बात और भी है, यह सारा खेल भाभी खेल रही हैं, भैया केवल उन्हें प्रसन्न करने के लिये उनकी 'हाँ' में 'हाँ' मिला रहे हैं, नहीं, भला, वह ऐसी बातों में पड़नेवाले जीव हैं? यह मुझे विश्वास है कि मुझ पर भैया का प्रेम कम न होगा, चाहे पचास लड़के आवें।"

चंद्रमोहनी मुँह बिचकाकर बोली—"बड़े-बड़े प्रेम मट्टी में मिल जाते हैं। संसार अपने मतलब में लगा है, सब अपने-अपने मन की कर रहे हैं, फिर मैं नहीं समझती, तुम क्यों हाथ-पर-हाथ धरे बैठे हो?"

बनवारी—"तुम बात तो समझती नहीं, अपनी ही हाँके जाती हो।"

चंद्र०—"हुँ, तुम्हीं तो एक बड़े समझदार हो!"

बनवारीलाल ने देखा कि चंद्रमोहनी का मुँह भारी हो गया, भौंहें तन गईं। उन्होंने बड़ी नम्रता-पूर्वक कहा—"अच्छा, तो तुम चाहती क्या हो?"

चंद्र०—"सारी बातें सुन चुके, और अभी यही नहीं जाना कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

क्या चाहती हूँ ? मैं जो कुछ चाहती हूँ, वह ख़ाली अपने लिये नहीं चाहती। अभी इसे बहुत दिनों संसार में रहना है, गिरस्ती (गृहस्थी) जोड़नी है, और न-जाने क्या-क्या करना है। भला, जो यही हाल रहा, तो कैसे काम चलेगा ? सभी उमर रोटी-कपड़े ही पर टेर नहीं करना है। भाई-भाभी के भरोसे रहकर काम नहीं चलेगा, अपने जी से यह भरम (भ्रम) निकाल डालो। अब वह लड़का गोद ले रहे हैं, अब जो करेंगे, सो उसी के लिये। तुम्हारा लाड़-प्यार जो होना था, सो हो चुका, अब उस बूँद से भेंट नहीं होना है। रोटी-कपड़ा भी तब देंगे, जब सबेरे से दस बजे रात तक दुकान में चक्की पिसावेंगे—उनका क्या जायगा—न एक नौकर रक्खा, तुम्हीं को रक्खा।"

चंद्रमोहनी ने ये बातें इतनी गंभीरता-पूर्वक और ऐसे ढंग से कहीं कि बनवारीलाल सोच में पड़ गए। उन्हें चंद्रमोहनी की बातों में कुछ-कुछ सत्यता की झलक दिखाई पड़ने लगी। उन्होंने सोचा—वास्तव में कहती तो सच है। भैया को हमसे प्रेम होता, तो यह काम कभी न करते, भाभी लाख कहा करतीं। वह हमसे अवश्य भेद-भाव रखते हैं, तब तो इस बात पर राज़ी हो गए। इसके अतिरिक्त उन्होंने इस विषय पर मुझसे एक दिन भी बातचीत न की, अलग-ही-अलग सब ठीक-ठाक कर लिया। जब हरएक बात में सलाह लेते हैं, तो इसमें भी लेनी चाहिए थी। मैं कुछ उनका शत्रु तो था ही नहीं, मुझे तो और प्रसन्नता ही हुई।

बनवारीलाल बड़ी देर तक इसी उधेड़-बुन में रहे। अंत को उन्होंने बहुत सोच-विचार के बाद चंद्रमोहनी से कहा—"अच्छा, अब कोई-न-कोई ढंग तो निकालना ही पड़ेगा। तुम्हारी बातों में भी बहुत कुछ सार है। वास्तव में ऐसे काम न चलेगा।"

चंद्र०—"सचे जी से कह रहे हो, या केवल मेरा मन रख रहे हो ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बनवारी—"तुम भी क्या बातें करती हो ? इससे हमारा-तुम्हारा दोनों का लाभ है—मन रखने की क्या बात है। जिसमें तुम्हारा लाभ, उसमें मेरा, और जिसमें मेरा, उसमें तुम्हारा। माया तो सब एक ही है।"

चंद्रमोहनी का मुख-कमल खिल गया ; उसने मुस्किराकर प्रेम-भरी दृष्टि से पति की ओर देखा।

दसवाँ परिच्छेद

उपर्युक्त घटना को बीते छ महीने हो गए। अब व्रजमोहनलाल की दुकान का नाम 'व्रजमोहनलाल-श्यामलाल' लिखा जाता है। घासीराम उस दुकान के बड़े मुनीम हैं। उन्हें ७५) मासिक वेतन मिलता है। उन्होंने अब अपना मकान भी बदल दिया है। अब वह व्रजमोहनलाल के ही एक मकान में रहते हैं। घासीराम का बड़ा लड़का अब गलियों में नहीं खेलता फिरता, अब वह एक हाई स्कूल में पढ़ने जाता है। अपने इस परिवर्तन से घासीराम बहुत संतुष्ट मालूम होते हैं, किंतु सुलोचना संतुष्ट नहीं मालूम होती। यद्यपि अब खाने-पहनने का अभाव नहीं, किंतु तो भी न-जाने वह क्यों रहती है। उसका मुख देखने से मालूम होता है कि उसके कोई घुन लग गया है, जो भीतर-ही-भीतर उसे [illegible] दिनों में है। घासीराम से यह बात छिपी नहीं है [illegible] परवा नहीं करते।

"हाँ, आज कई दिनों में सावित्रीदेवी अब बहुत सुखी म[illegible]" श्यामू का मुँह देखा करती हैं। दिपास बैठ गई। सावित्री की उसके कपड़े बदलती हैं, कई बार [illegible] की दृष्टि सबसे पहले जिस सावित्रीदेवी से इतना हिल गया है कि श्यामू का शरीर हृष्ट-पुष्ट गया है, वह सावित्री ही को अपनी शोभा धारण की थी। कपड़े

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भी अत्यंत संतुष्ट मालूम होते हैं। केवल बनवारीलाल तथा उनकी प्रेम-प्रतिमा चंद्रमोहनी संतुष्ट नहीं मालूम होती।

दोपहर को बारह बज चुके थे। सावित्रीदेवी भोजन इत्यादि से निवृत्त होकर अपने सुसज्जित कमरे में बैठी एक पुस्तक पढ़ रही थीं। पास ही श्यामू अनेक प्रकार के खिलौनों से खेल रहा था। सावित्री-देवी की ननँद कौशल्यादेवी बैठी उसे खिला रही थीं। सहसा कौशल्या ने सावित्री से पूछा—"आज चंद्रमोहनी इधर नहीं आई?"

सावित्रीदेवी मुँह चढ़ाकर बोलीं—"अब वह आती ही कब है?"

कौशल्या—"हाँ, इधर, दो-एक महीने से तो वह कुछ फटी-फटी-सी रहती ही थी, पर अब और भी अलग-अलग रहने लगी।"

सावित्री—"रहने दो, अपने से क्या; उसका जो जी चाहे, करे।"

कौशल्या—"न-जाने क्यों चिढ़ी हुई है?"

सावित्री—"अरे, तुझे नहीं मालूम?"

[illegible]ल्या—"न भाभी, मैं क्या जानूँ? मैंने तो दो-एक बेर उससे [illegible] था, पर वह टाल-मटूल कर गई।"

[illegible] अरी बावली, जिस दिन से श्यामू ने इस घर में पैर भेद[illegible] दिन से उसकी हवा ही बदल गई।"

अति[illegible]—"अच्छा! भला, श्यामू से वह क्यों चिढ़ गई? इस अलग-ही[illegible] क्या बिगाड़ा?"

सलाह लेते हैं, तो इ[illegible] क्या? वह समझती है, जो श्यामू न आता, तो था ही नहीं, मुझे तो [illegible]ता। अब भला, कैसे मिल सकता है?"

बनवारीलाल बड़ी देर त[illegible] क्या ऐसी बात है?"

बहुत सोच-विचार के बाद [illegible] क्या? तू उसे समझती क्या है? एक न-कोई ढंग तो निकालना ह[illegible] मंतर (मंत्र) नहीं। अभी दो ही कुछ सार है। वास्तव में ऐ[illegible]रस में पुरखिन बन बैठी। ख़सम को

चंद्र०—"सच्चे जी से कह तो उँगलियों पर नचाया करती है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कौशल्या—"ओफ़् ओह ! ले भाभी, मुझे यह कुछ भी मालूम नहीं। हे भगवान् ! आजकल की बहू-बेटियाँ भी.....क्या कहूँ !"

उसी समय दासी ने आकर कहा—"वह आई हैं।"

कौशल्या ने पूछा—"कौन ?"

दासी—"अरे वही, जो कबहूँ-कबहूँ आवा करती हैं—अरे, इन ही स्यामू की अम्मा।"

इतना सुनते ही सावित्री आग हो गई। दासी की ओर घूरकर बोली—"क्यों री, आज फिर तूने यह बात कही हरामज़ादी कहीं की ? सौ बेर समझा दिया कि उसे श्यामू की अम्मा न कहा कर, पर तू नहीं मानती। बहुत चल निकली है। झोंटे पकड़कर निकालूँगी—यह याद रखना—राँड कहीं की।"

कौशल्या—"तू कैसी बेसहूर (बेशऊर) है—हज़ार बेर कह दिया, फिर भी वही उलटी बात कहेगी—ख़बरदार, जो अब कभी ऐसी बात कही। चल, जा, उन्हें यहीं बुला ला।"

दासी बेचारी बड़ी अप्रतिभ हुई। चुपचाप कान दबाए वहाँ से चल दी। उसके चलते-चलते सावित्रीदेवी ने दाँत पीसकर कहा—"अब जो कभी कहा, तो चिमटे से जीभ खींच लूँगी; हाँ, यह याद रखना। कुछ क्षण के पश्चात् सुलोचना आ पहुँची। सुलोचना को देखते ही सावित्री हँसकर बोली—"आओ, आज कई दिनों में आईं।"

सुलोचना सूखी हँसी हँसकर बोली—"हाँ, आज कई दिनों में आई। काम-काज से छुट्टी नहीं मिलती।"

इतना कहकर सुलोचना कौशल्या के पास बैठ गई। सावित्री की बात का उत्तर देने के पश्चात् सुलोचना की दृष्टि सबसे पहले जिस पर पड़ी, वह श्यामू था। इस समय श्यामू का शरीर हृष्ट-पुष्ट था। उसके सहास्य मुख ने [illegible] की शोभा धारण की थी। कपड़े

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भी अच्छे पहने था, जिनके कारण उसका सौंदर्य और भी बढ़ गया था। सुलोचना उसे स्थिर दृष्टि से देखने लगी, सुलोचना के मुख पर हलकी मुस्किराहट थी, आँखों में विचित्र भाव था। उस भाव में प्रेम तथा लालसा मिली हुई थी। श्यामू खेलने में निमग्न था, कभी हँसता था, कभी उछलता। उसके हाव-भाव देखकर सुलोचना के रोम-रोम से हर्ष टपक रहा था। उसके पीले मुख पर, जिस पर अब कालिमा भी दौड़ चली थी, इस समय लाली आ गई थी। सुलोचना कुछ क्षण तक मूर्तिवत् बैठी देखती रही। इतने ही समय में उसकी आँखें उसके हृदय को तृप्त करने में असमर्थ हो गईं। जितना ही अधिक देखा, उतना ही किसी को छाती से लगा लेने के लिये हृदय अधिक मचलने लगा। सुलोचना ने भी अपने हृदय को रोकने की कुछ भी चेष्टा न की। वह इस समय संसार को भूल गई थी, अपने शरीर को भूल गई थी। केवल उसकी आँखों के सामने श्यामू था, और छाती के भीतर मातृ-प्रेम की चोट से तड़पता हुआ हृदय। शरीर के ऊपर से मस्तिष्क का आधिपत्य उठ गया था, उस पर इस समय केवल हृदय का आधिपत्य था; जो हृदय ने चाहा, शरीर को वह मानना पड़ा। उसके दोनो हाथ श्यामू की ओर बढ़े, और जिह्वा ने कहा—"बेटा श्यामू"। सावित्री को सुलोचना की यह बात अच्छी न लगी, परंतु उसे कुछ कहने का साहस भी नहीं हुआ। श्यामू ने घूमकर सुलोचना की ओर देखा। उसकी आँखें सुलोचना की आँखों से मिलीं। उसका सरल हृदय सुलोचना के आकर्षण को न रोक सका। वह खेलना भूल गया, और धीरे-धीरे सुलोचना की ओर बढ़ने लगा। सुलोचना उसे अपनी ओर बढ़ते देख फिर बोली—"आओ बेटा, दौड़ आओ।" श्यामू कुछ क्षण तक बड़े ध्यान-पूर्वक सुलोचना को देखता रहा, तत्पश्चात् दौड़कर उसके पास पहुँच गया। सुलोचना ने उसे छाती से चिपका लिया। उसके हृदय से आह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

निकल गई। वह 'आह' दुःख की आह नहीं थी, वह सुख की आह थी। एक प्यासा मनुष्य शीतल जल पीकर जो आह भरता है, वह आह उसी प्रकार की थी। उसकी आँखों में आँसू छलछला आए। श्यामू बड़े ध्यान से सुलोचना के मुख को देख रहा था। मालूम होता था, जैसे उसका नन्हा-सा कमज़ोर मस्तिष्क किसी भूली हुई बात को याद करने की चेष्टा कर रहा है। सावित्री का हृदय धड़कने लगा। उसे भय हुआ कि कहीं श्यामू अपनी माता को पहचान न जाय। उसने सुलोचना से नम्रता-पूर्वक कहा—"बहन, उसे छोड़ दो; ऐसा न हो, तुम्हें पहचान जाय, तो आफ़त हो। बड़ी मुश्किलों से भूला है।" सुलोचना चौंक पड़ी। मालूम होता था कि वह गहरी नींद से अकस्मात् जाग उठी है। उसने एक बार श्यामू को नीचे से ऊपर तक आँख भरके देखा, और उसका मुँह चूमकर बोली—"जाओ बेटा, अपनी मा के पास जाओ।" उधर उसी क्षण सावित्री ने भी पुकारा—"आ श्यामू, यहाँ मेरे पास आ, ले यह खिलौना।" श्यामू ने सावित्री की बात पर कुछ ध्यान न दिया। सावित्री ने फिर वैसा ही वाक्य कहा। इधर सुलोचना ने उसे अपनी गोद से अलग करके फिर कहा—"जाओ बेटा, अपनी मा के पास जाओ। देखो, वह कैसा अच्छा खिलौना है, जाओ बेटा।" सुलोचना कहने को तो यह सब कह गई, किंतु उसके हृदय पर ऐसी चोट पड़ी कि वह तिलमिला गई। उसका धैर्य छूट गया—आँखों से टपटप आँसू की बूँदें गिरने लगीं। सुलोचना को अपनी यह कमज़ोरी तुरंत मालूम हो गई। उसने लज्जा तथा दुःख से अपना मुँह आँचल से छिपा लिया। उधर श्यामू का ध्यान खिलौने की ओर आकर्षित हुआ। खिलौने ने फिर उसकी स्मरण-शक्ति पर पर्दा डाल दिया, और वह दौड़कर सावित्री के पास चला गया। सुलोचना की इस कमज़ोरी पर सावित्री को कुछ क्रोध आया, और कौशल्या को दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सावित्री ने कुछ रुखाई से कहा—"वाह बहन, तुम तो ज़रा-सी बात पर रोने लगीं, मैंने तो केवल इसलिये कहा था कि कहीं तुम्हें पहचान न जाय। मेरा मतलब यह थोड़े ही था कि तुम इसे गोद में लो ही न।"

धूर्त सावित्री यद्यपि सुलोचना के रोने का असली कारण समझ गई थी, परंतु फिर भी उसने जान-बूझकर बात को दूसरे पहलू पर झुका दिया।

कौशल्या ने कहा—"मेरी समझ में तो छोटी भाभी (सुलोचना) इस बात पर नहीं रोईं। (सावित्री से) क्या करे भाभी, ममता बुरी होती है।"

सावित्री ने कौशल्या पर तीव्र दृष्टि डाली। कौशल्या मन में उस दृष्टि का तात्पर्य समझकर चुप हो गई।

सुलोचना आँखें पोंछती हुई बोली—"नहीं बहन, ईश्वर जानता है, मैं तुम्हारी बात का बुरा मानकर नहीं रोई, न-जाने क्यों इस समय जी भर आया।"

सावित्री—"इस समय पर क्या, पहले भी एक बार जब आई थीं, तब भी ऐसा ही किया था।"

सावित्री अब भी सुलोचना को 'बहन' कहा करती थी, और सुलोचना भी सावित्री के प्रति यही शब्द व्यवहार करती थी; किंतु यह केवल लोकाचार था। अन्यथा सावित्री उसे अपने नौकर की स्त्री समझती थी, और सुलोचना सावित्री को अपनी मालकिन समझती थी। सुलोचना के मन में यह भय उत्पन्न हुआ कि कहीं सावित्री रुष्ट न हो जाय! उसने बड़ी चेष्टा करके अपने हृदय को सँभाला। इधर सावित्री ने दासी को [illegible] कहा—"जा, ज़रा श्यामू को बाहर खिला ला।" दासी श्यामू [illegible]।

सावित्री ने पूछा—"आज [illegible] नहीं लाई?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलोचना—"हाँ, आज नहीं लाई। उन (पति) का जी आज अच्छा नहीं है, इसलिये दुकान भी नहीं गए। उन्हीं के पास छोड़ आई हूँ।"

सावित्री—"शंभू बराबर पढ़ने जाता है?"

सुलोचना—"हाँ, जाता तो है, पर अभी उसका ध्यान खेलने में बहुत रहता है।"

कौशल्या—"अरे भाभी, बालक है। बालकों का ध्यान तो खेलने में रहता ही है।"

सावित्री—"ज़रा डाँट में रक्खा करो, लड़के बिना डाँट के नहीं पढ़ते।"

सुलोचना—"डाँट में तो बहुत रखती हूँ—डाँट में न रक्खूँ, तो जो थोड़ा-बहुत पढ़ता है, वह भी न पढ़े।"

सावित्री—"अजी राम कहो, बिना डाँट के कहीं पढ़ सकते हैं।"

आध घंटे तक इसी प्रकार इधर-उधर की बातें होती रहीं, इसके पश्चात् सुलोचना सावित्री से बिदा हुई।

सुलोचना के चले जाने पर सावित्री ने कौशल्या से कहा—"मुझे अब इसका आना अच्छा नहीं लगता। जब आती है, तभी आँसू बहाने बैठ जाती है। ऐसी ही ममता थी, तो दिया काहे को? पहले तो रुपए-पैसे के लोभ में आकर दे दिया, अब ममता दिखाती है।" कौशल्या ने सावित्री की इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। उसने फिर वही चंद्रमोहनीवाला प्रश्न छेड़ दिया।

ग्यारहवाँ परिच्छेद

सुलोचना सावित्री से बिदा होकर चली, तो द्वार ही पर उसे सावित्री की दासी मिल गई। वह श्यामू को गोद में लिए खड़ी थी। सुलोचना की दृष्टि श्यामू पर पड़ी। उसके जी में आया कि उसे एक लि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बार गोद में लेकर अच्छी तरह प्यार कर लें। सुलोचना अपनी इस इच्छा पर विजय प्राप्त न कर सकी। वह दासी के पास पहुँची। उसने श्यामू को गोद में लेने के लिये हाथ बढ़ाया, किंतु श्यामू चिल्लाकर दासी से लिपट गया। सुलोचना ने बहुत चुमकारा-पुचकारा, पर वह उसके पास न आया। जितना ही सुलोचना उसे अपनी ओर आकर्षित करने की चेष्टा करने लगी, उतना ही अधिक वह चिल्लाने लगा। यह देखकर दासी ने कहा—"रहने दो बहू, मालकिन सुन लेंगी, तो महनामथ मचाने लगेंगी।" सुलोचना अपना-सा मुँह लेकर चल दी।

राह-भर सुलोचना के हृदय में अनेक प्रकार के भाव आते रहे। वह सोचती थी—"मैंने बड़ा बुरा किया, जो लड़के को दूसरों के हाथों में दे दिया। अब वह मेरे हाथ से निकल गया, हाय, अब मैं उसे देखने को, एक बार गोद लेने को, तरसती हूँ। अब वह मेरे पास तक नहीं फटकता, मुझे बिलकुल भूल गया। सावित्री भी अब रुखाई करने लगी। जब लड़का माँगने आई थी, तब कैसी चिकनी-चुपड़ी बातें करती थी। ओफ़्! उसने बातें बनाकर मेरे ऊपर जादू कर दिया था, नहीं तो मैं सात जन्म में भी उसे लड़का न देती। हाय, मैंने बड़ा धोका खाया। पर 'अब पछिताए होत का जब चिड़िया चुग गई खेत।' इस सारे अनर्थ की जड़ श्यामू के बाप हैं। जो वह मुझ पर दबाव न डालते, तो मैं सावित्री की बातों में कभी न आती। हाय, मेरा श्यामू मेरे हाथों से निकल गया। ख़ैर, ले जाय, उसी का भला हो। मैं समझूँगी, मेरे एक ही लड़का था। सुलोचना की आँखें अश्रु-पूर्ण हो गईं। इसी प्रकार की बातें सोचते-सोचते अंत को सुलोचना ने मन में कहा—"ख़ैर, मेरा श्यामू सुख में है, यही क्या कम है? मैं उसे सुखी देखकर ही संतोष करूँगी।"

मनुष्य का हृदय बड़ा धैर्य-प्रिय है। वह बड़ी-बड़ी भूलों में तथा अत्यंत दुःख में भी कोई-न-कोई धैर्य की बात ढूँढ लेता है, और वही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

धैर्य उसके जीवन का सहारा होता है। सुलोचना ने भी इस घोर दुःख में इसी बात पर धैर्य कर लिया कि श्यामू सुख में है, यही क्या कम है।" इसी प्रकार की बातें सोचती हुई सुलोचना घर पहुँची। बासीराम चारपाई पर बैठे हुक्का पी रहे थे। सुलोचना को देखते ही बोले—"आज बड़ी जल्दी लौट आईं!"

सुलोचना ने मुँह बनाकर कहा—"क्या करती बैठ के? वहाँ बैठने में कुढ़ना-ही-कुढ़ना है और क्या रक्खा है?"

बासी०—"क्यों, कुढ़ना कैसा?"

सुलोचना—"कुढ़ना नहीं, तो और क्या है? श्यामू मेरी आँखों के सामने रहे, और मैं उसे गोद में भी न लेने पाऊँ। मेरे जाने से मालकिन अलग नाक-भौं चढ़ाती हैं, उन्हें डर रहता है कि कहीं श्यामू मुझसे फिर न हिल जाय। ये बातें कुढ़ने की नहीं, तो क्या खुशी की हैं?"

यह कहकर सुलोचना कपड़े बदलने चली गई।

बासीराम की भौंहें तन गईं, और लगे बड़बड़ाने—"हुँह, इसे कुढ़ना सूझता है। और प्रसन्न होने की बात है कि लड़का सुख में है, सारी धन-संपत्ति का मालिक होगा—यह उलटा कुढ़ती है। मालकिन क्यों नाक-भौं न चढ़ावें? वहाँ जाकर उलटी-सीधी बातें करती होगी। तमीज़ तो इसे छू नहीं गई। वह पढ़ी-लिखी, समझदार स्त्री ठहरी, दूसरे, बड़े घर की है, इसकी बेहूदा बातों पर क्रोध आया ही चाहे। उँह! अपने से क्या, कुढ़ने दो, इसका तो कुढ़ने का स्वभाव ही है। फिर भला, कोई कहाँ तक प्रसन्न रखने की चेष्टा करे। हम तो अपनी मौज करते हैं; बस, कोई चाहे चूल्हे में जाय, या भाड़ में, अपने से क्या।" यह सोचकर बासीराम मन-ही-मन हँसे।

थोड़ी देर पश्चात् सुलोचना आई। बासीराम ने पूछा—"कुछ तुम बात तो बतलाओ, क्या हुआ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलोचना—"ख़ैर, वह जो हुआ, सो हुआ, पर अब मैं वहाँ कभी न जाऊँगी।"

घासी०—"क्या कहा, कभी न जाओगी?"

सुलोचना—"हाँ, कभी न जाऊँगी।"

घासी०—"क्यों न जाओगी?"

सुलोचना—"क्या करूँगी जाके, मुझे अपनी दुर्दशा थोड़े ही कराना है।"

घासी०—"दुर्दशा कैसी? तू तो पहेलियाँ-सी बुझाती है। साफ़-साफ़ बता, क्यों न जायगी।"

सुलोचना—"मैं वहाँ जाती हूँ, तो मेरा जी.....।"

सुलोचना आगे कुछ न कह सकी, आँचल से मुँह ढककर फूट-फूट-कर रोने लगी।

घासीराम मन-ही-मन बड़े खिन्न हुए, पर ऊपर से नम्रता-पूर्वक बोले—"अरे, कुछ बात भी कहेगी! आख़िर हुआ क्या? किसी ने तुझे गाली दी, कुछ बुरा-भला कहा—क्या हुआ?"

सुलोचना रोते-रोते बोली—"मैं वहाँ जाती हूँ, तो मेरा जी श्यामू में धरा रहता है। मैं उसे गोद में लेती हूँ, तो उन्हें बुरा लगता है। वह उसे मेरी गोद से छीनकर इधर-उधर टाल देती हैं। क्या मैंने लड़का इसलिये दिया था कि उसे गोद में लेने को भी तरसूँ? दूसरे, श्यामू भी अब मेरे पास नहीं आता। कहाँ पहले बिना मेरे एक पल-भर भी उसे चैन न पड़ता था, कहाँ अब मुझे पहचानता तक नहीं! हे भगवान्! यह दुःख मुझसे कैसे सहा जायगा? क्या कहूँ, शंभू के बाप, तुमने जो किया, सो अच्छा ही किया। तुम्हारे ही कहने से, तुम्हारे ही सुख के लिये, मैं अपना चाँद-सा लाल खो बैठी। दूसरे, उस विश्री राँड ने भी मेरे ऊपर न-जाने क्या जादू कर दिया था कि मैं उसकी बातों में आ गई। ऐसे कैल मचाए कि मुझे दया आ गई,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और अब रांड सीधे बात नहीं करती, उसे मेरे पास तक नहीं आने देती, जानो, मेरे बच्चे को मोल ले लिया है। और, उसका सोचना भी ठीक ही है, मोल लेने से अधिक है, पछत्तर रुपए का महीना देते हैं, मकान रहने को दिया है। कोई अपना घर थोड़े ही दे देता है।"

घासीराम बिगड़कर बोले—"क्या अनाप-शनाप बक रही है? पछत्तर रुपया महीना देते हैं, तो क्या ख़ैरात देते हैं, काम नहीं करता हूँ। मकान दिया है, तो क्या कोई मेरे नाम पट्टा लिख दिया है? छ-सात रुपए किराए का मकान है। तो जब हमने उनके साथ इतनी नेकी की कि अपना कलेजे का टुकड़ा उन्हें सौंप दिया, तो क्या इतना भी न करेंगे? इसमें मोल लेने की क्या बात है? हूँ-हूँ, कहने लगी मोल ले लिया, मोल ले लिया।"

सुलोचना—"तुम तो पचील ही पाते थे, वह पछत्तर देते हैं, अब और क्या लोगे? क्या कहूँ, मेरा तो कलेजा नुचा आता है। भूखी-नंगी रही, तब भी मुझे इतना दुःख नहीं था, जितना अब है। जी चाहता है, संखिया खाकर सो रहूँ। हाय-हाय! जब मैं सोचती हूँ कि मेरा पाला-पोसा चाँद-सा बच्चा मुझसे छिन गया, तब छाती फटने लगती है। आदमी मर जाता है, सबर आ जाता है, पर जीते सबर नहीं आ सकता।"

घासी०—"तुझ गधी के मुँह कौन लगे! बात समझे, न बात की जड़, अपनी ही ओटे जाती है! तेरे पास हो रहता, तो कौन लाल उगलता। अब सुख में तो है, उसकी बदौलत हम भी आनंद करते हैं।"

सुलोचना—"तुम्हें क्यों न आनंद होगा। तुम्हें तो भर मुट्ठी रुपए मिलते हैं। तुम्हें तो सदा रुपए ही की चाह रही। आदमी को तो तुम कंकड़-पत्थर समझते हो। आदमी चाहे भाड़ में जाय, तुम्हें केवल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रुपए से मतलब। तुम आदमी की क़दर क्या समझो। आदमी की क़दर वे समझते हैं, जिन्होंने हज़ारों रुपए ख़र्च करके एक लड़का जिया, रुपए का क्या, रुपया तो आता-जाता रहता ही है; पर गया हुआ आदमी नहीं मिलता।"

घासी०—"हूँ, मुझे रुपए की चाह रही? और तुझे रुपए की चाह नहीं रही, क्यों? फिर भला, तूने दिया क्यों? क्या वह तेरी कोई सगी थी!"

सुलोचना—"रुपए के लोभ से देनेवालों को भगवान् समझेगा, और क्या कहूँ। मैंने दिया तुम्हारा दबाव पड़ने से, और यह सोचकर कि जिसमें तुम्हें सुख मिले, जिसमें लड़के को सुख मिले, और उस राँड पर दया करके, जो बहनापा जोड़ने आई थी। हाय-हाय! जब मुझे उसकी मीठी-मीठी बातें याद आती हैं, तो मैं पागल-सी हो जाती हूँ। निगोड़ी ने ऐसी बातें बनाईं कि मुझे हाँ ही करते बना।"

घासी०—"तू कहती है कि तूने मेरे सुख के लिये और लड़के के सुख के लिये दिया—अच्छा, जब हम दोनों को इससे सुख है, तो फिर तू क्यों फैल मचाती है?"

सुलोचना—"तो मैं क्या जानती थी कि मैं उसे देखने तक को तरस जाऊँगी, क्या जानती थी कि बहनापा जोड़नेवाली फिर सीधे मुँह बात भी न करेगी? और सबर तो मैं कर ही चुकी, मैंने तो समझ लिया कि मेरा श्यामू मर गया।"

इतना कह सुलोचना पुनः फूट-फूटकर रोने लगी।

घासीराम को सुलोचना पर बड़ा क्रोध आया, पर अपने क्रोध को दबाकर बोले—"तेरे लिये मर गया होगा। मेरे लिये तो वह जीवित ही है, और वह समय शीघ्र ही आएगा जब.....।"

सुलोचना आँसू पोंछकर बोल उठी—"आ चुका! यह भरम अपने जी से निकाल डालो। वह ऐसे हाथों में गया है, जो उसे इधर की ओर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

झुकने ही न देंगे। वह उन्हीं पर जायगा, जैसे वे हैं, वैसा ही वह भी उठेगा।"

घासी०—"अरी बैठ! उन्हीं पर जायगा! भला, कोई अपने मा-बाप को छोड़ देता है?"

सुलोचना—"जब मा-बाप अपने बच्चों को छोड़ देते हैं, तो बच्चे मा-बाप को छोड़ दें, तो क्या अचरज है।"

सुलोचना की यह बात घासीराम के हृदय में तीर-सी लगी। वह कुछ क्षण तक चुप बैठे रहे, तत्पश्चात् बोले—"मा-बाप ने बच्चे की भलाई ही के लिये उसे छोड़ा है, या मा-बाप के छोड़ने ही में बच्चे की भलाई हो, तो वह भी हमें स्वीकार है।"

न-मालूम सुलोचना और घासीराम कब तक झगड़ते रहते, परंतु शंभू के आने की आहट ने दोनों को चौंका दिया। सुलोचना ने झट-पट अपनी आँखें पोंछ डालीं। घासीराम हुक्के पर से चिलम उठाकर फूँकने लगे।

शंभू ने आते ही अपनी पुस्तकें एक ताक पर रख दीं, और सुलोचना से बोला—"अम्मा, कुछ खाने को दो, बड़ी भूख लगी है।"

सुलोचना के कुछ उत्तर देने के पूर्व ही घासीराम बोल उठे—"अबे, आज तू बड़ी जल्दी चला आया? कहीं भाग तो नहीं आया?"

शंभू बोला—"नहीं, आज सनीचर है, जल्दी छुट्टी हो गई।"

घासी०—"हाँ, ठीक है। बच्चा, कभी स्कूल से भागना नहीं। जो तुम किसी दिन भागे, और मैंने सुन लिया, तो खाल उधेड़ दूँगा, यह याद रखना।"

शंभू—"नहीं बाबूजी, मैं कभी न भागूँगा। मुझे स्कूल में बड़ा अच्छा लगता है।"

घासी०—"अच्छा, यह चिलम तो भर लाओ लपककें।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलोचना—"अरे, उसे ज़रा दम तो लेने दो; धूप में चलके आया है, पसीना बह रहा है। लाओ, चिलम मुझे दो, मैं भर लाऊँ।"

घासीराम का यह मकान पहले मकान से बड़ा था। इसमें दो कमरे थे। तीन-चार कोठरियाँ थीं; एक बड़ा दालान था; रसोई के लिये अलग स्थान था। सुलोचना चिलम भर लाई। घासीराम के हाथ में चिलम देकर शंभू से बोली—"चल, कुछ खा ले चलके।" शंभू ने पूछा—"श्यामा कहाँ है?"

श्यामा शंभू की बहन का नाम था। सुलोचना ने उत्तर दिया—"सो रही है।"

शंभू मा के साथ रसोई में पहुँचा। सुलोचना ने उसे थोड़ा-सा भोजन दिया। शंभू खाने लगा, और सुलोचना बैठकर पंखा झलने लगी। सुलोचना ने शंभू से कहा—"बेटा! खूब जी लगाकर पढ़ा कर। जो पढ़-लिख लेगा, तो तेरे पास खूब रुपया-पैसा हो जायगा; खूब अच्छे-अच्छे कपड़े पहनने को मिलेंगे, अच्छा-अच्छा खाने को मिलेगा। देख, जो पढ़ते नहीं, वे गली-गली भीख माँगते फिरते हैं।"

शंभू बोला—"क्यों अम्मा, जो पढ़ते नहीं, वे भीख क्यों माँगते हैं?"

सुलोचना—"वे पढ़े-लिखे रुपए नहीं कमा सकते। जो पढ़ा-लिखा होता है, वही खूब रुपया कमा सकता है। वे पढ़े-लिखे का कोई आदर भी नहीं करता, उसे कोई अपने पास नहीं खड़ा होने देता।"

शंभू—"हमारे मास्टर साहब खूब पढ़े-लिखे हैं। वह महीने में बहुत रुपया पाते होंगे?"

सुलोचना—"हाँ, ज़रूर पाते होंगे। जो तू पढ़-लिख लेगा, तो तू भी बहुत-से रुपए पाया करेगा। जो तू यह दर्जा पास हो गया, तो मैं तुझे एक नया रेशमी कोट बनवा दूँगी।"

शंभू—"और जो पास न हुआ, तो?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलोचना—"तो मैं कोट न बनवाऊँगी, और तुमसे बोलना छोड़ दूँगी।"

शंभू—"अच्छा अम्मा, मैं खूब पढ़ूँगा, और इतना पढ़ूँगा कि खूब रुपए लाऊँगा। फिर हम-तुम बाबूजी के पास नहीं रहेंगे। बाबूजी को मैं रुपए नहीं दूँगा। बाबूजी बड़े खराब हैं, मुझे मारते हैं, और तुम्हें भी चिल्लाया करते हैं।"

सुलोचना—"नहीं बेटा, ऐसा नहीं सोचा करते। बाबूजी मारते हैं, तो तेरे भले के लिये। जो तू खोटा काम न करे, तो काहे को मारें? बाबूजी ही तो हमें-तुम्हें खाने को देते हैं। वह रुपए न लावें, तो हम-तुम कहाँ से खाएँ! देख, बाबूजी उस दिन तेरे लिये नई-नई धोतियाँ लाए थे।"

शंभू—"अच्छा अम्मा, बाबूजी को भी खूब रुपए दूँगा, तुम्हें भी दूँगा, श्यामा को भी दूँगा, और श्यामू को भी दूँगा। अम्मा, श्यामू को मामा के यहाँ से बुला लो।"

श्यामू का नाम सुनके सुलोचना का कलेजा हिल गया, आँखों में आँसू छलछला आए। उसने उत्तर दिया—"अभी उसे वहीं रहने दो। जब बड़ा हो जायगा, तब बुला लेंगे।"

शंभू—"अम्मा, श्यामू मामा के यहाँ रहेगा, तो दिन-भर खेला करेगा, कुछ पढ़े-लिखेगा नहीं। पर मैं अब नहीं खेलूँगा—खाली इतवार को खेला करूँगा, और खूब पढ़ूँगा—श्यामू मेरे बराबर नहीं पढ़ पावेगा।"

यद्यपि उपर्युक्त वाक्य एक आठ-नौ वर्ष के बालक की तरंग-मात्र थे, किंतु सुलोचना के हृदय पर इन शब्दों का बड़ा प्रभाव पड़ा। उसे वह भविष्यवाणी-सी मालूम हुई। अशिक्षित स्त्रियाँ प्रायः बालकों की बातों में भविष्यवाणी की झलक देखा करती हैं। इसमें संदेह नहीं कि सुलोचना के हृदय में श्यामू को विशेष प्रकार से

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्थान मिला था। इतना प्रेम सुलोचना को अपनी किसी संतान से न था, जितना श्यामू से। श्यामू के होते हुए उसने शंभू को बहुत कम महत्त्व दिया था। श्यामू और शंभू, दोनो उसके पुत्र थे, उसने दोनो का लालन-पालन किया था। वह दोनो को अपने रत्न समझती थी। पर भेद केवल इतना था कि श्यामू को वह अत्यंत मूल्यवान् रत्न समझती थी, और शंभू को कम मूल्यवान्। एक व्यक्ति के पास दो रत्न हैं। एक को वह अत्यंत सुंदर तथा मूल्यवान् समझता है, दूसरे को कम सुंदर तथा कम मूल्यवान्। यदि मूल्यवान् रत्न उसके पास से निकल जाय, कम मूल्यवान् रह जाय, तो इसमें संदेह नहीं कि मूल्यवान् रत्न के निकल जाने का उसे बड़ा शोक होगा। किंतु शोक का वेग कम होने पर जब उसकी दृष्टि कम मूल्यवाले रत्न पर पड़ेगी, उस समय वह अपने अधिक मूल्यवाले रत्न को याद करके ठंडी साँस भरेगा, और यह सोचकर कि कहीं यह रत्न भी न खो जाय, उसे अधिक सुरक्षित रखने की चेष्टा करेगा। क्रमशः जैसे-जैसे दूसरे रत्न की याद कम होने लगेगी, वैसे-ही-वैसे उसका प्रेम इस रत्न पर बढ़ता जायगा। वह सोचेगा कि यद्यपि यह रत्न उससे कम मूल्यवान् है, तथापि कुछ मूल्य अवश्य रखता है, और यदि यह सुरक्षित रक्खा जाय, तो संभव है, किसी समय में इसका मूल्य भी बढ़ जाय। प्रायः उसके विचार क्रमशः इतने बढ़ जाते हैं कि वह खोए हुए रत्न से भी अधिक बचे हुए रत्न पर प्रेम करने लगता है।

यही दशा सुलोचन की भी हुई। उसने शंभू के मूल्य पर कभी ध्यान ही नहीं दिया था। इस समय श्यामू की ओर से निराश हो जाने पर उसका ध्यान शंभू की ओर आकर्षित हुआ। शंभू की प्यारी-प्यारी तथा उत्साह बढ़ानेवाली बातें सुनकर उसके प्रेम का झुकाव शंभू की ओर हुआ। वह सोचने लगी—'श्यामू तो मेरे हाथ से निकल ही गया, अब के ल शंभू ही मेरा आधार है, मेरा सर्वस्व

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है। मुझे अपनी सभी शक्तियाँ इसी को मूल्यवान् बनाने में लगाना चाहिए। ऐसा करने से, संभव है, यह उससे अधिक अच्छा निकले, और इसके कार्य श्यामू के वियोग से उत्पन्न हुए घाव पर मरहम का काम करें। सुलोचना के ये विचार क्रमशः विश्वास की सीमा पर पहुँच गए। उसे विश्वास हो गया कि अब शंभू ही से उसे शांति मिलेगी, सुख मिलेगा। जब तक शंभू भोजन करता रहा, तब तक सुलोचना ये ही बातें सोचती रही। शंभू के भोजन कर चुकने पर उसके विचारों का भी अंत हुआ।

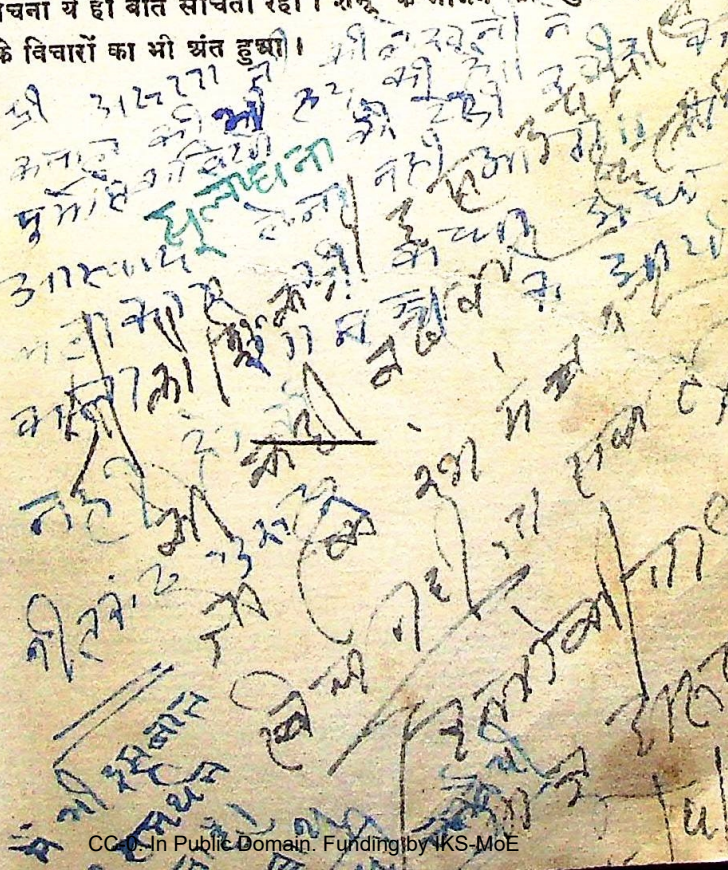

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहला परिच्छेद

व्यतीत होने के पूर्व एक घंटा भी बहुत मालूम होता है, परंतु व्यतीत हो जाने पर शताब्दियाँ पलक झपकने के समान हो जाती हैं। उपर्युक्त घटनाओं के पश्चात् दस वर्ष बीत गए। इन दस वर्षों में संसार ने अनेक करवटें लीं। बहुत कुछ परिवर्तन हुए। असंख्य मनुष्य मरे, असंख्य उत्पन्न हुए। अनेक घर बस गए। अनेक उजड़ गए। किंतु हमारे पूर्व-परिचित व्रजमोहनलाल तथा घासीराम के परिवार में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। व्रजमोहनलाल के परिवार में तो केवल इतना परिवर्तन हुआ कि उनके भाई बनवारीलाल उनसे पृथक् हो गए। वह आजकल अब अपनी दूकान अलग करते हैं। अलग होने के विचारों का सूत्रपात पहले ही से हो गया था। बनवारीलाल यद्यपि अलग होना नहीं चाहते थे, किंतु उनकी स्त्री चंद्रमोहनी ने ऐसे-ऐसे खेल खेले कि अंत को अलग होना ही पड़ा। चंद्रमोहनी ने प्रथम तो सावित्री से वैमनस्य उत्पन्न किया, और इस वैमनस्य ने यहाँ तक पैर फैलाए कि बनवारीलाल और व्रजमोहनलाल में भी मनोमालिन्य हो गया। परिणाम यह हुआ कि स्त्रियों के झगड़े में एक दिन व्रजमोहनलाल तथा बनवारीलाल में भी कहा-सुनी हो गई। उसी अवसर पर बनवारीलाल ने व्रजमोहनलाल से अपने अलग होने का प्रस्ताव कर दिया। व्रजमोहनलाल ने इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया। उन्हीं दिनों व्रजमोहनलाल के मँझले भाई तहसीलदार भी आए हुए थे। उन्होंने दोनों को तत्तोथंबो करने की बहुत कुछ चेष्टा की, किंतु कोई लाभ न हुआ। अंत को वह बेचारे हार मानकर अपने घर [illegible] गए। इधर व्रजमोहनलाल ने बनवारीलाल का रुपया उन्हें [illegible]शन दे [illegible] बन-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चारीलाल ने [illegible] दूकान किराए पर ले लिया, और उसमें उठ गए। अलग होने के [illegible] महीने पश्चात् उन्होंने अपनी दूकान भी खोल ली, और सहायता के लिये, चंद्रमोहनी के कहने से, अपने छोटे साले को बुलाकर अपने ही पास रख लिया।

इधर श्यामू का, जो अब श्यामू बाबू कहे जाते थे, लालन-पालन बड़े लाड़-प्यार से होता रहा। इतना हम अवश्य कहेंगे कि ब्रजमोहन-लाल का श्यामू से कुछ अधिक प्रेम न था, परंतु सावित्री के प्रसन्न करने के लिये—उनमें यह एक बहुत बड़ी कमज़ोरी थी—वह श्यामू को बड़े प्यार से रखते थे। जब श्यामू बाबू पाँच-छ वरस के हुए, तब उनको पट्टी पुजाई गई। पहले कुछ दिन तक उन्हें माड़वारी-लिपि कि शिक्षा मिलती रही। इसके पश्चात् वह स्कूल में भरती कराए गए। श्यामू बाबू सावित्रीदेवी के बड़े लाड़ले थे। क्या मजाल कि श्यामू बाबू किसी बात पर मचलें, और वह पूरी न की जाय। ब्रजमोहनलाल को श्यामू बाबू का यह हठ कभी-कभी बड़ा बुरा लगता था, और वह उसमें बाधा देने की चेष्टा भी करते थे; किंतु सावित्रीदेवी के आगे उनकी एक न चलती थी। होता वही था, जो देवीजी चाहती थीं। इस लाड़-प्यार का परिणाम यह हुआ कि श्यामू परले सिरे का हठी तथा चिड़चिड़ा हो गया। भोजन की थाली सामने आई, उसमें की कोई एक चीज़ श्यामू बाबू की रुचि की न हुई, बस, फिर क्या था, श्यामू बाबू ने थाली उठाकर फेंक दी। कोई कपड़ा सिलकर आया, और श्यामू बाबू के मन न भाया, उसी समय श्यामू बाबू ने उसकी धज्जियाँ उड़ा दीं। ऐसी बातें दिन-भर में कई बार होती थीं; पर ब्रजमोहनलाल को कभी इनकी हवा भी न मिलती थी, और यदि कभी दैव-संयोग से उन्होंने देख लिया, और उसका विरोध किया, तो सावित्री-देवी ने किसी-न-किसी प्रकार साम, दाम, दंड, भेद से उन्हें शांत कर दिया। ब्रजमोहनलाल कह देते थे—मुझे क्या, मैं तो थोड़े दिनों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

का मेहमान हूँ, इसका फल तुम्हीं को भोगना पड़ेगा। सावित्रीदेवी इस बात को, नाक पर बैठी हुई मक्खी की भाँति, नाक फड़काकर उड़ा देती थीं।

श्यामू बाबू स्कूल जाने तो लगे, पर पढ़ते-लिखते कुछ भी न थे। जब पाठ याद न करते, और उन पर शिक्षक बेंत फटकारते, तब वह स्कूल से भाग खड़े होते थे। सावित्रीदेवी प्रायः शिक्षक को यह कहला भेजती थीं—"मास्टर साहब, मारा न करो, पुचकार-पुचकारकर पढ़ाया करो, अभी बच्चा है।" मास्टर साहब से पुचकार-पुचकारकर पढ़वाने के लिये उन्हें होली-दिवाली कुछ रिश्वत भी भेजी जाती थी। मास्टर साहब ने भी सोचा—पढ़े, चाहे न पढ़े, अपने को क्या, चलो अच्छा हुआ, होली-दिवाली आदि त्योहारों पर मिठाई तो चखने को मिलती है, और मुट्ठी चाते में गरम होती है। यह सोचकर शिक्षक ने श्यामू को दूध की मक्खी की भाँति निकालकर फेंक दिया, न कभी पाठ पढ़ाते, न सुनते। श्यामू बाबू स्कूल में भी आनंद किया करते। जब परीक्षा का समय आता, तब श्यामू बाबू बीमारी का बहाना करके पड़ रहते। परीक्षा बीत जाने पर स्कूल के हेडमास्टर साहब के पास अनेक भेंटें तथा सिफ़ारिशें पहुँचतीं। श्यामू बाबू के भाग्य से उनका स्कूल मिडिल स्कूल था, और हेडमास्टर एक खत्री थे। कुछ तो जातीयता के कारण और अधिकांश भेंट तथा सिफ़ारिशों के प्रभाव से हेडमास्टर साहब श्यामू बाबू को प्रमोशन दे देते थे। निचली कक्षाओं में तो यह धाँधली चल गई, परंतु जब श्यामू बाबू चौथी कक्षा में पहुँचे, तब इस प्रहसन पर यवनिका गिर गई। हेडमास्टर ने उन्हें प्रमोशन देना अस्वीकार कर दिया। अस्वीकार न करते, तो करते क्या? श्यामू बाबू में तो तीसरे दर्जे की भी योग्यता नहीं थी। हेडमास्टर साहब इतने नासमझ तो थे ही नहीं, और न उन पर भेंट तथा सिफ़ारिशों का इतना प्रभाव था कि वह ऐसी दशा में श्यामू बाबू को प्रमोशन दे देते।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिणाम यह हुआ कि श्यामू बाबू चौथे दर्जे में फ़ेल हो गए। फ़ेल होते ही श्यामू बाबू को पढ़ने से घृणा हो गई। ब्रजमोहनलाल ने लाख चाहा कि वह स्कूल जाय, पर उसने एक न मानी। जब ब्रजमोहनलाल ने कुछ कड़ाई करनी चाही, तब सावित्री ने श्यामू बाबू का पक्ष लिया। उन्होंने पति से कहा—"उसका जी नहीं चाहता, तो क्यों पीछे पड़ते हो? हमें कुछ नौकरी तो करानी ही नहीं है। दूकान का काम करने-भर को पढ़-लिख गया है। अब उसे दूकान पर बिठाया करो, चूल्हे में गया स्कूल। निगोड़े मास्टरों की खुसामद (ख़ुशामद) करते-करते नाकों दम आ गया, फिर भी निगोड़ों की आँख में शील न आया, लेके लड़के को फ़ेल कर दिया।"

ब्रजमोहनलाल सावित्री की इस मूर्खता पर मन-ही-मन बहुत कुढ़े, किंतु सावित्री के विरुद्ध होकर काम करने की शक्ति उनमें न थी। अतएव एक ठंडी साँस भरके उन्होंने कहा—"जो तुम्हारी इच्छा हो, करो, परंतु याद रक्खो, ये बातें अच्छी नहीं।"

"तुम्हें तो सब बुरा ही दीखता है। तुम्हारा-सा जी कोई कहाँ से लावे।"—कहकर सावित्री ने बात का अंत कर दिया। ब्रजमोहनलाल का जी न माना। उन्होंने फिर कहा—"अच्छा, स्कूल न जाय, न सही, घर ही पर पढ़ा करे। एक मास्टर रख लें, वह थोड़ी अँगरेज़ी और उर्दू पढ़ा जाया करे।"

सावित्रीदेवी प्रसन्न होकर बोलीं—"हाँ, यह बात ठीक है। घर पर पढ़ने के लिये मास्टर रख दो।"

उस दिन से श्यामू बाबू घर ही पर पढ़ने लगे। प्रातःकाल आठ बजे से दस बजे तक पढ़ते, तत्पश्चात् भोजन करके दूकान पर जाते थे। पाँच बजे तक दूकान पर रहते। इसके पश्चात् घर आते, और कुछ जल-पान करके नौकर को साथ लेकर पैदल अथवा गाड़ी पर घूमने निकल जाते। जब स्कूल में पढ़ते थे, तब दो-चार मित्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जिस दिन से सुलोचना की आँख शंभू पर लगी, उस दिन से उसका जीवन कुछ बदल गया। अब वह नितांत दुःखी सुलोचना न थी। उसके हृदय में आशाओं का स्रोत फिर बहने लगा, और वह फिर उज्ज्वल भविष्य के स्वप्न देखने लगी। ध्यासू से उसने अपना समस्त संबंध तोड़ दिया। उस तिथि से, जिसका वृत्तांत हम गत खंड में लिख चुके हैं, फिर वह ब्रजमोहनलाल के घर कभी नहीं गई। उसने प्रण कर लिया था कि कोई विशेष कारण उत्पन्न हुए बिना वह ब्रजमोहनलाल के द्वार पर पैर न रक्खेगी। उक्त तिथि के पश्चात् दस वर्ष व्यतीत हो गए। इस बीच में कई बार सावित्री ने उलाहना भेजा, पर सुलोचना ने यह कहला दिया—"मैं इस मारे नहीं आती कि मैं वहाँ आऊँगी, तो मेरा जी ध्यासू पर दौड़ेगा।" घासीराम ने भी कई बार सुलोचना से कहा—"तुमने वहाँ का जाना-आना क्यों छोड़ दिया? यह भी कोई अच्छी बात है? मालकिन ने मुझसे कई बार पुछवाया कि अब शंभू की मा के दिमाग़ बहुत बढ़ गए क्या? आख़िर यह आना-जाना क्यों बंद कर दिया? उनकी यह बात सुनकर मैं कट-कट गया, मुझसे कुछ उत्तर देते न बना।" घासीराम की बात के उत्तर में सुलोचना शांति-पूर्वक कह देती थी—"तुमने उत्तर न दिया, अच्छा ही किया। मैं नहीं जाती, मेरी इच्छा! इसमें किसी का इजारा है? और, दिमाग़ होंगे उन्हें, हमें तो दिमाग़ हैं नहीं। हाँ, अपनी आबरू का दिमाग़ बहुत कुछ है। किसी के यहाँ जाकर अपनी आबरू नहीं गँवाना है। मैं उनके यहाँ गई, और उन्होंने सीधे मुँह बात न की, तो बताओ, मेरी आबरू गई या रही?" जहाँ तक हमारा अनुमान है, यहाँ 'आबरू'-शब्द से सुलोचना का तात्पर्य 'आत्मगौरव' था। अस्तु, घासीराम इस बात पर बड़े भुनभुनाते, बड़ी देर तक बड़बड़ाते और सुलोचना से तर्क करने के लिये प्रस्तुत हो जाते। अंत को एक दिन सुलोचना ने कह दिया—"देखो शंभू के बाप, अब तक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जो तुमने चाहा, वह मैंने किया। तुम्हारे ही लिये मैं पत्थर का कलेजा किए बैठी हूँ, पर अब इस बात में मैं तुम्हारी एक न मानूँगी। जो मेरी इच्छा होगी, सो करूँगी। और, जो तुम मुझे तंग करोगे, तो मैं अपने मायके चली जाऊँगी। फिर इस जन्म में न तुम्हारी सूरत देखूँगी, न अपनी दिखाऊँगी, यह याद रखना।" सुलोचना का यह उत्तर सुनकर बासीराम खून का घूँट पीकर रह गए। उस दिन से फिर उन्होंने इस विषय पर कुछ न कहा।

सुलोचना ने अपने जीवन का लक्ष्य शंभू को बना लिया था। रात-दिन उसी की सेवा-सुश्रूषा में रहती थी। सुलोचना की दशा एक मूर्तिकार की-सी हो गई थी। वह स्वयं मूर्तिकार थी, और शंभू उसकी मूर्ति था। जिस प्रकार मूर्तिकार अपनी मूर्ति को सँभाल-सँभालकर सुडौल बनाता है, जहाँ उसे कोई भद्दापन अथवा दोष दिखाई पड़ता है, उसे वह तुरंत ही दूर करने की चेष्टा करता है, ठीक यही दशा सुलोचना की हो गई थी। वह शंभू का चरित्र गढ़ने में तन्मय थी। वह अपना दुःख-सुख भूल गई थी। हाँ, यदि कभी-कभी कोई बात उसे विचलित करती थी, तो वह श्यामू की 'याद' थी। यद्यपि सुलोचना ने श्यामू से अपना संबंध पूर्णतः तोड़ दिया था, फिर भी उसकी स्मृति से वह अपना पिंड न छुड़ा सकी। जब कभी उसकी याद आ जाती थी, उस समय कुछ देर के लिये वह विक्षिप्त-सी हो जाती थी। कदाचित् इस स्मृति के पंजे से छूटने के लिये ही वह शंभू में तन्मय रहती थी। शंभू को वह रात-दिन तोते की तरह उपदेश दिया करती थी। रात को भोजन इत्यादि से छुट्टी पाकर जब सब लोग सोने के लिये चारपाई पर जाते, तब सुलोचना शंभू से उसके स्कूल के विषय में पूछ-ताछ करती। उसका पूछने का ढंग इतना मीठा होता था कि शंभू उससे कोई बात न छिपाता था। सुलोचना उससे सब सुनकर यदि उसमें कोई दोष देखती, तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभू को उसके विषय में खूब समझाती थी। प्रातःकाल पढ़ने के लिये उसे जगा देती थी और दो घंटे तक उसे पढ़ने में जुटाए रखती थी। एतवार तथा कभी-कभी अन्य छुट्टियों पर वह खेलने के लिये इतना स्वतंत्र कर देती थी कि शंभू यदि चाहे भी, तो भी पुस्तक को छूने न देती थी। वार्षिक परीक्षा जब निकट आती थी, तो उसके लिये पहले ही से कोई उपहार नियत कर देती थी। उपहार भी ऐसा नियत करती थी, जिसमें शंभू की अधिक रुचि देखती थी। उपहार के लोभ में आकर शंभू भी जी-तोड़ परिश्रम करता था। इस परिश्रम का फल यह होता था कि वह सदैव पास हो जाता था। वार्षिक परीक्षा को छोड़कर बीच की छोटी-छोटी परीक्षाओं के लिये भी छोटे-छोटे उपहार देती थी। शंभू का भी सुलोचना पर इतना विश्वास था कि वह कोई भली-बुरी बात उससे नहीं छिपाता था। प्रायः ऐसा होता था कि बचपन की झोंक में आकर वह कोई भला-बुरा कार्य कर बैठता था, पर सुलोचना के पूछने पर सब कह देता था, और भविष्य में वैसा काम न करने की शपथ कर लेता था। सुलोचना भी उसे कुछ न कहती, वरन् उसके इस सत्य भाषण के बदले में उसे कोई छोटी-मोटी वस्तु इनाम में देती थी। श्यामू के गोद लिए जाने के एक वर्ष पश्चात् ही घासीराम का वेतन १००) कर दिया गया था, क्योंकि घासीराम में क्रोध, चिड़चिड़ापन, बकझक, लोभ और आरामतलबी इत्यादि दुर्गुण होते हुए भी दो गुण थे—एक तो अपने काम में खूब दक्ष थे, दूसरे, बड़े ईमानदार थे। इन्हीं दो गुणों के कारण ब्रजमोहनलाल ने एक वर्ष पश्चात् ही उनका वेतन १००) कर दिया।

शंभू उस समय मिडिल पास करके नवीं कक्षा में आया था। मिडिल पास करते ही शंभू की रुचि पढ़ने की ओर कुछ ऐसी बढ़ी कि वह स्वयं खूब परिश्रम करने लगा। सुलोचना को कभी कभ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहने-सुनने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। इस प्रकार दो वर्ष पश्चात् शंभू ने मैट्रिक की परीक्षा छात्रवृत्ति के साथ पास की। इस समय सुलोचना की प्रसन्नता का क्या ठिकाना था! वह शंभू को देख-देखकर फूली नहीं समाती थी।

दस वर्ष के अंदर जो-जो परिवर्तन घासीराम तथा व्रजमोहनलाल के परिवार में हुए, उन सबको संक्षिप्त रूप में हमने पाठकों के सामने रख दिया। अब हम अपनी कथा को आगे बढ़ाते हैं।

मैट्रिक की परीक्षा का फल मालूम होने के पश्चात् एक दिन रात को शंभूदयाल ने सुलोचना से कहा—"अम्मा, अब कॉलेज खुलने में पंद्रह-बीस दिन रह गए हैं।"

सुलोचना—"तो क्या तू कॉलेज में भी पढ़ेगा?"

शंभू—"पढ़ूँगा नहीं, तो क्या छोड़ दूँगा। अब तो पढ़ने का आनंद ही है, अब तक क्या था।"

सुलोचना—"क्यों बेटा, कॉलेज की पढ़ाई में बहुत ख़र्च होता होगा, भला, हम ग़रीब इतना रुपया कहाँ से लावेंगे?"

शंभू—"ख़र्च के लिये तुम्हें कष्ट न दूँगा। मुझे जो कुछ वज़ीफ़ा मिलता है, उसी में काम चल जायगा। हाँ, आरंभ में कुछ पुस्तकें तुम्हें अवश्य ले देनी पड़ेंगी।"

सुलोचना—"भला, पुस्तकों में कितना ख़र्च होगा?"

शंभू—"यही कोई पचीस-तीस रुपए।"

घासीराम बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे। मा-बेटे की यह बातचीत सुनकर बोल उठे—"अबे, अब पढ़के क्या करेगा? बहुत पढ़ लिया। अब कहीं नौकरी-चाकरी कर, जिससे कुछ पैदा का ढौल हो। पढ़ने में क्या धरा है?"

शंभूदयाल को अपने साथ घासीराम की बातचीत का ढंग कभी-कभी बुरा मालूम होने लगता था, परंतु यह सोचकर चुप रहता कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घासीराम का स्वभाव ही ऐसा है, और दूसरे, पिता होने के कारण भी वह इसकी परवा नहीं करता था।

शंभूदयाल ने नम्रता-पूर्वक कहा—"नहीं बाबूजी, अभी नौकरी करने से कोई लाभ नहीं, क्योंकि इस समय मुझे बीस-पच्चीस रुपए से अधिक न मिलेंगे। यदि मैं बी० ए० पास कर लूँगा, तो सौ-डेढ़ सौ की नौकरी मिल सकती है।"

घासीराम—"जब तक बी० ए० पास करेगा, तब तक तो तेरी तनख़्वाह साठ-सत्तर हो जायगी।"

शंभू—"कौन साठ-सत्तर कर देगा? यह आप अपनी जाने दीजिए, महाजनों की बात ही निराली है। अँगरेज़ी दफ़्तरों में तो इतनी जल्दी नहीं बढ़ा करती।"

घासीराम—"कुछ नहीं, यह सब झगड़ा है।"

शंभू ने कुछ विस्मित होकर पूछा—"झगड़ा कैसा?"

घासीराम—"अरे, यही बी० ए०-बी० ए० झगड़ा नहीं, तो और है क्या? पढ़ने की क्या, चाहे सारी उमर पढ़े जाओ।"

सुलोचना शंभू से बोली—"तू भी किनकी बातों में लगा है? इन्हें तो सब झगड़ा-सा ही दिखाई देता है। इनके लिये तो दुनिया में दो ही पदार्थ काम के हैं—भाँग और हुक़्क़ा; बाक़ी सब झगड़ा है।"

घासीराम—"अरी, भाँग-हुक़्क़ा न हो, तो दुनिया लौट जाय, यह भी मालूम है!"

शंभू को ये बातें कुछ अच्छी न लगीं। उसने कहा—"अच्छा, अब इस तू-तू, मैं-मैं से क्या फ़ायदा? अम्मा, तुम चुप रहो।"

कुछ क्षण तक ठहरकर शंभू ने सुलोचना से धीमे स्वर में पूछा करना "क्यों अम्मा, पुस्तकों के लिये रुपए दोगी न?"

सुलोचना—"हाँ-हाँ, दूँगी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभू—"तो बस, ठीक है, मैं कॉलेज में भरती हो जाऊँगा, इन्हें बकने दो।"

सुलोचना—"इनकी बातों को मैं क्या कहूँ।"

दूसरा परिच्छेद

अब श्यामू बाबू ने पढ़ना-लिखना बिलकुल छोड़ दिया, और केवल दूकान पर बैठने लगे। दस बजे दूकान जाते, दो घंटे बैठते, ठीक बारह बजे उठ खड़े होते और घर आकर दो घंटे आराम करते थे। दो बजे फिर दूकान जाते थे, और ठीक चार बजे दूकान से चले आते थे। घर आकर कुछ थोड़ा जल-पान करके घूमने के लिये निकल जाते थे, और आठ-नौ बजे के पहले घर नहीं लौटते थे। श्यामू बाबू ने स्वयं अपने इच्छानुसार अपना यह कार्य-क्रम बनाया था। बाबू ब्रजमोहनलाल उनके इस कार्य-क्रम से संतुष्ट नहीं थे; परंतु जब सावित्री ने श्यामू बाबू के इस कार्य-क्रम को उचित ठहरा दिया, तब किसमें इतनी शक्ति थी कि इसके विरुद्ध कुछ कहता?

इसी प्रकार कुछ दिन व्यतीत हुए।

एक दिन सावित्रीदेवी ने ब्रजमोहनलाल से पूछा—"अब तो श्यामू दूकान का सब काम करता होगा?"

ब्रजमोहनलाल ने रुखाई के साथ उत्तर दिया—"हाँ, यदि करने की इच्छा होती, तो करता।"

सावित्रीदेवी मुँह बनाकर बोलीं—"इसका क्या मतलब?"

ब्रजमोहनलाल—"इसका मतलब यह कि वह करने की इच्छा नहीं करता।"

सावित्री—"तो दूकान पर किया क्या करता है?"

ब्रजमोहनलाल—"जब उसके जी में आता है, तब कुछ हिसाब-किताब लिख लेता है, नहीं, तो आनंद से बैठा उपन्यास पढ़ा करता है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सावित्री—"तुम तो उसे कुछ कहते ही नहीं। तुमने तो उसे दूध की मक्खी की तरह अलग कर दिया। वह कुछ सीखे, तो कैसे ?"

व्रजमोहन ने पत्नी पर एक तीव्र दृष्टि डाली, और बोले—"मैं तो यह समझता हूँ कि अब वह बच्चा नहीं रहा, सो डाँट-फटकारकर उसे सिखाया जाय। चौदह-पंद्रह वर्ष का हुआ है, ऐसी दशा में केवल मुँह से कहना ही यथेष्ट है।"

सावित्री—"कभी-कभी डाँट-फटकार भी देना चाहिए।"

व्रजमोहनलाल—"यह काम अब मुझसे नहीं हो सकता।"

यह कहकर व्रजमोहनलाल बाहर चले गए।

उनके चले जाने पर सावित्रीदेवी ने श्यामू बाबू को बुलवाया, और बोलीं—"क्यों रे श्यामू, तू दूकान का काम कुछ नहीं करता ?"

श्यामू बाबू अकड़कर बोले—"वह काम ही कौन बड़ा भारी है, मैं तो उसे चुटकी बजाते कर सकता हूँ।"

सावित्री—"आज तेरे बाबूजी कहते थे कि श्यामू दिन-भर बैठा उपन्यास पढ़ा करता है, न कुछ करे न धरे।"

श्यामू—"बाबूजी तो मुझसे हर समय कुढ़े-से रहते हैं। उन्हें तो मेरे सारे काम बुरे लगते हैं। उपन्यास पढ़ना क्या कोई बुरी बात है ? उपन्यास भी तो पुस्तकें ही हैं।"

सावित्रीदेवी श्यामू बाबू की इस व्याख्या से कि उपन्यास भी तो पुस्तकें ही हैं, संतुष्ट हो गईं। अतएव बोलीं—"उपन्यास पढ़ना तो कोई बुरी बात नहीं है, पर साथ-ही-साथ दूकान का काम भी किया कर।"

श्यामू बाबू बोले—"सो तो करता ही हूँ।"

सावित्रीदेवी ने मन-ही-मन सोचा—अब इसका ब्याह करना चाहिए, सयाना हो गया है।

उसी दिन रात को सावित्रीदेवी ने पति से कहा—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"अब श्यामू का ब्याह हो जाना चाहिए, सयाना हो गया है।"

ब्रजमोहनलाल ने कहा—"कर दो।"

सावित्री बिगड़कर बोलीं—"मैं कर दूँ! तुम तो जैसे कुछ रहे ही नहीं। तुम तो अब ऐसी उड़ी-उड़ी-सी बातें करने लगे कि क्या कहूँ। जो कुछ हो, मैं करूँ, तुम कुछ न करो।"

ब्रजमोहनलाल बोले—"मेरा मतलब तो तुम समझी नहीं, और अपनी ओटने लगीं। मेरा मतलब यह है कि जहाँ तुम उचित समझो, बातचीत करो। पुरोहितजी को बुलवा लो, और उनसे कहो, वे ही लड़की ढूँढ़ देंगे।"

सावित्री—"यह एक ढंग की बात है, कहने लगे कर दो, हुँह!"

दूसरे दिन सावित्री ने पुरोहितजी को बुलाकर उनसे कहा—"पुरोहितजी, आपने जब लड़का दिखलाया है, तो अब बहू भी दिखलाइए।"

पुरोहितजी हँसकर बोले—"बहू, मैं तो आपही इसके लिये तुम्हारे पास आनेवाला था। उस दिन पुरोहितानी कहती थीं कि बहू ने अभी तक श्यामू बाबू के ब्याह की बातचीत नहीं लगाई, क्या बात है? लड़का सयाना हो गया है। बहू, आजकल समय बड़ा बुरा लगा है। सयाने लड़के का ब्याह न करने से उसके बिगड़ जाने का डर रहता है।"

सावित्रीदेवी बोलीं—"यही सोचकर तो मैंने तुम्हें बुलवाया है पुरोहितजी। अब कोई लड़की जल्दी ढूँढ़ दो।"

पुरोहितजी—"तुम्हारे लिये लड़कियों की क्या कमी है बहू।"

सावित्री—"लड़की सुघड़ हो।"

पुरोहितजी—"अजी, ऐसी वो कि जी फड़क उठे। चाँद-सूरज की जोड़ी हो जाय, तब कहना।"

सावित्री—"हाँ, पुरोहितजी, जब लड़का सुघड़ दिखलाया है, तो लड़की भी सुघड़ हो।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुरोहितजी—"यह भी तुम्हारे कहने की बात है बहू, मुझे आप ही लगी है।"

सावित्री—"और घर भी अच्छा हो।"

पुरोहितजी—"घर भी अच्छा ही लो।"

सावित्री—"देने-लेने में कुछ कसर न रहे, नहीं तो बड़ी बदनामी होगी। लोग कहेंगे, ग़ैर का लड़का था, इसीलिये...।"

सावित्रीदेवी की बात पूरी होने के पूर्व ही पुरोहितजी बोल उठे—"राम-राम, बहू, ऐसी बात न कहो; लाख गोद का है, पर अब तो पेट के लड़के से भी अधिक है।"

सावित्री—"बात तो ऐसी ही है पुरोहितजी! मैंने इसे अपने पेट के लड़के से भी अधिक समझा है।"

पुरोहितजी—"समझना ही चाहिए।"

सावित्री—"मेरी इच्छा है कि इसी साल ब्याह हो जाय।"

पुरोहितजी—"और क्या, अब देर करनी ठीक नहीं।"

तीसरा परिच्छेद

शाम के पाँच बज चुके थे। श्यामू बाबू अपने तीन मित्रों-सहित चौक में घूम रहे थे। गर्मी के दिन थे। श्यामू बाबू के बाएँ हाथ में एक बेले का गजरा लिपटा हुआ था, दाहने हाथ में एक पतली बढ़िया छड़ी थी।

घूमते-घूमते उनके एक मित्र ने सहसा कहा—"देखिए श्यामू बाबू, इस सज्ज परी को तो देखिए। भई, यहाँ तुम्हारे आने से लाभ क्या? जो देखने की चीज़ें हैं, वे तो तुम देखते ही नहीं।"

श्यामू बाबू ने आँख उठाकर देखा—सामने एक छज्जे पर एक षोडशवर्षीया मलमल की हरी साड़ी पहने खड़ी थी। श्यामू [illegible] और उसकी निगाहें चार हुईं। श्यामू बाबू ने झेंपकर आँख नीची कर ली।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और अपने मित्र से मुस्किराकर बोले—"तुम बड़े दुष्ट हो बीशू।"

श्यामू की बात सुनकर उनके सब मित्र खिलखिलाकर हँस पड़े। बीशू बाबू अर्थात् विश्वनाथ ने कहा—"झेप गया, हात् तेरे की!"

एक दूसरे मित्र ने कहा—"अरे भाई, अभी बच्चा है, ये बातें क्या जाने!"

तीसरा मित्र बोल उठा—"ऊँह! ऊँह! बच्चा है। यह सुरेंद्र भी जाँगलू ही रहा, कहने लगा, बच्चा है। विवाह हो जाता, तो दो लड़कों के पिता हो गए होते। बच्चा हैं, हूँह!"

श्यामू बाबू बोले—"तुम लोग पक्के शोहदे हो। मुझे ये बातें पसंद नहीं।"

बीशू बाबू ने सुरेंद्र की ओर देखकर आँख मारी, और मुस्किराए। श्यामू बाबू थोड़ी दूर आगे बढ़ गए थे। सुरेंद्र ने बीशू से धीमे स्वर में कहा—"उस्ताद, आज तुम इन्हें कहीं ले चलो, तो जानें।"

बीशू बाबू बोले—"यार, अभी भड़कता है, धीरे-धीरे अड्डे पर आवेगा।"

सुरेंद्र—"तुम भी चौंच ही रहे। मैं तो कहता हूँ कि यह अड्डे पर आने के लिये पूर्णतया ठीक हो गया है, थोड़े-से चारे की आवश्यकता है।"

बीशू—"अच्छा, ज़रा गोकुल से तो पूछो, देखो वह क्या कहता है।"

यह परामर्श करके सुरेंद्र ने पुकारा—"अरे भइ, कहाँ भागे जाते हो, आओ ज़रा पान खा लें।"

श्यामू बाबू और गोकुलप्रसाद दोनो ठिठककर रुक गए। पास ही एक तँबोली की दूकान थी। बीशू बाबू उस दूकान पर पहुँचे, और आठ पैसे फेंककर बोले—"बनाओ तो बढ़िया पान!" इसके पश्चात् बोले—"अरे भइ श्यामू, इधर आओ, पान खा लें, फिर चलें।"

[illegible] तँबोली की दूकान के पास आकर खड़े हो गए। उधर [illegible] भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुरेंद्र ने गोकुलप्रसाद से कहा—"यार, आज इस श्यामू को कहीं ले चलना चाहिए। क्यों, है न सलाह की बात ?"

गोकुल ने कहा—"सलाह की बात तो सब कुछ है, पर वह चले जब न।"

सुरेंद्रप्रसाद बोले—"अजी, हम-तुम ले चलेंगे, तब तो चलेगा ?"

गोकुलप्रसाद—"ठीक कह नहीं सकता, चले-न चले।"

सुरेंद्र—"एक बार ज़ोर तो लगाना चाहिए, आख़िर यह राह पर कैसे आवेगा ?"

गोकुलप्रसाद—"हाँ-हाँ, ज़ोर लगाओ।"

सुरेंद्र—"तुम भी चेष्टा करना।"

गोकुलप्रसाद—"अच्छी बात है।"

यह सलाह गाँठकर दोनों श्यामू और बीशू के पास पहुँचे। तँबोली ने पान बनाकर दिए। सब लोगों ने खाए। पान खाकर सब लोग गोल दरवाज़े की ओर धीरे-धीरे चले। थोड़ी देर चलने पर सुरेंद्र ने बीशू बाबू की पीठ में उँगली चुभोई।

बीशू बाबू बोले—"यार, इस प्रकार निरुद्देश्य घूमना ठीक नहीं।"

श्यामू बाबू बोले—"तो चलो पार्क में चलकर बैठें।"

सुरेंद्र—"भइ, आज तो गाना सुनने को जी चाहता है।"

गोकुलप्रसाद—"यार, यह बात तुम मेरे मुँह से छीन ले गए, मैं भी यही कहनेवाला था।"

बीशू—"तो आओ, चलो न।"

सुरेंद्र—"श्यामू बाबू से तो पूछ लो।"

बीशू—"इनसे क्या पूछना, यह क्या हम लोगों से अलग थोड़े ही हैं।"

श्यामू बाबू—कहाँ चलोगे गाना सुनने ?"

गोकुलप्रसाद बोले—"यार श्यामू, अब मैं गड़बड़ी आरंभ करूँगा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मुझे इतना बनना अच्छा नहीं मालूम होता। गाना सुनने कहाँ चला जाता है ?"

बीशू—"अरे, तुम भी किनकी बातों में पड़े हो ; वह चलेंगे और इनके पीर। सीधी तरह न चलेंगे, तो हम लोग बल-पूर्वक ले चलेंगे।"

श्यामू बाबू मुस्किराकर बोले—"भइ, कुछ मालूम भी तो हो, कहाँ चलोगे ?"

सुरेंद्र—"चले चलो चुपचाप ! जहाँ चलेंगे, मालूम हो जायगा।"

श्यामू बाबू—"अच्छा, चलो, देखें कहाँ चलते हो ?"

थोड़ी दूर चलकर सब लोग एक गली में घुसे, और चार-छ क़दम चलकर एक ज़ीने के द्वार पर रुक गए।

बीशू बाबू सुरेंद्र से बोले—"चलो, आगे तुम चलो !"

सुरेंद्र—"तुम चलो ; हमारी पार्टी के मुखिया तुम्हीं हो।"

श्यामू बाबू मुस्किराकर बोले—"तुम लोग सब बदमाश हो ! मैं तुम्हारा गाना सुनने का तात्पर्य समझ गया, आप लोग जाइए, मैं नहीं जाऊँगा।"

बीशू—"अब आप राग जाए।"

श्यामू—"राग-वाग मैं कुछ नहीं जानता, मैं जाऊँगा नहीं।"

सुरेंद्र—"क्यों ?"

श्यामू—"आप भी अंधेर करते हैं ! जो कोई पिताजी का मिलने-वाला देख ले, तो ?"

बीशू—"हाँ, अब इस प्रकार आप ज़ीने के द्वार पर खड़े होकर घंटों नख़रे करेंगे, तो देख ही लेगा। आख़िर हम लोगों को भी तो वही भय है। आप ही बड़े आबरूदार नहीं हैं। हम लोग तो दिन-दहाड़े गए हैं, क्या मजाल, जो किसी ने झलक भी देखी हो।"

सुरेंद्र—"भइ श्यामू बाबू, तुम्हारी ये ही बातें हमें बुरी लगती हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आपके हरएक काम में हम लोग योग देते हैं, और आप इस समय निकले जा रहे हैं।"

यह कहकर सुरेंद्र ने श्यामू बाबू का हाथ पकड़कर बसीटा।

"तुम लोग किसी दिन जूते खिलवाओगे" यह कहते हुए श्यामू बाबू ज़ीने पर चढ़ गए। ज़ीना समाप्त करके सब लोग एक बड़े कमरे में पहुँचे। कमरे में सफ़ेद फ़र्श बिछा हुआ था। फ़र्श पर तीन-चार छोटे-बड़े सफ़ेद तकिए रक्खे हुए थे। दीवारों पर बहुत-से छोटे-बड़े चित्र लगे हुए थे। छत में एक छोटा-सा झाड़ और उसके चारों ओर चार रंग-बिरंगी शीशे की हाँडियाँ लटकी हुई थीं।

फ़र्श पर एक ओर एक प्रौढ़ा सफ़ेद मलमल की साड़ी पहने बैठी थी। सामने एक बड़ा पानदान और एक ओर पीकदान रक्खा था। उसके पास ही एक व्यक्ति कुरता-पाजामा पहने और सिर पर एक दो अंगुल की छोपल्ली टोपी आलपीन से बालों में अटकाए हुए बैठा हुक्का गुड़गुड़ा रहा था।

प्रौढ़ा ने बीशू बाबू को देखते ही कहा—"आइए, आइए, आज किधर चाँद निकला? अल्लाह जानता है, आपके देखने को आँखें तरस गईं।"

बीशू बाबू एक तकिया बसीटकर बोले—"ऐसे ही ज़रा बाहर चला गया था।"

सुरेंद्र और गोकुलप्रसाद भी बीशू बाबू के पास अकड़कर बैठ गए, श्यामू बाबू भी एक कोने में दबकर बैठे।

प्रौढ़ा—"तभी अभी परसों बंदो आपको बहुत याद करती थी। मैंने उससे यही कहा था कि कहीं बाहर चले गए होंगे। हुसेनबख़्श के सामने की बात है।"

वह व्यक्ति अर्थात् हुसेनबख़्श मुँह से धुआँ छोड़कर बोला—"मैंने भी तो कहा था कि बीशू बाबू यहाँ होते हैं, तब तीसरे-चौथे

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ज़रूर तशरीफ़ लाते हैं। बाहर चले गए होंगे, इसीलिये नहीं आ सके।"

बीशू—"आज बंदो नहीं दिखाई पड़तीं।"

प्रौढ़ा दाँत निकालकर बोली—"आज नवाब साहब असग़रअलीख़ाँ से पतंग के पेंच लड़ रहे हैं, वहीं कोठे पर देख रही है। देखिए, बुलवाती हूँ।"

इतना कहकर प्रौढ़ा ने कमरे के बग़लवाले दालान की ओर मुँह करके कहा—"ऐ शबरातन, ज़री बंदो को तो बुला लो, कहना, बीशू बाबू आए हैं।"

दालान से शबरातन ने उत्तर दिया—"बुलाती हूँ। बीशू बाबू, बाँदी का मुजरा भी क़बूल हो।"

बीशू बाबू—"तुम अच्छी तो रहीं बी शबरातन?"

शबरातन—"हुज़ूर की जानोमाल को दुआएँ दिया करती हूँ।"

हुसेनबख़्श बोला—"ख़ुदा झूठ न बुलवाए, तो आप आज महीना-सवा महीना बाद तशरीफ़ लाए हैं।"

बीशू बाबू—"और क्या।"

प्रौढ़ा—"कहिए सुरेन बाबू, आपके मिज़ाज तो अच्छे हैं?"

सुरेंद्र—"आपकी इनायत है।"

प्रौढ़ा—"बीशू बाबू तो बाहर चले गए थे, इसलिये न आ सके; आप क्यों तशरीफ़ नहीं लाए?"

बीशू बाबू बोल उठे—"इनको अकेले आने की हिम्मत नहीं पड़ती।"

प्रौढ़ा हँसकर बोली—"आप तो मज़ाक़ करते हैं।"

बीशू बाबू—"मज़ाक़ नहीं, सच बात है।"

प्रौढ़ा—"क्यों सुरेन बाबू?"

बीशू बाबू—"तुम भी किस बेहूदे की बातों में लगी हो। यहाँ कुछ सोप थोड़ा ही लगी है, जो हिम्मत न पड़े।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रौढ़ा बातें करती जाती थी और कनखियों से श्यामू बाबू की ओर देखती जाती थी।

इतने ही में छम-छम शब्द हुआ, और एक षोड़शी हरिणी की भाँति कुलाचें मारती हुई आ पहुँची। षोड़शी के शरीर पर हलके गुलाबी रंग की साड़ी थी। साड़ी इतनी महीन थी कि षोड़शी के गले में पड़े हुए समस्त आभूषण दिखलाई पड़ते थे।

गले में बेले का एक मोटा गजरा भी पड़ा हुआ था। एक बेले का गजरा बालों के जूड़े में लिपटा हुआ था। षोड़शी गौर वर्ण की थी और किसी अंश तक सुंदरी कही जा सकती थी। नेत्र यद्यपि बड़े-बड़े नहीं थे, परंतु तो भी सुरमे की गहरी बाढ़ के कारण अपने असली आकार से कुछ बड़े अवश्य दिखाई पड़ते थे। षोड़शी के कमरे में प्रवेश करते ही सारा कमरा खस के इत्र की सुगंधि से भर गया। षोड़शी को देखते ही बीशू बाबू बोल उठे—"आइए, मिज़ाज-शरीफ़। हम लोग न-जाने कितनी देर से आपके इंतज़ार में बैठे हुए हैं, और आप कोठे पर पेंच देख रही हैं।"

प्रौढ़ा बोल उठी—"बीशू बाबू ने मुझसे पूछा कि बंदो कहाँ है, मैंने कह दिया कि ऊपर पेंच देख रही है।"

बंदो प्रौढ़ा के पास बैठती हुई बोली—"अल्लाह जानता है अम्मी-जान, ऐसे घमासान पेंच लड़ रहे हैं कि क्या कहूँ। आज नवाब साहब बुरी तरह कट रहे हैं।"

हुसेनबख़्श बोल उठा—"नवाब साहब तो हमेशा ही कटते हैं।"

बंदो बीशू बाबू की ओर मुँह करके बोली—"हम आपसे नहीं बोलेंगे।"

बीशू बाबू मुस्किराकर बोले—"आपकी ख़फ़गी का सबब मुझे मालूम है, और मैंने आपकी अम्मीजान को अपनी सफ़ाई भी दे दी है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अम्मीजान बंदो से बोलीं—"बीशू बाबू यहाँ थे नहीं, बाहर चले गए थे।"

बंदोजान चिबुक पर तर्जनी रखकर बोलीं—"ऊई अम्मीजान, इन्होंने कहा, और तुमने यक़ीन कर लिया?"

अम्मीजान—"क्यों, यक़ीन क्यों न करती?"

बंदो—"यह तो झूठों के सरताज हैं। मैं इनकी बातें ख़ूब पहचानती हूँ।"

बीशू बाबू—"देखिए! देखिए! आप चार भले आदमियों के सामने मेरी हतक करती हैं।"

इतना सुनते ही सब हँस पड़े, केवल श्यामू बाबू गंभीर बने बैठे रहे। बंदो अठलाकर बोली—"सच बतलाओ, इतने दिन कहाँ ग़ायब रहे?"

बीशू बाबू—"बाहर चला गया था।"

बंदो—"सच?"

बीशू बाबू—"तुम्हारे सर की क़सम।"

बंदो—"ऐ हटो, मेरा सर भी कोई कद्दू समझ रक्खा है। अब देखो, तुम्हारे सर की क़सम। हुँह!"

श्यामू बाबू बड़े ध्यान से बंदो का नख-शिख देख रहे थे।

अम्मीजान श्यामू बाबू की ओर देखकर बोलीं—"ऐं, आप दबके क्यों बैठे हैं? खुलकर आराम से बैठिए। (बीशू बाबू से) आपकी कुछ तारीफ़ तो कीजिए।"

बीशू बाबू मुस्किराकर बोले—"आपकी तारीफ़? आप हमारे दोस्त हैं। आपकी एक बहुत बड़ी कपड़े की दूकान अमीनाबाद में है। इसके अलावा शहर में आपकी काफ़ी जायदाद है।"

बंदो ने अत्यंत नम्रता-पूर्वक श्यामू बाबू से पूछा—"आपका स्मशरीफ़?"

श्यामू बाबू झेपते हुए बोले—"मुझे श्यामनाथ कहते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बीशू बाबू बोल उठे—"मगर हम लोग श्यामू बाबू कहते हैं।"

बंदो—"तो मैं भी श्यामू बाबू ही कहूँगी। क्यों श्यामू बाबू, आपका मिज़ाज तो अच्छा है?"

श्यामू बाबू—"आपकी मेहरबानी है।"

बंदो—"हम लोग ग़रीब आदमी हैं, हम क्या और हमारी मेहरबानी क्या। क्या पिद्दी और क्या पिद्दी का शोरबा।"

बीशू बाबू—"आप जैसी ग़रीब हैं, हम ख़ूब जानते हैं।"

बंदो गोकुलप्रसाद की ओर देखकर बोली—"और आपकी तारीफ़?"

बीशू बाबू—"आप तो एक-आध मरतबा पहले भी मेरे साथ आ चुके हैं। आपका नाम गोकुलप्रसाद है। आप भी यहाँ के रईसों में से हैं।"

अम्मीजान बोलीं—"ऐं, मैं बड़ी देर से बैठी यही सोच रही थी कि इन्हें मैंने कहीं देखा है, पर ख़याल नहीं आता था कि कहाँ देखा है।"

गोकुलप्रसाद बोले—"मैं एक बार रात को बीशू बाबू के साथ आया था। उस वक़्त और दो-एक साहब यहाँ बैठे हुए थे, आप लोग उनकी बातों में मसरूफ़ थीं, इसलिये ज़्यादा बातचीत का मौक़ा नहीं मिला था, और हम लोग थोड़ी ही देर बैठकर चले गए थे।"

अम्मीजान—"यही वजह होगी, वरना एक बार भी जिससे मुलाक़ात हो जाय, उसे हम लोग कभी नहीं भूलते।"

बंदो बोली—"ऐं, आप लोगों के लिये कुछ पान-वान मँगवाओ।"

अम्मीजान—"देखो मँगवाती हूँ। मुआ सलारू आज जाने कहाँ चला गया?"

बंदो—"वह ऊपर डोर लूटने में लगा है। ऐ शबरातन सशंकित सलारू को तो बुलाओ, कोठे पर है।"

[illegible] म कहते थे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बीशू बाबू—"हमारे वास्ते श्यामू बाबू आपका गाना सुनने के मुश्ताक़ हैं।"

अम्मीजान—"उनका हुक्म सर-आँखों पर, मगर वजह यह है कि हमारे तबलिए साहब बीमार हो गए हैं, इसलिये मजबूरी है। आप किसी और दिन तशरीफ़ लावें, तो गाना सुनाया जायगा। बीशू बाबू, आप इन्हें ज़रूर लाइएगा।"

इतने में एक दस-बारह वर्ष का लड़का एक मैला कुरता और पाजामा पहने हाँफता हुआ आया, और बोला—"बीबी, अभी-अभी एक पतंग इतनी डोरों से कटा है कि क्या कहूँ।"

बंदो बोली—"अच्छा-अच्छा, कटा होगा। जा आठ पैसे के अच्छे पान लगवा ला, और डोरे में लटकाकर लाना, समझा?"

बीशू बाबू ने झट जेब से एक रुपया निकालकर फेंका, और सलारू से बोले—"यह रुपया लेता जा।"

अम्मीजान बोल उठीं—"इसकी क्या ज़रूरत थी।"

सलारू पान लेने चला गया।

बंदो अर्थात् अल्लहबंदी बातें करती जाती थी, और श्यामू बाबू की ओर कटाक्ष-बाण छोड़ती जाती थी। कभी सर से साड़ी ढलका देती। कभी—"उँह, आज मुआ जूड़ा ढीला बँधा है, खुल-खुल जाता है।" कहकर जूड़ा खोल डाला और नागिन-सी चोटी को हिलाकर फिर से जूड़ा बाँधा। इसी प्रकार की अन्य मोहन-चेष्टाएँ करती थी।

पंद्रह मिनट के पश्चात् सलारू पान लेकर आया। सब लोगों ने पान खाए। पान खाकर बीशू बाबू बोले—"अच्छा, अब इजाज़त दीजिए।"

अम्मीजान बोलीं—"अब कब तशरीफ़ लाइएगा?"

श्यामू—"दो-एक रोज़ में आवेंगे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सब लोग उठ खड़े हुए। बंदो श्यामू बाबू की ओर एक कटाक्ष-बाण छोड़कर बोली—"आप भी ज़रूर तशरीफ़ लाइएगा।"

श्यामू बाबू धीमे स्वर में बोले—"आऊँगा।"

चौथा परिच्छेद

नवीनता—और मनमोहक नवीनता, एक नवयुवक को—विशेषतः ऐसे नवयुवक को, जिसने बाल्यावस्था विलासिता की गोद में व्यतीत की हो, अपने ऊपर मुग्ध कर लेने की यथेष्ट शक्ति रखती है। संसार नवीनता के पीछे पागल रहता है। सांसारिक मनुष्य पग-पग पर नवीनता चाहते हैं। श्यामनाथ भी इसी नवीनता के जाल में फँस गए। अभी तक उनके दृष्टि-विस्तार की सीमा केवल उनके माता-पिता, बुआ, चाची, चाचा तक ही थी। परंतु अब उन्हें ज्ञात हुआ कि इनके अतिरिक्त भी संसार में ऐसे पुरुष तथा स्त्रियाँ हैं, जिनसे वह स्नेह कर सकते हैं, प्रेम कर सकते हैं—और उस स्नेह में, उस प्रेम में अधिक आकर्षण है, अधिक नवीनता है।

श्यामनाथ, वही श्यामनाथ जो प्रथम दिन अलफ़बंदी के कमरे पर आने से इतना झिझके थे, अब इस बात की प्रतीक्षा में रहते थे कि कब संध्या हो, और कब वह चौक की सैर को जायँ। उनका सारा दिन बड़ी बेचैनी के साथ कटता था। जहाँ संध्या होती, बस, फिर उन्हें घर पर अथवा दूकान पर एक क्षण बैठना भी कठिन हो जाता था। उस समय जो कोई उन्हें कोई अन्य काम बता देता अथवा कोई दूसरी प्रकार की अड़चन डालता, वह उन्हें शत्रुवत् दिखाई पड़ता था। यों तो उन्हें किसी से किसी प्रकार का भय न था, क्योंकि इतना साहस किसमें था कि उनके कार्य-क्रम में किसी प्रकार का हस्तक्षेप [illegible]सके। हाँ, केवल बाबू व्रजमोहनलाल की ओर से वह सशंकित सा [illegible]। यद्यपि बाबू व्रजमोहनलाल उनसे कभी कुछ न कहते थे।

CC-0. In Public Domain. Funding by MoE-IKS

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह चाहे जिस समय चाहे जो काम करें, बाबू ब्रजमोहनलाल से कोई वास्ता नहीं, कोई ग़रज़ नहीं। बाबू साहब श्यामनाथ से बात-चीत भी बहुत कम करते थे। श्यामनाथ भी अपने पिता की इस उदासीनता को भली भाँति समझते थे। बाबू साहब की यही उदासीनता श्यामनाथ को सशंकित रखती थी। यदि सावित्रीदेवी की भाँति बाबू साहब भी श्यामनाथ का लाड़-प्यार करते, तो बहुत संभव था कि श्यामनाथ उनकी ओर से भी निर्भय हो जाते; परंतु लाड़-प्यार तो दूर रहा, बाबू साहब उनसे अधिकतर प्रसन्न-मुख होकर बात भी न करते थे। श्यामनाथ अब इतने नासमझ नहीं थे कि वह यह न समझ सकते कि बाबू साहब उनके कौन हैं, और परिवार में उनका क्या स्थान है। अतएव ऐसी दशा में श्यामनाथ का अपने पिता से, सशंकित रहना स्वाभाविक ही था।

संध्या के पाँच बज चुके थे। श्यामनाथ घूमने जाने की तैयारी कर रहे थे। शौच इत्यादि से निवृत्त होकर स्नान कर चुके थे। अपने सजे हुए कमरे में एक बड़े आइने के सामने खड़े सिर में कंघा कर रहे थे। और बालों को सँवार रहे थे। इसी समय विश्वनाथ और गोकुल-प्रसाद आए। उन्हें देखते ही श्यामनाथ की बाछें खिल गईं, मुस्किरा-कर बोले—"आओ भइ, मैं तो तुम्हारी प्रतीक्षा ही कर रहा था।"

विश्वनाथ एक कुर्सी पर बैठते हुए बोले—"देखिए, आपने याद किया, और यार लोग आ धमके—न कहिएगा।"

श्यामनाथ—"क्यों नहीं, दिल को दिल से राहत होती है।"

गोकुलप्रसाद—"जी, शुक्र है, आप इन बातों को समझने तो लगे।"

श्यामनाथ ने गोकुल पर एक रहस्य-पूर्ण दृष्टि डाली, और कुछ थोड़ा-सा शर्माकर मुस्किराते हुए कहा—"अभी क्या है, आप जो-जो समझाएँगे, वह सब समझना पड़ेगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यह कहकर श्यामनाथ बोले—"बैठिए, मैं अभी दस मिनट में हाज़िर होता हूँ।"

श्यामनाथ के चले जाने पर विश्वनाथ ने गोकुलप्रसाद से कहा—"अब चिड़ा गुलखैरू आ गए राह पर!"

गोकुलप्रसाद—"देखते जाइए, थोड़े दिनों में यह हज़रत हम लोगों को रास्ता बताएँगे।"

विश्वनाथ—"भैया की बातें, राम भजो, इन बातों में क्या धरा है, हमें क्या खाके रास्ता बताएँगे, हम लोग दुनिया-भर के न्यारिए, यह कल के लौंडे हमें रास्ता बताएँगे—हुँह।"

इधर तो ये बातें हो रही थीं, उधर श्यामनाथ सीधे सावित्री-देवी के पास पहुँचे। सवित्रीदेवी उन्हें देखते ही बोलीं—"क्या घूमने की तैयारी कर दी?"

श्यामनाथ—"हाँ, अब जा ही रहा हूँ।"

सावित्री—"अरे बेटा, अभी बड़ी धूप है, घंटा-भर और ठहर जाओ, देखो तो धूप की तरफ़ आँख नहीं की जाती।"

श्यामनाथ—"अभी तो मुझे आध घंटा यहीं लग जायगा, तब तक धूप कम हो जायगी। मुझे दस रुपए दो।"

सावित्री—"दस रुपए! दस रुपए क्या करोगे?"

श्यामनाथ—"आवश्यकता है।"

सावित्री—"कौन-सी आवश्यकता?"

श्याम—"बहुआ, तुम्हारी ये ही बातें तो बुरी लगती हैं। अधिकांश करने लगती हो, तुम्हें क्या बताऊँ, क्या करूँगा।" [illegible] गौर, नख-

सावित्री—"कोई ऐसी बात है, जो मुझसे बता[illegible] के मद में चूर।

श्यामनाथ—"हे भगवान्, बात का बतंगड़ बन[illegible] दुबला-पतला था।

सुनो, आज अपने दोस्तों की दावत करनी है।" [illegible] निर्बल थे। यदि

सावित्री—"क्यों, ऐसे कहो, [illegible] दारू जवान होता।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्यामनाथ—"ऐसे ही, उनका खाते रहते हैं, तो उन्हें भी खिलाना पड़ता है।"

सावित्रीदेवी ने चुपचाप दस रुपए दे दिए।

श्यामनाथ रुपए टेंट में लगाकर मन-ही-मन मुस्किराते हुए अपने कमरे में आए। आते ही नौकर से बोले—"हमारे कपड़े निकालो।"

नौकर ने पूछा—"कौन कपड़े निकालूँ, सरकार।"

श्यामनाथ ने मित्रों की ओर देखकर पूछा—"क्यों साहब, क्या पहनूँ?"

विश्वनाथ ने कुछ मुस्किराकर कहा—"जिसमें आप ख़ूबसूरत मालूम हों।"

गोकुलप्रसाद—"हुक्म हो, तो लपककें पूछ आऊँ।"

श्यामनाथ ने, इतना सुनते ही नौकर की ओर देखकर, जो कपड़ों के संदूक़ की ओर मुँह किए बैठा था, दाँतों तले जीभ दाबी।

गोकुलप्रसाद ने अपनी भूल समझ ली, अतएव वह बात बदलने के लिये बोले—"व्यर्थ मज़ाक में समय क्यों खोते हो, जो चाहो, पहन लो।"

श्यामनाथ ने एक बढ़िया चिकन का कुर्ता, उसके नीचे एक रेशमी बनियाइन और मख़मली किनारे की बढ़िया धोती पहनी। मेज़ के दराज़ से स्नस का इत्र निकालकर अपने कपड़ों में मला, और दोनो मित्रों को भी एक-एक फाया दिया। इसके पश्चात् मित्रों से बोले—"[illegible] फ्रेल्ट ओढ़ूँ या दोपल्ली?"

किया, [illegible]य बोले—"फ्रेल्ट ओढ़िए।"

श्यामनाथ—[illegible]ह ने कहा—"दोपल्ली ओढ़ो, गर्मी में फ्रेल्ट ठीक नहीं।"

गोकुलप्रसाद—[illegible] गोकुलप्रसाद की राय पसंद की, और एक सुंदर

तो लगे।" [illegible], तथा चलने के लिये तैयार हो गए।

श्यामनाथ ने गो[illegible]हा—"क्यों साहब, आज पान-वान नहीं खिला-

थोड़ा-सा शर्माकर [illegible]?"

[illegible]ो-जो समझाएँगे,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्यामनाथ ने नौकर से कहा—"तुमने इन लोगों को पान नहीं दिए ?"

नौकर ने कहा—"बाबूजी, मैं तो काम में लगा रहा।"

श्यामनाथ—"तो किसी दूसरे आदमी से कह दिया होता, बड़े बदतमीज़ आदमी हो।"

नौकर—"हुज़ूर, आपके कपड़े निकालने लगा, इससे भूल गया।"

श्यामनाथ—"अच्छा, ख़ैर, अब झटपट जाकर पान लाओ।"

नौकर चला गया। इधर श्यामनाथ एक पतला लचलचाता हुआ बेंत लेकर चलने के लिये तैयार हो गए।

गोकुलप्रसाद विश्वनाथ से बोले—"सच कहना यार, इस समय तो श्यामू बाबू पर ग़ज़ब का निखार है।"

विश्वनाथ—"क्या कहने हैं, हमारे श्यामू बाबू दो-चार हज़ार में एक हैं। आज वी अलबर्टबंदी दिल न थाम लें, तभी कहना।"

श्यामनाथ लड़के तो थे ही, इन लोगों की बातों से समझे कि निस्संदेह वह बड़े रूपवान् हैं, और कोई आश्चर्य नहीं, जो आज अलबर्टबंदी उन पर रीझ जाय। तुरंत आइने के सामने गए, और अपने रूप को देखकर मन-ही-मन प्रसन्न हो गए। परंतु प्रकट में बोले—"क्यों बनाते हो भइ, मैं तो एक साधारण-सा आदमी हूँ। हाँ, इतनी बात अवश्य है कि यदि सुंदर नहीं हूँ, तो बुरा भी नहीं हूँ।"

इसमें संदेह नहीं कि श्यामनाथ सुंदर लड़का था। स्त्री अधिकांश सुंदर होते हैं। श्यामनाथ भी वैसा ही था। वर्ण स्वच्छ गौर, नख-शिख सुंदर और उसके साथ उठती जवानी—यौवन के मद में चूर। यदि कसर थी, तो केवल एक बात की। शरीर का दुबला-पतला था। पैर, स्त्रियों के हाथ-पैरों की तरह, कोमल तथा निर्बल थे। यदि शरीर इस का हृष्ट-पुष्ट तथा सुदृढ़ होता, तो निस्संदेह दीदारू जवान होता।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नौकर पान ले आया। सबने पान खाए। श्यामनाथ ने पूछा—"गाड़ी जुतवाँ लूँ।"

गोकुलप्रसाद—"अजी नहीं, यों ही टहलते चले चलेंगे। नई जवानी माँझा ढीला। अभी से गाड़ी-घोड़े की तलाश हुई, तो ख़ैर सलाह है।"

श्यामनाथ—"कौन, मैं चार-छ मील चलने का दम रखता हूँ! आप समझते क्या हैं? मैंने तो केवल इसलिये पूछा था कि यदि आप लोगों की इच्छा हो, तो गाड़ी भी हाज़िर है।"

विश्वनाथ—"अच्छा-अच्छा, सफ़ाई न दीजिए—चलिए।"

घर से निकलकर ये तीनों आदमी टहलते हुए चले। गोल दरवाज़े के पास पहुँचकर श्यामनाथ ने कहा—"आइए, थोड़ी देर बाग़ में बैठें।"

विश्वनाथ—"ऐसी-तैसी तुम्हारी, यहाँ घूमने आए हो या बैठने?"

श्यामनाथ—"ज़रा और अँधेरा हो जाय, तब चौक के भीतर चलेंगे।"

गोकुल—"अँधेरा हो जायगा, तब वहाँ क्या देखोगे—बुरे का सिर? देखने-भालने का लुत्फ़ तो इसी समय है।"

श्यामनाथ—(कुछ मुस्किराकर)"वहाँ देखने-भालने को है क्या?"

विश्वनाथ—"इसमें क्या संदेह है। वहाँ है क्या? सब उजाड़ पड़ा हुआ है—उल्लू बोलते हैं।"

गोकुल—"जी चाहता है, एक गुदा जमाऊँ, बेतुका आदमी। और सुनिए, आप कहते हैं, वहाँ देखने को है क्या।"

विश्वनाथ—"अजी, इस धोके में न रहिएगा। सब जानता है, बड़ा बना हुआ है।"

श्यामनाथ—"यार, और कुछ नहीं, यही डर है कि कहीं कोई जान-पहचान का आदमी न देख ले।"

विश्वनाथ—"देख लेगा, तो क्या करेगा? घूमना भी को[illegible] पाप है? अजीब आदमी हैं आप।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्यामनाथ—"हाँ, ख़ाली घूमने में कोई हानि नहीं, चलो।"

गोकुल—"और नहीं, तो आप क्या समझे थे?"

श्यामनाथ—"मैं समझा था कि आप लोगों के कुछ और इरादे हैं।"

विश्वनाथ—"ख़ूब समझे, शाबाश।"

तीनो युवक चौक के भीतर प्रविष्ट हुए। पहले एक तँबोली की दूकान पर बढ़िया पान खाए, तत्पश्चात् आगे बढ़े। विश्वनाथ तथा गोकुलप्रसाद की दृष्टि तो छज्जों ही की ओर थी। परंतु श्यामनाथ नीची निगाह किए चल रहे थे। कभी-कभी कन-अँखियों से ऊपर की ओर देखकर तुरंत दृष्टि हटा लेते थे।

हठात् विश्वनाथ बोल उठे—"देखिए-देखिए, अपनी बंदो को तो देखिए, आज तो बिलकुल कायापलट है।"

श्यामनाथ ने ऊपर की ओर देखा। अल्लहबंदी सिर से पैर तक गुलाबी वस्त्र पहने छज्जे पर खड़ी थी। श्यामनाथ की और उसकी आँखें चार हुईं। अल्लहबंदी ने एक कटाक्ष-बाण छोड़ा, और किंचित् मुस्किरा दी। श्यामनाथ ने शर्माकर आँखें नीची कर लीं।

जब सब लोग आगे बढ़ गए, तो श्यामनाथ ने कहा—"यार, जब मेरी-उसकी निगाहें मिलीं, तो मुझे भय हुआ कि कहीं सलाम कर बैठे, और कोई देख ले, तो बुरी रहेगी। परंतु यह अच्छा हुआ कि वह ख़ाली मुस्किराकर रह गई।"

विश्वनाथ—"कोई टकिहाई तो है नहीं, तमीज़दार रंडी है। ये लोग अवसर देखकर काम करती हैं। क्या मजाल, जो कभी कोई अनुचित बात करें।"

गोकुलप्रसाद—"अजी, ऐसा भला कभी कर सकती हैं। ऐसा करने लगें, तो कोई भला आदमी पास तो फटके नहीं।"

इसी प्रकार ये तीनो व्यक्ति कुछ देर चौक की सैर [illegible] सलाह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इसके पश्चात् श्यामनाथ ने कहा—"अच्छा, अब चलो, थोड़ी देर चलकर बाग़ में बैठें। तब तक काफ़ी अँधेरा हो जायगा।"

तीनो आदमी बाग़ की ओर चले। विश्वनाथ ने अल्लहबंदी से इशारे में कह दिया कि अभी थोड़ी देर में आते हैं।"

पाँचवाँ परिच्छेद

साढ़े सात बजे यह त्रिमूर्ति अल्लहबंदी के कमरे पर पहुँची। अल्लहबंदी इन्हें देखते ही उठ खड़ी हुई, और बोली—"आइए, तशरीफ़ लाइए।"

तीनो व्यक्ति बैठ गए।

अल्लहबंदी की माता—"ऐ हुज़ूर, इधर क़ालीन पर तकिए के सहारे आराम से बैठिए—आप भी कहाँ बैठ गए।"

तीनो व्यक्ति सरककर गाव-तकिए के सहारे बैठ गए।

अल्लहबंदी ने श्यामू बाबू से पूछा—"कहिए श्यामू बाबू, आपके मिज़ाज तो अच्छे हैं?"

श्यामनाथ कुछ शर्माते हुए बोले—"आपकी मेहरबानी है।"

अल्लहबंदी—"मैं तो समझी थी, शायद आज आप न आवें।"

अल्लहबंदी की माता बोल उठी—"या अल्लाह, जब से आपको चौक में घूमते देखा, तब से मछली की तरह तड़पती फिरती रही। कई बार कहा—आज अभी तक नहीं आए, क्या न आवेंगे। और, मैं कहती थी कि आवेंगे ज़रूर। आख़िर वही हुआ। मिज़ाज में बड़कपन तो इतना है कि ख़ुदा की पनाह।"

श्यामनाथ बड़े प्रसन्न हुए कि अल्लहबंदी को हमसे इतना प्रेम है। मुस्किराकर बोले—"हमारे इंतज़ार में आपको बड़ी तकलीफ़ हुई।"

अल्लहबंदी ने इसका कुछ उत्तर न दिया, केवल श्यामनाथ पर कि प्रेम-भरी दृष्टि डालकर आँखें नीची कर लीं।"

है? अजीब पुनः बोली—ऐ हुज़ूर, अभी थोड़ी देर हुई, एक रईसज़ादे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तशरीफ़ लाए थे, बड़े रुपएवाले हैं, लखपती आदमी ; मगर इसने उनसे सीधे-मुँह बात नहीं की। सच कहती हूँ, मुझे तो इसकी यह हरकत बड़ी बुरी लगी। यह मैं जानती हूँ कि इसका दिल उस वक़्त किसी दूसरी तरफ़ था, मगर कुछ हो, उनसे दो-चार बातें तो करनी थीं। हम लोगों का काम यही है कि जो हमारे यहाँ आवे, उसकी मिज़ाज-पुर्सी करें, उसकी ख़ातिर करें, उससे कुछ देर बात करें। रही दिली मुहब्बत, सो वह तो हुज़ूर, एक ही आदमी से होती है, हरएक से तो होती नहीं। बाक़ी यह ज़रूर है कि हँसना-बोलना तो सभी से पड़ता है, हम लोगों का काम यही है। क्यों सरकार, मैं ख़िलाफ़ तो नहीं कहती ?"

विश्वनाथ—"नहीं, बिलकुल ठीक है। बंदो, तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए।"

बंदो एक हृदय-हारिणी मुख-भंगी करके बोली—"भइ, हम अपनी आदत को क्या करें। हमारा तो जिससे मुहब्बत होती है, उसी से बातचीत करने को जी चाहता है। यों हमसे हँसा-बोला नहीं जाता, चाहे कोई लखपती हो या करोड़पती। हम तो मुहब्बत के भूके हैं, रुपए के भूके नहीं। रुपया लेकर हमें करना क्या है ? जिस ख़ुदा ने पैदा किया है, वह शाम तक खाने को देगा ही।"

यह कहकर बंदो ने पुनः एक रहस्य-पूर्ण दृष्टि से श्यामू बाबू की ओर देखा।

वृद्धा बोली—"बस, इतनी ही बात में मेरी-इसकी नहीं पटती। मैं कहती हूँ कि मुहब्बत चाहे जिससे करो, मगर बोलने-चालने में किसी से कमी नहीं करनी चाहिए।"

गोकुलप्रसाद—"अभी नासमझ हैं।"

वृद्धा—"ऐ, अभी बिलल्ली तो है ही, साल-भर पहले रो के तो रोटी माँगती थी—समझ अभी धरी है।"

यह कहकर वृद्धा ने पुकारा—"सलारू, ऐ सलारू।" सलारू

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दौड़ा हुआ आया। वृद्धा ने कहा—"जा, झटपट एक चार आने के पान तो लगवा ला। डोरे में बाँधकर लाना—समझा ?"

श्यामनाथ ने झट एक रुपया निकालकर फेंका। वृद्धा ने कहा—"ऐं, इसकी क्या ज़रूरत है, आप तो शर्मिंदा करते हैं।"

श्यामनाथ ने कहा—"कोई हर्ज नहीं—एक ही बात है।"

वृद्धा—"यह तो ठीक है। हमारे पास जो कुछ है, सब आप ही लोगों का दिया हुआ है—झूठ क्यों बोलूँ, ख़ुदा को मुँह दिखाना है।"

सलारू पान लेने चला गया।

श्यामनाथ ने गोकुलप्रसाद के कान में कुछ कहा। गोकुलप्रसाद ने कहा—"आप ही कहिए न, क्या आपका कहना न मानेंगी ?"

वृद्धा बोल उठी—"कहिए, कहिए, जो हुक्म हो, वह बजा लावें। हम तो ग़रीब आदमी हैं, किसी क़ाबिल नहीं। मगर जो हम कर सकते हैं, उसमें हमें उज्र नहीं।"

श्यामनाथ ने दबी ज़बान से कहा—"इस वक़्त गाना सुनने को जी चाहता है।"

वृद्धा—"ऐ, यह कितनी बड़ी बात है, इसी के लिये हुज़ूर इतना सकुचाते थे। वाह ! अभी लीजिए। सलारू आ जाय, अभी सब इंतज़ाम होता है।"

थोड़ी देर में सलारू पान लेकर आ गया। नायका ने उससे कहा—"जा, ज़रा झपटकर उस्तादजी को तो बुला ला। कहना—मुजरा होगा, जल्दी चलो।"

सलारू—"कहाँ मिलेंगे ? घर पर ?"

नायका—"हाँ, घर पर देख लेना, वहाँ न मिलें, तो यहीं चौक में देखना। यहीं कहीं मँडला रहे होंगे, जायँगे कहाँ।"

अल्लहबंदी बोल उठी—"ऐ, अख़्तरअली की दूकान पर बैठे होंगे। वहीं सीधा चला जा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुल—"अख़्तरअली कौन ?"

अल्लहबंदी—"अख़्तरअली एक गंधी है। उससे उनका बड़ा याराना है। उसी के यहाँ बैठे रहते हैं।"

सलारू गया, और दस मिनट में उस्तादजी को साथ लेकर आ गया। उस्तादजी ने आते ही पहले तीनो व्यक्तियों को एक 'फ़र्शी सलाम' किया। तत्पश्चात् वह सामने थोड़ी दूर पर शिष्टता-पूर्वक बैठ गए।

वृद्धा ने पूछा—"मुहम्मदअली नहीं आया ?"

उस्तादजी बोले—"आता है, ज़रा ख़ुरशीदजान के तबलिए से बात कर रहा है।"

वृद्धा श्यामू बाबू की ओर संकेत करके बोली—"उस्तादजी, इन साहब से तो आप वाक़िफ़ न होंगे ?"

उस्तादजी दाँत निकालकर बोले—"जी, गोकुल बाबू और विश्वनाथ बाबू से तो वाक़िफ़ हूँ; मगर आपसे....."

वृद्धा बोल उठी—"हाँ, इनसे आप वाक़िफ़ नहीं हैं। इनका नाम बाबू श्यामनाथ है—रईस आदमी हैं। हम ग़रीबों पर ख़ास इनायत रखते हैं।"

उस्तादजी—"इतना तो मैं समझ गया था कि कोई रईस हैं, क्योंकि रईस की शक्ल छिपी थोड़ा ही रहती है—रईसों की वज़ाक़ता ही दूसरी होती है।"

गोकुल बाबू बोल उठे—"उस्तादजी, यह बड़े लायक़ आदमी हैं, दौलतमंद तो हैं ही, साथ ही दिलदार भी बड़े हैं।"

उस्तादजी—"माशाअल्ला ! क्यों नहीं, ख़ुदा ने दौलत के साथ दिल भी अता फ़र्माया है। और हुज़ूर, जिसके दिल नहीं, वह रईस ही काहे का, ख़ाली रुपए से ही कोई रईस थोड़ा हो जाता है। इस शहर में ऐसे-ऐसे रुपएवाले पड़े हैं कि चाहें, तो शहर को ख़रीद लें, मगर दिल नदारद ! हंतिहा के कंजूस—न ख़ुद खा सकें, न किसी को कौड़ी दे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सकें। ऐसा रुपया किस काम का। उनका कोई नाम भी नहीं लेता।"

उसी समय मुहम्मदअली आ गया। उसके साथ एक आदमी और था। उस्तादजी ने अपनी सारंगी ठीक की, मुहम्मदअली के साथ जो दूसरा आदमी आया था, उसने भी एक सारंगी ले ली। मुहम्मदअली ने तबला सँभाला। तीनो ने अपने साज़ परस्पर मिलाए। इसके पश्चात् बंदीजान बीच में आ बैठीं, गाना आरंभ हुआ।

एक घंटे तक गाना होता रहा। गाने के समय बंदीजान ने वहवह कौशल दिखाए, भाव-भंगी का ऐसा प्रदर्शन किया, ऐसे तीक्ष्ण कटाक्ष-बाण फेंके कि श्यामनाथ तो उन बाणों से विद्ध होकर बंदीजान के प्रेम-पाश में पूर्णतया जकड़ गए। गाना समाप्त होते ही श्यामनाथ ने जेब से दस रुपए निकालकर बंदीजान की माता के हाथ में रख दिए। वृद्धा ने पहले तो बनावट से कहा—"अजी, इसकी क्या ज़रूरत है, हम तो आपके लौंडी-ग़ुलाम हैं।"

श्यामनाथ ने कहा—"तो हर्ज क्या है, आपके पान खाने के लिये दिए जाते हैं।"

वृद्धा ने 'तसलीम' कहकर रुपए पानदान में रख लिए। इसके पश्चात् श्यामनाथ मित्रों की ओर देखकर बोले—"अब चलना चाहिए।"

गोकुलप्रसाद बोल उठे—"अरे, अभी ज़रा देर और बैठो, जल्दी क्या पड़ी है?"

बंदीजान ने भी कहा—"बैठिए, एक तो छठे-छमासे तशरीफ़ लाते हैं, फिर भी ज़रा देर बैठना मुश्किल है।"

श्यामनाथ किंचित् मुस्किराकर बोले—"छठे-छमाहे की एक ही कही।"

बंदीजान—"क्या झूठ कहती हूँ?"

श्यामनाथ—"नहीं, झूठ और आप बोलें। ख़ैर, जैसा हुक्म होगा, वैसा करना पड़ेगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आध घंटे तक इधर-उधर की बातें और हँसी-मज़ाक़ होता रहा। गाना समाप्त होते ही वृद्धा उठकर चली गई थी, केवल बंदीजान और ये तीनो आदमी रह गए थे।

आध घंटे पश्चात् विश्वनाथ अँगड़ाई लेकर बोले—"अह, अब तो चलना चाहिए।"

बंदीजान तुनककर बोली—"तो आप जाते क्यों नहीं, आपको है बिठा ही किसने रक्खा है?"

विश्वनाथ—"क्यों साहब, मैंने क्या क़ुसूर किया है? आख़िर मुझ पर इतनी ख़फ़गी क्यों?"

बंदीजान—"एक तो ख़ुद न बैठें, और साथ में दूसरों को भी बैठें।"

विश्वनाथ—ओहो, यह कहिए; पर ज़रा उन दूसरों की तशरीह (व्याख्या) तो कीजिए। आख़िर दूसरों में किस-किसकी गिनती है?"

गोकुलप्रसाद बोले—"क्यों बी, मैं भी चला जाऊँ क्या?"

बंदीजान—"हाँ-हाँ, जाइए, मैंने क्या आपको रोक रक्खा है?"

विश्वनाथ—"चलो यार, इस वक्त मिज़ाज गर्म हैं।"

यह कहकर विश्वनाथ उठे, साथ ही गोकुलप्रसाद भी उठे। इन दोनो को उठते देखकर श्यामनाथ भी उठने लगे। इन्हें उठते देख बंदीजान ने इनकी धोती का कोना अपने पैर के अँगूठे से दाब लिया। श्यामनाथ बैठ गए। बोले—"यार, मुझे इजाज़त नहीं मिलती।"

गोकुल—"बड़े ख़ुश-क़िस्मत हो। हम तो निकाले जा रहे हैं अह।"

विश्वनाथ—"तुम्हारे सामने अब हम ग़रीबों को कौन पूछेगा?"

बंदीजान—"ऊँह! ऊँह! बड़े ग़रीब हैं, क्या कहना!"

श्यामनाथ बंदीजान से बोले—"मुझे भी इजाज़त दीलिए, फिर आऊँगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बंदीजान—"आपको तो मैं अभी नहीं जाने दूँगी, इनको जाने दीजिए, इनका-आपका क्या साथ? ये दोनो बड़े छँटे हुए हैं। आप इनके साथ मत रहा कीजिए।" यह कहकर बंदीजान गोकुलप्रसाद तथा विश्वनाथ की ओर देख किंचित् मुस्किराई।

गोकुलप्रसाद ने कहा—"अभी क्या हुआ है, अब तो तुम इन्हें डिबिया में बंद करके रक्खोगी।"

बंदीजान—"ज़रूर रक्खेंगे, नहीं तो क्या तुम्हारे साथ ख़राब-ख़स्ता होने के लिये छोड़ देंगे। तुम दोनो तो ज़माने-भर के.....अब क्या कहूँ।"

विश्वनाथ—"श्यामनाथ, तुम्हारी वजह से हमारी इतनी बेआबरूई हो रही है—न हम तुम्हें यहाँ लाते, न इतनी ज़िल्लत सहनी पड़ती।"

श्यामनाथ—"भइ, अगर यह बात है, तो मैं भी यहाँ न बैठूँगा।" यह कहकर श्यामनाथ उठने लगे।

बंदीजान ने कहा—"आप बैठिए, मैं तो फ़क़त मज़ाक़ करती हूँ। इन लोगों को जाने दीजिए।"

गोकुलप्रसाद—"बैठो यार, नहीं तो यह हम पर इल्ज़ाम रक्खेंगी कि तुम लोगों ने इनको बैठने न दिया। हमारी तो हर तरह मुश्किल है।"

बंदीजान मुस्किराकर बोली—"अच्छा, अब आप लोग बहुत बातें न बनाइए, सीधी तरह चले जाइए।"

विश्वनाथ—"यार श्यामनाथ, तुमने इन पर न-जाने क्या जादू कर दिया है कि जब से इन्होंने तुमको देखा है, तब से किसी को कुछ समझती ही नहीं; वरना पहले यही हम लोगों के देखने को तरसती थीं।"

बंदीजान—"जी हाँ, ऐसे ही तो आप बड़े ख़ूबसूरत हैं।"

गोकुल—(विश्वनाथ से) "चलो यार, अब हम लोगों का रंग नहीं रहा। श्यामनाथ के आगे अब किसी की दाल न गलेगी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इतना कहकर गोकुलप्रसाद विश्वनाथ को साथ लेकर चल दिए।

ज़ीने में उतरते हुए गोकुलप्रसाद ने विश्वनाथ से धीमे स्वर में कहा—"क्यों उस्ताद, मारा चारो शाने चित।"

विश्वनाथ—"खूब पछाड़ा, बंदीजान का रंग जम गया।"

गोकुलप्रसाद—"बेटा श्यामनाथ समझते होंगे कि बंदीजान उन पर जी-जान से फ़िदा है।"

विश्वनाथ—"इस समय की लीला से और भी विश्वास हो गया होगा। अभी लौंडा तो है ही।"

गोकुलप्रसाद—"चलो अच्छा हुआ, बंदीजान पर इस लोगों का यह एहसान लद गया।"

छठा परिच्छेद

शंभूनाथ को इस समय केवल एक चिंता थी, उसके सामने केवल एक लक्ष्य था, उसका प्रथम मुख्य उद्देश्य था—शिक्षा प्राप्त करके चार पैसे कमाने का उद्योग करना। वह इस बात का स्वप्न देखा करता था कि क्या कभी वह दिन भी आवेगा, जब वह अपने को और अपनी माता को अपने पिता के अवलंब से मुक्त कर सकेगा। वह अब बच्चा नहीं था—वह समझता था। वह यह भी जानता था कि उसके पिता की आय का द्वार कितना और कैसा है। वह अब यह भी जान गया था कि श्यामनाथ उसका सगा छोटा भाई है। उसे यह भी ज्ञात था कि उसके पिता ने केवल धन के लोभ से श्यामनाथ को माता की गोद से खींचकर सावित्रीदेवी की गोद में डाल दिया है। वह अब अपने परिवार की परिस्थिति से भली भाँति परिचित था।

शंभूनाथ कॉलेज गया हुआ था। घासीराम का चित्त कुछ ख़राब था, इस लोगे ?" वह आज दूकान नहीं गए थे। दोपहर का समय

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

था। घासीराम चारपाई पर बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे। पास ही चटाई पर बैठी हुई सुलोचना कुछ कपड़ा सी रही थी। घासीराम हुक्का पीते-पीते निगाली छोड़कर बोले—"अब चुन्नी के ब्याह की कुछ फ़िक्र होनी चाहिए, लड़की सयानी हो गई है।"

सुलोचना ने कहा—"मैं तो तुमसे कई बेर कह चुकी, पर तुम कुछ ध्यान ही नहीं देते।"

घासीराम—"ध्यान क्या दूँ—पैसा भी तो पास हो। ख़ाली बातों से तो ध्यान दिया ही नहीं जाता। हुँह, कहने लगी, ध्यान नहीं देते। इस दुष्ट शँभुआ के मारे और भी नाक में दम है। न-जाने इसकी पढ़ाई कब समाप्त होगी। दुष्ट से कहा था कि पढ़ना छोड़के चार पैसे कमाने का उद्योग कर, पढ़ाई सुसरी में क्या धरा है? पढ़ने को क्या, आदमी चाहे सारी उम्र पढ़ता रहे। तुम भी उसी की हाँ में हाँ मिलाती हो। तुम दोनो मा-बेटों के मारे मेरी एक नहीं चलने पाती। नाक में दम है।"

सुलोचना—"तुम इस बेचारे के पीछे न-जाने क्यों पड़े रहते हो। जब देखो, तब घूम-फिरके उसी को दोष देते हो। वह बेचारा तो कभी तुमसे कुछ माँगता-जाँचता नहीं। रात-दिन ख़ून-पसीना एक करके जी-जान से पढ़ने में जुटा रहता है। बेचारे को न अच्छा खाने को मिले, न पहनने को, फिर भी कभी मुँह से आधी बात नहीं निकालता। उसे पढ़ने दो, तुम्हारा क्या लेता है?"

घासीराम—"लो और सुनो, मेरा कुछ लेता ही नहीं, और यह पढ़ाई-लिखाई में ख़र्च हो रहा है, यह कहाँ से आता है? अपने बाबा के घर से लाता है या नाना के घर से?"

सुलोचना—"ख़र्च होता है, तो क्या हुआ, उसका हक़ नहीं है। तुम्हारा यह कर्तव्य नहीं है कि उसे पढ़ाओ-लिखाओ?"

घासीराम—"तो क्या मैंने सारी उम्र पढ़ाने का कोई ठेका लिया है। जितना पढ़ाना चाहिए, उतना पढ़ा दिया जैसी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलोचना—"भला, जब तक भली भाँति पढ़ेगा नहीं, तो कमाएगा क्या ? पढ़-लिखकर जब चार पैसे कमाएगा, तो तुम्हीं को सुख मिलेगा कि किसी और को ?"

घासीराम—"मिल चुका सुख। सुख देनेवालों की सूरत ही दूसरी होती है। लड़का तो श्यामनाथ है, जिसकी बदौलत इस समय भी चैन कर रहे हैं।"

सुलोचना ने पति की ओर एक घृणा-युक्त दृष्टि से देखकर कहा—"पत्थर पड़ें ऐसे सुख पर, तुम्हें सुख मिलता होगा। मुझे तो घोर दुःख है। धिक्कार है हमारे इस सुख को। क्या कहें, भगवान् ही की ऐसी इच्छा है, नहीं तो जो हमारा बस चले, तो हम तो उनका पैसा हाथ से भी न छुएँ।"

घासीराम—"तेरी तो समझ पर पत्थर पड़ गए हैं, पत्थर। शंभू पर आशा लगाए बैठी है। शंभू तुझे राजगद्दी पर बिठाएगा।"

सुलोचना—"राजगद्दी न सही, रोटी-कपड़े-भर को तो कमा लेगा। हमारे लिये वही राजगद्दी है।"

घासीराम मुँह से धुआँ छोड़कर बोले—"तू तो मूर्ख है, मूर्ख। तेरे से कौन बात करे।"

सुलोचना ने इस बात का कोई उत्तर न दिया, चुपचाप सुई चलाती रही। घासीराम कुछ क्षणों तक मौन धारण किए हुक्का पीते रहे। इसके पश्चात् बोले—"आज बाबू ब्रजमोहनलाल से चुन्नी के ब्याह की बात कहूँगा। यदि वह ब्याह-भर को रुपए दे दें, तो फिर क्या—आनंद-ही-आनंद है। और, देंगे क्यों नहीं, दिल्लगी है। हमने अपना लड़का दिया है, तो किसलिये ? क्या इतनी सहायता भी न करेंगे ?"

सुलोचना वस्त्र पर दृष्टि जमाए हुए बोली—"और, जो न दें, तो क्या करोगे ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घासीराम—"देंगे कैसे नहीं, झख मारेंगे देंगे, और जो न देंगे, तो मैं भी ठीक बना दूँगा।"

सुलोचना—"क्या ठीक बना दोगे?"

घासीराम—"श्यामनाथ को छीन लूँगा।"

सुलोचना ने पति पर एक दया-पूर्ण दृष्टि डाली, और कहा—"शंभू के बाप, तुम तो बच्चों की-सी बातें करते हो। मुझे तो तुम मूरख समझते हो, पर तुम्हारी बातें जो कोई सुने, तो क्या कहे। भला, वह अब श्यामनाथ को तुम्हें क्यों दे देंगे? और श्यामनाथ कोई खिलौना तो है नहीं, जो तुम छीन लाओगे। वह तुम्हारे यहाँ आने ही क्यों लगा।"

घासीराम—"क्यों, आवेगा क्यों नहीं, अपने मा-बाप के यहाँ न आवेगा?"

सुलोचना हँस पड़ी। हँसते-हँसते बोली—"हाँ, आवेगा क्यों नहीं। तुमने उसके साथ बड़ी नेकी की है न, जो आवेगा।"

घासीराम—"तू तो है बौड़म, यह नेकी थोड़ी है कि उसे इतने सुख के स्थान पर पहुँचा दिया। बैठा राज्य कर रहा है।"

सुलोचना—"तो भला, वह उस राज्य को छोड़कर तुम्हारे यहाँ कैसे चला आवेगा?"

घासीराम—"हमसे स्नेह होगा, तो चला ही आवेगा।"

सुलोचना—"स्नेह का हाल तो देख ही रहे हो। भला, पहले तो वह बच्चा था, अब तो सयाना हुआ है, समझदार है, सब जानता है। अब भी कभी वह तुम्हारे घर आता है? कभी अपनी मा की याद करता है? और करे, तो कैसे करे। जब से उसने होश सँभाला, तबसे उन्हीं को मा-बाप समझा है—उन्हीं के लाड़-प्यार देखे हैं। उसे तो उन्हीं की मुहब्बत है। हमारी-तुम्हारी मुहब्बत कैसे हो सकती है। हमें तो वह पराया समझता है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by Arangotri and Sarayu Trust.

घासीराम—"यदि ऐसा है, तो यह भी तेरे ही कर्मों का फल है। यदि तू वहाँ जाती रहती, उससे लाड़-प्यार करती रहती, तो उसे मुहब्बत होती। जब उसने कभी तुझे भली भाँति देखा ही नहीं, तो मुहब्बत कैसे हो सकती है?"

सुलोचना—"जब उन्हें मेरा आना-जाना बुरा लगता था, तो मुझे क्या पड़ी थी, जो मैं जाती?"

घासीराम—"तुझे उससे मुहब्बत ही नहीं, नहीं तो तू अवश्य जाती रहती। उनके बुरा-भला मानने से तुझे क्या मतलब था।"

ये शब्द सुलोचना के हृदय में बाण से लगे। उसके नेत्रों में आँसू डबडबा आए। उसने एक दीर्घ निःश्वास लेकर कहा—"ख़ैर, तुम ऐसा ही समझो, और क्या कहूँ, मुहब्बत का हाल तो भगवान् ही जानते हैं।"

घासीराम—"भगवान् तो जानते ही हैं, पर मैं भी जानता हूँ, मुझसे कुछ छिपा नहीं है।"

सुलोचना—"ख़ैर, अब इन बातों को रहने दो। इनसे कोई लाभ नहीं।"

उसी समय शंभूनाथ की भगिनी चुन्नी वहाँ आई। चुन्नी की वयस इस समय १६ वर्ष के लगभग थी। शुभ्रगौर वर्ण, नेत्र माता के नेत्रों की भाँति सुदीर्घ तथा करुणा-पूर्ण, मुख-मंडल का आकार-प्रकार मनोहर। चुन्नी एक ऐसी लक्ष्मी-रूपा कन्या थी, जिसको अपनी अर्धांगिनी बनाकर कोई भी पुरुष-रत्न अपने को धन्य समझ सकता था। वह सौंदर्य की ऐसी प्रतिमा थी, जिसके चरणों पर कोई भी पौरुषाभिमानी युवक अपने हृदय की पुष्पांजलि चढ़ा सकता था। गृह कार्य में भी वह प्रवीण थी। उसकी माता ने उसे सब कुछ सिखाया था। पाक-विद्या भी वह उतनी जानती थी, जितनी एक संभ्रांत हिंदू-परिवार की गृहिणियों के लिये जानना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आवश्यक होता है। सिलाई के काम में वह विशेष रूप से दक्ष थी। हिंदोस्तानी काट-छाँट के कपड़े सी लेना, क़सीदे का काम करना वह भली भाँति जानती थी। क़सीदे के काम पर उसकी विशेष रुचि भी थी, और अधिकतर वह अपना समय उसी में व्यतीत करती थी। उसे कपड़े पर सुई चलाने में उतना ही आनंद आता था, जितना एक चित्रकार को चित्र-पट पर तूली चलाने में, अथवा एक लेखक को काग़ज़ पर लेखनी चलाने में आता है। जिस प्रकार चित्रकार तथा लेखक अपनी तूली एवं लेखनी से नित्य नए प्रकार के चित्र और शब्द-चित्र बनाने की चेष्टा किया करते हैं, उसी प्रकार चुन्नी अपनी सुई से वस्त्र पर नित्य नए प्रकार के बेल-बूटे बनाने की चेष्टा करती थी। उस चेष्टा में उसे सुख मिलता था, और उसकी सफलता में उसे हार्दिक आनंद। हिंदी भी वह भली भाँति पढ़-लिख लेती थी। हिंदी की शिक्षा उसे स्वयं शंभूनाथ ने दी थी। श्यामनाथ के चले जाने के पश्चात् से घर में शंभूनाथ के लिये चुन्नी और चुन्नी के लिये शंभूनाथ ही रह गया था। जन्म-संबंध से दोनो भाई और बहन थे, और कर्म-संबंध से दोनो एक दूसरे के सखा-सखी, सहचर-सहचरी थे। प्रातःकाल मुँह-अँधेरे और रात में जब शंभूनाथ अपनी पाठ्य पुस्तकों का अध्ययन करने बैठता, तो चुन्नी भी उसके पास बैठी रहती और हिंदी के पढ़ने तथा लिखने का अभ्यास करती रहती थी। शंभूनाथ ने उसे अँगरेज़ी पढ़ाने का भी प्रयत्न किया था, पर इसमें वह कृतकार्य नहीं हुआ। चुन्नी की रुचि अँगरेज़ी पर नहीं थी, फिर भी केवल संगति-प्रभाव से इतना अवश्य हुआ कि चुन्नी रोमन लिखने-पढ़ने लगी, और अँगरेज़ी के बहुत-से शब्दों के उच्चारण तथा अर्थ भी उसे ज्ञात हो गए।

चुन्नी इस समय काले रंग की कुछ मैली धोती पहने हुए थी। उस काले मलिन वस्त्र में वह ऐसी प्रतीत होती थी, जैसे वर्षा-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ऋतु के श्याम घनों में पूर्णमासी का चंद्रमा। उसने अपनी माता से पूछा—"बहू, संध्या के लिये भोजन क्या बनेगा?"

सुलोचना ने पति की ओर देखकर पूछा—"साँझ को क्या खाओगे?"

घासीराम ने कुछ क्षणों तक सोचकर कहा—"अब मैं क्या बताऊँ, जो चाहो, बनवा लो।"

सुलोचना ने उसे भोजन के संबंध में आदेश दे दिया। चुन्नी वहाँ से चलने लगी, तो घासीराम हुक्के पर से चिलम उतारकर चुन्नी की ओर बढ़ाते हुए बोले—"ले, पहले इसको भरकर दे जा, तब कुछ और कर।"

चिलम उसकी ओर बढ़ाते हुए घासीराम ने उस पर दृष्टि डाली—उसे एक बार दृष्टि भरकर देखा। उस रूप-प्रतिमा, अज्ञात-यौवना, अबलत्व की सजीव मूर्ति, हिंदू-कन्या की मूर्तिमान परवशता को देखकर घासीराम का असंस्कृत भावना-शून्य हृदय भी एक क्षण के लिये करुणार्द्र हो उठा। उनके अंधकार-पूर्ण हृदय में स्नेह तथा वात्सल्य की बिजली कौंध गई। उस क्षणिक आलोक में उन्होंने चुन्नी के प्रति अपने कर्तव्य को भली भाँति देखा, स्पष्ट रूप से देखा। उनके नेत्र अपने आप झुक गए—अंतस्तल से एक दीर्घ निःश्वास निकली। चुन्नी चली गई।

घासीराम कुछ क्षणों तक मौन पड़े रहे। तत्पश्चात् पत्नी से बोले—"कुछ भी हो, पर अब चुन्नी का विवाह शीघ्र-से-शीघ्र कर देना चाहिए। अब देर करने में बदनामी होगी।"

सुलोचना ने कहा—"बदनामी होने की जो कहते हो, सो तो लोग अभी कहते हैं कि लड़की इतनी सयानी हो गई, पर अभी ब्याह की कोई बातचीत ही नहीं। मैंने तुमसे अनेकों बार कहा, पर तुम्हारे कान पर जूँ नहीं रेंगी। अब आज तुम्हारी नींद टूटी है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घासीराम—"अब आज ही मैं पुरोहितजी से मिलूँगा। उनसे कहूँगा, कोई लड़का जल्दी ढूँढो।"

सुलोचना—"सो तो मैं उनसे पहले ही कह चुकी। उन्होंने कहा भी था कि जल्दी-से-जल्दी ढूँढ़ेंगे। तब से फिर वह आए नहीं। पता नहीं, उन्होंने क्या किया। मैंने भी अधिक ज़ोर नहीं दिया। ज़ोर देती भी किस बिते पर? यहाँ कुछ सूत-कपास भी तो हो।"

घासीराम—"ख़ैर, अब सब हो जायगा।"

चुन्नी चिलम भरके ले आई, और हुक्के पर रखके चली गई। घासीराम चुपचाप हुक्का पीने लगे।

तीसरे पहर जब शंभूनाथ कॉलेज से लौटा, तो घासीराम ने उससे कहा—"क्यों बे, तेरी पढ़ाई कब समाप्त होगी?"

शंभूनाथ इस समय फ़ोर्थ-ईयर में पढ़ता था। उसको पिता के बातचीत करने का यह ढंग बहुत बुरा लगता था। पर वह यह सोचकर कि उनका स्वभाव ही ऐसा है, आरंभ से ही उनकी यही दशा है, चुप रहता था, कभी कुछ कहता नहीं था।

शंभूनाथ ने कहा—"कॉलेज की पढ़ाई, यदि मैं पास हो गया, तो इसी वर्ष समाप्त हो जायगी।"

घासीराम—"पास कैसे न होगा? तुझे पास होना पड़ेगा। मैं अब अधिक दिनों तक तेरी पढ़ाई का ख़र्च नहीं उठा सकता। तुझे कुछ यह भी ख़बर है कि मुझे चुन्नी का विवाह करना है।"

शंभूनाथ—"मुझे तो ख़बर है, और आज से नहीं, बहुत दिनों से है, पर आपको भी ख़बर है, यह आज मालूम हुआ।"

पुत्र के इस व्यंग्य से मर्माहत होकर घासीराम कुछ कर्कश स्वर में बोले—"तुझे ख़बर थी, तो तूने क्या किया, और तू कर ही क्या सकता है? करने-धरनेवाला तो मैं हूँ—काम तो मुझी को ख़बर होने से होगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ—"बिल्कुल ठीक है, इसीलिये तो कहता हूँ कि आपको यदि इसके कुछ पूर्व ख़बर हो गई होती, तो अधिक अच्छा था।"

घासीराम—"मुझे सब कुछ ख़बर थी, पर मैं अकेला कहाँ तक करूँ। तुझसे आशा थी कि चार पैसे कमावेगा, सो तेरी पढ़ाई ही समाप्त नहीं होने आती। वही कहावत है—'पढ़-पढ़के पत्थर भए, गुन-गुनके भए ईंट'।"

शंभूनाथ—"बस, यह अंतिम वर्ष है, इसके पश्चात् मैं आपको कष्ट न दूँगा।"

घासीराम अपने ही आप बड़बड़ाने लगे—"हुँह, कष्ट नहीं देगा। कष्ट नहीं देगा, तो जानो, कोई बड़ा भारी एहसान करेगा—बड़ी भारी कृपा करेगा। कष्ट नहीं दूँगा। फूटे मुँह से यह न निकला कि सहायता दूँगा—कष्ट न दूँगा, हुँह!" शंभूनाथ उनको बड़बड़ाते देख वहाँ से चलने लगा। उसको गमनोद्यत देख घासीराम बोले—"पहले, जाकर ज़रा पुरोहितजी को बुला ला।" "बहुत अच्छा" कहकर शंभूनाथ चल दिया।

आध घंटे में शंभूनाथ पुरोहितजी को लेकर आ गया। पुरोहितजी को पिता के पास पहुँचाकर स्वयं वह कुछ जल-पान करने के लिये चला गया। घासीराम ने पहले पुरोहितजी से कुशल-क्षेम पूछी, तत्पश्चात् कहा—"पुरोहितजी, कुछ चुन्नी के ब्याह की भी फ़िक्र है?"

पुरोहितजी बोले—"बाबू, तुम कैसी बातें करते हो? मुझे फ़िकर न होगी, तो फिर होगी किसे, बोलो?"

घासीराम—"तो फिर कुछ प्रबंध किया?"

पुरोहितजी—"हाँ, कुछ किया भी है। एक जगह बातचीत की है, उन्होंने दो-एक दिन में लड़के की कुंडली देने को कहा है।"

उसी समय सुलोचना भी पुरोहितजी के आने की सूचना पाकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वहाँ आ गई। उसने कहा—"मैंने तो, पुरोहितजी, तुमसे बहुत पहले कहा था।"

पुरोहितजी—"हाँ, बहू, कहा था—अवश्य कहा था। तो मैं भी कुछ बेफ़िकर थोड़ा ही बैठा था। पर बहू, जब तक घर अच्छा न मिले, तब तक जी भी तो नहीं भरता।"

सुलोचना—"हाँ, यह बात तो ठीक है।"

पुरोहितजी—"समझ लो बहू, मैं तो चुन्नी को अपनी ही लड़की समझता हूँ। मेरा भगवान् जाने, मेरी यही अभिलाषा है कि लड़की जैसी सुशील है, वैसा ही घर भी मिले, तभी मेरा चित्त प्रसन्न होगा। बहू, शास्त्र में कहा है—'सिंह-गमन, सुपुरुष-वचन, कदलि फलै इक बार; तिरिया-तेल, हमीर-हठ चढ़ै न दूजी बार।' सो बहू, कन्या का तेल बार-बार नहीं चढ़ता, इससे पहले ख़ूब छान-बीन कर लेनी चाहिए।"

एक कवि की उक्ति को शास्त्र के मत्थे मढ़कर पुरोहितजी ने बड़े गर्व से देखा, मानो उन्होंने कोई बड़ी बुद्धिमानी की, और विद्वत्ता-पूर्ण बात कही।

सरला सुलोचना पुरोहितजी के इस सहानुभूति-प्रदर्शन से प्रसन्न होकर बोली—"पुरोहितजी, यह आप ही की कन्या है, जैसा चाहो, करो, पर ज़रा जल्दी करो। लड़की बहुत सयानी हो गई—उसकी ओर अब देखा नहीं जाता।"

पुरोहितजी चुटकी बजाते हुए बोले—"तुम्हारा काम चुटकियों में होगा बहू, कुंडली भर मिल जाय। कल मैं उनसे कुंडली ले आऊँगा।"

सुलोचना—"किनसे?"

पुरोहितजी—"एक हैं, यहीं के रहनेवाले हैं। घर के अच्छे

घासीराम बोल उठे—"लड़के का बाप क्या करता है?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुरोहितजी—"सरकारी नौकर है, दो सौ रुपए महीना कमाता है। ऐसा-वैसा घर थोड़ा है।"

सुलोचना—"लड़का तो अभी पढ़ता होगा।"

पुरोहितजी—"हाँ, पढ़ता ही है। कल मैं पूरा पता लगाकर तुम्हें बताऊँगा। और, कुंडली भी ले आऊँगा। तुम निश्चित रहो, मैं जितनी जल्दी हो सकेगा, सब ठीक-ठाक कर दूँगा।"

सुलोचना—"हम तो तुम्हारे ही भरोसे हैं पुरोहितजी।"

पुरोहितजी—"तुम घबराओ नहीं बहू, सब ठीक हो जायगा।"

घासीराम—"तो बस, अब हम निश्चित हैं।"

पुरोहितजी—"बिल्कुल निश्चित रहो बाबू।"

घासीराम—"देखना, एक बात का ध्यान रखना, घर लोभी न हो, कहीं अनाप-शनाप हाँकें। आप जानते हैं, मेरी स्थिति जैसी है।"

पुरोहितजी—"मैं सब समझता हूँ बाबू। कुछ तुम्हारे कहने की बात नहीं है।"

इस प्रकार वार्तालाप करके पुरोहितजी विदा हुए।

सातवाँ परिच्छेद

दोपहर का समय था। बाबू व्रजमोहनलाल अपनी दूकान पर बैठे हुए थे। एक ओर लाला घासीराम बैठे थे, उनके पास ही उनका एक सहकारी बैठा था। बाबू व्रजमोहनलाल के पास ही बाबू श्यामनाथ गद्दी पर तकिए के सहारे बैठे एक पुस्तक पढ़ रहे थे। दोपहर का समय होने के कारण कोई ग्राहक न था। बाबू व्रजमोहनलाल घासीराम से गप-शप कर रहे थे। बातें करते-करते इठात् घासीराम ने कहा—"बाबूजी, लड़की के विवाह की बातचीत लग रही है।"

बाबू साहब पूछ बैठे—"किस लड़की के विवाह की?"

घासीराम के मुँह से निकला—"यही, श्यामनाथ की बहन की।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यह सुनते ही बाबू साहब की भौंहें तन गईं। माथे पर बल पड़ गए, मुँह से केवल 'हूँ' कहा, और चुप हो गए। श्यामनाथ ने पुस्तक पर से दृष्टि उठाकर पहले घासीराम को ग़ौर से देखा। तत्पश्चात् बाबू साहब पर दृष्टि डाली। कुछ क्षणों तक बाबू साहब पर दृष्टि जमाए रखने के उपरांत वह किंचित् मुस्किराकर पुनः पुस्तक पढ़ने लगा। बाबू साहब मुख का भाव कुछ मृदु बनाकर बोले—"कहीं बातचीत लगी है?"

घासीराम—"बातचीत लगी तो नहीं है, पर दो-चार दिन में लग जायगी, ऐसी आशा है, पुरोहितजी ने कहा है कि एक घर उनकी दृष्टि में है, लड़का अच्छा है, जहाँ तक हो सकेगा, वहीं ठीक-ठाक करने का प्रयत्न किया जायगा। ख़ैर, ठीक-ठाक तो कहीं-न-कहीं हो ही जायगा; पर मुख्य बात तो, बाबूजी, सारी रुपए की है।"

बाबू साहब—"हाँ, यह तो हुई है, काम तो रुपए से ही होता है।"

घासीराम—"हाँ, और यहाँ पास-पल्ले कुछ है नहीं।"

बाबू साहब—"लड़की तो अब काफ़ी सयानी होगी।"

घासीराम दाँत निकालकर बोले—"श्यामनाथ से साल-भर बड़ी है, सोलह वर्ष से कुछ ऊपर ही है।"

श्यामनाथ ने पुनः पुस्तक पर से दृष्टि उठाकर घासीराम की ओर देखा। बाबू साहब मुँह बनाकर बोले—"तब तो बहुत सयानी है, अब तक तो उसका विवाह हो जाना चाहिए था।"

घासीराम—"विवाह तो सब कुछ हो जाना चाहिए था, पर क्या करें बाबूजी, पास रुपया नहीं था। हुज़ूर आपकी बदौलत रोटी-कपड़े का तो सुख रहा, पर बचा कुछ नहीं। थोड़ा-बहुत बच भी जाता, पर शंभू की पढ़ाई-लिखाई में बहुत ख़र्च पड़ता है। इसी से कुछ नहीं बचता। ऐसे समय में···हें-हें···आप यदि सहारा लगा दें, तो काम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हो जाय। लड़की की ओर देख-देखकर रक्त सूखता है, रात को नींद नहीं आती।"

बाबू साहब का मुख गंभीर हो गया। मौन धारण किए कुछ सोचते रहे, बीच में एक दबी हुई दीर्घ निःश्वास ली। घासीराम कन-अँखियों से उनके मुख की ओर देखते रहे। उनके मुख-मंडल पर क्षण-क्षण-भर में आशा तथा निराशा के भाव आते-जाते थे। कुछ देर पश्चात् बाबू साहब ने पूछा—"विवाह में कितना ख़र्च पड़ेगा?"

घासीराम को आशा की ज्योति दिखाई पड़ी, अतएव कुछ प्रसन्न-मुख होकर बोले—"कम-से-कम दो-ढाई हज़ार तो अवश्य ही लगेंगे।"

बाबू साहब 'हूँ' कहकर पुनः मौन हो गए। उसी समय एक ग्राहक आ गया, सब लोगों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित हो गया। इसके पश्चात् फिर इस विषय पर कोई बातचीत नहीं हुई। घासीराम ने भी सोचा, बाबू साहब से कह तो दिया ही है, जब सब ठीक-ठाक हो जायगा, तब फिर कहेंगे, कुछ-न-कुछ प्रबंध कर ही देंगे।

श्यामनाथ सदैव चार बजे दूकान से चल देता था। आज जब चलने लगा, तो घासीराम ने बाबू साहब की दृष्टि बचाकर चुपके से श्यामनाथ से कहा—"बेटा, बातचीत आवे, तो तुम भी ज़ोर लगा देना, तुम्हारी बड़ी बहन है। उसका विवाह होना बड़ा आवश्यक है। तुमने तो इधर उसे देखा ही नहीं, किसी दिन आकर देखो। तुम्हारी मा भी कलपती रहती है। कभी-कभी तो उसको अपना मुँह दिखा आया करो।"

श्यामनाथ अभिमान-पूर्वक बोला—"माताजी को मेरी मुहब्बत ही नहीं, जो मुहब्बत होती, तो वह हमारे यहाँ अवश्य आती-जाती रहतीं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घासीराम—"नहीं, बेटा, यह बात नहीं है, उसे मुहब्बत तो सब कुछ है, पर कुछ ऐसे कारण हैं, जिनसे वह नहीं आती-जाती।"

श्यामनाथ हँसकर बोला—"और कारण क्या हो सकता है? कारण यही है कि वह मुझसे स्नेह नहीं करतीं।"

घासीराम—"ख़ैर, मान लो, उसे स्नेह नहीं, पर मुझे तो तुमसे जितना स्नेह है, वह भगवान् ही जानते हैं।"

श्यामनाथ—"हाँ, आपको तो स्नेह अवश्य है, यह मैं मानता हूँ।"

घासीराम—"तो बस, फिर मेरी ही ओर देखकर कुछ करो।"

श्यामनाथ—"बाबूजी से तो मैं कुछ कह नहीं सकता, पर यदि बात आवेगी, तो बहू से कह दूँगा।"

घासीराम—"बस-बस, मैं इतना ही चाहता हूँ। जो बहू चाहेंगी, तो सब हो जायगा। तो बेटा, भूल न जाना।"

श्यामनाथ—"नहीं, भूलूँगा नहीं।"

उसी दिन रात में एकांत होने पर बाबू साहब ने अपनी अर्धांगिनी सावित्रीदेवी से कहा—"श्यामू की बहन का विवाह होने की बात-चीत हो रही है। आज घासीराम कहते थे।"

सावित्रीदेवी तुनककर बोलीं—"श्यामू की बहन? शंभू की बहन कहो। मेरे सामने ऐसी बातें मत किया करो।"

बाबू साहब—"श्यामू की बहन कहने में क्या ऐब है? क्या वह श्यामू की बहन नहीं है?"

सावित्री—"नहीं है, जब थी, तब थी, अब नहीं है।"

बाबू साहब—"जो असली नाता है, वह तो टूट ही नहीं सकता, कहने को कोई चाहे जो कहे।"

सावित्री—"वह चाहे जो हो, पर मुझे यह बुरा लगता है। मेरे सामने यह मत कहा करो।"

बाबू साहब कुछ मुस्किराकर बोले—"ख़ैर, शंभू की बहन ही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सही। हाँ, तो आज घासीराम ने इसका ज़िक्र किया था। उनकी बातों से मालूम पड़ा कि वह उसके विवाह के लिये हमसे सहायता चाहते हैं।"

सावित्री—"क्यों, हमसे सहायता क्यों चाहते हैं?"

बाबू साहब—"उनका लड़का लिए बैठी हो, इसलिये।"

सावित्री—"लड़का लिया है, तो कोई उनके घर-भर का ठेका थोड़ा ही लिया है।"

बाबू—"वह तो ऐसा ही समझते हैं।"

सावित्री—"समझते हैं, तो समझा करें, उनके समझने से होता क्या है? बहुत तो दिया। तीन-चार बरस शंभू की पढ़ाई-लिखाई देते रहे और जब-जब माँगा, तब-तब दिया। अब भी हर महीने देते ही रहते हैं।"

बाबू—"हर महीने क्या देते हैं?"

सावित्री—"शंभू के बाप को तनख़्वाह दी जाती है कि नहीं?"

बाबू—"तनख़्वाह दी जाती है, तो उससे काम भी तो लिया जाता है। वह तो देनी ही पड़ती, वह न होते, कोई दूसरा होता, उसे देनी पड़ती। उसमें हमारा कोई एहसान नहीं है।"

सावित्री—"न सही, हमें ऐसा एहसान नहीं करना है। जितनी चादर होती है, उतने ही पाँव फैलाए जाते हैं—कोई कहाँ तक दे?"

बाबू—"ग़ौर, वैसे चाहे न दो, पर लड़की का विवाह तो करा ही देना चाहिए। कोई ग़ैर नहीं, श्यामू की बहन ही है, लोग तो वैसे भी कन्याओं के विवाह कराया करते हैं।"

सावित्री—"फिर तुमने वही बात कही। न-जाने तुम्हारी कैसी आदत है कि जो बात मुझे बुरी लगती है, उसे तुम जान-बूझकर कहते हो। श्यामू की बहन जब थी, तब थी, अब नहीं है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबू साहब कुछ मुस्किराकर रसिकता-पूर्ण स्वर में बोले—"तुम्हें छेड़ने में हमें आनंद आता है।"

इस बार सावित्रीदेवी भी कुछ मुस्किराकर बोलीं—"हूँ, आनंद आता है। किसी का जी जले, इन्हें आनंद आता है।"

बाबू—"लड़की का विवाह करा दो, बड़ा पुण्य होगा।"

सावित्री—"हमें ऐसा पुण्य नहीं कमाना है।"

बाबू—"यदि वह अपना लड़का छीन लें, तो क्या करोगी?"

सावित्री—"छीनना हँसी-खेल है? जब तक बच्चा था, तब तक यह डर था, और इसीलिये उनके नख़रे सहते रहे। अब डर नहीं रहा। अब तो श्यामू उनके यहाँ एक दिन भी नहीं टिक सकता।"

बाबू साहब ने मन में सोचा—"कितना स्वार्थ है। जब तक लड़का हाथ से निकल जाने का भय रहा, तब तक उसके माता-पिता के प्रति कितना स्नेह दिखाया गया, कितनी आत्मीयता प्रदर्शित की गई, परंतु अब, जब कि वह भय जाता रहा, तोते की तरह आँखें बदल लीं। वाह रे संसार!" इस विचार के आते ही बाबू साहब का मुख गंभीर हो गया। उनकी अर्धांगिनी ने उनकी गंभीरता के दूसरे ही अर्थ लगाए। वह समझीं कि पति महोदय उनके तर्क के सामने निरुत्तर हो गए। उन्होंने उनकी बुद्धिमत्ता-पूर्ण बात का मर्म नहीं समझा। इस विचार से मन-ही-मन प्रसन्न होकर सावित्रीदेवी पुनः बोलीं—"तुम इसी डर से कह रहे थे कि लड़की का ब्याह करा देना चाहिए, तुम्हें इस बात का ध्यान नहीं आया था कि अब श्यामू उनके पास नहीं जा सकता। इतनी छोटी बात भी तुम्हारी समझ में नहीं आई। तुम्हारे-जैसे भोले आदमी को चाहे कोई ठग ले, पर मुझे ठगना सहज नहीं है। मैं उड़ती चिड़िया पहचानती हूँ।"

बाबू साहब को पत्नी की इस मूर्खता-पूर्ण बात पर कुछ हँसी आई, और कुछ घृणा उत्पन्न हुई। परंतु मन के भाव को मन ही में दबाकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बोले—"यदि यह भय न भी हो, तब भी उनकी सहायता करने में कोई हानि नहीं है। मान लो, यदि वह रुपए न होने के कारण लड़की का विवाह न कर सके, तो इसमें हमारी भी बदनामी होगी। लोग कहेंगे, जिस लड़के को गोद लिए बैठे हैं, उसकी बहन अब तक कुँवारी बैठी है। इतना भी न हुआ कि उसका विवाह कर देते। कहने के लिये इतने बड़े आदमी, और यह दशा! तुम्हें कुछ इस बदनामी का भी विचार है।"

सावित्री—"लोग चाहे कहें, या न कहें, पर तुम सारी बातें अभी अपने ही आप गढ़ लो, अपने ही मन में सोच लो।"

बाबू—"सोचना ही चाहिए। जो आगे की बात नहीं सोचते, उन्हें बहुधा पछताना भी पड़ता है।"

सावित्री—"अच्छा, कहेंगे, तो कहने दो। जब कहेंगे, तब देखा जायगा।"

बाबू—"तब क्या पत्थर देखा जायगा? जब बदनामी हो गई, तब कुछ किया भी, तो किस काम का—बलिहारी है तुम्हारी समझ की।"

हठी और स्वेच्छाचारी आदमी कभी अपनी हार नहीं मानता, और जब कभी ऐसा अवसर आ जाता है कि उसे उचित तर्क तथा प्रमाण के सम्मुख निरुत्तर होना पड़ता है, तब उसे क्रोध आता है। यही दशा सावित्रीदेवी की हुई। पति की उचित बात का जब उनसे कोई उत्तर न बन पड़ा, तब उन्हें क्रोध आया। बिगड़कर बोलीं—"तो जो तुम्हारे जी में आवे, करो, मुझसे क्यों पूछते हो? जब तुम्हारी समझ में मैं नासमझ हूँ, मूरख हूँ, तो मुझसे सलाह ही क्यों लेते हो?"

बाबू—"सलाह लेना कोई बुरी बात तो है नहीं। न सलाह लेते, तब भी तो आफ़त थी। तब तुम कहतीं कि मुझसे पूछा तक नहीं, अपनी मनमानी कर डाली।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सावित्री—"जब तुम मेरी सलाह मानते ही नहीं, मेरी सलाह को कुछ समझते ही नहीं, तो यह भी मनमानी ही करने के बराबर है। जो सलाह ले, तो सलाह के साथ काम भी करे।"

बाबू—"सलाह के साथ काम करने को तो मैं तुमसे पूछ ही रहा हूँ, पर इसके अर्थ यह नहीं हैं कि तुम उलटी-पलटी सलाह दो, अपनी ही बात रक्खो। मैंने जो कारण बताए हैं, उन पर विचार करके उचित सलाह दो, तो मैं मानने को तैयार हूँ, औंधी सलाह मैं थोड़ा ही मान लूँगा।"

सावित्रीदेवी का क्रोध अब अश्रु-बुंदों के रूप में नेत्रों द्वारा प्रवाहित होना आरंभ हुआ। बलवान् के सम्मुख निर्बल का क्रोध बहुधा इसी प्रकार निकलता है। आँसू पोछते हुए बोलीं—"तो मैं कब तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ कि तुम मेरी औंधी सलाह मानो—तुम्हारा जो जी चाहे, करो, मुझसे कोई मतलब नहीं।"

अब बाबू साहब को भी कुछ आवेश आ गया। भ्रुकुटी चढ़ाकर बोले—"ये सब काँटे तुम्हारे ही बोए हुए हैं। न तुम उनका लड़का गोद लेतीं, न आज यह दिन देखना पड़ता। तुम्हें क्या, तुम तो घर के अंदर बैठी रहती हो। मुझे तो चार भले आदमियों को मुँह दिखाना पड़ता है—मुझे तो उसकी लाज है।"

सावित्री—"लड़का लिया, तो कौन पाप किया? क्या कोई दुनिया-संसार में लड़का लेता नहीं—जानो, मैंने कोई अनोखी बात की है। वाह! जब देखो, यही ताना देते हैं—लड़का लिया, लड़का लिया। लड़का क्या लिया, आफ़त मोल ले ली।"

बाबू—"आफ़त तो जैसी मोल ली है, वह तुम्हें आगे चलकर मालूम होगी, और तुम्हें मेरी यह बात याद आवेगी।"

सावित्री—"तो जो मेरे भाग में बदा होगा, वह मैं भोग लूँगी—तुम क्यों मुझे कोंच-कोंचकर मारे डालते हो?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबू—"मैं तो एक चलन की बात कहता हूँ, और जो तुम्हें यह कोंचना प्रतीत होता है, तो अब न कहूँगा। मुझसे क्या मतलब? जो जैसा करेगा, वैसा भरेगा। अपनी-अपनी करनी सबके साथ है।"

सावित्री—"हाँ-हाँ, सब मेरी ही करनी है, सो मैं भर लूँगी। तुम इस करनी में साझा न बँटाना।"

बाबू—"बँटा तो सब कुछ लें, पर जब बँटाने भी पावें। यहाँ तो बात करना मुश्किल है, साझा बँटाने की कौन कहे।"

इतना कहकर बाबू साहब ने मौन धारण कर लिया। सावित्री-देवी ने भी फिर कोई बात नहीं की।

आठवाँ परिच्छेद

"अस्सलाह! पुरोहितजी, पालागन। कहिए, सब आनंद?"

पुरोहित लालताप्रसाद आशीर्वाद देने के पश्चात् बोले—"हाँ, सब आनंद ही है। आपकी बदौलत चैन करते हैं।"

यह कहते हुए पुरोहितजी यजमान के पास बैठ गए। पुरोहितजी के यजमान बाबू वृंदावनलाल बोले—"कहिए, और क्या हाल-चाल हैं? आज तो बहुत दिनों के पश्चात् आपके दर्शन मिले।"

पुरोहितजी—"बहुत दिन क्यों, अभी एक महीना हुआ, तब तो आपसे मुलाक़ात हुई थी।"

वृंदावनलाल बोले—"हाँ, तो एक महीना थोड़ा होता है?"

पुरोहितजी हँसकर बोले—"थोड़ा नहीं, तो और कितना होता है? बाबू, मैं तो तुम्हारा ही काम करने को फिरता रहता हूँ। मैंने छोटे बाबू के लिये एक लड़की ढूँढ़ी है।"

बाबू वृंदावनलाल प्रसन्न-मुख होकर बोले—"सच?"

पुरोहितजी—"ईश्वर जाने, ऐसी लक्ष्मी-रूपा लड़की दीपक लेकर खोजने पर भी न मिलेगी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सावित्री—"जब तुम मेरी सलाह मानते ही नहीं, मेरी सलाह को कुछ समझते ही नहीं, तो यह भी मनमानी ही करने के बराबर है। जो सलाह ले, तो सलाह के साथ काम भी करे।"

बाबू—"सलाह के साथ काम करने को तो मैं तुमसे पूछ ही रहा हूँ, पर इसके अर्थ यह नहीं हैं कि तुम उलटी-पलटी सलाह दो, अपनी ही बात रक्खो। मैंने जो कारण बताए हैं, उन पर विचार करके उचित सलाह दो, तो मैं मानने को तैयार हूँ, आँधी सलाह मैं थोड़ा ही मान लूँगा।"

सावित्रीदेवी का क्रोध अब अश्रु-बुंदों के रूप में नेत्रों द्वारा प्रवाहित होना आरंभ हुआ। बलवान् के सम्मुख निर्बल का क्रोध बहुधा इसी प्रकार निकलता है। आँसू पोछते हुए बोलीं—"तो मैं कब तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ कि तुम मेरी आँधी सलाह मानो—तुम्हारा जो जी चाहे, करो, मुझसे कोई मतलब नहीं।"

अब बाबू साहब को भी कुछ आवेश आ गया। भ्रुकुटी चढ़ाकर बोले—"ये सब काँटे तुम्हारे ही बोए हुए हैं। न तुम उनका लड़का गोद लेतीं, न आज यह दिन देखना पड़ता। तुम्हें क्या, तुम तो घर के अंदर बैठी रहती हो। मुझे तो चार भले आदमियों को मुँह दिखाना पड़ता है—मुझे तो उसकी लाज है।"

सावित्री—"लड़का लिया, तो कौन पाप किया? क्या कोई दुनिया-संसार में लड़का लेता नहीं—जानो, मैंने कोई अनोखी बात की है। चाह! जब देखो, यही ताना देते हैं—लड़का लिया, लड़का लिया। लड़का क्या लिया, आफ़त मोल ले ली।"

बाबू—"आफ़त तो जैसी मोल ली है, वह तुम्हें आगे चलकर मालूम होगी, और तुम्हें मेरी यह बात याद आवेगी।"

सावित्री—"तो जो मेरे भाग में बदा होगा, वह मैं भोग लूँगी—म क्यों मुझे कोंच-कोंचकर मारे डालते हो?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबू—"मैं तो एक चलन की बात कहता हूँ, और जो तुम्हें यह कोंचना प्रतीत होता है, तो अब न कहूँगा। मुझसे क्या मतलब? जो जैसा करेगा, वैसा भरेगा। अपनी-अपनी करनी सबके साथ है।"

सावित्री—"हाँ-हाँ, सब मेरी ही करनी है, सो मैं भर लूँगी। तुम इस करनी में साझा न बँटाना।"

बाबू—"बँटा तो सब कुछ लें, पर तब बँटाने भी पावें। यहाँ तो बात करना मुश्किल है, साझा बँटाने की कौन कहे।"

इतना कहकर बाबू साहब ने मौन धारण कर लिया। सावित्री-देवी ने भी फिर कोई बात नहीं की।

आठवाँ परिच्छेद

"अख़्लाह! पुरोहितजी, पालागन। कहिए, सब आनंद?"

पुरोहित लालताप्रसाद आशीर्वाद देने के पश्चात् बोले—"हाँ, सब आनंद ही है। आपकी बदौलत चैन करते हैं।"

यह कहते हुए पुरोहितजी यजमान के पास बैठ गए। पुरोहितजी के यजमान बाबू वृंदावनलाल बोले—"कहिए, और क्या हाल-चाल हैं? आज तो बहुत दिनों के पश्चात् आपके दर्शन मिले।"

पुरोहितजी—"बहुत दिन क्यों, अभी एक महीना हुआ, तब तो आपसे मुलाक़ात हुई थी।"

वृंदावनलाल बोले—"हाँ, तो एक महीना थोड़ा होता है?"

पुरोहितजी हँसकर बोले—"थोड़ा नहीं, तो और कितना होता है? बाबू, मैं तो तुम्हारा ही काम करने को फिरता रहता हूँ। मैंने छोटे बाबू के लिये एक लड़की ढूँढ़ी है।"

बाबू वृंदावनलाल प्रसन्न-मुख होकर बोले—"सच?"

पुरोहितजी—"ईश्वर जाने, ऐसी लक्ष्मी-रूपा लड़की दीपक लेकर खोजने पर भी न मिलेगी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वृंदावनलाल—"बड़ी प्रसन्नता की बात है, इससे अधिक और क्या चाहिए।"

पुरोहितजी—"बस, यह समझ लो, उस लड़की से तुम्हारे घर की शोभा बढ़ जायगी। गृह-कार्य में कुशल है—हिंदी भली भाँति पढ़-लिख लेती है।"

वृंदावनलाल—"तो बस, इतना काफ़ी है। हाँ, पिता क्या करता है?"

पुरोहितजी—"पिता बाबू व्रजमोहनलाल की दूकान पर मुनीम है।"

इतना सुनते ही बाबू वृंदावनलाल ने मुँह बनाकर कहा—"इतनी ही बात बेजा है।"

पुरोहितजी आश्चर्य का भाव मुख पर लाकर बोले—"अरे, बाबू, क्या कहते हो, इसमें बेजा क्या है? मुनीमी क्या बुरा काम है? बड़ा ख़ानदानी घर है। समय के फेर से बेचारों के पास पैसा नहीं रहा। पर बाबू, ख़ानदान के सामने पैसा क्या वस्तु है। और, सौ बातों की एक बात यह है कि लड़की हज़ारों में एक है।"

वृंदावनलाल—"हाँ, यह तो सब, ठीक है, पर गुरुजी, संबंधी की हैसियत भी तो देखी जाती है।"

पुरोहितजी इधर-उधर देखकर धीमे स्वर में बोले—"हैसियत की जो पूछते हो, तो उनकी हैसियत भी बुरी नहीं है। बाबू व्रजमोहनलाल ने उनका छोटा पुत्र गोद ले रक्खा है। लड़की के विवाह का सारा ख़र्च वही देंगे।"

वृंदावनलाल कुछ विस्मित होकर बोले—"अच्छा, यह बात है!"

पुरोहितजी—"हाँ, यही तो आनंद है। मैं क्या गँवार थोड़ा ही हूँ। भला, तुम्हारे घर का संबंध ऐसी-वैसी जगह कराऊँगा? शिव, शिव! और वह कहने को मुनीम हैं—काम मुनीमी का करते हैं, पर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वैसे दूकान के कर्ता-धर्ता वही हैं। बाबू ब्रजमोहनलाल उनसे बड़ा स्नेह करते हैं।"

वृंदावनलाल 'हूँ' कहकर कुछ क्षणों तक सोचते रहे। तदुपरांत बोले—"यदि यह बात है, तब तो कोई हर्ज नहीं।"

पुरोहितजी—"यही बात है बाबू, मैं भला तुमसे मिथ्या कहूँगा। तुम्हें विश्वास न हो, तो अपने आप इसकी जाँच कर लो।"

वृंदावनलाल दाँत निकालकर बोले—"आप भी गुरूजी क्या बातें करते हैं। आपका विश्वास न करेंगे, तो फिर किसका विश्वास करेंगे। हमारे सब काम-काज आप ही के द्वारा होते हैं।"

पुरोहितजी—"मैं तुम्हारा अशुभचिंतक थोड़ा ही हूँ बाबू, मैं तो गोकुल को अपना ही पुत्र समझता हूँ।"

वृंदावनलाल—"आपका पुत्र है ही, आपने उसे गोदियों में खिलाया है।"

पुरोहितजी—"यह समझ लो कि ऐसी लड़की न मिलेगी, और एक बात तो मैं कहना भूल ही गया। उसका एक बड़ा भाई है शंभूनाथ। क्या कहूँ बाबू, ऐसा होनहार लड़का है कि बस, क्या कहूँ। बी० ए० में पढ़ता है।"

वृंदावनलाल मुस्किराकर बोले—"ओह, तब तो बड़ी सुंदर बात है। तब तो कोई चिंता नहीं। मैं यही सोचता था कि कोई यह न कहे कि अच्छे घर नाता जोड़ा, न धन है, न विद्या।"

पुरोहितजी—"अरे, राम भजो बाबू, मेरे होते हुए और मेरे कराए हुए नाते के संबंध में कोई ऐसा कह सकता है। मेरी दृष्टि भी तो चारो ओर रहती है। मैं ऐसा मूर्ख नहीं हूँ कि मखमल में गाढ़े का पेवंद लगाऊँ।"

वृंदावनलाल—"तो बस, अब मुझे संतोष है। वर अच्छा होना चाहिए, लड़की अच्छी होनी चाहिए। धन चाहे मिले या न मिले, इसकी मुझे अधिक परवा नहीं है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुरोहितजी—"धन भी मिलेगा बाबू। विवाह बड़ी धूम का होगा। मैंने बताया न, विवाह तो बाबू व्रजमोहनलाल करेंगे। उनको तो आप जानते ही हैं।"

वृंदावनलाल—"हाँ, अच्छी तरह जानता हूँ—प्रसिद्ध आदमी हैं।"

पुरोहितजी—"तो फिर भला, वह ऐसा-वैसा विवाह थोड़ा ही करेंगे। अपने नाम का, अपनी प्रतिष्ठा का भी तो उन्हें विचार होगा।"

वृंदावनलाल—"अवश्य होगा। तो बस, फिर मुझे स्वीकार है। केवल एक बार गोकुल की माता से परामर्श करना है।"

पुरोहितजी—"हाँ-हाँ, क्या चिंता है। और, मैं भी बहू से बात कर लूँगा, उन्हें सब बातें बता दूँगा।"

वृंदावनलाल मुस्किराते हुए बोले—"तो बस, फिर आप ही उनसे भी तय कर लीजिए। यदि वह स्वीकार कर लेंगी, तो संबंध पक्का हो जायगा।"

पुरोहितजी—"मैं अभी बहू से बात कर लूँगा। हाँ, ज़रा गोकुल का जन्म-पत्र या उसकी नक़ल मुझे दे दो।"

वृंदावनलाल—"अभी लो, पूरा जन्म-पत्र लेकर क्या करोगे, केवल जन्म-कुंडली की नक़ल कर लो।"

पुरोहितजी—"हाँ, और क्या, पूरा जन्म-पत्र क्या होगा।"

वृंदावनलाल उठे, और जन्म-पत्र निकालने का उद्योग करने लगे। इधर पुरोहितजी भी खड़े हो गए। बोले—"आप जन्म-पत्र निकालकर रखिए, मैं ज़रा भीतर बहू से बात कर आऊँ।"

वृंदावनलाल—"हाँ-हाँ, अवश्य। सब बातें समझा दीजिएगा।"

पुरोहितजी—"अजी, देखो तो, मैं क्या करता हूँ।"

यह कहकर पुरोहितजी अंतःपुर के द्वार की ओर चल दिए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहार ने बहूजी को पुरोहितजी के आने की सूचना दी। बहूजी उस समय पूजन पर बैठी हुई थीं। गृहस्थी-संबंधी कर्तव्यों का पालन करने के साथ-ही-साथ, बहूजी ईश्वर के प्रति भी अपना कर्तव्य निबाहने का प्रयत्न करती थीं। परंतु ईश्वर के प्रति कर्तव्य-पालन में यह कठिनाई थी कि जब वह ईश्वर-भजन करने बैठती थीं, गृहस्थी-संबंधी कार्य भी उसी समय आकर एकत्र हो जाते थे। अतएव बहूजी घर का काम-काज करते रहने के साथ-ही-साथ ईश्वर पर भी, अपनी समझ में, एहसान का टोकरा लाद ही देती थीं। एक समय में दो कार्य करने में उन्हें कुछ आनंद भी आता था। हाथ उपास्यदेव को स्नान करा रहे हैं, चंदन, अक्षत, पुष्प भेंट कर रहे हैं, और जिह्वा कहार को आदेश दे रही है कि बाज़ार से अमुक साग लाना। गोमुखी में उँगलियाँ माला सटका रही हैं, और जीभ दासी से कह रही है कि आज भोजन के लिये अमुक वस्तुओं का प्रबंध कर, अमुक चीज़ निकाल। जिस समय पुरोहितजी के आने की सूचना मिली, उस समय बहूजी गोमुखी में हाथ डाले बैठी थीं। पुरोहितजी उनके सामने थोड़ी दूर पर एक आसन पर आसीन हो गए, और बोले—"धन्य है बहू तुमको! ईश्वर जाने यह दृश्य देखकर मेरे नेत्र तृप्त हो जाते हैं।"

बहूजी बोलीं—"पुरोहितजी, मेरा तो सदा का नेम (नियम) है। बिना पूजा किए कुछ नहीं करती।"

पुरोहितजी—"बड़ा सुंदर है बहू, हिंदू-घरों में ऐसा ही होना चाहिए। वह भी कोई घर है, जिसमें रोज़ भगवान् का पूजन न हो। इसी का तो यह पुण्य-प्रताप है कि ईश्वर ने सब सुख दे रक्खे हैं, दूध-पूत से सुखी हो। बहू, धर्म का बड़ा प्रताप होता है। धर्मात्मा कभी दुःखी नहीं रहता। बहू, मैं अभी बाबू से बात कर रहा था। मैंने गोकुल के लिये एक लड़की ढूँढ़ी है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोमुखी के भीतर बहूजी की उँगलियाँ यह शुभ समाचार सुनकर कुछ क्षणों के लिये रुक गईं। बहूजी प्रसन्न-मुख होकर बोलीं—"बड़ी अच्छी बात है! मुझे गोकुल के ब्याह की चिंता भी बड़ी रहती है।"

पुरोहितजी—"और तुमसे अधिक चिंता मुझे रहती है। मैं तो रात-दिन इसी चिंता में रहता हूँ।"

बहूजी—"हाँ, तो कहाँ ढूँढ़ी? लकड़ी कैसी है?"

पुरोहितजी—"यहीं।"

बहूजी—"सहर की सहर में, यह तो और भी अच्छी बात है।"

पुरोहितजी—"यही तो आनंद है, बहू। लड़की देखो, तो और भी चित्त प्रसन्न हो। ऐसी लड़की मिलना कठिन है।"

बहूजी—"भला, लड़की देखने को मिल जायगी?"

पुरोहितजी—"एक बेर नहीं, दस बेर देख लो बहू। मैं कच्चा काम थोड़ा ही करता हूँ।"

पुरोहितजी ने अन्य सब बातें भी कह दीं। सब सुन-समझकर बहूजी ने कहा—"और तो सब ठीक है, पर घर ज़रा ग़रीब है।"

पुरोहितजी—"तुम्हें घर से क्या लेना है बहू, तुम्हें तो लड़की चाहिए। मुख्य तो लड़की है। दूसरे, ग़रीब-घर की लड़की लेना अच्छा है। ग़रीब-घर की लड़की बड़ी गऊ होती है। चाहे जो खाने को मिले, चाहे जो पहनने को, सब दशा में प्रसन्न रहती है। अमीर-घर की लड़की के तो नख़रे सहने बड़े कठिन पड़ जाते हैं।"

बहूजी—"हाँ, यह तो ठीक है।"

पुरोहितजी—"तुम तो सब समझती हो, समझाने की क्या आवश्यकता है।"

बहूजी—"ब्याह तो अच्छा ही करेंगे।"

पुरोहितजी—"मैंने बताया न कि विवाह तो बाबू ब्रजमोहनलाल ही करेंगे। वह भला, ऐसा-वैसा विवाह करेंगे?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बहूजी—"तो बाबूजी से भी सलाह कर लो।"

पुरोहितजी—"मुख्य सलाह तो तुम्हारी है, बहू। तुम जो बात ठीक समझोगी, उसमें बाबूजी दख़ल थोड़ा ही दे सकते हैं।"

बहूजी—"मुझे तो पसंद है, आओ एक बेर लड़की देख लूँ, तो अच्छा है।"

पुरोहितजी—"जब इच्छा हो, तब देख लो। तो मैं आज गोकुल की जन्म-कुंडली लिए जाता हूँ। दो-चार रोज़ में फिर आऊँगा, उस समय इच्छा हो, तो लड़की देख लेना।"

बहूजी—"अच्छी बात है।"

उसी समय कहार बाज़ार से साग ले आया, और उसे लाकर बहूजी के सामने रक्खा। दाहना हाथ गोमुखी में था, अतएव बहूजी बाम कर से ही सब चीज़ें उठा-उठाकर देखने लगीं। साथ ही आलोचना भी करती जाती थीं—"अरे, बैंगन तो बड़े ख़राब लाया। इतने दिन हो गए, तुझे चीज़ लाने का सहूर न आया। पालक भी बासी उठा लाया। आलू तो ख़ैर, अच्छे हैं, गोभी का फूल भी बुरा नहीं है। और, सेम नहीं लाया?"

कहार ने कहा—"सेम लावै का तो हमसे कोऊ नहीं कहा।"

बहूजी—"दुर निगोड़े! चलते-चलते मैंने कह दिया था।"

कहार—"हम तो बहूजी, नाहीं सुना।"

पुरोहितजी बोल उठे—"अरे भाई, अच्छी तरह सुन लिया करो। जो न सुन लिया करो, तब चीज़ लाया करो।"

बहूजी—"इसकी यही आदत है—एक-न-एक चीज़ नित भूल आता है। दस-दस बेर तो कहा जाता है, और कितना कहें।"

यद्यपि कहार को विश्वास था कि बहूजी ने उससे सेम के लिये नहीं कहा, और हमें भी इसमें संदेह है कि बहूजी ने दस बेरे तो क्या, एक बेर भी कहा हो; तथापि बहूजी को झूठी कौन कह सकता है—विशेषतः जब कि वह पूजन पर बैठी हुई हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहार ने कहा—"तो अब ही दौर के लिहे आइत है।"

बहूजी—"चल, अब रहने दे। कल देखा जायगा।"

पुरोहितजी उठ खड़े हुए, और बोले—"अच्छा, तो अब चलता हूँ—दो-तीन दिन में फिर आऊँगा।"

बाहर पहुँचकर पुरोहितजी ने बाबूजी से कहा—"बहू तो राज़ी हैं।"

बाबूजी मुस्किराकर बोले—"राज़ी कर लिया?"

पुरोहितजी—"वह बात ही ऐसी है—राज़ी कैसे न होंगी। बस, अब कुंडली मुझे दे दो।"

बाबू साहब ने कुंडली निकाल रक्खी थी—वह उन्होंने पुरोहितजी को दे दी।

पुरोहितजी बिदा हुए। वह मकान से निकलकर थोड़ी ही दूर पहुँचे थे, उसी समय गोकुलप्रसाद उनके पास पहुँचे। कौन गोकुलप्रसाद? वही, बाबू श्यामनाथ के वेश्या-गामी मित्र। पास पहुँचकर उन्होंने कहा—"गुरुजी, पालागन!" पुरोहितजी ने घूमकर देखा। देखते ही दाँत निकालकर बोले—"ओहो, गोकुल बाबू! कहो, कहाँ थे, मैं तो अभी तुम्हारे घर ही से आ रहा हूँ।"

गोकुलप्रसाद ने कहा—"हाँ, मैं अपने कमरे में बैठा पढ़ रहा था। मैंने आपकी और बाबूजी की बातचीत सुनी थी।"

पुरोहितजी—"हाँ, तुम्हारे विवाह की बातचीत लगा रहा हूँ।"

गोकुलप्रसाद—"इसीलिये तो मैं आपके पास दौड़ा हुआ आया हूँ। देखिए, बातचीत तो आप लगा रहे हैं, पर इस बात का ध्यान रहे कि लड़की सुंदर हो।"

पुरोहितजी—"अरे भैया, यह भी क्या तुम्हारे कहने की बात है! मुझे स्वयं इसका ध्यान है। ऐसी लड़की हो कि चित्त प्रसन्न हो जाय—मुखड़ा जैसे पूर्णमासी का चाँद।"

गोकुलप्रसाद—"हाँ, ऐसी ही होनी चाहिए—माता-पिता को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

क्या—विवाह करके अलग हो जायँगे—निबाहना तो मुझे ही पड़ेगा।"

पुरोहितजी—"सत्य है। मुख्य पसंद तो तुम्हारी ही है। सो बेटा, इसके लिये तनिक चिंता न करो। मैं कुछ कोंढा नहीं हूँ—मैं सब समझता हूँ।"

गोकुलप्रसाद—"अजी, यह तो बताइए कि लड़की देखने को मिल सकती है?"

पुरोहितजी—"हाँ-हाँ—इसके संबंध में तो बहु से तय हो गया है, उनकी इच्छा होगी, तो देख लेंगी।"

गोकुलप्रसाद—"ख़ैर, वह तो देखेंगी ही। मेरा तात्पर्य यह है कि मैं देख सकता हूँ?"

पुरोहितजी कुछ चौंककर बोले—"तुम?"

गोकुलप्रसाद—"हाँ, मैं! क्यों, आप चौंके क्यों?"

पुरोहितजी—"हिंदुओं में तो ऐसा होता नहीं कि वरका स्वयं लड़की देखे।"

गोकुलप्रसाद—"आप मेरा मतलब अभी तक नहीं समझे। मैं यह थोड़ा ही कहता हूँ कि मैं खुले तौर पर देखूँ—यह तो संभव ही नहीं हो सकता। मेरा आशय यह है कि किसी प्रकार छिपा-चुराकर—इस प्रकार कि अन्य किसी को इस बात का पता न चले।"

पुरोहितजी—"यह मैं कैसे कहूँ।"

गोकुलप्रसाद विनीत-भाव से बोले—"आप चाहें, तो सब कुछ हो सकता है। आपके लिये कोई बड़ी बात नहीं। मैं केवल एक बार देखना चाहता हूँ—पास से न सही, दूर ही से सही। बात यह है कि जब तक मेरे हृदय को संतोष न हो जाय, तब तक विवाह करने से कोई लाभ नहीं। अब वह समय नहीं रहा कि जैसा भी पल्ले बँध गई, निबाह ले गए।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुरोहितजी—"तो इसके लिये तो मैं तुमसे कह चुका कि तुम निश्चित रहो—लड़की सैकड़ों में एक है।"

गोकुलप्रसाद—"यह मैं मानता हूँ—जब आप कहते हैं, तब ऐसी ही होगी। मैं आपकी बात पर अविश्वास नहीं करता, पर हृदय नहीं मानता। यही इच्छा होती है कि एक बेर देख लेता, तो अच्छा था। लड़की का कोई फ़ोटो मिल सकेगा?"

पुरोहितजी—"कह नहीं सकता। वह पुराने आचार-विचार के आदमी हैं; अतएव कह नहीं सकता कि लड़की का फ़ोटो उन्होंने खिचाया है या नहीं।"

गोकुलप्रसाद—"मैं बताऊँ, आप यह कहिए कि लड़की का फ़ोटो माँगा है।"

पुरोहितजी—"एक शहर में फ़ोटो की क्या आवश्यकता? वह यह न कहेंगे कि लड़के के घर की कोई स्त्री आकर देख ले—फ़ोटो क्या होगा?"

गोकुलप्रसाद—"कह दीजिएगा, लड़के का पिता देखना चाहता है।"

पुरोहितजी—"खैर, देखो मैं प्रयत्न करूँगा। यदि मिल गया, तो तुम्हें दिखा दूँगा।"

गोकुलप्रसाद—"आप चाहेंगे, तो अवश्य मिल जायगा। यह तो आपके हाथ की बात है।"

पुरोहितजी—"अच्छी बात है, देखा जायगा।"

गोकुलप्रसाद—"यदि आपने फ़ोटो मुझे दिखा दिया, या लड़की दिखा दी, तो मैं मिठाई खाने के लिये पाँच रुपए आपकी भेंट करूँगा।"

यह प्रलोभन-पाश छोड़कर गोकुलप्रसाद घर की ओर लौट गए। पुरोहितजी भी इस विषय पर विचार करते हुए एक ओर चल दिए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नवाँ परिच्छेद

चुन्नी का विवाह गोकुलप्रसाद के साथ होना निश्चित हो गया। लाला घासीराम को संबंध पसंद आ गया। बाबू ब्रजमोहनलाल से भी उन्होंने इस संबंध में परामर्श ले लिया—उन्होंने भी अनुमति दे दी। लाला घासीराम ने स्वयं लड़के को देख लिया। अपनी माता के आदेशानुसार शंभूनाथ भी अपने भावी बहनोई से मिल लिए। सुलोचना ने केवल पति पर निर्भर रहना उचित न समझा, क्योंकि वह भली भाँति जानती थी कि पतिदेव इच्छा होने पर उसके सामने झूठ भी बोल सकते हैं, अपने इच्छानुसार कार्य करने के लिये सत्यता को छिपा भी सकते हैं, इसी कारण उसने यह सोचकर कि कहीं चुन्नी के पिता उसे ऐसी-वैसी जगह न ढकेल दें, जिससे उसकी आशाओं-सम चुन्नी को कष्ट हो—उसने शंभूनाथ द्वारा सब बातों का पता ले लिया था। उसने शंभूनाथ से कहा था—"बेटा, तुम्हारे बाप की बातों पर तो मुझे भरोसा नहीं, पुरोहितजी भी ग़ैर आदमी हैं—अपनी बच्ची के दुःख-दर्द का ध्यान जितना हमें है, उतना उन्हें नहीं हो सकता। लाख कुछ हो, ग़ैर ग़ैर ही हैं। इससे तुम सब बातों का पता लगा लो। लड़के का बाप क्या करता है, लड़का कैसा है, पढ़ा-लिखा कितना है, वर कैसा है—ये सब बातें पहले जान लेनी अच्छी हैं। ऐसा न हो कि मेरी बच्ची पीछे दुःख पावे। बेचारी ने हमारे यहाँ तो जन्म ही से दुःख भोगा—न खाने का सुख मिला, न पहनने का। ससुराल में जाकर तो सुख पावे।"

इतना कहते-कहते सुलोचना की आँखों में आँसू उबडबा आए थे। शंभूनाथ को भी अपनी भगिनी से अत्यंत स्नेह था। माता के इन वाक्यों का उनके हृदय पर यथेष्ट प्रभाव पड़ा। माता को आँचल से नेत्र पोंछते देखकर और अपनी भगिनी की सौम्य करुण-मूर्ति का ध्यान करते हुए उसकी परवशता, उसकी निर्भरता, उसके कष्टमय

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाल्य-काल, उसकी वर्तमान सौख्य-विहीनता पर एक सरसरी दृष्टि डालकर उनका गला भी भर आया। उन्होंने गद्गद कंठ से माता की बात का समर्थन किया। उन्होंने कहा—"अम्मा, मैं सब बातों का पता लगा लूँगा—तुम निश्चिंत रहो। मेरे होते हुए चुन्नी ऐसे घर नहीं जा सकती, जहाँ उसे किसी प्रकार का कष्ट मिले।"

संभूनाथ ने सब बातों का पता लगा लिया। गोकुलप्रसाद की उमर २२ वर्ष के लगभग है। वह एफ़० ए० क्लास के सेकेंड ईयर में पढ़ता है। शरीर का हृष्ट-पुष्ट है, नख-शिख का सुंदर है। मा-बाप का लाडला है। उसके पिता रेलवे में २००) मासिक वेतन पर नौकर हैं। उनका अपना निज का मकान है। घर में केवल तीन प्राणी हैं—गोकुलप्रसाद, उनके पिता और उनकी माता। गोकुलप्रसाद की एक भगिनी भी है, पर उसका विवाह हो गया है और वह अधिकतर अपनी ससुराल ही में रहती है। इन सब बातों की जानकारी प्राप्त करके उन्होंने माता से कहा—"मैंने सब पता लगा लिया। प्रकट रूप में तो कोई बात ऐसी नहीं, जिसके कारण संबंध करना आपत्ति-जनक समझा जा सके। इतनी बात अवश्य है कि लड़का शिक्षा में पिछड़ा हुआ है। बाईस वर्ष की उमर में उसे बी० ए० पास कर लेना चाहिए था, किंतु वह अभी एफ़० ए० में ही है। परंतु इससे कोई हानि नहीं। उसका पिता जीवित है, घर में किसी बात की कमी नहीं—दो वर्ष में बी० ए० पास कर लेगा।"

सुलोचना ने सब सुनकर निश्चय किया कि कन्या का विवाह गोकुलप्रसाद ही के साथ कर देना चाहिए। इधर बासीराम तो पहले ही से इस संबंध पर अपनी सम्मति प्रकट कर चुके थे, और मन-ही-मन निश्चय कर चुके थे कि चुन्नी का विवाह गोकुलप्रसाद के साथ होगा। अब उन्हें सुलोचना की स्वीकृति भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मिल गई, तब उन्हें यह चिंता हुई कि अब किसी प्रकार रुपयों का प्रबंध करके शीघ्र विवाह-कार्य संपन्न कर देना चाहिए।

उसी दिन घासीराम ने बाबू ब्रजमोहनलाल से कहा—"बाबूजी, अब तो सब ठीक-ठाक हो गया—लड़की की मा भी राज़ी हो गई—और न भी राज़ी होती, तब भी मैं वहीं विवाह करता; परंतु खैर, यह भी अच्छा ही हुआ, जो वह राज़ी हो गई।"

बाबू ब्रजमोहनलाल ने कहा—"हाँ, अच्छा हुआ। यदि उनकी सम्मति न होती, और तुम अपनी इच्छा से विवाह कर डालते, तो ठीक न होता। हाँ, अब विवाह की तिथि ठीक कर लो।"

घासीराम—"तिथि तो ठीक हो जायगी, पहले कुछ रुपयों का.....।"

बाबू ब्रजमोहनलाल ने इधर-उधर देखकर धीमे स्वर में कहा—"रुपया भी हो जायगा, घबराते क्यों हो? एकदम से तो मैं दे न सकूँगा। धीरे-धीरे, जैसी आवश्यकता पड़ती जाय, मुझसे लेते जाओ। परंतु किसी को इस बात का संदेह भी न होना चाहिए कि मैं रुपए दे रहा हूँ—समझे?"

लाला घासीराम गद्गद होकर बोले—"नहीं, ऐसा कदापि नहीं होगा।"

बाबू साहब—"और मुझे किसी का डर नहीं, अपने घरवालों ही का डर है—कहीं सुन पावें, तो आफ़त करें।"

घासीराम—"नहीं-नहीं, ऐसा नहीं होगा, आप निश्चित रहिए। मुझसे कोई पूछेगा, तो कह दूँगा, कहीं से क़र्ज़ ले लिया।"

बाबू साहब "ऐसी बात पूछ कौन सकता है, किसे ग़रज़ पड़ी है! दूकान से मैं कभी एक पैसा न दूँगा, क्योंकि ऐसा करने से भंडा फूट जाने का भय है। बैंक की चेक दे दिया करूँगा, तुम चुपचाप रुपए ले लिया करना—समझे?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बासीराम—"मैं सब समझ गया।"

बाबू साहब ने उसी समय पाँच सौ रुपए की एक चेक बासीराम को दे दी, और कहा—"इनसे प्रारंभिक रसूमात पूरी करो, और विवाह की तिथि निश्चित करके तैयारी आरंभ कर दो।"

बासीराम ने प्रसन्नता-पूर्वक चेक लेकर रख ली, और बदले में बाबू साहब को अनेक आशीर्वाद दिए।

विवाह की तैयारियाँ होने लगीं। उधर बाबू वृंदावनलाल भी गोकुलप्रसाद के विवाह की तैयारियाँ करने लगे। गोकुलप्रसाद को जब यह पता लगा कि उनकी भावी पत्नी उनके परममित्र बाबू श्यामनाथ की सहोदरा है, तो उन्हें पहले तो बड़ी प्रसन्नता हुई, परंतु पश्चात् यह सोचकर कुछ चिंता हुई कि कहीं श्यामनाथ उनके (गोकुलप्रसाद के) चरित्र के संबंध में अपने पिता से कुछ कह न दें। अतएव अपने इस संशय को दूर करने के लिये वह श्यामनाथ से मिले। उनके साथ विश्वनाथ भी थे।

गोकुलप्रसाद के विवाह का प्रसंग विश्वनाथ ने उठाया। उन्होंने कहा—"यार गोकुलप्रसाद, तुम्हारा विवाह हो रहा है—हम अभी कोरे ही बैठे हैं।"

गोकुलप्रसाद ने मुस्किराकर कहा—"तुम तो जले मरते होगे?"

विश्वनाथ—"खैर, जलने-मरने की तो कोई बात नहीं, परंतु कुछ ईर्षा अवश्य होती है। हाँ, यह तो बताओ, तुमने अपनी पत्नी को देखा भी है?"

गोकुलप्रसाद ने कुछ मुस्किराकर श्यामनाथ की ओर संकेत करते हुए कहा—"नमूना तो सामने ही मौजूद है—देखने की क्या आवश्यकता है?"

विश्वनाथ ने श्यामनाथ की ओर आश्चर्य से देखकर गोकुलप्रसाद से पूछा—"इसका क्या तात्पर्य?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुलप्रसाद—"इसका मतलब यह है कि यह मेरा छोटा साला है।"

श्यामनाथ का मुख लाल हो गया, झेपकर बोले—"यह कौन मज़ाक़ है?"

गोकुलप्रसाद—"मज़ाक? मज़ाक़ करनेवाले पर लानत है—मैं तो सच्ची बात कहता हूँ।"

श्यामनाथ—"भई, वाह! यह उस पर तुर्रा।"

गोकुलप्रसाद—"न कलग़ी न तुर्रा! सच्ची बात में कलग़ी-तुर्रे का क्या काम?"

विश्वनाथ—"अरे यार, तो कुछ बताओगे भी कि कैसे सच्ची है—तुम तो पहेलियाँ-सी बुझवाते हो।"

गोकुलप्रसाद—"अच्छा, अब साफ़-साफ़ सुनो। इनसे पूछो—लाला घासीराम इनके कौन हैं?"

श्यामनाथ का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उनके मुख से निकला—"कौन घासीराम?"

गोकुलप्रसाद—"लीजिए, जब लोग बाप तक को भूल जाने लगे, तो बहन की याद कैसे रह सकती है।"

श्यामनाथ जल्दी से बोल उठे—"ओह! तुम्हारा यह मतलब है, मैं अब समझा। हाँ, घासीराम मेरे पिता हैं।"

विश्वनाथ—"और ब्रजमोहनलाल?"

गोकुलप्रसाद—"बाबू ब्रजमोहनलाल ने इन्हें गोद लिया है, इनके सगे पिता तो लाला घासीराम ही हैं।"

विश्वनाथ—"अच्छा, यह तो एक नई बात मालूम हुई।"

गोकुलप्रसाद—"अभी आपको मालूम ही क्या है! जुम्मा-जुम्मा आठ रोज़ तो आपको दुनिया में आए हुए।"

विश्वनाथ—"जी हाँ, आपको तो शायद एक सदी हो गई होगी; परंतु श्रीमान् की दाढ़ी क्या हुई—दीमक चर गई क्या, या पेट

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में उतर गई ? मुझसे तो अभी साल-छ महीने छोटे ही होंगे। कहते शर्म भी नहीं मालूम होती।"

गोकुलप्रसाद ने विश्वनाथ की बात पर ध्यान न देकर श्यामनाथ से पूछा—"बाबू शंभूनाथ आपके कौन हैं ?"

श्यामनाथ—"मेरे बड़े भाई हैं।"

गोकुलप्रसाद—"सगे ?"

श्यामनाथ—"हाँ, सगे।"

गोकुलप्रसाद—"तो उन्हीं की सगी छोटी बहन से बंदे का विवाह होने जा रहा है। अब त्रैराशिक से हिसाब लगाकर समझ लीजिए कि आप मेरे कौन हुए।"

विश्वनाथ—"तब तो यह अवश्य आपके साले हुए।"

गोकुलप्रसाद—"अब न्याय आप ही के हाथ है। यह तो समझते हैं कि मैं मज़ाक़ कर रहा हूँ।"

श्यामनाथ को विश्वास हो गया कि गोकुलप्रसाद सत्य कहते हैं। क्योंकि इतना तो वह जानते ही थे कि उनकी भगिनी चुन्नी का विवाह शीघ्र ही होनेवाला है। उन्होंने कुछ झेंपते हुए कहा—"तो यह कहिए, आप मेरे बहनोई होनेवाले हैं।"

गोकुलप्रसाद हास्य-पूर्ण मुद्रा बनाकर बोले—"हाँ, भाई साहब, बात तो कुछ ऐसी ही है। अब मानना-न मानना तुम्हारे हाथ है—मानो, तो देव, नहीं पत्थर !"

विश्वनाथ गोकुलप्रसाद की मुख-भंगी देख और उनकी बात सुनकर हँसने लगे। श्यामनाथ भी झेंपी हुई हँसी हँसकर बोले—"बड़े मसख़रे हो।"

गोकुलप्रसाद उसी प्रकार बोले—"हाँ भाई, अब चाहे मसख़रा कहो, चाहे गालियाँ दो, तुम्हें सब शोभा देता है। तुम क्या करो, रिश्ता ही ऐसा होनेवाला है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्यामनाथ—"रिश्ता हो चुका। तुम्हारे-जैसे बदमाश आदमी से मेरी बहन का विवाह कदापि न होने पायगा। मैं आज ही तुम्हारा सब कच्चा चिट्ठा अपने पिता से कह दूँगा।"

गोकुलप्रसाद—"जी हाँ, अभी तक बदमाश नहीं थे, शरीफ़ थे; परंतु विवाह पक्का हो जाने से बदमाश हो गए—क्यों?"

श्यामनाथ—"बदमाश तो तुम जन्म ही से हो।"

गोकुलप्रसाद—"तो ऐसे बदमाश से दोस्ती क्यों की?"

श्यामनाथ—"दोस्ती की बात और है।"

गोकुलप्रसाद—"अच्छा, भाई, जो तुम्हारा जी चाहे, करो। मैं भी जो इच्छा होगी, करूँगा।"

श्यामनाथ—"तुम कर ही क्या सकते हो?"

गोकुलप्रसाद—"मैं अधिक तो कुछ कर नहीं सकता; केवल इतना करूँगा कि बाबू व्रजमोहनलाल से तुम्हारे और बंदीजान के संबंध में कुछ बातचीत करूँगा।"

विश्वनाथ बोल उठे—"वाह उस्ताद! मानता हूँ, अच्छी करवट ली।"

गोकुलप्रसाद—"नहीं भाई, करवट-सरवट कुछ नहीं ली। जैसे हम तो बदमाश हैं ही, इन्हें क्यों होने दें? अतएव यह आवश्यक है कि इनके आचरणों की सूचना बाबू साहब को दे दी जाय।"

श्यामनाथ ने मुस्किराकर कहा—"क्यों उस्ताद, अब ऐसी कहोगे?"

गोकुलप्रसाद—"कहनी ही पड़ेगी। जब आप हमको इतना बदमाश समझते हैं कि अपनी बहन का विवाह हमसे नहीं होने देना चाहते, तो हम क्या इतना भी न करें कि आपको बदमाश बनने से रोक दें।"

श्यामनाथ ने मुस्किराकर कहा—"बस, आ गए न यारों के चकमे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में ! बड़े सयाने बनते हो। भला, मैं ऐसा कह सकता हूँ। मुझे तो बड़ी प्रसन्नता है कि अभी तक तो केवल मित्रता ही थी, अब नातेदारी भी हो जायगी। इससे हमारा-तुम्हारा संबंध और भी घनिष्ठ हो जायगा।"

गोकुलप्रसाद—"यदि यह बात है, तो अब मैं बाबू साहब से कुछ भी न कहूँगा। तुम आनंद से बंदीजान के घर आओ-जाओ।"

विश्वनाथ—"हाँ, अब यह तुम्हें बदमाश बनने की आज्ञा देते हैं, निश्चित होकर बदमाशी का कोर्स पढ़ो।"

गोकुलप्रसाद—"गधे हो। इसे जो बदमाशी कहे, वह ख़ुद बदमाश है। यह तो यार लोगों का मनोरंजन है, इसमें बदमाशी और नेकमाशी की कौन बात है?"

श्यामनाथ—"बिल्कुल ठीक है। यह तो हम लोगों का मनोरंजन है। इससे ज़रा जी बहल जाता है।"

गोकुलप्रसाद—"यह बात है। अब तुम समझदारी की बातें करते हो। पहले तो ज़रा बहके थे।"

श्यामनाथ—"अजी, वह हँसी थी—मैं भला, बहक सकता हूँ।"

इसमें संदेह नहीं कि पहले कुछ क्षणों के लिये श्यामनाथ के हृदय में यह विचार अवश्य उत्पन्न हुआ था कि गोकुलप्रसाद के साथ उनकी सहोदरा का विवाह होना युक्ति-संगत नहीं। बुरा काम सदैव बुरा ही कहा जाता है। दुराचारी भी जिस समय तटस्थ और निष्पक्ष होकर दुराचार की आलोचना करता है, उस समय उसे भी दुराचार को दुराचार ही कहना पड़ता है। यद्यपि श्यामनाथ स्वयं वेश्यागामी होते जा रहे थे; क्यों? इसलिये कि उसमें उन्हें विशेष सुख मिलता था, तथापि वह यह समझते थे कि यह बुरा काम है। गोकुलप्रसाद भी वेश्यागामी थे। अतएव श्यामनाथ के हृदय में यह विचार आना कि एक वेश्यागामी के साथ उनकी भगिनी का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विवाह होना उचित नहीं, स्वाभाविक ही था। परंतु यह विचार उनके हृदय में कुछ ही क्षणों तक रहकर पुनः विलीन हो गया। इसका मुख्य कारण यह था कि गोकुलप्रसाद ने उनका और बंदीजान का संबंध बाबू ब्रजमोहनलाल पर प्रकट कर देने की धमकी दी थी। यह एक ऐसी बात थी, जिसके लिये श्यामनाथ किसी प्रकार भी तैयार न थे। वह बाल्यकाल से ही अपनी भगिनी से पृथक् रहे थे। अतएव उन्हें उससे अधिक स्नेह नहीं था, और अल्पवयस्क होने के कारण न इतना ज्ञान, अनुभव तथा आत्मबल था कि वह गोकुलप्रसाद के धमकाने पर भी, केवल अपनी बहन के हित की दृष्टि से, इस विवाह-संबंध में बाधा डालते। उनकी दृष्टि केवल अपने स्वार्थ की ओर थी, और इसी स्वार्थ ने उन्हें विवश किया कि वह अपने इस विचार को हृदय से निकाल दें।

इस प्रकार श्यामनाथ, अपनी सहोदरा को विनाश की ओर ढकेले जाते हुए देखकर भी, मौन रहे।

दसवाँ परिच्छेद

उपर्युक्त घटना हुए तीन मास व्यतीत हो गए। चुन्नी का विवाह गोकुलप्रसाद के साथ हो गया। चुन्नी का विवाह-कार्य समाप्त हो जाने पर सुलोचना ने संतोष का एक दीर्घ निःश्वास लिया। उसने समझा कि उसके जीवन का एक महत्त्व-पूर्ण कार्य आज भली भाँति संपन्न हो [illegible] गया। अपनी प्राण-सम पुत्री को विदा करते समय उसके नेत्रों से [illegible] तथा विषाद, दोनो के आँसू बहे थे। विषाद था पुत्री के वियो[illegible] और पुनः और हर्ष इस बात का था कि उसकी प्यारी कन्या के जीवन-प[illegible] तो चुपचाप मोड़ उसे (कन्या को) अभाव तथा दारिद्र्य से [illegible] को अपने पास स्थान पर ले जा रहा है, जहाँ उसे सुख और शांति [illegible] इरादे हैं? अपने यौवनोल्लास तथा हृदय की उमंगों को [illegible]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सकेगी, जहाँ उसे अपने दिल के अरमान निकालने का पूर्ण सुअवसर प्राप्त होगा।

इधर शंभूनाथ की बी० ए० की परीक्षा भी समाप्त हो गई, और वह प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हो गए। सुलोचना की प्रसन्नता का यह भी एक कारण हुआ।

रात के आठ बज चुके थे। शंभूनाथ भोजन से निवृत्त होकर बैठे एक अँगरेज़ी का समाचार-पत्र पढ़ रहे थे। लाला घासीराम अभी दूकान से नहीं आए थे।

सुलोचना उन्हीं की प्रतीक्षा कर रही थी। उसी समय वह आकर शंभू के पास बैठ गई। कुछ देर तक वह चुपचाप बैठी रही। इसके पश्चात् हठात् उसने शंभूनाथ से पूछा—"बेटा, अब तो तुम्हारी पढ़ाई ख़त्म हो गई न?"

शंभूनाथ ने कहा—"हाँ, कॉलेज की पढ़ाई तो समाप्त हो गई। आजकल जितनी पढ़ाई आवश्यक समझी जाती है, उतनी हो गई—यों पढ़ने को तो चाहे आदमी सारी उम्र पढ़ता रहे।"

सुलोचना—"यही तो पूछती हूँ कि अब तो पढ़ने की ज़रूरत नहीं रही?"

शंभूनाथ—"नौकरी करने के लिये तो आवश्यकता नहीं है। हाँ, यदि वकालत या डॉक्टरी करनी हो, तब तो अभी चार-पाँच बरस और पढ़ने की आवश्यकता है।"

निष्प सुलोचना—"हे भगवान्, आधी उमर तो पढ़ते-पढ़ते ही बीत दुराचार है।"

वेश्यागामीनाथ—"हाँ, इसमें क्या संदेह है।"

विशेष सुख मि—"बेटा, अब तो हमारे में आगे पढ़ाने का बूता नहीं है। गोकुलप्रसाद से चार पैसे कमाने की फ़िकर करो।"

में यह विचार आ मुझे तो रात-दिन इसी की फ़िक्र रहती है। (एक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दीर्घ निःश्वास लेकर) अब बिना कुछ पैदा किए काम नहीं चलेगा। यदि वकालत या, डॉक्टरी पढ़ने का सुयोग प्राप्त हो जाता, तब तो अच्छा ही था, परंतु ऐसी स्थिति में वह सुयोग मिलना कठिन है; इसलिये नौकरी ही करनी पड़ेगी।"

सुलोचना—"भला, कितने तक की नौकरी मिल जायगी ?"

शंभूनाथ—"अम्मा, आजकल समय बड़ा बुरा है। अच्छे-अच्छे पढ़े-लिखों को कोई टके को नहीं पूछता।"

सुलोचना—"कोई पूछता नहीं, तो लोग पढ़ते क्या झख मारने को हैं ?"

शंभूनाथ—"क्या करें ? बिना पढ़े भी तो काम नहीं चलता। न पढ़ें, तो और भी मुश्किल है।"

सुलोचना—"तो भला, नौकरी भी मिल जायगी ?"

शंभूनाथ—"चेष्टा करने से मिलेगी।"

सुलोचना—"कितने तक की मिल जायगी ?"

शंभूनाथ—"आरंभ में तो साधारणतया साठ-सत्तर से अधिक की नहीं मिलेगी।"

सुलोचना—"चलो साठ-सत्तर भी क्या बुरे हैं।"

शंभूनाथ—"बुरे तो नहीं हैं, परंतु बी० ए० पास करने में जितना परिश्रम पड़ा है, जितना व्यय हुआ है, उसको देखते हुए साठ-सत्तर कुछ भी नहीं हैं।"

इसी समय बाबू बासीराम आ गए। सुलोचना उनकी सेवा में लग गई। लाला बासीराम ने पहले तो हुक्का गुड़गुड़ाया, इसके पश्चात् शौच से निवृत्त हुए। शौच से निवृत्त होकर भोजन किया, और पुनः हुक्का लेकर अपनी शय्या पर जा लेटे। थोड़ी देर तक तो चुपचाप हुक्का गुड़गुड़ाते रहे, तत्पश्चात् उन्होंने शंभूनाथ को अपने पास बुलाया, और कहा—"क्यों जी, अब तुम्हारे क्या इरादे हैं ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अब कुछ कमाओ-धमाओगे या यों ही पड़े टुकड़े तोड़ते रहोगे ?"

शंभूनाथ को पिता के ये शब्द बुरे लगे, उनके हृदय पर चोट लगी। उन्होंने नम्रता-पूर्वक कहा—"अभी तक तो पढ़ता ही रहा, अब पढ़ना समाप्त हुआ है, अब कमाने-धमाने का उद्योग भी करूँगा।"

घासीराम—"करूँगा ? अभी करने का मुहूर्त नहीं आया ?"

शंभूनाथ—"नौकरी कुछ अपने हाथ में तो है नहीं, चेष्टा करने से ही मिलेगी।"

घासीराम—"यही तो मैं पूछता हूँ कि वह चेष्टा कब की जायगी ?"

शंभूनाथ—"एक प्रकार से तो चेष्टा कर ही रहा हूँ।"

घासीराम—"एक प्रकार से नहीं, सब प्रकार से चेष्टा कीजिए—समझे ? हुँह—कहने लगे 'एक प्रकार से चेष्टा कर रहा हूँ', एक प्रकार से का क्या अर्थ ? जो कुछ करना-धरना हो, तो उसके लिये जी तोड़-कर चेष्टा करो, और जो यों ही हराम के टुकड़े तोड़ने हों, तो वैसी कहो।"

शंभूनाथ—"पिताजी, आप तो ऐसी बातें कहते हैं, जिन्हें सुनकर दुःख होता है। मैं किसी ग़ैर के टुकड़े नहीं तोड़ता। यदि अपने घर में रहना, अपने माता-पिता के आश्रय में रहना भी टुकड़े तोड़ना है, तब तो इसका कोई उत्तर ही नहीं। प्रत्येक व्यक्ति, जब तक कि वह स्वयं कमाने-खाने योग्य नहीं हो जाता, अपने माता-पिता के आश्रय में रहता है—संसार का चलन ही ऐसा है। इसे कोई समझदार आदमी टुकड़े तोड़ना तो कहता नहीं।"

घासीराम—"ख़ैर, न कहते होंगे, तो न सही—मेरा सारा मतलब यह है कि अब तुम चार पैसे पैदा करने की बातें करो। बेटा, समय बड़ा बुरा लगा है। मेरे हाथ-पैर अब चलते नहीं। भगवान् जाने मेरी तो अब यह इच्छा रहती है कि मैं दोनो समय आनंद से भाँग-बूटी छानूँ, और आराम से घर में पड़ा हुक्का गुड़गुड़ाया करूँ। मेरे लिये

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यही स्वर्ग है। दूकान पर दिन-भर बैठे-बैठे कमर रह जाती है—आने-जाने में भी कष्ट होता है। जब तुम्हारा-सा जवान पढ़ा-लिखा बेटा होते हुए भी मुझे बुढ़ापे में दुःख झेलना पड़ा, तो मुझे और तुम्हें, दोनों को धिक्कार है।"

शंभूनाथ—"आपका यह कथन यथार्थ है। मैं स्वयं यह चाहता हूँ कि आपको यथाशक्ति आराम पहुँचाऊँ। मेरा कर्तव्य ही यह है; परंतु क्या करूँ? अभी तक तो पढ़ता ही रहा—अब पढ़ने से छुट्टी मिली है। अब कहीं नौकरी-वौकरी ढूँढूँगा। क्या बताऊँ, यदि इस समय मेरी अच्छी सिफ़ारिश पहुँच सकती, तो मेरे लिये डिप्टी-कलेक्टरी का अच्छा चांस था।"

डिप्टी-कलेक्टरी का नाम सुनते ही लाला घासीराम के कान खड़े हुए। आश्चर्य से तथा अविश्वास से भ्रुकुटी चढ़ाकर बोले—"क्या कहा, डिप्टी-कलेक्टरी?"

शंभूनाथ—"जी हाँ, डिप्टी-कलेक्टरी!"

घासीराम—"तुझे मिल सकती है?"

शंभूनाथ—"हाँ, यदि सिफ़ारिश अच्छी पहुँच जाय।"

घासीराम—"किसकी सिफ़ारिश?"

शंभूनाथ—"बड़े-बड़े आदमियों की।"

घासीराम—"हूँ?"

'हूँ' कहकर लाला घासीराम मौन हो गए, और अपनी दुड्ढी पर हाथ फेरने लगे। इस समय उनकी समस्त महत्त्वाकांक्षाएँ जाग्रत् हो उठी थीं। मस्तिष्क भी पूर्ण रूप से अपना काम करने लगा था—मानो एक सुस्त चलनेवाली मशीन में तेल दे दिया गया हो।

महत्त्वाकांक्षाओं को प्रत्यक्ष देखने की विकलता मनुष्य-रूपी मशीन के लिये तेल का काम देती है। इसके बिना यह चैतन्य मशीन सुस्त चलती है। लाला घासीराम इस समय सोच रहे थे—कोई दशा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"क्या ऐसा संभव है कि शंभू डिप्टी-कलेक्टर हो जाय ? यदि ऐसा हो जाय, तो क्या कहना है। हमें मृत्यु-लोक में ही स्वर्ग मिल जाय। सब तरह का सुख और हुकूमत ! उस समय उनको भी देख लूँगा, जो इस समय बहुत ऐंठकर चलते हैं—बिना एकआध को जेलखाने भिजवाए मानूँगा नहीं। ख़ैर जी, यह तो पीछे की बात है—पहले तो इसके मिलने का बंदोबस्त होना चाहिए। बाबू साहब (बाबू ब्रजमोहनलाल) से कहूँ—वह चाहें, तो कर सकते हैं। उनका मेल बहुत अच्छे-अच्छे आदमियों से है। मेरा यह काम वह अवश्य कर देंगे। नहीं करेंगे, तो मैं देख भी लूँगा। ऐसा नाच नचाऊँ कि याद करें। नहीं जी, वह भले आदमी हैं—अवश्य कर देंगे। उन्होंने अभी तक तो भलमनसाहत का ही व्यवहार किया है।"

यह सब सोच-समझकर घासीराम ने शंभूनाथ से कहा—"अच्छा, इसके लिये मैं चेष्टा करूँगा। तुम घबराओ नहीं, मेरे किए जो होगा, वह मैं उठा न रक्खूँगा।"

शंभूनाथ ने पिता के मुख को देखकर समझ लिया कि पिताजी इस काम में अवश्य प्रयत्न करेंगे। पिता के मुख पर स्वार्थ-सिद्धि की चिकनता के चिह्न पूर्ण रूप से विद्यमान थे। शंभूनाथ ने पूछा—"आप क्या करेंगे ?"

घासीराम—"मैं ? मैं वह करूँगा, जिससे बारह आने-भर काम हो जायगा।"

शंभूनाथ—"किसके द्वारा आप इसे करेंगे ?"

घासीराम—"बाबू साहब के द्वारा।"

शंभूनाथ—"हाँ, उनके द्वारा तो हो सकता है—आपने रास्ता ठीक चुना।"

घासीराम—"मैं गड़बड़ रास्ता कभी चुनता ही नहीं।"

परंतु शंभूनाथ को इस पर विश्वास नहीं हुआ। वह प्रत्यक्ष देखते

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

थे कि उनके पिता ने जीवन के अनेक मार्ग ऐसे चुने हैं, जो बहुत गड़बड़ हैं।

लाला घासीराम को रात-भर नींद नहीं आई, परंतु फिर भी वह स्वप्न देखते रहे—स्वप्न देखते रहे अपनी स्वार्थ-सिद्धि का, और उसकी प्राप्ति के लिये युक्तियाँ सोचते रहे। उस दिन नियत समय से पहले ही दूकान पहुँच गए। बाबू साहब उस समय दूकान पर नहीं आए थे। उन्होंने अपना कार्य करना आरंभ कर दिया। अपने कार्य का अच्छा अभ्यास रखने के कारण उनका मस्तिष्क कुछ स्वाधीन रहता था, और वह कार्य करते हुए कार्य के अतिरिक्त बातें भी सोच सकते थे। अतएव वह अपनी ही महत्वाकांक्षा के संबंध की बातें सोचते रहे।

ग्यारह बजे के उपरांत बाबू साहब आए। आज लाला घासीराम ने बाबू साहब का स्वागत पूर्ण उत्साह के साथ किया। बाबू साहब के बैठ जाने और कुछ समय व्यतीत हो जाने पर घासीराम बोले—"बाबूजी, शंभू इस साल बी० ए० पास हो गया।"

बाबू साहब—"पास हो गया?"

घासीराम—"हाँ, पास हो गया—और अव्वल दर्जे हुआ।"

बाबू साहब—"बड़ी खुशी की बात है।"

सचमुच बाबू साहब को हार्दिक प्रसन्नता हुई। परंतु प्रसन्नता के साथ-ही-साथ कुछ ईर्षा भी हुई—ईर्षा हुई केवल श्यामू और शंभू के अंतर पर। यदि शंभू की तरह आज श्यामू होता, तो वह अपने परिवार के भविष्य की ओर से निश्चिंत हो जाते। आज प्रथम बार बाबू साहब के हृदय में यह भावना उठी कि भूल लड़का गोद लेने में नहीं, वरन् लड़के को चुनने में हुई। यदि शंभू या शंभू की प्रकृति का कोई लड़का लिया जाता, तो स्थिति बिल्कुल बदल जाती। परंतु श्यामू को गोद लेने के समय शंभू की जो दशा थी, उसे देखते हुए क्या कोई कह सकता था कि शंभुनाथ आगे चलकर ऐसा निकलेगा! ऐसी दशा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में जो कुछ हुआ, उसके अतिरिक्त और कुछ हो ही नहीं सकता था। परंतु बाबू साहब की यह धारणा पूर्णतया युक्ति-संगत न थी। बाल्यकाल में बालक की पूर्ण प्रकृति का प्रस्फुटन उस समय तक नहीं होता, जब तक उसे प्रस्फुटित होने का अवसर नहीं दिया जाता। शंभूनाथ ऐसी स्थिति में था कि न तो उसकी देख-रेख करनेवाला कोई था, न उसकी शिक्षा की ओर ध्यान दिया जाता था। वह स्थिति ऐसी थी, जहाँ संरक्षक केवल रोटी-कपड़ा देकर ही अपने उत्तरदायित्व से छुट्टी पा जाते हैं। पिता अपना कर्तव्य केवल इतना समझता था कि वह अपने पुत्र के भोजन के लिये सामग्री एकत्र करे—माता का कर्तव्य केवल, स्थिति-वश, इतना रह गया था कि वह उसे भोजन खिला दे, कपड़े पहना दे और कोई रोग अथवा दुःख होने पर उसकी सेवा-सुश्रूषा कर दे। यद्यपि माता के हृदय में यह लगन अवश्य थी कि वह अपने पुत्र के चरित्र को सुमार्ग की ओर ले जाय, परंतु वह ऐसी स्थिति में थी कि इच्छा रखते हुए भी वह कुछ नहीं कर सकती थी। ऐसी दशा में ऐसा प्रत्येक बालक, जो किसी महान् आत्मा का अवतार नहीं है, दिन-भर गुल्ली-डंडा खेलने के अतिरिक्त और क्या कर सकता है? शंभूनाथ ऐसी ही स्थिति में था, अतएव उसकी प्रकृति का वास्तविक चित्र देखने को कैसे मिलता। यदि बाबू साहब अल्पवयस्क बालक खेने के खब्त को छोड़कर ऐसा बालक लेते, जो कुछ वयस्क होता और जिसकी रुचि को देखकर उसकी प्रकृति समझी जा सकती, तो इस प्रकार की भूल पर पश्चात्ताप करने का अवसर न आता।

बाबू साहब ने लाला घासीराम से पूछा—"तो अब उसका क्या करने का इरादा है?"

घासीराम दाँत निकालकर बोले—"इरादे तो बहुत कुछ हैं, परंतु उसमें सहायता की दरकार है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबू साहब—"किसकी सहायता की ?"

घासीराम—"आपकी सहायता की।"

बाबू साहब—"मेरी सहायता की कैसी ? मैं समझा नहीं।"

घासीराम—"बात यह है कि शंभू अव्वल दर्जे पास हुआ है, इसलिये उसे डिप्टी-कलेक्टरी मिल सकती है, मगर वह तभी मिल सकती है, जब सिफ़ारिश पहुँचे।"

बाबू साहब—"किसकी सिफ़ारिश—मेरी ?"

घासीराम—"आपकी, और आपके मिलनेवाले बड़े आदमियों की।"

बाबू साहब—"किस बात की सिफ़ारिश की जायगी, और किससे की जायगी—पहले यह भी तो मालूम हो !"

घासीराम शंभूनाथ से ख़ास-ख़ास बातें पूछ चुके थे, अतएव उन्होंने कहा—"और किसी बात की नहीं, केवल इस बात की कि शंभू एक अच्छे ख़ानदान का लड़का है, और नगर के बड़े-बड़े आदमी उस परिवार से परिचित हैं।"

'हूँ' कहकर बाबू साहब मौन हो गए, और विचार करने लगे। उन्होंने सोचा—"क्या हानि है ? अपनी जाति के, अपने पक्ष के, अपने संबंध के एक व्यक्ति को इतना बड़ा पद मिलता है, हमारे लिये गौरव की बात है। श्यामू पर भी एक बहुत बड़ा अंकुश हो जायगा। शंभू का सगा भाई है, शंभू उसकी भलाई-बुराई पर दृष्टि अवश्य रक्खेगा।" यह सोचकर बाबू साहब बोले—"मेरे किए जो हो, उसके लिये मैं तैयार हूँ।"

घासीराम प्रसन्न-मुख होकर बोले—"तब तो फ़तह है—जब आप सब तरह से तैयार हैं, तो काम निश्चय हो जायगा।"

बाबू साहब—"हाँ, मैं सब तरह से तैयार हूँ, और मुझे उस दिन बड़ी प्रसन्नता होगी, जिस दिन शंभू को डिप्टी-कलेक्टरी का पद मिल जायगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घासीराम—"तो बस, मैं शंभू को आपके पास भेज दूँगा—उससे आप सब बातें पूछकर चेष्टा कर दीजिएगा—बस, काम हुआ समझिए। बाबूजी, यह सब आप ही की बदौलत है—वह पढ़ा-लिखा भी आपकी बदौलत, और ऐसी बढ़िया नौकरी भी आप ही की बदौलत पायगा।"

बाबू साहब ने घासीराम की इस बात का आनंद मन-ही-मन लिया। स्तुति मनुष्य को तो क्या, देवता तक के लिये आनंददायक होती है।

बाबू साहब बोले—"तो शंभू को मेरे पास भेज देना।"

घासीराम—"मैं आज रात को ही भेज दूँगा।"

समस्त दिन लाला घासीराम ने बड़ी बेचैनी के साथ व्यतीत किया। दूकान से छुट्टी पाकर वह लंबे-लंबे डग धरते हुए घर आए। घर पर उस समय शंभू उपस्थित नहीं था। घासीराम को उसकी अनुपस्थिति पर कुछ क्रोध आया। उन्होंने सोचा—"मैं तो उसके लिये ऐसा शुभ संवाद लाया, और वह घर पर उपस्थित नहीं!" इस समय घासीराम की दृष्टि में यह भी एक अपराध था।

लाला घासीराम शौच इत्यादि से निवृत्त होकर भोजन करने के लिये जा ही रहे थे कि उसी समय शंभूनाथ आ गया। उसे देखते ही घासीराम कुछ अप्रसन्नता-पूर्वक बोले—"कहाँ चला गया था, मैं घंटा-भर से तेरी राह देख रहा हूँ?"

शंभूनाथ—"ऐसे ही ज़रा टहलने के लिये चला गया था।"

घासीराम—"अब थोड़े दिन टहलना मुलतवी रक्खो। जो काम सामने है, उसमें चित्त लगाओ। हाँ, मैंने बाबू साहब से ज़िक्र किया था। वह सब तरह पर मदद करने के लिये तैयार हैं—उन्होंने तुम्हें आज रात को बुलाया है। भोजन-वोजन कर लो, और उनके पास चले जाओ। सब बातें ठीक तरह से बता देना।"

एक ही साँस में घासीराम सब बातें कह गए। उत्सुकता में होता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

न पुस्तकों के ज्ञान से शंकाओं का समाधान होता है। स्वानुभव से व्यवहार-कुशलता भी आ जाती है और शंकाओं का समाधान भी हो जाता है। अतएव पुस्तकों की अपेक्षा स्वानुभव एक अच्छा शिक्षक है।"

बाबू साहब—"अब मैं तुमसे क्या कहूँ—तुम तो स्वयं सब बातें समझते हो। मेरा यह शुभ आशीर्वाद है कि तुम संसार में फलो-फूलो, जीवन का सुख देखो।"

शंभूनाथ ने कुछ उत्तर न दिया—केवल अपना सिर झुका लिया। मानो आशीर्वाद को शिरोधार्य किया।

बाबू साहब ने घड़ी की ओर देखा—दस बज चुके थे। शंभूनाथ समझे कि कदाचित् बाबू साहब के शयन करने का समय आ गया, अतएव उन्होंने कहा—"तो अब आज्ञा दीजिए। आपको विलंब हो रहा है।"

बाबू साहब—"ज़रा और ठहर जाओ, श्यामू आता होगा, उससे भी मिल लो।"

शंभू—"अच्छी बात है।"

बाबू साहब—"परंतु अभी उससे कुछ न कहना। अभी तुम बिल्कुल अनजान बने रहो। पहले इस बात का पता लगा लो कि इसकी आमद-रफ़्त अधिकतर कहाँ रहती है, और क्या करता है।"

शंभूनाथ—"ठीक है।"

इसके पश्चात् थोड़ी देर तक दोनों इधर-उधर की बातें करते रहे। साढ़े दस बज चुकने पर शंभूनाथ ने कहा—"अभी तक नहीं आया, क्या बात है?"

बाबू साहब—"बात जो है, मैं जानता हूँ, और वह इस समय जहाँ होगा—वह भी मैं जानता हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ—"क्या आप मुझे बता सकते हैं?"

बाबू साहब—"मैं पूरा पता तो दे नहीं सकता, इतना बता सकता हूँ कि वह चौक में ही कहीं होगा।"

शंभूनाथ—"आपको यह बात कैसे मालूम हुई? क्या आपने उसे कभी वहाँ देखा है?"

बाबू साहब—"यदि मैं अपनी आँखों से देख लेता, तब तो मैं न-जाने क्या कर डालता, परंतु मैं चौक जाता ही नहीं, मेरा वहाँ जाने का काम क्या? दो बरस हुए, लाला हज़ारीलाल के लड़के का विवाह हुआ था—तब गया था, उस मिती से आज तक उधर जाना नहीं हुआ। मैंने एक व्यक्ति से सुना। पूरी बात उसने भी नहीं बताई—केवल इतना कहा था—श्यामू भैया अक्सर चौक में दिखाई पड़ते हैं।"

शंभूनाथ—"हूँ, इससे कोई प्रमाण तो मिलता नहीं। बहुत-से आदमी केवल घूमने की दृष्टि से ही चौक जाते हैं।"

बाबू साहब—"यह मैं जानता हूँ। ख़ास हमारे चचा को इस बात की लत थी कि रात को खाना खाने के पश्चात् एक चक्कर चौक का लगाते थे। वहाँ गए—एक ख़ास तँबोली के यहाँ पान खाए और जी चाहा, तो ज़रा देर बाग़ में बैठ गए—अन्यथा घर चले आए। इतना सब कुछ था, पर क्या मजाल, जो कभी ऊपर दृष्टि उठाकर देख भी लें। उनके लिये चौक वेश्या-शून्य था—वेश्याएँ उन्हें दिखाई ही न पड़ती थीं। इसीलिये बेधड़क थे। चाहे जो हो—बड़ा हो या छोटा—सबके सामने बेधड़क कह देते थे कि 'ज़रा चौक की सैर करने जा रहे हैं।' हमारा इतना साहस कभी न हुआ कि हम किसी से यह कहें कि चौक की सैर करने जा रहे हैं। हाँ, कोई काम हो, तो कह देंगे कि अमुक काम के लिये चौक जा रहे हैं। 'सैर'-शब्द के साथ चौक कभी मुँह से निकलेगा ही नहीं। जितना अधिक हृदय

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्वच्छ होगा, उतना ही अधिक साहस होगा। हाँ, तो यह बात मैं मानता हूँ कि ऐसे लोग भी हैं, परंतु मैं यह भी जानता हूँ कि श्यामू उन लोगों में से नहीं है। मेरे पास कोई प्रमाण नहीं है, परंतु मैं उसकी प्रकृति जानता हूँ।"

शंभूनाथ—"अच्छी बात है। इन सब बातों का पता शीघ्र ही लग जायगा। अच्छा, अब आप आराम कीजिए—मैं भी आज्ञा चाहता हूँ। आप चिंता न करें, श्यामू से मैं मिल लूँगा।"

शंभूनाथ बाबू साहब से बिदा होकर चले। मकान से निकलकर वह थोड़ी ही दूर गए थे कि सामने से श्यामनाथ आते हुए दिखाई पड़े। शंभूनाथ उनको देखकर एक गली की आड़ में हो गए। श्यामू बाबू उनके पास से निकले—उनके वस्त्र इत्र में बसे हुए थे। शंभूनाथ का दिमाग़ मुअत्तर हो गया। श्यामनाथ झूमते-झामते चले जा रहे थे। जब श्यामनाथ निकल गए, तो शंभूनाथ गली से निकले। कुछ क्षणों तक श्यामनाथ की ओर देखते रहे, तत्पश्चात् किंचित् मुस्किराकर अपने घर की ओर चल दिए।

दसवाँ परिच्छेद

चुन्नी का विवाह हुए छ मास के लगभग हो गए। अभी तक गोकुलप्रसाद का व्यवहार चुन्नी के साथ संतोष-जनक रहा—यद्यपि चुन्नी के लिये उतना ही सब कुछ था। गोकुलप्रसाद के लिये चुन्नी एक सुंदर नवीन खिलौना थी—चुन्नी के लिये गोकुलप्रसाद पति थे, स्वामी थे, प्रियतम थे, उसके एकमात्र अवलंब थे। दोनों के पारस्परिक दृष्टि-कोण में इतना अधिक अंतर होते हुए भी आरंभ में कुछ दिन दोनों अपने को एक प्राण, दो शरीर समझते रहे। गोकुलप्रसाद के लिये चुन्नी खिलौना थी—और जिस प्रकार सुंदर-से-सुंदर खिलौना भी एक व्यक्ति को अधिक दिनों तक मुग्ध नहीं रख

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सकता, उसी प्रकार चुन्नी भी गोकुलप्रसाद को अधिक दिनों तक अपने रूप और यौवन पर मुग्ध न रख सकी। खिलौनों का प्रेमी एक खिलौना लेकर कभी संतुष्ट नहीं रह सकता। उसे तो प्रसन्नता तभी होगी, जब नित-नए खिलौने मिलते रहें। गोकुलप्रसाद के लिये चुन्नी उस खेले हुए खिलौने के समान होती जा रही थी, जो केवल नवीन खिलौने के अभाव में खिलाड़ी का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करता है। गोकुलप्रसाद अभी तक तो शाम से ही घर में घुसकर बैठ रहते थे—उस समय यदि उनका कोई मित्र उनके पास आता अथवा कोई अन्य कार्य आ जाता, तो उन्हें बड़ा ही बुरा लगता था। एक दिन शाम के ६॥ बजे विश्वनाथ उनके घर आए। गोकुलप्रसाद ऊपर थे। नौकर ने विश्वनाथ के आने की सूचना दी। गोकुलप्रसाद इस समय अपने कमरे में लेटे एक उपन्यास पढ़ रहे थे।

उपन्यास पढ़ते हुए बीच-बीच में, दृष्टि उठाकर, सामने के द्वार की ओर देख लेते थे। यह द्वार इस समय बंद था, और उसकी स्थिति से ऐसा प्रतीत होता था कि वह गोकुलप्रसाद के कमरे तथा अंतःपुर का संबंधकारक द्वार है। एक दूसरे द्वार से, जिसका रास्ता घर के मुख्य द्वार की ओर से था, नौकर ने आकर विश्वनाथ के आने की सूचना दी। गोकुलप्रसाद ने किंचित् भौंहें चढ़ाकर किताब एक ओर रख दी, और अँगड़ाई लेकर बोले—"अच्छा, नीचे बिठाओ, मैं आता हूँ।"

विवाह के पहले गोकुलप्रसाद अपने मित्रों को इसी कमरे में बिठाया करते थे।

गोकुलप्रसाद इस समय एक श्वेत रेशमी बनियाइन पहने थे—कानों में इत्र के फाहे लगे थे—कुछ गुलाबी सर्दी पड़ने लगी थी, अतएव उन्होंने पशमीने की एक पतली चादर ओढ़ ली, और स्लीपरों पर फट्-फट् करते हुए बाहर आए। यद्यपि उनको विश्वनाथ का आना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रुचिकर नहीं हुआ था, परंतु तो भी वह विश्वनाथ को देखकर मुस्किरा दिए। विश्वनाथ ने कहा—"अब तो आपके यहाँ ड्योढ़ियाँ लगने लगीं—क्या ठीक है! मैं तो समझा था कि आपके पास बिहारी का वह दोहा भेजना पड़ेगा।"

गोकुलप्रसाद मुस्किराते हुए बोले—"कौन दोहा?"

विश्वनाथ—"वही—नहिं पराग, नहिं मधुर मधु—।"

गोकुलप्रसाद—"खब्ती हो, उस दोहे का यहाँ क्या प्रसंग। यहाँ तो पराग और मधु सब मौजूद है, समझे चिड़ा गुलज़ारू। यह किसी नाबालिग़ जोरू के खाविंद को सुनाना।"

विश्वनाथ—"यार, अब तो तुम्हारे दर्शन ही दुर्लभ हो गए। अजीब आदमी हो—नई दूलहन पर ऐसे मुग्ध हुए कि दीन-दुनिया की ख़बर ही नहीं।"

गोकुलप्रसाद—"अरे यार, यह बात नहीं है।"

विश्वनाथ—"तो कौन बात है?"

गोकुलप्रसाद—"इस वर्ष एफ़्० ए० की अंतिम परीक्षा है, इसे पास करना आवश्यक है।"

विश्वनाथ—"अच्छा, तो आप पढ़ा करते हैं?"

गोकुलप्रसाद—"जनाब!"

विश्वनाथ—"कहीं उल्लू तो नहीं बना रहे हो? पढ़ने से इतना प्रेम तुम्हें कभी रहा नहीं, इसलिये विश्वास कम होता है।"

गोकुलप्रसाद—"वह बात और थी। इस परीक्षा को पास करना आवश्यक है।"

विश्वनाथ—"ख़ैर, यह अच्छी बात है, परंतु सप्ताह में एक-दो दिन तो बाहर निकला करो। पढ़नेवालों को ताज़ी हवा अवश्य खानी चाहिए। इस समय चलोगे? चलो, ज़रा बाग़ की तरफ़ घूम आवें।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुलप्रसाद—"इस समय ? समय बहुत हो गया—सात बजने का समय हो गया।"

विश्वनाथ—"सदैव तो घूमने इसी समय चला करते थे।"

गोकुलप्रसाद—"हाँ, मगर—"

विश्वनाथ—"अरे भइ, क्यों फ़िज़ूल बहानेबाज़ियाँ करते हो—न चलना हो, तो वैसी कहो। मगर इतना मैं कहता हूँ कि चलोगे, तो प्रसन्न हो जाओगे।"

विश्वनाथ की यह रहस्यमय बात सुनकर गोकुलप्रसाद के कान खड़े हुए। कुछ उत्सुक होकर बोले—"मैं इसका तात्पर्य नहीं समझा।"

विश्वनाथ—"तात्पर्य समझना हो, तो चुपचाप मेरे साथ चले चलो।"

गोकुलप्रसाद—"यार, तुम पहेली-सी बुझवाते हो—साफ़-साफ़ क्यों नहीं बताते ! अजीब आदमी हो !"

विश्वनाथ गोकुलप्रसाद के कान के पास मुँह ले जाकर बोले—"एक नया पंछी आया है, देखोगे, तो लोट-पोट हो जाओगे। क्या घोंसले में घुसे अंडे से रहे हो—ज़रा चमन की हवा खाओ, देखो तो, कैसे-कैसे गुल खिल रहे हैं। मियाँ, घर की मुर्ग़ी तो दाल-बराबर होती है, ज़ायक़ा बाहर की ही मुर्ग़ी में आता है। समझे चोंगानंद ?"

शैतान ने पट्टी पढ़ा दी। गोकुलप्रसाद का हृदय विचलित हो उठा, बोले—"कहीं बनाते तो नहीं हो ?"

विश्वनाथ—"गोकुल के सिर की क़सम, बनानेवाले पर तीन हरफ़।"

कुछ क्षणों तक गोकुलप्रसाद खड़े सोचते रहे। एक ओर सुंदर, मनमोहक, परंतु खेला हुआ खिलौना था, साथ ही ऐसा खिलौना, जो प्रत्येक समय प्राप्त था। दूसरी ओर एक नवीन और दुष्प्राप्य खिलौना था, जिसके संबंध में यह आशा थी कि संभव है अधिक सुंदर

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तथा अधिक मनमोहक हो, ऐसा खिलौना पाकर अधिक मनोरंजन होगा, अधिक आनंद मिलेगा। नवीनता तथा अधिक आनंद पाने की दुराशा ने विजय पाई। गोकुलप्रसाद ने कहा—"अच्छा, ठहरो, चलता हूँ, कपड़े पहन आऊँ।"

गोकुलप्रसाद अपने कमरे में पहुँचे, कपड़े पहने, और चलने को तैयार हुए। इठात् उसी समय अंतःपुर की ओर का द्वार धीरे-धीरे खुला। और चुन्नी ने कमरे में प्रवेश किया। अंदर आकर पहले उसने द्वार बंद किया, तत्पश्चात् वह पति की ओर घूमी। बिजली के लैंप का शुभ्र प्रकाश उसके शरीर पर पड़ा। वाह, क्या रूप था! वह रूप ऐसा था, जिसके स्वागत के लिये सबसे पहले प्रेम आगे बढ़ता है—उस रूप के सामने काम-वासना के पैर काँपने लगते हैं और वह पीछे रह जाती है। वह सात्विक रूप था। बड़े-बड़े नेत्र करुणा तथा लज्जा से परिपूर्ण, सुंदर मुख-मंडल पर प्रेम, भक्ति तथा सेवा के गंभीर भाव, ओठों पर आंतरिक प्रसन्नता की हास्य-रेखा! वह करुणा तथा प्रेम की मूर्ति एक ऐसी मूर्ति थी, जिसके एक-एक आँसू के लिये एक सहृदय अपने हृदय का एक-एक टुकड़ा दे सकता था—और एक मुस्कान के लिये स्वर्ग-सुख को तिलांजलि। परंतु इस समय उसके वधू-वेश ने, उसके शृंगार ने—एक काम-लोलुप मनुष्य के लिये, उसके रूप की सात्विकता को छाया में डाल दिया था। शृंगार ने यद्यपि उसके रूप में चार चाँद लगा दिए थे, परंतु उन चंद्रमाओं में कामोत्पादन की कलंक-कालिमा थी। गोकुलप्रसाद कुछ क्षणों के लिये उस रूप-सुधा का पान करने में तल्लीन हो गए। चुन्नी ने धीरे-धीरे आगे बढ़ते हुए मंद-मुस्कान के साथ पूछा—"आज कहाँ की तैयारियाँ हैं?"

गोकुलप्रसाद कुछ चौंककर बोले—"कहीं नहीं, ज़रा एक काम से जा रहा हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चुन्नी ने पति की बात पर विश्वास कर लिया। उसने उसी प्रकार सरलता-पूर्वक पूछा—"कितनी देर में लौटोगे ?"

गोकुलप्रसाद—"एक घंटे में आ जाऊँगा। जी तो नहीं चाहता, पर काम है, इसलिये मजबूरी है।"

चुन्नी—"क्यों, जी क्यों नहीं चाहता ?"

चुन्नी ने यह प्रश्न जान-बूझकर किया था। वह जानती थी कि इसका उत्तर क्या मिलेगा, वह उत्तर पाने की आशा से ही उसने यह प्रश्न किया था। वह उत्तर उसके कानों को अत्यंत प्रिय था।

गोकुलप्रसाद ने आगे बढ़के चुन्नी को अपने बाहु-पाश में ले लिया, और कहा—"इस मूर्ति को छोड़कर कहीं जाने की इच्छा नहीं होती।"

इस समय गोकुल के हृदय की यही दशा थी। यदि चुन्नी ज़रा भी रोकती, तो वह कदापि न जाते। परंतु चुन्नी ने रोका नहीं। उसने कहा—"काम है, तो अवश्य जाना चाहिए। कोई काम-काज थोड़ा ही छोड़ देता है।" इस समय चुन्नी ने गोकुलप्रसाद के मस्तिष्क से अन्य सब विचारों को भगा दिया था—वह चुन्नी को छोड़कर अपना ध्यान किसी दूसरी ओर नहीं ले जाना चाहते थे। वह कहने ही वाले थे कि ऐसा कोई आवश्यक कार्य नहीं—अब न जाऊँगा। ठीक उसी समय विश्वनाथ का कंठ-स्वर सुनाई पड़ा—"गोकुल, क्या करने लगे ?"

गोकुलप्रसाद ने चौंककर पत्नी को छोड़ दिया। शैतान की पुकार सुनकर शैतान के शिष्य ने देवी की ओर से आँखें फेर लीं। गोकुल-प्रसाद ने कहा—"जाना ही पड़ेगा, प्राण नहीं बचेंगे।"

चुन्नी बोली—"तो चले जाओ, काम है, तो जाना ही चाहिए।"

गोकुलप्रसाद ने शीघ्रता-पूर्वक चुन्नी के अधरों का चुंबन किया, और छड़ी उठाकर तेज़ी के साथ बाहर आ गए। बाहर आकर विश्वनाथ से उन्होंने कहा—"यार, इस समय तुम खल गए।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ—"क्यों, क्या पढ़ने का हर्ज हुआ ?"

गोकुलप्रसाद—"नहीं, इस समय कुछ दूसरा ही मामला था।"

विश्वनाथ—"मैं समझ गया, मगर बचा, घर लौटते समय यदि यही वाक्य कहोगे, तो मान लूँगा। इस समय तो बुरा मालूम ही हो रहा है।"

गोकुलप्रसाद—"यदि इस समय तुमने कोई बढ़िया चीज़ न दिखाई, तो बहुत बुरी तरह पेश आऊँगा। इस समय कलेजे पर पत्थर रखकर आया हूँ—यह याद रखना।"

विश्वनाथ—"बहुत नख़रे न बघारो—चले चलो चुपचाप।"

गोकुलप्रसाद—"श्यामू बाबू का कहीं पता है ?"

विश्वनाथ—"श्यामू बाबू तो फ़िलहाल अल्लहबंदी के ही दामन से बँधे हैं।"

गोकुलप्रसाद—"उनको भी साथ ले लेते।"

विश्वनाथ—"वह अभी बिल्कुल लौंडा ही है—वह अल्लहबंदी ही को अप्सरा समझे बैठा है। उसे यह पता ही नहीं कि संसार में एक-से-एक बढ़कर हैं। मगर उसको साथ लेना पड़ेगा। उसके साथ रहने से ज़रा अपने लोगों की जेब कम ख़ाली होती है।"

गोकुलप्रसाद—"इसी से तो कहता हूँ।"

विश्वनाथ—"ठीक है, मगर आज नहीं, किसी और दिन।"

इसी प्रकार की बातें करते हुए चौक के अकबरी दरवाज़े पर पहुँचे। वहाँ पहुँचकर विश्वनाथ एक तँबोली की दूकान के सामने खड़े हो गए। चार पैसे उसके सामने फेंके, और पान बनाने के लिये कहा। तँबोली पान बनाने लगा। विश्वनाथ बड़ी उत्सुकता से इधर-उधर देखने लगे—मानो किसी आदमी को खोज रहे थे। तँबोली ने पान दिए—विश्वनाथ ने गोकुलप्रसाद को पान दिए, और ख़ुद खाए—दो पान बचाकर हाथ में दाब लिए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उसी समय एक दुबले-पतले आदमी ने, जो साधारण कपड़े पहने था और देखने से मुसलमान जान पड़ता था—विश्वनाथ के सामने आकर कहा—"बंदगी बाबूजी।"

विश्वनाथ ने कहा—"तुम आ गए, मैं तुम्हारा इंतज़ार कर रहा था।"

आदमी—"मैं तो बड़ी देर से यहीं घूम रहा हूँ, आप अभी आए होंगे?"

विश्वनाथ—"हाँ, आए तो अभी हैं—लो पान खाओ।"

आदमी—"तसलीम—ज़रा-सी तंबाकू भी दीजिए।" विश्वनाथ ने तंबाकू दी। पान खाकर उस आदमी ने पूछा—"कहिए, क्या इरादे हैं?"

विश्वनाथ—"इरादे क्या, अपना वादा पूरा करो।"

आदमी—"चलिए, ग़ुलाम को क्या इनकार है।"

विश्वनाथ—"तो इधर किसे इनकार है।"

आदमी ने हँसकर कहा—"तो आइए।"

दोनों आदमी उसके पीछे-पीछे चले।

वह आदमी चौक के अंदर होता हुआ, दो गलियों को पार करके एक ऐसी गली में पहुँचा, जहाँ बड़ा अँधेरा था। यद्यपि म्युनिसिपैलिटी ने अत्यंत दया करके एक लैंप लगवा दिया था, परंतु वह लैंप उस ज़माने का बना हुआ था, जब लोग नक्षत्रों की रोशनी के होते हुए अन्य किसी रोशनी की आवश्यकता ही न समझते थे। इसीलिये लैंप होते हुए भी नक्षत्रों के आलोक का ही प्रभुत्व था।

विश्वनाथ बोले—"अरे मियाँ, यह तुम कहाँ ले आए पाताल में?"

वह आदमी बोला—"बस, अब आ गए, दस क़दम का मामला और है।" उसी समय गोकुलप्रसाद के ठोकर लगी, वह आदमी चिल्ला उठा—"या अल्ली! कहिए, चोट तो नहीं लगी?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुलप्रसाद—"नहीं, चोट नहीं लगी, मगर मियाँ, तुम बड़ी बुरी जगह।"

वह आदमी—"जगह सरकार बुरी नहीं है, आज इस गली की लालटेन ज़रा मद्धिम जल रही है, नहीं तो यहाँ काफ़ी रोशनी रहती है। सरकार, ये तेल भरनेवाले तेल चुरा लेते हैं और लालटेनों में पानी-मिला तेल भर देते हैं—इसीलिये लालटेन रोशनी नहीं देती। समझते हैं, यहाँ गली में कौन देखने आता है, और वाक़ई इधर रात में कभी कोई अफ़सर नहीं आता। किसी दिन कोई घूम पड़ा, तो आटे-दाल का भाव मालूम हो जायगा।"

गोकुलप्रसाद—"अभी कितनी दूर है?"

आदमी—"वह सामने दरवाज़ा दिखाई पड़ रहा है।"

विश्वनाथ तथा गोकुलप्रसाद ने देखा कि एक साधारण-सा मकान है, भीतर रोशनी है—अँधेरे में इससे अधिक और कुछ न देख सके।

गोकुलप्रसाद ने पूछा—"क्यों मियाँ, यह किसका मकान है?"

वह आदमी बोला—"हुज़ूर, मकान तो यह एक दूसरे शख़्स का है, मगर इसमें एक बेगम साहबा रहती हैं।"

'बेगम साहबा' सुनकर गोकुलप्रसाद के कान खड़े हुए। उन्होंने पूछा—"बेगम साहबा कैसी?"

वह आदमी—"बिशुनाथ बाबू को सब मालूम है।" विश्वनाथ बोल उठे—"अरे यार, इसमें एक बेगम साहबा रहती हैं। उन्हीं के यहाँ चल रहे हैं।"

वह आदमी विश्वनाथ से बोला—"बाबूजी, ज़रा आहिस्ते से बातचीत कीजिए—मुहल्लेवाले सुन लेंगे, तो बेगम साहबा की आबरू में फ़र्क़ आ जायगा। ख़ुदा के वास्ते ऐसा मत कीजिए।"

विश्वनाथ—"माफ़ करना मियाँ, ग़लती हुई—अब ऐसा न होगा।"

गोकुलप्रसाद खड़े हो गए, और बोले—"यार, अब तक मुझे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पूरी बात न मालूम हो जायगी, तब तक मैं एक क़दम भी आगे न बढ़ूँगा।"

विश्वानाथ—"अब रँग लाई गिलहरी—अरे भइ, अब तो आ ही गए हो, सब देख लेना, और समझ लेना।"

गोकुलप्रसाद—"आप तो ख़राद पर चढ़कर ठीक हो चुके हैं। आपको न गालियों की परवा, न पिटने की शर्म और न आबरू जाने का ख़ौफ़। लेकिन बंदा ऐसी इश्क़बाज़ी और तमाशबीनी पर लानत भेजता है। यहाँ तो ऐब भी करेंगे, तो हुनर के साथ—आबरू को ख़तरे में डालकर काम करना हमारे उस्ताद ने नहीं पढ़ाया।"

विश्वनाथ—"तुम्हारे उस्ताद और गुरू घंटाल तो हमीं हैं—इसलिये हमारे कहने से चुपचाप चले चलो। घबराओ नहीं, मार नहीं पड़ेगी।"

वह आदमी बोला—"अच्छा, आप लोग यहाँ खड़े बातें कीजिए। मैं लपककर देख लूँ—कहीं खाना-वाना न खाती हों।"

विश्वनाथ—"अच्छा, देख लो।"

वह आदमी उधर चला गया। विश्वनाथ से गोकुलप्रसाद ने पूछा—"यार, सच-सच बताओ, क्या मामला है?"

विश्वनाथ—"अरे, मामला कुछ नहीं, इस मकान में एक बेगम साहबा रहती हैं। उनको कुछ रुपयों की ज़रूरत है, क़र्ज़ चाहती हैं। इस आदमी ने मुझसे ज़िक्र किया और यह भी बात दिया कि शिकार अच्छा है और जल्दी जाल में फँस सकता है। बस, इसलिये हम लोग आए हैं।"

गोकुलप्रसाद—"उनके घर में कोई मर्द नहीं है?"

विश्वनाथ—"मर्द नहीं—सब औरतें-ही-औरतें हैं।"

गोकुलप्रसाद—"इस वक़्त तुम क्यों आए। क्या कुछ तय हो चुका है?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ—"अरे, वहीं यार, मैंने यह चकमा दिया कि बिना हैसियत देखे, बिना बातचीत किए क़र्ज़ा कैसे दिया जा सकता है। इस पर उन्होंने कहला भेजा कि 'आप रात में आइए—दिन में आने से हमारी बदनामी होने का ख़ौफ़ है।' सो इस समय चल रहे हैं।"

गोकुलप्रसाद—'यह बात? तब तो मैं बेखटके चल सकता हूँ।"

विश्वनाथ—"जी हाँ, अब आप क्यों न चलेंगे—और क्यों साहब, आपने यह कैसे समझ लिया था कि मैं बिना जाने-बूझे यहाँ आया हूँ—आपने मुझे इतना बेवक़ूफ़ समझ लिया? और, जब कि मैं तुम्हारा गुरू हूँ। और, ज़रा यह भी बता दीजिए कि मैं कहाँ पिटा हूँ—कहाँ मुझ पर जूते पड़े हैं। आप न कुछ समझते हैं, न बूझते हैं, जो मुँह में आया, बक देते हैं। एक ग़ैर आदमी के सामने ऐसी वाहियात बातें कहीं।"

गोकुलप्रसाद—"पिटे भी होगे, तो तुम भला बताने क्यों लगे। ख़ैर, पिटे हो, चाहे न पिटे हो, परंतु मुझे यह विश्वास है कि यदि तुम कहीं पिटो, तो धूल झाड़के चुपचाप घर चले आओ और दूसरे दिन फिर वहीं जाओ। जिस पर तुम्हारा दाँत लग जाय, उसे फिर तुम सहज में नहीं छोड़ सकते, उसका बचना कठिन ही है, चाहे मार पड़े, चाहे जूते पड़ें।"

यह सुनकर विश्वनाथ हँसे, और बोले—"बात तो यार पते की कहते हो, हमसे बचना तो ज़रा टेढ़ी खीर है।"

विश्वनाथ अपने इस स्वभाव को 'जिस पर दाँत लग जाय, उसे सहज में नहीं छोड़ सकते, चाहे मार पड़े, चाहे जूते पड़ें' अपना एक गुण समझते थे और इस पर गर्व करते थे। इसीलिये गोकुल-प्रसाद के कथन को उन्होंने अपना गुण-गान समझा, और हँस पड़े। सो जिस बात से प्रसन्न होता है, उसके लिये वही स्तुति है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इतने ही समय में वह आदमी लौट आया, और बोला—"चलिए।"

दोनो चुपचाप उसके पीछे चल दिए। उस आदमी ने उन दोनो को मकान के अंदर ले जाकर एक कमरे में बिठाया। यह कमरा छोटा था। भूमि पर श्वेत फ़र्श, जो अधिक साफ़ नहीं था, बिछा था। फ़र्श पर एक ऊनी क़ालीन, जिसकी हजामत काल-रूपी हज्जाम ने भली भाँति बना दी थी, बिछा हुआ था। क़ालीन पर एक तकिया रक्खा था। उस आदमी ने उन दोनो को उसी क़ालीन पर बिठाया। कमरे के अंदर एक खुला द्वार था, उस द्वार पर एक चिक पड़ी हुई थी। वह आदमी उसी द्वार के पास बैठ गया। थोड़ी देर में एक स्त्री जो वेश से घर की दासी जान पड़ती थी, वहाँ आई।

उससे उस आदमी ने कहा—"आप लोग आ गए हैं, बेगम साहबा को इत्तिला दे दो।"

वह दासी चली गई। कुछ क्षणों पश्चात् चिक के पीछे से किसी ने कहा—"छुट्टन!"

वह आदमी बोल उठा—"हुज़ूर!"

कंठ-स्वर किसी वृद्धा स्त्री का था। उसी कंठ-स्वर में किसी ने पूछा—"बाबू लोग आ गए?"

छुट्टन—"हाँ बेगम साहबा, आ गए।"

इतना सुनते ही विश्वनाथ बोल उठे—"जी हाँ, हम लोग ख़िदमत में हाज़िर हैं—आदाब-अर्ज़!"

बेगम साहबा—"ख़ुदा सलामत रक्खे, जुग-जुग जियो। ऐ छुट्टन! देखना, आराम से बिठाना। तकिया-वकिया मौजूद है न?"

विश्वनाथ बोल उठे—"हम लोग बड़े आराम से बैठे हैं—आप फ़िक्र मत कीजिए।"

बेगम साहबा दुःख-पूर्ण स्वर में बोलीं—"घर में कोई मर्द-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मानस न होने से तमाम ज़माने की तकलीफ़ें हैं—मैं पर्दा-नशीन औरत ठहरी, क्या करूँ। दो लड़कियाँ हैं, वे भी मेरी तरह मजबूर हैं। अब आप आए हैं, आपकी ख़ातिर कैसे करूँ, दिल मसोसकर रह जाना पड़ता है।"

विश्वनाथ—"सब दुरुस्त है—हमें कोई तकलीफ़ नहीं है। ख़ातिर करने के लिये मियाँ छुट्टन मौजूद हैं। यह बेचारे हमारी बड़ी ख़ातिर करते हैं।"

मियाँ छुट्टन गद्गद हो गए, दाँत निकालकर बोले—"हें-हें, ख़ातिर क्या, मैं तो आपका ग़ुलाम हूँ—मेरे लिये तो जैसी बेगम साहबा मालिक, वैसे आप मालिक।"

बेगम साहबा—"सच बात तो यह है कि छुट्टन ही हमारी ख़बर-गीरी करता है। हमारा हमदर्द है, हमराज़ है। वर्ना हमारी जैसी हालत है, वह ख़ुदा ही जानता है। इसी लखनऊ में शाही थी। इसी में फ़क़ीर हो गए। मगर अब भी ख़ुदा का लाख-लाख शुक्र है कि रोटी-कपड़े से मोहताज नहीं। हाँ, घर में कोई मर्द नहीं, इससे तकलीफ़ है, वर्ना कोई तकलीफ़ नहीं थी।"

गोकुलप्रसाद ने विश्वनाथ के कान में कहा—"तुम इनकी गोद बैठ जाओ।"

विश्वनाथ ने इशारे से मना किया कि मज़ाक़ मत करो।

बेगम साहबा ने छुट्टन से कहा—"इनसे वह सब हाल कह दिया?"

छुट्टन—"कुछ कह दिया था, कुछ आप कह दीजिए।" बेगम साहबा बोलीं—"बाबूजी, बात यह है कि छ महीने से मेरा और मेरी लड़कियों का वसीक़ा नहीं मिला है। एक शख़्स ने दावा किया है कि इन वसीक़ों में मेरा भी हिस्सा है। इसलिये जब तक अदालत से फ़ैसला न हो जाय, तब तक वसीक़ा मिलना बंद है। इस वजह से ख़र्च की कुछ तंगी हो गई—वसीक़ा मिलता रहता, तो यह नौबत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

न आतो। अब फ़िलहाल हमें दो सौ रुपयों की ज़रूरत है। हमारा वसीक़ा जहाँ मिला, हम एक-एक पाई बेबाक़ कर देंगे।"

विश्वनाथ—"कितना वसीक़ा मिलता है?"

बेगम साहबा—"हम तीनो मा-बेटियों को पंद्रह-पंद्रह के हिसाब से पैंतालीस रुपए माहवार मिलते हैं। छ महीने हो चुके हैं, एकआध महीने में अभी फ़ैसला होगा। इस तरह सात-आठ महीने का वसीक़ा एकदम से मिलेगा। उतने में दो सौ रुपए और उनका सूद बेबाक़ हो जायगा।"

विश्वनाथ—"और जो उस शख़्स को हिस्सा मिल गया?"

इस अवसर पर छुट्टन बोल उठा—"हिस्सा ही मिलेगा न, सब तो मिल ही नहीं सकता। फिर भी बेगम साहबा के तीन हिस्से मिलाकर काफ़ी रुपया मिलेगा। दो सौ हर हालत में वसूल हो सकते हैं।"

विश्वनाथ—"हाँ, यह तो दुरुस्त है।"

बेगम साहबा—"तो अगर आप इस वक़्त इमदाद (सहायता) कर दें, तो ऐन इनायत हो। जो कुछ फ़र्माइएगा, वह सूद दे दिया जायगा।"

विश्वनाथ—"सूद की कौन-सी बात।"

उसी समय कमरे का एक दूसरा द्वार, जो अभी तक बंद था, धीरे-धीरे खुला, और दो स्त्रियों ने इस प्रकार झाँका, मानो उनकी समझ में कोई ऐसा आदमी नहीं बैठा, जिससे पर्दा करना आवश्यक हो। सिर निकालकर कुछ क्षणों तक वे दूसरी ओर देखती रहीं। विश्वनाथ और गोकुलप्रसाद ने ध्यान से उनकी ओर देखा। एक की वयस २० वर्ष के लगभग थी, और दूसरी १७-१८ की होगी। आँखें बड़ी-बड़ी, भौंहें ख़ूब काली तथा घनी और वर्ण गौर था। वैसे देखने में तो दोनो सुंदर थीं, परंतु छोटी विशेष रूप से सुंदर थी। कपड़े भी साफ़ तथा रंग-बिरंगे पहने थीं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दोनो नाक में एक-एक सोने की छोटी नथ पहने थीं—इन नथों के कारण उनके मुख-मंडल का सौंदर्य बहुत कुछ बढ़ गया था। वे दोनो कुछ क्षणों तक दूसरी ओर देखती रहीं। तत्पश्चात् उनकी दृष्टि इन लोगों पर पड़ी। इन दोनो को देखते ही दोनो के मुख से एक हल्की-सी चीत्कार के साथ 'ऊई अल्लाह' निकला, और दूसरे ही क्षण दोनो अदृश्य हो गईं।

बेगम साहबा ने छुट्टन से पूछा—"छुट्टन, यह किनकी आवाज़ थी?"

छुट्टन—"कुछ नहीं साहबज़ादियों (लड़कियों) ने दरवाज़ा खोला था—शायद उनको यह इल्म (ज्ञान) नहीं था कि यहाँ ना-महरम (पर-पुरुष) बैठे हैं—जब देखा, तो चली गईं!"

बेगम साहबा—"इन मस्तानियों को दिन में तो सूझता नहीं; रात को भला क्या सूझेगा! दिन-दहाड़े चलती हैं, तो ठोकरें लेती हुई! जो, आदमियों से तो कमरा भरा है, आध घंटे से बातचीत हो रही है, मगर उन्हें ख़बर ही नहीं!"

छुट्टन—"बच्चा हैं, अभी उमर ही क्या है? उमर पाकर आदमी सब समझने-बूझने लगता है।"

बेगम साहबा—"यह तो ग़ौर है ही, मगर सलीक़ा और तमीज़ भी तो कोई चीज़ है। ख़ैर, इस वक़्त की तो कोई बात नहीं, ये बाबू लोग शरीफ़ आदमी हैं—हमारे मददगार हैं, ख़ैरख़्वाह हैं—इनके सामने आ भी जायँ, तो कोई हर्ज नहीं। मगर अभी कोई अपना ज़ात-बिरादरी का या मुहल्लेवाला बैठा होता, तो वह अपने दिल में यही कहता कि बड़ी बदतमीज़ और गुस्ताख़ (धृष्ट) लड़कियाँ हैं। और, दूसरे ही दिन तमाम मिलने-जुलनेवालों में बात फैल जाती। अभी उस दिन क़मरुन्निसा ज़रा महताबी (मकान की सबसे ऊपरी छत) पर चली गई थी। मुहल्ले के अशफ़ाक़हुसैन की कहीं निगाह पड़ गई। दूसरे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दिन उस निगोड़मारे ने मुहल्ले-भर में यह मशहूर कर दिया कि बेगम की लड़कियाँ महताबी पर बेहिजाब (बेपर्दा) घूमा करती हैं।"

छुट्टन बोल उठा—"बकता है मरदूद—वह पहले अपनी औक़ात तो देखे! ख़ुदा जानता है, मेरे सामने कहता, तो मैं बोटियाँ नोच खाता।" यह कहते-कहते मियाँ की आँखें सुर्ख़ हो गईं। शरीर भी कुछ काँपने लगा। मियाँ की दशा देखने से यह अनुमान लगाने की इच्छा होती थी कि जब इनको सुनने-मात्र से इतना क्रोध आया है, तो सामना होने पर तो मारे क्रोध के ग़श आ जायगा।

विश्वनाथ बोले—"जी—अम्माँ, बकने भी दो। दुनिया में हर तरह के लोग हैं। चाँद पर धूल फेंककर कोई उसे मैला नहीं कर सकता। मगर हाँ, है बुरी बात—ऐसा नहीं चाहिए। शरीफ़ों का काम यह है कि अगर किसी शरीफ़ से कभी कोई ख़ता हो भी जाय, तो उसको ज़बान पर न लावें। मौक़ा पड़ने पर न-जाने क्या-क्या काम करने पड़ते हैं—वक़्त सब कुछ कराता है—चाहे शरीफ़ हो, चाहे रज़ील; मगर शरीफ़ों का यह काम नहीं है कि उसे ज़बान पर लावें। हमसे तो यह कभी न हो—चाहे जैसी बात हो, कभी ज़बान पर आ ही नहीं सकती—चाहे सर कट जाय।"

ज्यों ही विश्वनाथ ने अपना वाक्य समाप्त किया, त्यों ही गोकुल-प्रसाद ने छुट्टन की आँख बचाकर विश्वनाथ की पीठ में एक निःशब्द थपकी मारी। मानो उन्होंने विश्वनाथ की इस बात को सराहा।

छुट्टन बोला—"बेशक, आप लोगों की क्या बात है। आप लोग पढ़े-लिखे समझदार हैं। यह काम तो जाहिलों (मूर्खों) के हैं!"

बेगम साहबा बोल उठीं—"बाबूजी, ऊँचे-खाले पैर सबका पड़ जाता है—किसी का मुरौवत और मुहब्बत में पड़ता है, किसी का अपनी ग़रज़ की वजह से पड़ जाता है—आदमी वही है, जो उस बात की चर्चा कभी ज़बान पर न लावे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ—"बिलकुल ठीक है।"

इसके पश्चात् कुछ क्षणों तक सब लोग मौन बैठे रहे। इतने बेगम साहबा ने कहा—"तो बाबूजी, रुपयों के लिये आपने क्या तय किया?"

विश्वनाथ—"हाँ-हाँ, रुपए बहुत—आपकी इनायत से रुपयों की यहाँ क्या कमी है—ईश्वर का दिया सब कुछ है। हज़ार-दो हज़ार की बात होती, तब तो मुझे ज़ग वालिद से पूछना पड़ता—हालाँकि वह इनकार नहीं कर सकते। मगर दो-चार सौ तो मैं आसानी से दे सकता हूँ।"

बेगम साहबा—"तो किस तरीक़े पर, और सूद कितना?"

विश्वनाथ—"तरीक़ा तो यह है कि इंदुलालबाबू रुक्का लिख दीजिएगा। बाक़ी रही सूद की बात, तो इसके लिये मैं आपसे क्या कहूँ? मुझे तो आपकी बेबसी, मजबूरी और बेकसी (अनाथत्व) देखकर बड़ी तकलीफ़ होती है। मुझसे आपकी जो ख़िदमत हो सके, जो भला हो सके, उसके लिये मैं दिलोजान से तैयार हूँ।"

बेगम साहबा—"ख़ुदा तुम्हारी हज़ारी उम्र करे—हालाँकि तुम ग़ैर ज़ात हो, मगर तुम्हें हमारी इतनी मुहब्बत है, इतना ख़याल है, यह क्या थोड़ी बात है। अपनी ज़ातवाले तो कभी बात भी नहीं पूछते—उल्टे तोहमतें धरते हैं। हाँ, यह एक छुट्टन ग़रीब तो बेशक वफ़ादार और जाँ-निसार है। मैं भी इसे अपनी औलाद के बराबर मानती हूँ। इसकी किसी बात को कभी नहीं टुलखती, क्योंकि मुझे यह पतक़ाद (विश्वास) है कि यह जो करेगा, वह हमारे लिये अच्छा ही समझकर करेगा।"

विश्वनाथ—"बेशक, यह आपके बड़े ख़ैरख़्वाह हैं, मुझसे आपके बारे में न-जाने कितनी बार कहा और कितनी बार मिले। आख़िर आज पकड़ ही लिया, बोले—'आज तो आपको चलना ही पड़ेगा।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हमारी-इनकी पुरानी जान-पहचान है, हम भी इनकार न कर सके।"

छुट्टन—"आपने मुझे बहुत दौड़ाया। बेगम साहबा, खुदा जानता है, दिन में चार-चार बार इनके मकान पर गया हूँ। रहते भी तो शहर के दूसरी तरफ़ हैं, टाँगें शल हो जाती थीं।"

बेगम साहबा—"और देखो, हमसे कभी ज़िक्र तक न किया कि मुझे इतना दौड़ना पड़ रहा है।"

विश्वनाथ—"ख़ूबी तो यही है। अच्छा, तो अब इजाज़त दीजिए। छुट्टन मियाँ, कल सबेरे तुम हमसे मिलना।"

छुट्टन—"घर पर ही मिलिएगा न?"

विश्वनाथ—"हाँ, घर पर ही।"

यह कहकर दोनो उठ खड़े हुए। बेगम साहबा ने कहा—"अरे, इन्हें कुछ पान-इलायची भी दी या सूखा ही टरकाया। तौबा—इन लौंडियों को न-जाने कब शऊर आवेगा—पान नहीं खा सकते, तो डली और इलायची ही पेश की होती।"

विश्वनाथ ने कहा—"कोई हर्ज नहीं, जाने दीजिए।" यह कहकर वह चलने ही वाले थे कि कमरे के उसी द्वार का एक कपाट खुला, और किसी ने मधुर-कंठ से कहा—"छुट्टन भाई, यह लो।"

इसके पश्चात् ही एक शुभ्र-गौर रंग का हाथ निकला। हाथ में मेहँदी लगी हुई थी—और कलाई में हरे रंग की सुंदर चूड़ियाँ पड़ी थीं। हाथ में एक क़लई की तश्तरी थी, जिसमें डली और इलायचियाँ रक्खी थीं। जब तक छुट्टन उठे-उठे, तब तक विश्वनाथ ने हाथ बढ़ाकर अपने हाथ में तश्तरी ले ली। उनके तश्तरी हाथ में लेते ही वह सुंदर हाथ, शीघ्रता-पूर्वक अंदर चला गया। इसके पश्चात् दो युवतियों के हँसने की आवाज़ आई। विश्वनाथ द्वार के पास थे। अतएव उन्होंने एक युवती को दूसरी से यह कहते सुना—"मुए ने हाथ ही पकड़ लिया था, मैंने जल्दी से खींच लिया।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

युवती की इस बात का आनंद मन-ही-मन लेते हुए विश्वनाथ बिदा हुए। उनके पीछे-पीछे छुट्टन भी आया।

घर से बाहर निकलकर तीनो चुपचाप तेज़ी के साथ चल दिए। चौक के बाहर बाग़ में पहुँचकर विश्वनाथ ने छुट्टन से कहा—"अच्छा, अब तुम जाओ, कल सबेरे आना।"

छुट्टन—"बहुत अच्छा, मगर इतना बता दीजिए कि तबियत कुछ खुश हुई या नहीं।"

विश्वनाथ—"वैसे तो तबियत बहुत खुश हुई, मगर इतने से क्या होता है।"

छुट्टन—"घबराइए नहीं, आज तो पहला ही रोज़ था।"

यह कहकर छुट्टन मुस्किराता हुआ चला गया। विश्वनाथ और गोकुल भी बातें करते हुए एक ओर चल दिए।

बारहवाँ परिच्छेद

विश्वनाथ उन लोगों में से हैं, जिनके लिये ऐयाशी भी एक कला है। जिसे जो कला आती है—उसी कला में उसे आनंद मिलता है। विश्वनाथ को इसी बात में आनंद आता है कि वह नित्य ऐयाशी के नए-एए रूप-रंग देखें। यद्यपि उनकी वयस इस समय केवल २५-२६ वर्ष की है, तथापि उन्होंने लंपटता की अनेक पाठ्य पुस्तकें कंठस्थ कर ली हैं। लंपटता, उनकी समझ में, एक ऐसा विषय है, जिसकी परीक्षाएँ केवल भाग्यशाली लोग ही पास कर सकते हैं। साथ ही ये परीक्षाएँ पास करने के लिये मस्तिष्क भी असाधारण होना चाहिए। उनका मस्तिष्क ऐसा है, जिसे किसी बात को गंभीरता-पूर्वक सोचने-विचारने का अवकाश ही नहीं मिलता। यों सोचने-विचारने के लिये तो वह बहुधा इस बात पर विचार किया करते हैं कि "लोग पर-स्त्री-गमन को बुरा क्यों कहते

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है ?" उनके पास पर-स्त्री-गमन के विरुद्ध कोई दलील नहीं—दूसरों की दलीलों से उन्हें संतोष नहीं होता, कुछ-न-कुछ शंका रह ही जाती है। उनकी एक दलील का आज तक कोई ऐसा उत्तर नहीं दे सका, जो उनकी समझ में आ जाता। दलील यह है कि "जब कोई पुरुष किसी पर-स्त्री को, उस स्त्री की अनुमति से, ग्रहण करता है, तो वह कदापि निंद्य नहीं है।" उनकी इस दलील के विरुद्ध आज तक कोई ऐसी दलील न मिली, जो उनको समझ में आ जाती—और जो बात उनकी समझ में नहीं आती, उस बात को वह ठीक भी नहीं मानते। यही कारण है कि वह इसे केवल अपने मनोरंजन की वस्तु समझते हैं। उनके मनोरंजन का समय रात के सात-आठ बजे से आरंभ होकर रात के बारह-एक बजे तक रहता है। उनका यह मनोरंजन उनकी पत्नी को प्रारंभ में तो बहुत कष्टदायक हुआ, परंतु जब उसने अपने पति के स्वभाव का अध्ययन किया, और विविध विषयों के प्रति उनका दृष्टिकोण समझ लिया, तब उसने भी स्वयं को विश्वनाथ की पूर्ण अर्द्धांगिनी बनाने में कसर न उठा रक्खी। इसमें संदेह नहीं कि वह विश्वनाथ की सच्ची अर्द्धांगिनी है। जब विश्वनाथ ने देखा कि उनका आधा अंग भी ख़राब पर चढ़ गया और बेधड़क अपना काम करने लगा—तब वह कुछ घबराए। वह नहीं चाहते थे कि उनकी अर्द्धांगिनी किसी बात में उनसे बढ़ जाय। इस पर उनमें और उनकी पत्नी में महीनों लड़ाई-झगड़े रहे—बड़ी बहसा-बहसी हुई—परंतु अंत में विश्वनाथ हार गए। विश्वनाथ ने किसी बात में अपनी असमर्थता प्रदर्शित नहीं की। बहस में बड़ी-बड़ी दलीलें पेश थीं; मगर जब उनकी पत्नी ने ख़ास उन्हीं की नज़ीरें सामने रक्खीं और उन्हीं के सिद्धांतों पर अपनी बातें अवलंबित करके समझाईं, तब विश्वनाथ निरुत्तर हो गए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यद्यपि एक बार यह भी मैं आया कि पत्नी पर अपने बल तथा पुरुषार्थ का प्रयोग करके उसे अपनी आज्ञाकारिणी बनाए रक्खें। परंतु जब उन्होंने अपने शरीर को और उसके मुक़ाबले में पत्नी के शरीर को देखा, तो उनका यह विचार भी बदल गया। उनकी पत्नी का स्वयं उनके पुरुषार्थ से अधिक बलवान् निकला। इसका परिणाम यह हुआ कि दोनो में एक प्रकार का मूक समझौता हो गया। उस समझौते के फल-स्वरूप दोनो स्वाधीनता-पूर्वक अपना-अपना कार्य करने लगे। न विश्वनाथ को पत्नी की ओर से कोई भय-खटका अथवा रोक-टोक रही, और न उनकी पत्नी को उनकी ओर से। यह बात आज से २ वर्ष पहले की है। तब से फिर कभी विश्वनाथ और उनकी पत्नी में किसी प्रकार का मनोमालिन्य तथा लड़ाई-झगड़ा नहीं हुआ। दोनो बड़े स्नेह-पूर्वक रहते हैं। देखनेवाले समझते हैं कि पति-पत्नी में बड़ा प्रेम है, और दोनो बड़े सुखी हैं। देखनेवालों की पहली धारणा ठीक न होते हुए भी पिछली धारणा ठीक है। इसमें संदेह नहीं, दोनो अपनी समझ में बड़े सुखी थे। स्वेच्छा-पूर्वक कार्य करने की स्वाधीनता में सदैव सुख मिलता है—यदि उस स्वाधीनता का दुरुपयोग न किया जाय। विश्वनाथ और उनकी पत्नी ने अभी तक उसका दुरुपयोग किया या नहीं, इसके संबंध में अभी कुछ नहीं कहा जा सकता। कभी-कभी कारण और कार्य के मध्य बहुत अंतर हो जाता है। इस समय केवल इतना कहा जा सकता है कि उनका जीवन बड़ा सुखी जीवन समझा जाता है। विश्वनाथ एक बैंक में नौकर हैं—अस्सी रुपए मासिक वेतन पाते हैं। उनके और उनकी पत्नी के अतिरिक्त घर में केवल उनके वृद्ध पिता हैं। इन तीन प्राणियों के अतिरिक्त घर में और कोई नहीं। उनके पिता को सरकार, उनकी पुरानी सेवाओं के पुरस्कार-स्वरूप, १०) रु० मासिक पेंशन देती है। इस प्रकार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

 Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

वह भोजन-वस्त्र से सुखी है—देखनेवाले भी समझते हैं कि वह सुखी है।

दूसरे दिन प्रातःकाल नियत समय पर छुट्टन विश्वनाथ के मकान पर पहुँचा। दरवाज़े पर एक कहार बैठा अपना नारियल पी रहा था। इस कहार की वयस अभी केवल १९-२० वर्ष की होगी। देखने में ख़ूब हृष्ट-पुष्ट था। गले में एक सोने का ताबीज़ पड़ा था, हाथों में चाँदी के कड़े। सफ़ेद धोती पहने था, और कंधे पर एक अँगौछा डाले था। सिर खुला हुआ था। सिर के बाल यथेष्ट काले, चिकने तथा चमकदार थे। जान पड़ता था कि नित्य तैल लगाने की आदत है। आँखों में सुर्मा भी लगा था, और कान में इत्र का फ़ाहा भी रक्खा हुआ था। उससे छुट्टन ने पूछा—"बाबूजी घर में हैं?"

कहार ने पूछा—"कौन बाबूजी?"

छुट्टन—"अरे यही-यही, विश्वनाथ बाबू।"

कहार—"नहीं हैं।"

छुट्टन—"कहाँ गए हैं?"

कहार—"हम क्या जानें, कहाँ गए हैं। हम क्या उनके पीछे-पीछे फिरते हैं?"

छुट्टन कहार को खड़ी बोली बोलते देख और उसकी बात सुनकर कुछ क्षणों के लिये अवाक् हो गया। कहार के धृष्टता-पूर्ण व्यवहार से उसे यह भय हुआ कि अधिक बातचीत करने से कहीं वह गर्दन में हाथ न दे बैठे। यह सोच-समझकर उसने नम्रता-पूर्वक पूछा—"क्यों भैया, यह बता सकते हो कि वह कब मिलेंगे? बड़ा ज़रूरी काम है—इसीलिये इतनी पूछ-ताछ करते हैं, ख़फ़ा न होना।"

कहार उसी प्रकार धृष्टता-पूर्वक बोला—"ख़फ़ा होने की कौन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बात है ? हम ठीक नहीं बताय सकते हैं कि बाबूजी कब आवेंगे— अब तो सायद संझै का आवैं।"

छुट्टन—"अच्छी बात है। भैया, इतना और करना—उनसे कह देना कि छुट्टन आया था।"

कहार—"कह देंगे।"

छुट्टन के जाने के कुछ देर पश्चात् वह कहार अंदर गया। नौ बज चुके थे। विश्वनाथ बैंक जाने के लिये तैयार हो रहे थे। कहार ने जाकर कहा—"बाबूजी, वह मियाँ आए रहे—सो जैसा आपने कहा था, वह कह दिया।"

विश्वनाथ—"बहुत अच्छा किया।"

इसके पश्चात् विश्वनाथ बैंक चले गए।

शाम को बैंक से लौटने पर विश्वनाथ ने शौच इत्यादि से निवृत्त होकर भोजन किया, और इसके पश्चात् साढ़े छ के लगभग घर से निकले। पहले जी में आया कि गोकुलप्रसाद को भी साथ ले लें, परंतु फिर यह सोचकर कि आरंभ में ऐसी जगह अकेले ही जाना चाहिए, वह अकेले ही चौक की ओर चले। वहाँ पहुँचकर वह उसी तँबोली की दूकान के सामने खड़े हो गए, और उससे चार पान लगाने के लिये कहा। पान खाकर वह धीरे-धीरे चले ही थे कि एक ओर से मियाँ छुट्टन प्रकट हुए। आज मियाँ छुट्टन ने कपड़े बदले थे। श्वेत पाजामा, श्वेत अचकन और पैरों में छोटे पंजे का गुरगाबी जूता। सिर के पट्टे भी आज खूब परिष्कृत थे। मालूम होता था कि आज उनकी भेंट तैल तथा कंघी से हुई है। सुफेदार दोपल्ली टोपी, जो कठिनता से छ-सात अंगुल लंबी और तीन-चार अंगुल चौड़ी थी, पिन की सहायता से बालों में अटकाए हुए थे। कद भी मियाँ छुट्टन का ईश्वर की दया से सवा चार फ़ीट से अधिक न था। दुबले-पतले भी काफ़ी थे। इस प्रकार मियाँ छुट्टन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तमाशबीनों और ऐयाशों के खिलौना बने हुए उदय हुए। विश्वनाथ को देखते ही मियाँ की बाछें खिल गईं। लपककर उनके पास पहुँचे, और दस क़दम से ही मुस्किराते हुए बहुत झुककर सलाम किया। विश्वनाथ ने सलाम के उत्तर में हाथ उठाया, और कुछ लापरवाही के साथ बोले—"छुट्टन मियाँ, आज तुम आए नहीं?"

छुट्टन मियाँ अपने दिल में सोचते आ रहे थे—"आज यों शिकायत करूँगा, यों बात बनाऊँगा, बाबू को इस तरह आड़े हाथों लूँगा कि हमको घर पर बुलाया, और ख़ुद ग़ायब हो गए।" इत्यादि-इत्यादि। परंतु जब विश्वनाथ ने उनके कुछ बोलने के पहले ही अपना रोब जमाया, तब मियाँ छुट्टन कुछ चकराए, परंतु ऊपर से उसी प्रकार मुस्किराते हुए बोले—"वाह हुज़ूर, अब ऐसा कहिएगा। मैं ठीक वक़्त पर दरे-दौलत पर जा पहुँचा था, मगर हुज़ूर न-जाने कहाँ निकल गए थे। मैं सोच रहा था कि सरकार से शिकायत करूँगा, मगर आप उल्टे मुझसे शिकायत कर रहे हैं, वल्लाह, मानता हूँ। अच्छी उल्टी गंगा बहाई।"

विश्वनाथ—"वाक़ई, क्या तुम गए थे?"

छुट्टन—"कलामे पाक की क़सम, मैं ठीक वक़्त पर पहुँच गया था।"

विश्वनाथ भ्रुकुटी चढ़ाकर बोले—"उस वक़्त क्या बजा होगा?"

छुट्टन—"अब मैं क्या बताऊँ, मेरे पास घड़ी तो थी नहीं। मगर अंदाज़ से आठ-साढ़े आठ बजा होगा।"

विश्वनाथ—"लाहौल विला! वह, अजीब आदमी हो! मैंने नौ बजे के बाद बुलाया था, और आप आठ ही बजे आ पहुँचे। और, फिर शिकायत करते हो कि मिले नहीं। मैं सुबह पौने आठ बजे के क़रीब एक दोस्त के यहाँ गया था, और ठीक नौ बजे घर आ गया था। बल्कि एक निहायत ज़रूरी काम छोड़के आया, महज़ (केवल) इसलिये कि तुम शिकायत न करो कि बात-बिलाफ़ी की।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अब मियाँ छुट्टन कुछ सिटपटाए। उन्हें यह तो ठीक-ठीक याद था नहीं कि बाबू ने किस समय पर बुलाया था। उन्होंने समझा था कि सुबह बुलाया है। अतएव आठ-साढ़े आठ बजे पहुँच गए थे। छुट्टन मियाँ को निरुत्तर देखकर विश्वनाथ बोले—"अब आपकी समझ में आया। आपने सख़्त ग़लती की। अगर जल्दी पहुँच गए थे, तो कुछ देर इंतज़ार कर लेते।"

मियाँ छुट्टन झल्लाकर बोले—"उस मरदूद आपके कहार ने कहा कि उनका कोई ठीक नहीं, न-जाने कब आवें। मआज़ अल्लाह! ऐसा गुस्ताख़ तो कहार ही नहीं देखा। मुझे तो उसकी सूरत से नफ़रत हो गई। आपके मकान पर जाने का यह दूसरा मौक़ा था। पहले मरतबा तो एक बूढ़ा-सा आदमी बाहर मिल गया था, उस बेचारे ने निहायत शराफ़त से बातचीत की थी।"

विश्वनाथ—"वह मेरे वालिद हैं।"

छुट्टन—"वह आपके वालिद हैं? सुभान अल्लाह! क्या शीरीं-गुफ़्तार (मधुर-भाषी) आदमी हैं, जी ख़ुश हो गया। शरीफ़ व रज़ील कभी छिप ही नहीं सकता। कल बदनसीबी से उस ख़बीस से मुठभेड़ हो गई। निहायत बदतमीज़ आदमी है। रईसों के यहाँ रहने क़ाबिल नहीं। पहले तो उसका फ़िशन (फ़ैशन) ही देख-कर हैरत हुई—बिलकुल छैला बना हुआ था। सफ़ाई से रहने में हर्ज नहीं, मगर वह तो जनाब, माँग-चोटी, मिस्सी-सुर्मा सबसे लैस था।"

विश्वनाथ के मुख के भाव से यह स्पष्ट प्रतीत होता था कि उन्हें यह प्रसंग रुचिकर नहीं। उन्होंने एक बार कहा भी—"अजी, होगा भी, तुम्हें उससे क्या लेना है।"

मगर छुट्टन मियाँ तो कहार पर दिल से नाराज़ थे, अतएव बोले—"वाह हुज़ूर! लेना क्यों नहीं? जब आपसे इतनी मुहब्बत बढ़ती जाती है, तो अक्सर दुर-दौलत पर भी हाज़िरी बजानी पड़ेगी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह ठहरा बदतमीज़ और गुस्ताख़—अगर किसी रोज़ कोई बात बेकैंडे कर बैठा, तो वहाँ ख़ून हो जायगा। हुज़ूर, गो कि हम ग़रीब हैं, मगर आपकी जूतियों के तुफ़ैल से हमेशा रईसों की ही सोहबत (संगति) रही है। ख़िदमतगारों की तो हस्ती ही क्या है, हमसे कोई रईसज़ादा तक तो कभी नामुलायम बात कह नहीं सकता। ख़ैर, उसने मुझे तो कुछ कहा भी नहीं था, कहता, तो मज़ा भी चखा देता। मुझे उसकी गुफ़्तगू ही बुरी मालूम हुई। मैंने दरियाफ़्त किया कि बाबूजी कब तक आवेंगे? तो इस पर लाबकार कहता क्या है—'हम क्या बाबूजी के पीछे-पीछे फिरते हैं।' ज़रा इस ज़बान को तो मुलाहज़ा फ़र्माइए। हज़रत अपनी ज़बान में गुफ़्तगू ही नहीं करते, अरबी-फ़ारसी बोलते हैं।"

विश्वनाथ मुँह बनाकर बोले—"तुमने भी मियाँ कहाँ की दास्तान छेड़ दी। हटाओ भी इस झगड़े को। मैं उसे डाँट दूँगा। अब वह तुमसे कभी इस तरह पेश न आवेगा। ख़ैर, आज तो तुम मिले ही नहीं, इसमें मेरा क्या क़ुसूर?"

छुट्टन—"न मेरा क़ुसूर है—मैं तो गया ही था, और जो वह मनहूस आपका कहार ज़रा भलमनसाहत से पेश आता, तो मैं कुछ देर इंतज़ार भी कर लेता। मगर उस हरामुद्दहर ने तो बुलडाग की-सी आँखें दिखाईं। सारा क़ुसूर उसी का है।"

विश्वनाथ—"तो आज तो रुपए रह ही गए। मैंने रुपए बिकाजकर रक्खे—बैठा इंतज़ार करता रहा, क्या बताऊँ।"

छुट्टन—"इस बात को जाने दीजिए। बल्लाह, रूह पर सदमा होता है। ख़ुदा समझे उस काफ़िर से। ख़ैर, आप इस वक़्त साथ लेते आते।"

विश्वनाथ—"अब इतनी बड़ी रक़म यहाँ कहाँ बाँधे फिरता। ख़ैर, कल सही।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छुट्टन—"ऐहै ! तो क्या कल सबेरे-सबेरे फिर उसकी मनहूस सूरत देखनी पड़ेगी। ख़ुदा जानता है, आज तमाम दिन तबीयत को मलाल (रंज) रहा। ऐसे बर्ताव के कभी आदी (अभ्यस्त) नहीं—यहाँ तो जहाँ जाते हैं, लोग सर-आँखों पर लेते हैं। लेकिन ख़ुदा के वास्ते अब कल न कहीं चले जाइएगा।"

विश्वनाथ—"अच्छा, मैं बताऊँ, कल तुम घर पर मत आना, बैंक में आ जाना।"

छुट्टन—"किस वक्त ?"

विश्वनाथ—"यही कोई बारह बजे के क़रीब।"

छुट्टन—"बहुत बेहतर है। यह बहुत अच्छी बात आपने सोची।"

विश्वनाथ—"आओ, पान खाओ।"

यह कहकर विश्वनाथ छुट्टन मिर्ज़ा को साथ लेकर उसी तँबोली की दूकान पर पहुँचे, और पान बनवाकर खाए। पान खा चुकने पर छुट्टन ने पूछा—"अब किधर के इरादे हैं ?"

विश्वनाथ—"देखो जिधर मुँह उठ जाय।"

छुट्टन—"बेगम साहबा की तरफ़ चलिएगा ?"

विश्वनाथ मन-ही-मन प्रसन्न हो गए, परंतु ऊपर से मुँह बनाकर बोले—"इस वक़्त ?"

छुट्टन—"हाँ-हाँ, क्या हर्ज है !"

विश्वनाथ—"यह, मेरा इरादा तो यह था कि उनका काम करके जाता, तो बेहतर था ; यों उन्हें क्या मुँह दिखाऊँ—आज का वादा था, वह पूरा नहीं हुआ।"

छुट्टन—आप भी वल्लाह, क्या बातें करते हैं। वह तो इत्तफ़ाक़ से रह गया, वरना हो ही जाता। आप बिला ताम्मुल (निस्संकोच) चलिए। मैं सब बातें बता दूँगा। चलिए, आध घंटे बैठकर चले आइएगा—तबीयत बहल जायगी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ ने कहा—"अच्छा, चलो।"

दोनों बेगम साहबा के मकान की ओर चल दिए।

तेरहवाँ परिच्छेद

शंभूनाथ ने घर आकर सारा वृत्तांत माता से कहा। माता ने सब सुन-समझकर अश्रु-पूर्ण नेत्रों से कहा—"हाय! मैं क्या समझी थी, और क्या हो गया। मैंने सोचा था कि बड़े आदमी के यहाँ जाकर मेरा श्यामू ख़ूब पढ़े-लिखेगा, अच्छी बातें सीखेगा, सुख से रहे-सहेगा—मुझे क्या ख़बर थी कि वह उल्टा बिगड़ जायगा। यह सब उसी छत्तीसी के गुन हैं, उसी ने लाड़-प्यार दिखा-दिखाकर उसको ख़राब कर दिया। बड़े लाड़-प्यार दिखाती है—क्या ठीक है। ऐसे लाड़-प्यार तो सगी मा भी नहीं दिखाती। मैं होती, तो क्या ऐसा हो सकता था। वह लड़कों को पालना-पोसना क्या जाने—कभी लड़के रहे होते, तो जानती।"

शंभूनाथ ने कहा—"ख़ैर, जो होना था, हुआ। इन बातों से कोई लाभ नहीं। उस बेचारी ने तो उसे सब तरह का सुख दिया। हाँ, यह ग़लती ज़रूर की कि दाब में नहीं रक्खा। रहे बाबूजी, वह बेचारे वैसे तो बड़े समझदार हैं—बड़े सज्जन हैं, पर श्यामू के मामले में उन्होंने अपना कर्तव्य भली भाँति पूरा नहीं किया। यदि वह सब बातों की ओर पूर्ण रूप से ध्यान देते, तो ऐसा कदापि न होता। सयाने लड़कों की शिक्षा-दीक्षा का दायित्व अधिकतर पिता ही पर रहता है। ऐसी दशा में यदि पिता ही उदासीन रहे, तो काम कैसे चले?"

सुलोचना बोली—"अरे बेटा, यह सब कहने की बातें हैं। मा चाहती, तो सब कुछ कर सकती थी—बाप चाहे करता या न करता। तेरे बाप ने कौन तुझे पढ़ाया-लिखाया—वह तो सदा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विघन डालते रहे; पर मैंने जो ठीक समझा, वह किया—तेरे बाप की एक नहीं मानी। उसी का फल आज यह मिला कि तू रामजी की दया से पढ़-लिखकर चार पैसे कमाने लायक़ हो गया।"

माता की बातें सुनकर शंभूनाथ को, मातृ-स्नेह की बहुलता के कारण, रोमांच हो उठा। नेत्रों में स्नेह-वारि भर आया। उन्होंने गद्गद कंठ से कहा—"मा, तुम अपनी बात छोड़ दो, तुम्हारी-सी माताएँ संसार में कितनी हैं? तुम आदर्श माता हो। यदि तुम्हें शिक्षा मिली होती, तो तुम न-जाने क्या कर दिखातीं।"

पुत्र की बात सुनकर सुलोचना की आत्मा को सुख मिला। इस-लिये नहीं कि पुत्र ने उसकी प्रशंसा की थी, वरन् इसलिये कि पुत्र ने उसके परिश्रम का, उसकी सेवाओं का मूल्य समझा, उनकी क़द्र की। मनुष्य की सेवाओं की जब क़द्र की जाती है, उनका मूल्य समझा जाता है, तो उसे हार्दिक प्रसन्नता होती है—सच्चा सुख मिलता है।

माता ने कहा—"तो तू अब क्या करेगा?"

शंभूनाथ—"अभी संदेह-ही-संदेह है, निश्चय नहीं है। मैंने बाबूजी को वचन दिया है कि मैं उसके आचरणों का पता लगाने का प्रयत्न करूँगा।"

माता—"ज़रूर कर, वह तेरा छोटा भाई है। भगवान् जाने मैं उसे कभी न देती; पर केवल यह सोचकर कि वह सुख में रहेगा, अच्छा खायगा, अच्छा पहनेगा, अच्छी तरह पढ़-लिख जायगा—यही सब सोचकर दिया था। मुझे क्या ख़बर थी कि उसकी ऐसी आदतें हो जायँगी। बेटा, अब तू ही उसकी देख-भाल करनेवाला है। तेरे बाप तो कुछ करेंगे नहीं, वह करते, तो यह नौबत ही काहे को पहुँचती। अब तो करने-धरनेवाला तू ही है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ—"मैं—मैं उसको ठीक भी बना दूँगा—अभी मुझसे पाला नहीं पड़ा। मैं और मिज़ाज का आदमी हूँ।"

माता—"देखना बेटा, मार-पीट तो कुछ करना नहीं, वह भी सयाना हो गया है। हाँ, मुलायमत से समझाना-बुझाना।"

शंभूनाथ—"नहीं, मार-पीट का क्या काम? वह कुछ बच्चा थोड़ा ही है, जो मार-पीट से सँभल जायगा।"

शंभूनाथ कभी बिना कार्य चौक के अंदर नहीं जाते थे। परंतु अब उन्होंने निश्चय कर लिया कि वह भी एक बार नित्य चौक का चक्कर लगायँगे। उन्होंने अँगरेज़ी के जासूसी उपन्यास पढ़े थे, 'शरलाक होम्स'-माला की समस्त जासूसी कहानियाँ पढ़ी थीं, अतएव उन्होंने सोचा कि जब तक उनकी नौकरी का ठीक-ठाक न हो, तब तक वह यही करें। अपने पुस्तकों के ज्ञान से कुछ लाभ उठावें। उनका मुख्य उद्देश्य यह था कि वह पहले यह पता लगा लें कि श्यामनाथ कहाँ जाते हैं, किस समय जाते हैं, उनके साथ के आदमी कितने और कौन-कौन हैं।

शंभूनाथ को चौक जाते लगातार एक सप्ताह हो गया, परंतु अभी तक उन्हें श्यामनाथ के दर्शन एक दिन भी न हुए। वह सोचने लगे, कहीं बाबू साहब को ग़लत सूचना तो नहीं दी गई। संभव है, श्यामनाथ यहाँ न आकर अन्यत्र कहीं जाता हो।

एक दिन शंभूनाथ चौक से जा रहे थे। रात के आठ बज चुके थे। उनका नियम था कि चौक के एक सिरे से चलते थे और जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ाते हुए—मानो किसी बड़े ज़रूरी काम से जा रहे हों—दूसरे सिरे तक चले जाते थे। यद्यपि सिर नीचे झुकाए रहते थे, पर नीचे-ही-नीचे उनकी आँखें चारो ओर घूमती रहती थीं। इसी प्रकार दूसरी ओर से लौट आते थे। बस, केवल इतने ही पर उनकी जासूसी का अंत था। शरलाक होम्स का सारा ज्ञान वह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इतने ही में ख़र्च कर देते थे। प्रथम तो एक भले आदमी के लिये चौक में, रात के आठ बजे के पश्चात्, निकलना ही बड़े साहस का कार्य था—उस पर एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक दो चक्कर लगाना, यह तो ऐसा कार्य था, जिसे केवल शंभूनाथ ही कर सकते थे, और वह भी तब, जब कि वह अपनी समझ से, जासूसी के कार्य का ज्ञान रखते थे। परंतु जब एक सप्ताह बीत गया, और तब भी उनकी जासूसी असफल रही, तब वह समझे कि अभी उनका जासूसी कला का ज्ञान अपूर्ण है—अभी कुछ और पुस्तकें पढ़ने की आवश्यकता है।

एक दिन उन्होंने अपने एक मित्र से कहा—"यार राधाकृष्ण, एक बात के पीछे मैं बड़ा परेशान हूँ—तुम उस संबंध में कोई अच्छी सलाह दो।"

राधाकृष्ण ने कहा—"बोलो, क्या बात है?"

शंभूनाथ ने श्यामनाथ के संबंध की सब बातें बता दीं, और अपना उद्देश्य भी समझा दिया। सब सुन-समझकर राधाकृष्ण मुस्किराते हुए बोले—"तुमने जासूसी पुस्तकें वृथा ही पढ़ीं।"

शंभूनाथ—"क्यों?"

राधाकृष्ण—"तुम्हें तमीज़ ज़रा भी न आई। तुम यह चाहते हो कि श्यामनाथ तुम्हें किसी ज़ीने से चढ़ता-उतरता दिखाई पड़ जाय, और उतने ही समय में, जब कि आप चौक को अपनी चरण-रज से पवित्र करते हैं। क्यों, यही बात है न?"

शंभूनाथ—"हाँ, बात तो यही है। तुम क्या इसे असंभव समझते हो?"

राधाकृष्ण—"ख़ैर, असंभव तो नहीं समझता हूँ, पर व्यर्थ और अनुपयोगी अवश्य समझता हूँ। यह सभी हो सकता है, जब आप चौक में पधारें और जिस समय उस कमरे के सामने पहुँचें, जिसमें श्यामनाथ आता है, ठीक उसी समय श्यामनाथ या तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ऊपर जा रहा हो या नीचे आ रहा हो। यदि आप चार-पाँच मिनट पहले निकल गए या बाद को पहुँचे, तो कभी उनको नहीं देख सकते। क्यों, यही बात है न?"

शंभूनाथ—"हाँ, यही बात है।"

राधाकृष्ण—"तो ऐसा केवल संयोग से हो सकता है। आपको उनके आने-जाने का ठीक समय मालूम नहीं, आप तो केवल अनुमान के बल पर कार्य कर रहे हैं, ऐसी दशा में आपकी और उनकी भेंट केवल संयोग-वश ही हो सकती है।"

शंभूनाथ—"तो ऐसा संयोग कब आवेगा?"

राधाकृष्ण—"तुमने बी० ए० कैसे पास कर लिया, यह आश्चर्य है। संयोग का कोई समय निश्चित नहीं होता। आने को कल ही आ जाय, और न आवे, तो बरसों न आवे।"

शंभूनाथ—"हाँ, यह तो ठीक है। तो फिर क्या करना चाहिए?"

राधाकृष्ण—"ख़ाली पुस्तकें पढ़ने से जासूसी नहीं आती, अपनी बुद्धि, अपनी सूझ-बूझ मुख्य है। अगर तुम जल्दी सफलता चाहते हो, तो श्यामनाथ का पीछा करो। जब वह अपने घर से निकले, तुम उनके पीछे लग जाओ।"

शंभूनाथ—"हाँ, यह युक्ति तो कुछ अच्छी है।"

राधाकृष्ण—"केवल एक यही युक्ति है, दूसरी युक्ति ही नहीं। चोर को उसके पीछे लगकर पकड़ना चाहिए, वह पकड़ा भी तभी जाता है। यदि आप चाहें कि आप सड़क पर घूमते रहें, और वह स्वयं आपके पास आ जाय, तो यह असंभव है।"

शंभूनाथ—"न-जाने वह घर से कब निकलता है।"

राधाकृष्ण—"यह तो तुम सरलता-पूर्वक जान सकते हो, इसमें तो ज़रा भी कठिनाई नहीं है।"

शंभूनाथ—"हाँ, कठिनाई तो कुछ नहीं है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"तो बस, फिर ऐसा करो, देखो, आज ही तुम्हें सब बातों का पता लग जायगा।"

शंभूनाथ—"अच्छी बात है, परंतु मैं चाहता हूँ कि तुम भी मेरे साथ चलो।"

राधाकृष्ण—"चला चलूँगा। किस समय चलोगे?"

शंभूनाथ—"तुम ठीक छ बजे मेरे घर पर आ जाना।"

राधाकृष्ण—"अच्छी बात है। तब तक तुम एकआध डिटेक्टिव नावेल पढ़ डालना।"

यह बात राधाकृष्ण ने मुस्किराते हुए कही।

शंभूनाथ कुछ झेपकर बोले—"यार, पुस्तकें कुछ काम नहीं देतीं।"

राधाकृष्ण व्यंग्य-पूर्वक बोले—"यदि पुस्तकों में दी हुई घटनाओं की पुनरावृत्ति हो, तब तो कदाचित् आप अच्छा काम कर लें।"

शंभूनाथ चिढ़कर बोले—"अच्छा, अब बहुत बनाओ नहीं। किसी का पीछा करना बहुत साधारण बात है—यह आपने कोई बड़ी गूढ़ बात नहीं बताई, जिस पर आप इतना गर्व कर रहे हैं।"

राधाकृष्ण—"यही तो अफ़सोस है कि इतनी साधारण-सी बात भी आपके मस्तिष्क में नहीं आई।"

शंभूनाथ—"मैंने उस ओर कुछ ध्यान नहीं दिया—मैं चाहता था कि इस ढंग के कार्य हो जायँ, तो उत्तम है। किसी के पीछे-पीछे घूमना मुझे कम पसंद है।"

राधाकृष्ण—"तो फिर आप जासूसी का विचार छोड़ दीजिए। जासूसी की वर्णमाला यही है कि जिस पर संदेह हो, उसके पीछे गुप्त रूप से हो लीजिए। जहाँ वह जाय, वहीं आप भी जाइए। साथ न छोड़िए। बस, आपको उसके संबंध की अधिकांश बातें ज्ञात हो जायँगी।"

शंभूनाथ—"मुझे ये सब बातें मालूम हैं, आपके बताने की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आवश्यकता नहीं। अच्छा, तो आप ठीक समय पर आ जाइएगा, मैं चलता हूँ।"

यह कहकर शंभूनाथ राधाकृष्ण से विदा हुए।

शाम को ठीक समय पर राधाकृष्ण शंभूनाथ के मकान पर पहुँच गए। शंभूनाथ उनको लेकर बाबू व्रजमोहनलाल के घर की ओर चले। रास्ते में शंभूनाथ ने राधाकृष्ण से कहा—"मैं यह पता लगा लूँगा कि श्यामनाथ घर में है या नहीं। यदि होगा, तो हम दोनो कहीं छिप रहेंगे, और जब वह चलेगा, तो साथ हो लेंगे—क्यों न?"

राधाकृष्ण—"बिल्कुल ठीक!"

घर पहुँचकर शंभूनाथ ने एक नौकर से पूछा—"श्यामनाथ घर में हैं?"

नौकर—"हाँ, हैं, बुला दूँ।"

शंभूनाथ—"नहीं, बुलाने की कोई आवश्यकता नहीं। हाँ, यह बता सकते हो कि वह घूमने कब जायँगे?"

नौकर—"भोजन कर चुके हैं—अब थोड़ी देर में जाने ही वाले हैं।"

शंभूनाथ—"बस, यही पूछना था।"

यह कहकर शंभूनाथ वहाँ से चले। नौकर ने पूछा—"क्या उनसे कह दूँ कि शंभू बाबू आए थे?"

शंभूनाथ—"नहीं, कोई ज़रूरत नहीं। उनसे कोई ज़िक्र मत करना।"

यह कहकर शंभूनाथ राधाकृष्ण के सहित वहाँ से हट आए। अलग आकर शंभूनाथ ने कहा—"अब वह आने ही वाला है।"

राधाकृष्ण—"तो यहाँ मत खड़े हो, चलो उस गली के पास खड़े हों।"

दोनो वहाँ से हटकर पास ही एक गली के पास पहुँचे। उस गली के पास एक तँबोली की दूकान थी। दोनो उस दूकान के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पास आए। राधाकृष्ण ने झट जेब से दो पैसे निकालकर फेंके, और पान बनाने के लिये कहा। तँबोली उस समय अपनी लालटेन ठीक कर रहा था। अतएव वह बोला—"बाबूजी, ज़रा देर रुक जाइए, अभी देता हूँ।"

राधाकृष्ण—"कुछ परवा नहीं, तुम पहले अपना काम कर लो, हमें कोई जल्दी नहीं है।"

दोनो वहीं खड़े-खड़े बातें करने लगे। तँबोली ने लालटेन ठीक करने के पश्चात् हाथ साफ़ किए, और पान बनाने लगा। ठीक उसी समय शंभूनाथ ने कहा—"वह आ रहा है।"

राधाकृष्ण ने देखा, सामने से एक नवयुवक अच्छे कपड़े पहने, एक पतला बेंत हिलाता हुआ आ रहा है।

शंभूनाथ अपना मुँह दूसरी ओर करके खड़े हो गए। जब श्यामनाथ उनके पास से निकल गया, तब उन्होंने राधाकृष्ण से कहा—"हाँ, अब चलो।"

दोनो श्यामनाथ के पीछे-पीछे चले। इनको जाते देख तँबोली ने कहा—"बाबूजी, पान तो लिए जाइए।"

परंतु तँबोली की बात पर किसी ने ध्यान न दिया—दोनो श्यामनाथ के पीछे लपके हुए जा रहे थे।

श्यामनाथ इधर-उधर गलियों से होते हुए चौक पहुँचे। वहाँ पहले उन्होंने एक बढ़िया तँबोली के यहाँ पान खाए। शंभूनाथ और राधाकृष्ण ने भी उससे कुछ दूर पर एक तँबोली की दूकान पर खड़े होकर पान खाए। जब श्यामनाथ चले, तब ये दोनो भी चले।

इस समय यथेष्ट अँधेरा हो चुका था, और चिराग़ जल चुके थे। श्यामनाथ धीरे-धीरे टहलते हुए पहले चौक के दूसरे सिरे तक चले गए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ ने कहा—"बाग़ में बैठेगा जाकर क्या ?"

राधाकृष्ण—"देखो कहाँ जाता है।"

दूसरे सिरे पर पहुँचकर श्यामनाथ पुनः घूम पड़े। श्यामनाथ को लौटते देख ये दोनो एक गली में घुस गए। जब श्यामनाथ निकल गए, तब ये दोनो गली से निकलकर पुनः उनके पीछे चले। इस बार अधिक दूर नहीं चलना पड़ा। थोड़ी ही दूर चलकर श्यामनाथ एक पतली-सी गली में घुसे। उस गली से एक ज़ीना ऊपर को गया था। श्यामनाथ एक बार इधर-उधर देखकर उसी ज़ीने पर चढ़ गए।

राधाकृष्ण बोल उठे—"लीजिए, आपका काम हो गया। मेरी बदौलत इतनी जल्दी काम हुआ, नहीं तो अभी न-जाने कब तक टापते रहते।"

शंभूनाथ—"हाँ, इसमें तो संदेह नहीं। मगर अभी काम समाप्त नहीं हुआ।"

राधाकृष्ण—"क्यों ? बाक़ी क्या रह गया ?"

शंभूनाथ—"इसका यह काम छुड़ाना है।"

राधाकृष्ण मुँह बनाकर बोला—"यह काम जासूसी से संबंध नहीं रखता, इसका संबंध सुधार-योजना है। सुधार-योजना में अपने राम को कम दख़ल है।"

शंभूनाथ मुस्किराकर बोले—"सुधार-योजना की एक ही कही। तुम घबराओ नहीं, यह काम मेरा है।"

राधाकृष्ण—"पहले यह बताओ कि क्या करोगे ?"

शंभूनाथ—"पहले तो इसे किसी दिन यहाँ पकड़ना है।"

राधाकृष्ण—"यार, तुम पूरे काठ के उल्लू हो। किसी दिन के क्या मानी—आज ही पकड़ लो, ऐसा अवसर फिर कब मिलेगा ?"

शंभूनाथ—"आज नहीं। अब तो युक्ति मालूम हो गई है—अब क्या ? अब तो जब चाहेंगे, तब अवसर मिल जायगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"बौड़म हो, चलो, ऊपर चलो, अभी चलकर पकड़ लो, दो तमाचे मारो, सब काम ठीक हो जाय।"

शंभूनाथ—"बेवकूफ़ हो। वह बच्चा नहीं है, जो दो तमाचे मारो—उसे तो नम्रता-पूर्वक रास्ते पर लाना पड़ेगा।"

राधाकृष्ण—"नम्रता-पूर्वक तो वह रास्ते पर आ चुका।"

शंभूनाथ—"आवेगा क्यों नहीं, तुम देखते चलो।"

राधाकृष्ण—"देखना क्या, मैं तो सब समझे बैठा हूँ—जैसे पहले चौक का चक्कर काटा करते थे, वैसे अब भी करोगे—और तुमसे कुछ होना-हवाना नहीं है।"

शंभूनाथ—"मुझसे न होगा, तो तुम कहीं चले थोड़ा ही जाओगे—तुम अपनी युक्ति से काम करना।"

राधाकृष्ण—"कौन, मैं? अजी, राम भजो! मैं तो किसी के आनंद में विघ्न डालना घोर पाप समझता हूँ। यह भी एक प्रकार की हिंसा है।"

शंभूनाथ—"अच्छा! आप इसको भी हिंसा समझते हैं?"

राधाकृष्ण—"जिससे किसी की आत्मा अथवा शरीर को क्लेश पहुँचे, वही हिंसा है।"

शंभूनाथ—"इस हिसाब से तो अपराधी को दंड देना भी हिंसा है, बालकों की ताड़ना करना भी हिंसा है, डॉक्टर लोग चीर-फाड़ करते हैं, यह भी हिंसा है।"

राधाकृष्ण—"सब एक तरफ़ से हिंसा-ही-हिंसा है—यहाँ तक कि पढ़ना-लिखना भी हिंसा है।"

शंभूनाथ मुस्किराकर बोले—"अच्छा! यह कैसे?"

राधाकृष्ण—"पढ़ने-लिखने में अपने शरीर को कष्ट मिलता है—इसलिये यह भी हिंसा है।"

शंभूनाथ—"पढ़ने-लिखने में क्या कष्ट होता है?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"यार, हम जब लड़कपन में पढ़ने जाया करते थे, तो भगवान् जाने, हमारी आत्मा को क्लेश होता था। यदि उस क्लेश का अनुमान आप कर सकें, तो आपको कहना पड़े कि सचमुच बालकों को पाठशाला भेजना हिंसा है।"

शंभूनाथ यह बात सुनकर बहुत हँसे। बोले—"तुम तो हो मसख़रे। फ़िज़ूल बातें करते हो, चलो, अब चलें।"

राधाकृष्ण—"चलो, परंतु कहाँ चलोगे?"

शंभूनाथ—"अपने-अपने घर।"

राधाकृष्ण—"हमारी सलाह है कि हम-तुम भी किसी कमरे पर चलकर गाना सुनें।"

शंभूनाथ—(मुस्किराकर) "अच्छा, अब आपको भी शौक़ चर्राया। अच्छी बात है—श्रीगणेश कीजिए।"

राधाकृष्ण—"और तुम नहीं चलोगे?"

शंभूनाथ—"मैं तो नहीं जाऊँगा।"

राधाकृष्ण—"क्यों?"

शंभूनाथ—"इच्छा!"

राधाकृष्ण—"अरे यार, यह भी दुनिया की एक न्यामत है।"

शंभूनाथ—"दुआ करे।"

राधाकृष्ण—"मनुष्य को चाहिए कि संसार की सब न्यामतें प्राप्त करने की चेष्टा करे।"

शंभूनाथ हँस पड़े। तत्पश्चात् किंचित् गंभीर होकर बोले—"संसार के सब पदार्थ, सब सुख किसी भी मनुष्य को प्राप्त नहीं हो सकते। यह बात उतनी ही असंभव है, जितना सूर्य का पश्चिम में उदय होना। बड़े-बड़े नरेशों, साम्राज्य-पतियों, धन-कुबेरों, और पराक्रमियों को भी संसार के सब पदार्थ, सब सुख प्राप्त नहीं हुए। संसार में जिस प्रकार असंख्य मनुष्य, असंख्य पशु, असंख्य पक्षी और असंख्य

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अन्य चैतन्य तथा जड़ पदार्थ हैं, उसी प्रकार संसार के भोग, संसार की न्यामतें तथा संसार के सुख भी अनेक हैं, असंख्य हैं, अनंत हैं। इन अनंत सुखों को प्राप्त कर लेना किसी भी मनुष्य के लिये संभव नहीं।"

राधाकृष्ण—"सब न सही, पर जीवन में जितने अधिक सुख भोग लिए जायँ, उतना ही अच्छा है।"

शंभूनाथ—"ह, यदि संतुष्टि हो जाय, तो बुरा नहीं; परंतु ऐसा कभी होता नहीं। जितने ही अधिक संसार के सुख तथा भोग प्राप्त होते जायँगे, उतनी ही अधिक तृष्णा बढ़ती जायगी। ऐसी दशा में तुष्टि असंभव है।"

राधाकृष्ण—"अजी, जब मरने लगेंगे, तब यह सोचकर तो संतोष होगा कि संसार में जितने अधिक सुख भोग सकते थे, वे भोग लिए।"

शंभूनाथ हँसकर बोले—"हाँ, यदि ऐसा हो, तब न, परंतु ऐसे आदमी तो मरते समय यह सोचते हैं—अफ़सोस! अमुक पदार्थ तो हमें मिला ही नहीं, अमुक सुख से तो हम वंचित ही रह गए। क्या मिला—कुछ नहीं, जीवन व्यर्थ ही गया।"

राधाकृष्ण—"ऐसा जो सोचते हैं, वे बेवकूफ़ हैं।"

शंभूनाथ—"हाँ, हो सकते हैं, पर अधिकतर लोग ऐसा ही करते हैं।"

राधाकृष्ण—"तो मेरी समझ में श्रीमान् उन लोगों में से हैं, जो 'लेंगे, तो सब लेंगे, अन्यथा एक भी न लेंगे' का व्रत रखते हैं।"

शंभूनाथ—"नहीं, ऐसी बात तो नहीं है, हम तो उन लोगों में से हैं, जो लोग, जितना प्राप्त है, और जितना सरलता-पूर्वक प्राप्त होता रहता है, उसी से संतुष्ट हो जाते हैं।"

राधाकृष्ण—"सरलता-पूर्वक की एक ही कही। मुँह में ठपक पड़े,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबू साहब ने पत्नी से कहा—"इसका विवाह अभी मत करो। मुझे इसका चरित्र ठीक नहीं मालूम पड़ता। जब तक इसका चरित्र ठीक न हो जाय, तब तक विवाह करना पराई लड़की को संकट में डालना है।"

इस पर सावित्रीदेवी नयन-कटाक्ष चलाती हुई मंद मुसकान के सहित बोलीं—"जब ब्याह हो जायगा, तब सब बातें छूट जायँगी। घर में जब जी बहलाने का सामान नहीं होता, तब लोग बाहर जी बहलाते ही हैं। यह सब तुम्हारी भूल है। मैं न-जाने कितने दिनों से चिल्ला रही हूँ कि ब्याह कर दो। ब्याह हो जाता, तो आज तुम्हें उसके चाल-चलन पर संदेह करने का अवसर ही न मिलता। जोरू का मुँह देखकर लोग सब भूल जाते हैं।"

बाबू साहब किंचित् मुस्किराकर बोले—"तुम अपना अनुभव सब जगह जागू कर लेती हो। तुमने जैसे हमें भुला लिया, तुम समझती हो, उसी प्रकार सबके साथ होता होगा।"

सावित्री—"होता होगा क्या—होता ही है। जो औरत समझदार हो, चतुर हो, तो क्या मजाल, जो आदमी हाथ से बेहाथ हो जाय। फूहर और गँवार औरतों के ही आदमी हाथ से बेहाथ हो जाते हैं।"

बाबू साहब बोले—"अच्छा, तुम भी अपने को चतुर और समझदार समझती हो?"

सावित्रीदेवी—"अब यह तो तुम अपने ही जी से पूछो!"

यह कहकर सावित्रीदेवी ने एक मोहन मुस्कान-सहित पति की ओर देखा। किसी और बात के प्रसंग में सावित्रीदेवी की यह मोहन चेष्टा बाबू साहब को बहुत पसंद आती। परंतु इस अवसर पर वह अदा, पसंद आना तो दूर रहा, उल्टे बुरी लगी। प्रसंग-भ्रष्ट तथा अवसर-विरुद्ध प्रिय बात भी बुरी मालूम होती है, अप्रिय लगती

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है। बाबू साहब को पत्नी की मुस्कान व्यंग्य-पूर्ण प्रतीत हुई। बाबू साहब ने समझा कि उनकी पत्नी उनकी पत्नी-भक्ति का उपहास करती है। किस प्रकार? उसी प्रकार, जिस प्रकार एक बलवान् अपने से दबे हुए निर्बल का उपहास करता है। सावित्रीदेवी की यह धारणा कि बाबू साहब केवल उनकी (सावित्रीदेवी की) बुद्धिमत्ता तथा कौशल के कारण ही एक आज्ञाकारी तथा पत्नी-परायण पति बने हुए हैं—बाबू साहब को बुरी लगी। उनके प्रेम, उनके स्नेह, उनकी सज्जन प्रकृति का यह सम्मान, यह आदर, यह मूल्य! सावित्रीदेवी जितनी बुद्धिमान् तथा चतुर थीं, वह बाबू साहब भली भाँति जानते थे। ओह! संसार में भ्रांति का कैसा अटल राज्य है। इस भ्रांति के चक्कर में अधिकांश संसार है। यदि कुछ काल के लिये संसार पर से भ्रांति का पर्दा हट जाय, तो असंख्य मनुष्य, जो अपने को सुखी समझते हैं—घोर दुःख में फँस जायँ, जो अपने को दुःखी समझते हैं, वे उन्हें सुख-शांति मिल जाय, जो बुद्धिमान् तथा चतुर समझे जाते हैं, वे बुद्धि-हीन और भोंदू समझे जाने लगें, और अभी जिन्हें संसार बुद्धि-हीन तथा मूर्ख समझता है, वे बुद्धि तथा चातुर्य के भांडार बन जायँ।

बाबू साहब के हृदय में एक क्षण के लिये यह इच्छा उत्पन्न हुई कि अच्छा हो, यदि सावित्रीदेवी की यह भ्रांति दूर कर दी जाय। परंतु दूसरे ही क्षण उन्हें लोक-लाज, अपनी मान-मर्यादा, अपनी प्रतिष्ठा का ध्यान आया, दुष्कर्म के प्रति हृदयस्थ स्वाभाविक ग्लानि ने ज़ोर मारा, और पत्नी के प्रति उनका जो प्रेम तथा स्नेह था, उसकी हत्या का दृश्य आँखों के सामने फिर गया। इन सबके परिणाम-स्वरूप अपनी प्रियतमा पत्नी की दुखी तथा शोकातुर काल्पनिक मूर्ति भी दिखाई पड़ी। ये सब बातें ऐसी थीं, जिन्हें बाबू साहब की सज्जन प्रकृति कभी भी स्वीकार नहीं कर सकती थी। अतएव वह अपने इन विचारों पर स्वयं हँस पड़े।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सावित्रीदेवी बोलीं—"क्यों, अब पते की कही, तो हँसे।"

बाबू साहब—"बहुत पते की कही, क्या कहने हैं।"

सावित्री—"श्यामू के ब्याह की जल्दी करनी चाहिए।"

बाबू साहब—"कर दो, मुझे क्या—उल्टी-सुल्टी पड़ेगी, तो तुम्हें ही भुगतनी पड़ेगी।"

सावित्री—"मैं ही भुगत लूँगी। मेरा तो जनम ही भुगतने के लिये हुआ है।"

बाबू साहब ने एक दीर्घ निःश्वास लेकर कहा—"तुम्हें इसी में आनंद आता है—मैं क्या कहूँ। ख़ैर, मेरी ज़िंदगी तक तो कुछ नहीं, पर बाद को क्या होगा—यही चिंता है।"

सावित्री—"तुम जब देखो, ऐसी ही असुभ बातें सोचा करते हो—वाह!"

बाबू साहब—"सोचना ही पड़ता है—कोई अमर-फल खाकर तो दुनिया में आता नहीं।"

सावित्री—"अमर-फल खाकर नहीं आता, तो ऐसे मौत भी किसी के पीछे-पीछे नहीं फिरती। सबका समय है। जब समय आ जायगा, तो कोई बचा नहीं सकता; और समय के पहले कोई मार नहीं सकता। क्या जाने, तुम्हारे से पहले मैं ही मर जाऊँ। मनाती तो मैं रात-दिन यही रहती हूँ कि तुम्हारे सामने ही मेरी आँखें मिच जायँ। देखो, जो पिछले जनम के कुछ पुन्न होंगे, तब तो मेरी मनोकामना पूरी होगी—नहीं तो जैसी भगवान् की इच्छा—आदमी के बात की बस थोड़ा है।"

बाबू साहब—"हाँ, बस की बात होती, तो फिर क्या था।"

सावित्री—"तो श्यामू के ब्याह की जल्दी करो।"

बाबू साहब—"तो तुम विवाह करोगी ही; मानोगी नहीं।"

सावित्री—"कैसे मानूँ—अपने-पराए सब ताने देते हैं कि लड़का सयाना हो गया, अभी तक ब्याह नहीं हुआ।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबू साहब—"अच्छी बात है—माने देते हैं, तो करो। यह लड़कियों के लिये सुना करते थे, पर अब लड़कों के लिये भी सुनने में आ गया।"

सावित्री—"लड़का हो, चाहे लड़की, सभी के लिये कहा जाता है। इज़्ज़त-आबरूवाले की हर तरह मुश्किल है।"

इस बातचीत के पश्चात् दूसरे दिन शंभूनाथ बाबू साहब से मिले। बाबू साहब से उन्होंने कहा—"श्यामनाथ के बारे में मैंने पता लगाया। आपका जो विचार था, वह ठीक निकला।"

बाबू साहब—"ठीक निकला न ? मैं तो पहले ही जानता था, इस पर उसकी मा कहती है कि विवाह कर दो।"

शंभूनाथ—"निस्संदेह ऐसी दशा में विवाह तो हो जाना चाहिए।"

बाबू साहब—"क्या तुम भी समझते हो कि विवाह हो जाना चाहिए ?"

शंभूनाथ—"हाँ, यदि आप चाहते हैं कि वह सुधर जाय, तो आपको सबसे पहले उसका विवाह कर देना चाहिए। बिना विवाह किए उसका राह पर आना कठिन हो जायगा।"

बाबू साहब—"यह बात है ?"

शंभूनाथ—"आप स्वयं विचार लीजिए न ! जब तक कोई अन्य आकर्षण न होगा, तब तक वह इसे कदापि न छोड़ेगा।"

बाबू साहब—"परंतु कहीं ऐसा न हो कि पराई लड़की का गला कट जाय।"

शंभूनाथ—"जहाँ तक मेरा ख़याल है, वहाँ तक तो ऐसा न होगा—आगे उसका भाग्य। परंतु यह याद रखिए कि बिना उसकी पत्नी की सहायता के उसे राह पर लाना अत्यंत कठिन हो जायगा।"

बाबू साहब विचार-सागर में डूब गए। कुछ देर पश्चात् बोले—"अच्छी बात है, तुम्हारा कथन मुझे ठीक जान पड़ता है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ—"आप भी इस पर खूब विचार कर लीजिए। आप अनुभवी हैं, आपने संसार देखा है—मैं तो आपके सामने बच्चा हूँ।"

बाबू साहब—"मैंने सोच लिया—तुम्हारा ख़याल ठीक है। पहले उसका विवाह हो जाना चाहिए।"

श्यामनाथ का विवाह होना स्थिर हो गया, और बाबू साहब उसी दिन से उसके विवाह की चिंता में लग गए।

पंद्रहवाँ परिच्छेद

शाम के सात बज चुके हैं। विश्वनाथ तथा गोकुलप्रसाद चौक के सामनेवाले पार्क में एक बेंच पर बैठे बातें कर रहे हैं। विश्वनाथ कह रहे हैं—"यार, बिना श्यामनाथ को सम्मिलित किए काम न चलेगा।"

गोकुलप्रसाद—"क्यों?"

विश्वनाथ—"बिना उसे सम्मिलित किए रौप्य खंड कहाँ से आवेंगे? एक सप्ताह से अधिक हो गया। मैं अभी बेगम साहबा को चकमे दे रहा हूँ। वहाँ बातों का काम नहीं है—बिना रुपए के दाल न गलेगी।"

गोकुल—"आपके वह हथकंडे कहाँ गए?"

विश्वनाथ—"सब जगह हथकंडे काम नहीं देते। दूसरे, यह बात भी तो है कि आख़िर कुछ तो ख़र्च करना ही पड़ेगा। हमारी करामात इतनी है कि जहाँ रुपए का ख़र्च हो, वहाँ हम धेली-चार आने में ही काम निकाल लेंगे। इतना कहाँ का थोड़ा है।"

गोकुल—"बात तो उस्ताद, तब है, जब ख़ाली पान-तंबाकू से ही काम निकालो।"

विश्वनाथ—"वह भी हो जाता, अगर बीच में यह लुटन दुष्ट न होता। उसके मारे दाल नहीं गलती।"

गोकुल—"वह तो महाग़ावदी है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ—"गावदी मत समझना, बड़ा बना हुआ है।"

गोकुल—"उस पर तुम्हारा जादू काम नहीं कर सकता क्या?"

विश्वनाथ—"वह बड़ा काइयाँ—न-मालूम कितनों को चरा चुका है। उस पर जादू चलना मज़ाक़ नहीं है।"

गोकुल—"तो फिर श्यामनाथ को किसी दिन ले चलो।"

विश्वनाथ—"किसी दिन क्या, आज ही न चलो।"

गोकुल—"मगर श्यामनाथ कहाँ मिलेगा?"

विश्वनाथ—"बंदो के यहाँ अवश्य मिलेगा।"

गोकुल—"बंदो के यहाँ पहुँच जाने पर फिर भला वह वहाँ से हिलेगा?"

विश्वनाथ—"अरे, तुम देखो तो। वह तो भागते हुए चलेगा। उस लौंडे को बनाना कितनी बात है।"

गोकुल—"तो चलो, वहीं चलकर बैठें।"

विश्वनाथ—"चलो!"

यह परामर्श गाँठकर दोनो उठे, और टहलते हुए बंदीजान के कमरे पर पहुँचे। बंदीजान की माता उन्हें देखकर कुछ मुस्किराती हुई बोली—"आइए! बहुत दिनों में तशरीफ़ लाए।"

विश्वनाथ—हाँ; अब हम लोग यहाँ आकर करें क्या? बड़े आदमियों के सामने हमारी दाल कहाँ गल सकती है।"

बंदीजान की माता बोली—"हुज़ूर तो काँटों में घसीटते हैं। हमारे लिये तो आप भी बड़े ही हैं।"

विश्वनाथ ने इस बात पर कुछ ध्यान न देकर पूछा—"बंदो कहाँ है?"

बुढ़िया ने उत्तर दिया—"आज एक जगह नाच है, वहाँ जाना है। उसी के लिये तैयारी कर रही है, शायद खाना खाती होगी। (आवाज़ देकर) सलारू! ओ सलारू!"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भीतर से सलारू दौड़कर आया। वृद्धा ने पूछा—"बंदो क्या कर रही है ?"

सलारू—"खाना खा रही हैं।"

बुढ़िया—"बैठिए, अभी आती है।"

दोनो व्यक्ति गाव-तकियों के सहारे कालीन पर बैठ गए।

थोड़ी देर बाद गोकुलप्रसाद ने पूछा—"आज श्यामू बाबू नहीं आएँगे क्या ?"

वृद्धा—"ठीक नहीं कह सकती। उन्हें यह तो मालूम नहीं कि नाच में आना है, क्योंकि नाच की बातचीत आज दोपहर में ही पक्की हुई है, इसलिये आवेंगे ज़रूर ! अलबत्ता, अगर उन्हें भी कोई काम लग गया होगा, तो शायद न आवें।"

विश्वनाथ ने गोकुलप्रसाद के कान में कहा—"लो उस्ताद, यह अच्छा अवसर मिला। अब कहाँ जाता है।"

थोड़ी देर में बंदो भी आ पहुँची। उसके आते ही कमरा हिना की सुगंध से भर गया। बंदो ने आते ही कहा—"आदाब अर्ज़ ! आज यह किधर चाँद निकला ?"

विश्वनाथ—"चाँद तो अब इसी घर में निकलता है, और जा ही कहाँ सकता है ?"

बंदीजान खूँटी पर टँगा हुआ दुशाला उतारते हुए बोली—"अब तो सर्दी पड़ने लगी। जाओ अम्मा, तुम भी खाना खा लो—फिर चलना होगा।"

गोकुलप्रसाद—"आज कहाँ की तैयारियाँ हैं।"

बंदीजान दुशाला ओढ़कर उनके सामने बैठ गई, और पानदान सामने सरकाकर बोली—"नवाब उसमानअली के साहबज़ादे (पुत्र) की शादी है, महफ़िल होगी, उसी में जाना है।"

विश्वनाथ—"क्या अकेली हो ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बंदी—"नहीं, दो तायफ़े और हैं—भाँड भी हैं।"

विश्वनाथ—"तब तो ज़्यादा मेहनत न पड़ेगी।"

बुढ़िया उठते हुए बोली—"रईसों के यहाँ मेहनत का क्या काम? मुश्किल से एक-एक घंटा सबको मिलेगा।"

यह कहकर बुढ़िया खाना खाने चली गई।

गोकुल—"आज श्यामू बाबू नहीं आए?"

बंदी—"आते ही होंगे—उनके आने का वक़्त तो आ गया है।"

विश्वनाथ—"आजकल तो यहाँ रोज़ आते हैं?"

बंदी—"और नहीं, तो क्या आपकी तरह बेमुरौवत थोड़ा ही हैं कि कभी भूलकर भी इधर रुख़ नहीं करते—चाहे कोई मरे या जिए।"

गोकुल—"हाँ बी, अब तो हम बेमुरौवत हो ही जायँगे। मगर यह तो सोचो कि श्यामनाथ-सा मुरौवतदार मिला किसकी बदौलत!"

विश्वनाथ—"इससे इन्हें क्या मतलब! इनका तो काम शिकायत कर देना है। बस, जिसमें मालूम हो कि बड़ी मुहब्बत है। और ख़ुदा झूठ न बुलाए—कभी याद भी न करती होंगी।"

बंदीजान किंचित् लज्जित होकर बोली—"यह आपने ख़ूब कही—आपको याद न करने का सबब? आप हमारे दोस्त ही हैं, कुछ दुश्मन तो हैं नहीं।"

गोकुल—"अगर वाक़ई आप ऐसा समझती हैं, तो यह आपकी ऐन इनायत है।"

ठीक इसी समय ज़ीने पर किसी के आने का पद-शब्द सुनाई पड़ा। बंदीजान बोली—"श्यामू बाबू आ गए!"

कुछ ही क्षणों में श्यामू बाबू ऊपर आ गए, और इन दोनों को बैठे देख, मुस्किराते हुए बोले—"युगल-जोड़ी डटी है!"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ—"आप ही के इंतज़ार में बैठे हैं।"

श्यामू बाबू जूते उतारकर विश्वनाथ की बग़ल में बैठते हुए बोले—"फ़र्माइए, क्या हुक्म है?"

विश्वनाथ—"ठहरिए, ज़रा दम ले लीजिए।"

गोकुल—"आज यहाँ तो आप बैठने नहीं पायँगे—बंदीजान नाच में जा रही हैं।"

श्यामनाथ बंदीजान की ओर देखकर बोले—"क्यों, क्या वाक़ई?"

बंदीजान—"हाँ, नवाब उसमानअली के लड़के की शादी है, उन्हीं की महफ़िल में जाना है।"

श्यामू बाबू कुछ उदास होकर बोले—"अच्छी बात है!"

इसके पश्चात् विश्वनाथ से बोले—"तो चलिए! अब यहाँ बैठना व्यर्थ है।"

बंदी—"ऐ, तो दस-पाँच मिनट तो बैठिए—आते देर नहीं, और चलिए! पान-वान खा लीजिए, फिर जाइएगा—सलारू! ओ सलारू!"

श्यामनाथ—"क्यों, सलारू को क्यों बुलाती हो, पान मँगाओगी क्या?"

बंदी—"हाँ, क्या आप ले आए हैं?"

श्यामनाथ—"रोज़ लाता हूँ, तो आज न लाऊँगा?" यह कहकर श्यामू बाबू ने दो बीड़े विश्वनाथ तथा गोकुलप्रसाद के सामने रख दिए, और बोले—"खाइए!"

विश्वनाथ ने एक बीड़े में से दो पान निकालकर पहले बंदीजान की ओर बढ़ाए।

बंदीजान बोली—"आप खाइए, मैं तो अपने लिये बना रही हूँ।"

विश्वनाथ—"ख़ैर, इन्हें भी खा लीजिए।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बंदीजान ने तसलीम कहकर पान ले लिए।

इसके पश्चात् थोड़ी देर तक परस्पर हँसी-मज़ाक़ की बातें होती रहीं। इतनी देर में बुढ़िया भोजन करके आ गई, और बोली—"बंदो, लो अब तैयार हो जाओ। आठ बजे हैं—चलते-चलते बज हो जायगा, नौ बजे वहाँ पहुँच जाना है।"

यह सुनते ही विश्वनाथ बोले—"तो हम लोग भी चलें।"

यह कहकर वह उठ खड़े हुए, उनके साथ ही गोकुलप्रसाद तथा श्यामनाथ भी उठे। श्यामनाथ ने बंदीजान से कहा—"ज़रा दूसरे कमरे में चलो, तुमसे एक बात कहनी है। (विश्वनाथ से) ज़रा दो मिनट ठहर जाओ, अभी आता हूँ।"

यह कहकर श्यामनाथ बंदीजान का हाथ पकड़कर भीतर चले गए।

पाँच मिनट बाद वह बाहर आकर बोले—"चलिए!"

ज़ीने से उतरते हुए विश्वनाथ ने पूछा—"ऐसी कौन-सी आवश्यक बात थी?"

श्यामनाथ—"तुमसे मतलब?"

विश्वनाथ—"क्या कहा—हमसे मतलब? क्यों जनाब, अब हम लोग ग़ैर हो गए?"

श्यामनाथ हँसकर बोले—"अरे यार, तुम तो बड़ी जल्दी ख़फ़ा हो जाते हो। आवश्यक बात कोई नहीं थी, ओन्ली ए फ़्यू किसेज़, दैट्स ऑल!"

विश्वनाथ—"ओहो, आजकल तो बड़ा प्रेम है!"

सब लोग ज़ीने से उतरकर सड़क पर आ गए।

श्यामनाथ ने कहा—"अब किधर चलोगे?"

विश्वनाथ—"चलो, तुम्हें एक नई जगह ले चलें।"

श्यामनाथ—"यह सब व्यर्थ है—बंदीजान के सामने कोई दूसरी निगाह में नहीं चढ़ती।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ—"मूर्ख हो !"

गोकुल—"यह बंदीजान को ही अप्सरा समझे बैठे हैं।"

श्यामनाथ—"अजी, अप्सरा उसके सामने कौन चीज़ है—अप्सरा उसके पैरों की धूल भी नहीं हो सकती। ईश्वर जानता है, मैं तो उस पर तन-मन से न्योछावर हूँ। और वह भी मुझे जी-जान से चाहती है।"

श्यामनाथ की यह बात सुन विश्वनाथ ने किंचित् मुस्किराकर गोकुलप्रसाद की ओर देखा।

विश्वनाथ—"आओ, पान खा लें, फिर चलें।"

सबने एक तँबोली की दूकान से पान लिए, और पुनः चले।

विश्वनाथ ने कहा—"तुम्हें आज एक ऐसी जगह लिए चलते हैं कि वहाँ पहुँचकर बंदीजान को भूल जाओगे।"

श्यामनाथ—"चलने के लिये तो वहाँ ले चलोगे, चला चलूँगा, पर बंदीजान को भूलना असंभव है।"

गोकुल—"ख़ैर। घबराते क्यों हो, थोड़ी देर में पता लग जायगा।"

इसी प्रकार की बातें करते हुए सब लोग बेगम साहबा के मकान की ओर चले।

रास्ते में विश्वनाथ ने श्यामनाथ से पूछा—"तुम्हारे पास कुछ रुपए हैं ?"

श्यामनाथ—"हाँ, दस-बारह रुपए पड़े हैं।"

विश्वनाथ—"चार-पाँच मेरे पास हैं।"

गोकुल—"और चार-ही-पाँच मेरे पास भी हैं।"

विश्वनाथ—"तो बस ठीक है—बीस रुपए के लगभग हैं।"

ये बातें करते हुए तीनो व्यक्ति बेगम साहबा के द्वार पर पहुँच गए। द्वार बंद था, अतएव विश्वनाथ ने कुंडी खटखटाई। भीतर से किसी ने पूछा—"कौन है ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ ने कहा—"हम !"

"आपका नाम ?"

विश्वनाथ—"अरे, क्या छुट्टन मियाँ बोल रहे हैं ? अरे क्यों, दरवाज़ा खोलो—हम विश्वनाथ हैं।" द्वार तुरंत खुल गया। घर के भीतर के क्षीण प्रकाश में विश्वनाथ ने छुट्टन को देखकर कहा—"छुट्टन मियाँ, सलाम !"

छुट्टन—"सलाम सरकार, वल्ला, मैं तो घबरा गया कि या अल्लाह, कौन आया !"

विश्वनाथ—"तुमने मेरी आवाज़ नहीं पहचानी ?"

छुट्टन—"कुछ शुबहा-सा तो हुआ था, मगर ठीक तौर से पता न लगा। आइए, चलिए।"

तीनो आदमी जाकर उसी कमरे में बैठ गए, जिसमें एक बार पहले विश्वनाथ और गोकुलप्रसाद बैठे थे।

विश्वनाथ ने बैठते हुए छुट्टन से पूछा—"बेगम साहबा कहाँ हैं ?"

छुट्टन—"अंदर हैं, बुलाता हूँ।"

विश्वनाथ—"एक-दो मिनट बैठ जाओ, तुमसे दो-चार बातें अभी हैं।"

छुट्टन सामने बैठकर बोला—"फ़रमाइए !"

विश्वनाथ—"पहले यह बताओ कि बेगम साहबा रुपयों की बाबत तो कुछ नहीं पूछती थीं ?"

छुट्टन—"पूछती क्यों नहीं थीं, वह तो रोज़ तक़ाज़ा करती हैं।"

विश्वनाथ—"तो तुम क्या कहते हो ?"

छुट्टन—"मुझे ख़बर मिली थी कि आप बाहर गए हुए हैं, वही मैंने कह दिया था।"

विश्वनाथ—"हाँ, मैं बाहर गया हुआ था, आज सुबह वापस आया हूँ। अच्छा, तो एक बात है, पहले उसका जवाब दो।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छुट्टन—"फ़र्माइए! इंशा अल्लाह, जवाब बामुलाहज़ा (उचित उत्तर) मिलेगा।"

विश्वनाथ—"बात यह है कि अगर बेगम साहबा वाक़ई हमसे मदद चाहती हैं और हमको अपना ख़ैरख़्वाह समझती हैं, तो वह पर्दा दूर हो जाना चाहिए। आख़िर हमको कैसे मालूम हो कि बेगम साहबा हम पर एतबार करती हैं।"

छुट्टन श्यामनाथ की ओर देखकर कुछ संकोच-सा करने लगा। विश्वनाथ ने उसका तात्पर्य समझकर कहा—"इनसे मत डरो, यह कोई ग़ैर नहीं हैं, ग़ैर होते, तो हम अपने साथ इन्हें लाते ही क्यों। हम लोगों में सबसे ज़्यादा मालदार यही हैं, अगर कहीं बेगम साहबा से इनकी पट गई, तो इस घर में यह सोना बरसा देंगे।"

छुट्टन ने किंचित् विस्मय से श्यामनाथ को सिर से पैर तक देखा। श्यामनाथ भी अपनी प्रशंसा सुनकर अकड़ गए।"

छुट्टन—"आपकी सूरत से तो मैं आश्ना (परिचित) हूँ, कई बार चौक में देखा है।"

विश्वनाथ—"इनका नाम श्यामनाथ है।"

छुट्टन—"बेहतर है, मैं इसका ज़िक्र बेगम साहबा से करूँगा।"

विश्वनाथ—"करूँगा चे मानी दारद? ख़ासे रहे! अभी जाकर कहो मियाँ, आज हम लोग बिना यह पर्दा दूर कराए न जायँगे।"

छुट्टन—"आप तो बड़ी उजलत (जल्दी) करते हैं। बिना बेगम साहबा से दरियाफ़्त किए और उन्हें सोचने-समझने का मौक़ा दिए.....।"

विश्वनाथ बीच ही में बोल उठे—"यार, क्यों हम लोगों को बेवक़ूफ़ बनाते हो। तुम जैसा उन्हें समझा दोगे, समझ जायँगी। भगवान् जाने, अगर आज तुम यह कर दो, तो तुम्हारा मुँह मीठा करा दें।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ बोल उठे—"आदाब अर्ज़ करता हूँ!"

छुट्टन—"अजी, यह कौन बात है। ख़ुदा आपको सलामत रक्खे—आपकी बदौलत रोज़ ही मुँह मीठा होता रहता है।"

विश्वनाथ—"बातें तो बनाओ नहीं—जो हम कहते हैं, वह करो।"

छुट्टन दाँत निकालकर बोला—"हुज़ूर ने मुझे अजीब मख़मसे (परेशानी) में डाल दिया। ख़ैर, देखिए कोशिश करता हूँ।"

यह कहकर छुट्टन उठा और घर के अंतःपुर में चला गया।

उनके जाते ही गोकुलप्रसाद ने विश्वनाथ से कहा—"क्या तुम्हें विश्वास है कि बेगम इस बात को स्वीकार कर लेंगी?"

विश्वनाथ—"स्वीकार न करेंगी, तो जायँगी कहाँ—रुपए लेने होंगे, तो झख मारेंगी और स्वीकार करेंगी।"

श्यामनाथ—"क्यों जी, क्या यह सचमुच की बेगम हैं।"

विश्वनाथ और गोकुलप्रसाद, दोनों हँस पड़े।

गोकुल ने कहा—"सचमुच की एक ही कही—सचमुच की नहीं, तो क्या मिट्टी की बनी हुई हैं!"

श्यामनाथ कुछ लज्जित होकर बोले—"नहीं, मेरा तात्पर्य यह है कि यह सत्य ही बेगम हैं अथवा केवल नाम रख लिया है।"

विश्वनाथ—"नहीं, मालूम तो बेगम ही होती हैं, मगर मुफ़्लिस हैं।"

गोकुलप्रसाद—"इन्हें वसीक़ा भी तो मिलता है।"

विश्वनाथ—"वसीक़े की न कहिए—वसीक़े की तो मिट्टी पलीद है। एक-एक, दो-दो रुपए मासिक तक वसीक़ा मिलता है। ख़ैर जी, अपने से क्या? चाहे बेगम हों, चाहे शाहज़ादी—हमें अपने काम से काम है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

थोड़ी देर बाद छुट्टन लौट आया। विश्वनाथ ने उससे पूछा—"कहो, मामला सर हुआ?"

छुट्टन—"नीम-राज़ी (अर्द्ध-सहमत) हो गई हैं।"

विश्वनाथ—"तो बस, राजी ही समझो।"

छुट्टन—"वैसे तो राज़ी होने में कोई बात नहीं, सिर्फ़ ज़रा बद-नामी को डरती हैं। आप जानिए, लाख कुछ हो, आख़िर हैं तो शरीफ़ज़ादी ही। वक़्त की बात है कि इतना दबना पड़ रहा है।"

विश्वनाथ गंभीर होकर बोले—"हाँ साहब, वह तो शरीफ़ज़ादी हैं, और हम लोग लुच्चे-लुँगाड़े हैं—क्यों न? शायद इसीलिये ख़ौफ़ खाती हैं।"

छुट्टन—"ऐ, वाह हुज़ूर, आप भी क्या बातें करते हैं। आपके शरीफ़ होने में जो शक लावे, वह काफ़िर। बात यह है कि हम लोगों में ग़ैर मर्दों के सामने नहीं आतीं। इसमें शराफ़त और ग़ैर शराफ़त की बात नहीं है।"

विश्वनाथ—"यह हमें मालूम है; मगर मुहब्बत और अपनापन भी तो कोई चीज़ है।"

छुट्टन—"आपका यह फ़रमाना बिल्कुल बजा व दुरुस्त है। मैंने भी इसी बात पर ज़ोर दिया था, तभी तो कुछ-कुछ राज़ी हुई हैं।"

विश्वनाथ—"तो बस इसी बात पर ज़ोर दिए जाओ, बस, मामला फ़तह है।"

छुट्टन—"देखिए, वह ख़ुद चिक के पास आती हैं, आप ख़ुद कह-सुन लीजिएगा। मैं भी ज़ोर लगा दूँगा। मुँह मीठा कराने का वादा आप कर ही चुके हैं।"

विश्वनाथ—"ज़रूर, उसमें फ़र्क़ न पड़ेगा।"

कुछ क्षणों पश्चात् चिक के पीछे से आवाज़ आई—"छुट्टन!"

छुट्टन—"हुज़ूर?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बेगम साहबा—"ख़ुश रहो, ख़ुदा सदूसी साल की उम्र करे।"

गोकुल—"मेरा मुजरा भी क़ुबूल हो।"

बेगम—"अल्लाह उम्र में तरक़्क़ी करे, जम-जम जियो। कहीं बाहर गए थे क्या?"

विश्वनाथ—"जी हाँ, एक ज़रूरी काम से चला गया था। मुझे अफ़सोस है कि बिला इत्तिला दिए चला गया। क्या करूँ, मौक़ा ही ऐसा आ पड़ा था।"

बेगम—"ख़ैर, इसका कोई हर्ज नहीं, मगर तशवीश (चिंता) ज़रूर हुई थी कि एकदम से कहाँ चले गए।"

विश्वनाथ—"जी हाँ, तशवीश तो ज़रूर हुई होगी।"

बेगम—"छुट्टन अभी कहता था कि बाबू कहते हैं कि हमसे पर्दा किया जाता है। यह बात हमें नागवार गुज़रती है। यह मैं जानती हूँ कि यह बात आप लोगों को नागवार ज़रूर लगती होगी, क्योंकि आप लोगों के यहाँ पर्दे की इतनी सख़्त क़ैद नहीं है।"

विश्वनाथ—"जी हाँ, हम लोग तो इतने ज़्यादा पर्दे को अपनी तौहीन का बायस (कारण) समझते हैं।"

बेगम—"ख़ुदा न करे, मेरी मंशा आप लोगों की तौहीन करने की नहीं है। मजबूरी सिर्फ़ इतनी है कि हमारे यहाँ यही रिवाज है।"

विश्वनाथ—"मेल, मुहब्बत और मुरौवत के सामने रिवाज की कोई क़ीमत नहीं। क्यों मियाँ छुट्टन?"

छुट्टन—"बिला शक! बात तो ऐसी ही है।"

बेगम—"मैं ख़ुद इस बात को महसूस करती हूँ, मगर.....।"

विश्वनाथ—"आप न-जाने क्यों हमसे ख़ौफ़ खाती हैं। हम लोग तो आप पर जान देने तक को तैयार हैं, और आप हम लोगों पर एतबार नहीं करतीं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बेगम—"ऐ, ऐसे अल्फ़ाज़ (शब्द) अपनी ज़ुबान से मत निकालो। तुम्हारा एतबार न करूँगी, तो फिर किसका एतबार करूँगी।"

छुट्टन—"बेगम साहबा को आप लोगों पर पूरा एतबार है, आप लोगों के पीठ-पीछे भी आपकी तारीफ़ करती हैं।"

बेगम—"छुट्टन से पूछिए, मैं आपका किस क़दर एतबार करती हूँ।"

विश्वनाथ—"यह तो हम जानते हैं, मगर हमें क्योंकर इतमीनान हो?"

छुट्टन बोल उठा—"बेगम साहबा, आप इन लोगों से किसी तरह का ख़ौफ़ न खावें। सब लोग शरीफ़ व रईस हैं, इन लोगों से कोई हरकत ऐसी नहीं हो सकती, जिससे किसी क़िस्म की बदआबरुई हो। इसका ज़िम्मा मैं लेता हूँ।"

बेगम—"यह तो बिल्कुल दुरुस्त है। मैं भी पर्दा फ़िज़ूल समझती हूँ, मगर दिल की हिचक नहीं जाती।"

विश्वनाथ—"अब इस हिचक को बालाए-ताक़ रखिए, और अगर यह नहीं करना है, तो हमें इजाज़त दीजिए। जिस आदमी को सूरत भी देखने को न मिले, उससे मेल-मुहब्बत करना फ़िज़ूल है।"

बेगम—"ए लो, आप तो नाराज़ हुए जाते हैं। अच्छा साहब, जैसी आपकी मर्ज़ी। ए यह लीजिए!" इतना कहकर बेगम साहबा एकदम चिक के बाहर आ गईं। तीनों व्यक्तियों की दृष्टि बेगम साहबा पर एक साथ पड़ी। बेगम साहबा इस समय हरी गुलबदन का पाजामा पहने थीं, और ऊपर से एक गुलाबी रंग का दुशाला, जो बहुत बारीक हो गया था, ओढ़े थीं। उनका वर्ण गौर और आँखें बड़ी-बड़ी थीं। मुख-मंडल देखने से वयस ३५ के लगभग प्रतीत होती

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

थी। बेगम साहबा को देखते ही विश्वनाथ ने उनको ओर गाव-तकिया सरका दिया, और कहा—"आइए, तशरीफ़ रखिए। हम आपकी इस इनायत का शुक्रिया अदा नहीं कर सकते।"

बेगम साहबा बैठ गईं। उनके मुख पर किंचित लज्जा का भाव विद्यमान था। उन्होंने श्यामनाथ की ओर ग़ौर से देखकर कहा—"आपकी तारीफ़?"

विश्वनाथ—"यह हमारे बड़े दोस्त हैं—बड़े रहंस आदमी हैं। नाम श्याम बाबू है।"

बेगम—"(गोकुलप्रसाद की ओर देखकर) और आपका नाम तो शायद गोकुल बाबू है।"

गोकुल—"जी हाँ, बंदे का ही नाम गोकुलप्रसाद है।"

उसी समय जिस द्वार से बेगम साहबा बाहर आई थीं, उसी द्वार के पीछे कुछ खुसुर-फुसुर सुनाई दी। उसे सुनकर बेगम साहबा बोलीं—"ऐ, चली आओ—अब पर्दा-वर्दा फ़िज़ूल है।"

यह सुनकर किसी ने धीमे स्वर में कहा—"तुम आगे चलो!"

दूसरी ने कहा—"तुम क्यों नहीं चलतीं?"

पहली—"वह, हमें तो शर्म लगती है।"

बेगम बोल उठीं—"ऐ, शर्म काहे की—चली आओ न।"

यह सुनकर फिर किसी ने कहा—"चलो न!"

दूसरी—"चल तो रही हूँ—ढकेलती क्यों हो।"

इसके पश्चात् दोनों युवतियाँ चिक के बाहर निकलीं, और बेगम साहबा के पास सिर झुकाकर बैठ गईं। उनके बाहर आते ही तीनों व्यक्ति आँखें फाड़-फाड़कर उन्हीं की ओर देखने लगे।

विश्वनाथ बोले—"ये तो अज़हद शर्माती हैं।"

बेगम—"बात यह है कि कभी बामहरमों (पर-पुरुषों) के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सामने आने का इत्तफ़ाक नहीं होता—इस वजह से शर्माती है। आहिस्ता-आहिस्ता शर्म खुल जायगी।"

विश्वनाथ—"इनका नाम क्या है?"

बेगम—"बड़ी का नाम क़मरुन्निसा है और छोटी का नाम मन्नुन्निसा!"

विश्वनाथ—"आप दोनो के मिज़ाज तो अच्छे हैं?"

दोनो ने नीचे सिर झुकाए हुए एक उत्तर दिया—"आपकी इनायत है।"

श्यामनाथ ने ध्यान-पूर्वक दोनो को देखा। मन-ही-मन उन्होंने बंदीजान से उनकी तुलना की। इसमें संदेह नहीं कि बंदीजान भी बड़ी सुंदर थी, परंतु उसकी सुंदरता और इन दोनो की सुंदरता में आकाश-पाताल का अंतर था। बंदीजान की सुंदरता में कर्कशता थी, इन दोनो के सौंदर्य में माधुर्य था। बंदीजान के मुख पर धृष्टता तथा निर्लज्जता का भाव था, इन दोनो के मुख पर शिष्टता तथा सलज्जता का भाव था। बंदीजान के मुख पर चतुरता थी, इनके मुख पर भोलापन था। बंदीजान के सौंदर्य में बनावट अधिक थी, इनके सौंदर्य में सादगी थी। श्यामनाथ यद्यपि इस सूक्ष्म अंतर को पूर्णतया नहीं समझ सके, परंतु उन्हें इतना अवश्य ज्ञात हो गया कि इन दोनो का सौंदर्य बंदीजान के सौंदर्य से अधिक आकर्षक है। विश्वनाथ और गोकुलप्रसाद तो बेगम से भी बातें करते जाते थे और बीच-बीच में उन दोनो पर भी दृष्टिपात कर लेते थे, परंतु श्यामनाथ स्थिर दृष्टि से दोनो की ओर—विशेषतः छोटी की ओर देख रहे थे, क्योंकि बड़ी बहन से छोटी अधिक सुंदर थी। अनुभवी हृदय पर प्रत्येक नवीन बात का गहरा प्रभाव पड़ता है, और इसी कारण वह नवीनता की ओर अधिक शीघ्रता-पूर्वक आकृष्ट हो जाता है। श्यामनाथ की भी यही दशा थी। वह इस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

समय बंदीजान को भूल गए थे। दोनो बहनें गुलाबी रंग का पाजामा पहने थीं, और नीले रंग की हल्की दुलाइयाँ ओढ़े थीं। नीले रंग के आवरण के मध्य उनका शुभ्र और वर्ण शुभ्र-मंडल, मेघों में चंद्रमा की भाँति, शोभायमान हो रहा था।

थोड़ी देर में बेगम ने कहा—"इनके लिये कुछ खाने-इलायची तो लाओ।"

यह सुनते ही छोटी लड़की उठकर भीतर चली गई, और थोड़ी देर पश्चात् एक तश्तरी में खाने तथा इलायची लेकर लौट आई। उसने तश्तरी लाकर सामने रख दी। तीनो व्यक्तियों ने खाने और इलायची खाई।

विश्वनाथ ने श्यामनाथ के कान में कुछ कहा—श्यामनाथ ने तुरंत जेब से दस रुपए निकालकर तश्तरी में रख दिए। इस समय श्यामनाथ की यह दशा थी कि यदि उनके पास सौ रुपए भी होते, तो वह सब-के-सब निकालकर रख देते।

बेगम ने रुपए देखकर कहा—"यह क्या?"

विश्वनाथ—"यह लड़कियों के पान खाने के लिये।"

बेगम कुछ लज्जित-सी होकर बोलीं—"यह तो आप ज़्यादती करते हैं। इसकी क्या ज़रूरत थी!"

विश्वनाथ—"आपको तो हम न कुछ दे सकते हैं और न देने के क़ाबिल ही हैं। रही लड़कियों की बात, तो उन्हें हम पान खाने को देते हैं। इसमें आपको कोई उज़्र न होना चाहिए। क्या हमारा इतना भी हक़ नहीं कि हम इन्हें कोई चीज़ दे सकें?"

बेगम—"नहीं, मेरा मतलब यह नहीं था—आपको सब तरह का हक़ हासिल है। मगर ज़रूरत क्या थी।"

विश्वनाथ—"ख़ुदा न करे, आपको ज़रूरत हो। मैं यह कब कहता हूँ कि आपको ज़रूरत है?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बेगम—"ख़ैर, जैसी आपकी मर्ज़ी। (खड़कियों से) ले जो बेग, और सबको सलाम करो।"

दोनो युवतियों ने किंचित् मुस्किराकर कहा—"तसलीम!"

इसके पश्चात् थोड़ी देर तक इधर-उधर की बातें होती रहीं, तदुपरांत विश्वनाथ ने बेगम से कहा—"अच्छा, तो अब इजाज़त दीजिए।"

बेगम—"कैसे कहूँ!"

विश्वनाथ उठ खड़े हुए। उनके साथ ही गोकुल तथा श्यामनाथ भी खड़े हो गए। बेगम भी उठीं, और बोलीं—"तो बाबूजी, उसका इंतज़ाम कब होगा? ख़ुदा जाने, हमें बड़ी ज़रूरत है, वरना इतना ज़ोर न देते। अगर आप न कर सकें, तो फिर कोई और इंतज़ाम किया जाय।"

विश्वनाथ—"आप भी कैसी बातें करती हैं। हम क्यों नहीं कर सकते? मामला ही कौन बड़ा है। मैं बाहर न चला गया होता, तो अब तक इंतज़ाम हो गया होता।"

बेगम—"ख़ैर, अब सही!"

विश्वनाथ—"हाँ, कल-परसों तक ज़रूर इंतज़ाम हो जायगा।"

बेगम—"बेहतर है।"

विश्वनाथ—"आदाब!"

बेगम—"जीते रहो, ख़ुदा इज़्ज़त करे। भूलना नहीं!"

विश्वनाथ—"अजी, तौबा करो, भूलना ये मानी दारद!"

चलते समय श्यामनाथ ने शम्सुन्निसा पर एक रहस्य-पूर्ण दृष्टि डाली—शम्सुन्निसा ने भी कुछ क्षणों तक श्यामनाथ की ओर स्थिर दृष्टि से देखा, और तत्पश्चात् लजाकर आँखें नीची कर लीं।

तीनो व्यक्ति बाहर आए। छुट्टन भी पीछे-पीछे आया। विश्वनाथ ने गोकुल के कान में कहा—"छुट्टन को दो रुपए दे दो।"

गोकुलप्रसाद ने दो रुपए निकालकर छुट्टन को दिए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छुट्टन—"ऐ हुज़ूर, फ़क़त दो रुपए !"

विश्वनाथ—"दो रुपए की मिठाई तो मियाँ तुम चार दिन तक खाओगे।"

छुट्टन हँसकर बोला—"तो क्या मैं अकेला थोड़ा ही खाऊँगा। तबहाख़ोरी (अकेले खाने) से ईंजानिब को नफ़रत है—यही तो मुझमें जौहर है।"

विश्वनाथ—"ख़ैर, आज यों ही सही, घबराते क्यों हो? यार ज़िंदा, सोहबत बाक़ी।"

छुट्टन—"जैसी हुज़ूर की मर्ज़ी, मैं तो ताबेदार हूँ। आदाब।"

यह कहकर छुट्टन ने भीतर से द्वार बंद कर लिया। तीनो व्यक्ति जब अकेले हुए, तो विश्वनाथ ने श्यामनाथ से पूछा—"क्यों हज़रत, कैसे मिज़ाज हैं?"

श्यामनाथ—"मिज़ाज क्या, तड़प रहा हूँ। उस्ताद, आज तो तुमने क़त्ल करा दिया। भगवान् जाने, तुम हमारे किस जन्म के शत्रु हो।"

विश्वनाथ—"और सुनिए—हम इनके शत्रु हैं। यह पुरस्कार मिला।"

गोकुल—"लौंडा है, बकने दो।"

श्यामनाथ—"दोस्त हो, तो हमारे ज़ख़्मी दिल का इलाज करो।"

विश्वनाथ—"घबराइए नहीं, वह भी हो जायगा; मगर पहले कुछ ख़र्च तो करो।"

श्यामनाथ—"उँह! ख़र्च की क्या परवाह है।"

विश्वनाथ—"इस समय बेगम को दो सौ रुपए की आवश्यकता है, तुम प्रबंध कर सकते हो?"

श्यामनाथ—"यदि शम्सुन्निसा अपने श्रीमुख से कहें, तो दो सौ क्या, दो हज़ार उन पर से न्योछावर करके फेंक दूँ।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ—"दो हज़ार लाओगे कहाँ से ?"

श्यामनाथ—"तुम्हें इससे क्या मतलब ? कहीं से लाऊँ !"

विश्वनाथ—"ख़ैर, इस समय दो सौ का तो प्रबंध करो। पहले बेगम साहबा की फ़र्माइश पूरी करो, क्योंकि वही मुद्दई हैं। विषा उन्हें प्रसन्न किए वहाँ धँसने भी न पाओगे।"

श्यामनाथ—"कब तक प्रबंध हो जाना चाहिए।"

विश्वनाथ—"तुम्हारे सामने ही तो परसों का वादा हुआ है।"

श्यामनाथ—"वादा किया तुमने, और प्रबंध मैं करूँ ?"

विश्वनाथ—"वह सब आप ही के लिये तो किया। अन्यथा मुझे क्या मतलब था।"

श्यामनाथ—"जी हाँ, आप तो संत हैं, केवल परोपकार करते हैं।"

विश्वनाथ—"ख़ैर, हम स्वार्थी ही सही ; परंतु इतना याद रखना कि बिना मेरी सहायता के आपकी दाल नहीं गलने पायगी।"

गोकुलप्रसाद—"भाई श्यामनाथ, इसकी गवाही तो मैं दे सकता हूँ कि इन्होंने यह सब अधिकांश रूप में तुम्हारे लिये ही किया है।"

श्यामनाथ—"यह तो मुझे विश्वास है—मैं तो केवल हँसी करता था। अच्छा, तो परसों तक रुपए का प्रबंध हो जायगा।"

विश्वनाथ—"अवश्य ?"

श्यामनाथ—"अवश्य !"

सोलहवाँ परिच्छेद

दोपहर का समय है। भोजन इत्यादि से निवृत्त होकर शंभूनाथ अपनी माता से वार्तालाप कर रहे हैं। कुछ देर तक इधर-उधर की बातें करने के पश्चात् शंभूनाथ बोले—"अम्मा, तुझसे एक बात

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आवश्यक बात कहनी है। अभी तक तो मैं उसे तुमसे गुप्त रखे रहा, परंतु अब बिना कहे नहीं बनता।"

माता बोलीं—"वह कौन-सी बात है, बेटा?"

शंभूनाथ—"अम्मा, श्यामनाथ तो हाथ से बेहाथ हो रहा है। मैंने पता लगा लिया—सारी बातें ठीक निकलीं। वह बहुत ही आवारा हो गया है—वेश्याओं के यहाँ आता-जाता है।"

यह सुनकर माता पर वज्रपात हुआ, बोलीं—"हैं! क्या बात सच निकली?"

शंभूनाथ—"मैंने स्वयं अपनी आँखों से उसे वेश्या के यहाँ जाते देखा है।"

माता—"तो क्या उसके बाबू को भी इस बात का पता है?"

शंभूनाथ—"मैंने उनसे बताया। उनको पूर्ण रूप से तो ज्ञात न था, परंतु संदेह था। उन्होंने यह बात मुझसे कही। मैंने जब पता लगाया, तो बात बिल्कुल ठीक निकली। मैंने तुमसे पहले यह बात कही थी।"

माता—"हाँ, कही थी; पर बाबू को संदेह कैसे हुआ था?"

शंभूनाथ—"अनुभवी आदमी हैं, संसार देखा है, उसकी दिनचर्या से समझ गए। रात को भोजन करके निकल जाता है, और ग्यारह-बारह बजे लौटकर आता है। इसी से उन्हें संदेह हुआ।"

माता—"तो उन्होंने उसे डाँटा नहीं कि इतनी देर करके क्यों आता है।"

शंभूनाथ—"वह डाँटें, तो सब कुछ; पर जब डाँटने भी पाएँ।"

माता—"क्यों, मना कौन करता है।"

शंभूनाथ—"उनकी पत्नी, वह तो उन्हें अपने सामने बोलने नहीं देतीं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

माता अपनी चिबुक पर उँगली रखकर बोली—"हे भगवान्! वह कैसे मरद हैं, जो घरवाली उन्हें डाँट लेती है।"

शंभूनाथ—"आदमी तो वह बहुत अच्छे हैं—बुद्धिमान्, अनुभवी, उदार, सहृदय—सब कुछ हैं, परंतु उनमें यह एक बहुत बड़ी कमज़ोरी है कि वह अपनी पत्नी के दास हैं।"

माता—"और वह भी कुछ नहीं कहती?"

शंभूनाथ—"वह क्या कहेंगी, उन्होंने तो बिगाड़ ही रक्खा है। उसे ख़ूब ख़र्च देती हैं, कोई बंधन है नहीं। जहाँ जी चाहता है, जाता है, और जब जी चाहे, घर आता है।"

माता—"वह तो चुड़ैल है, डायन है—मेरे लड़के को खा के छोड़ेगी। वह समझती है कि ऐसा करने से सब समझेंगे कि लड़के को बहुत चाहती है, पर यह चाहना नहीं है; यह दुश्मनी है।"

शंभूनाथ—"यह तो पूरी दुश्मनी है। ऐसा दुलार किस काम का। लड़के को तो डाँट-डपटके रखना चाहिए।"

माता—"मुहब्बत हो, ममता हो, तो डाँट-डपटके रक्खे! उस कलमुँही ने पैदा किया होता, नौ महीने पेट में लिए फिरती और पैदा होने की पीर सहती, तो उसे ममता होती। उसे ममता क्या होगी। वह तो उसे खिलौना समझती है। इसी मारे मेरा जी धड़कता था। मैंने तेरे बाप को कितना मना किया, पर वह न माने। उन्होंने मेरी कभी मानी नहीं। मैंने भी यह समझा कि चलो, अच्छा है, लड़के को सुख मिलेगा, अच्छी तरह रहेगा, अच्छा खाए-पहनेगा। यह सब सोच-समझकर मैंने छाती पर सिल रख ली, और अपना चाँद-सा बच्चा उस डायन को सौंप दिया। मैं क्या जानती थी कि यह दिन देखना पड़ेगा। ऐसा जानती, तो उसे लेके कुएँ में कूद पड़ती, पर तेरे बाप का कहना न मानती। हाय! मैंने बड़ा धोका खाया। मेरे लाल को मिट्टी में मिलाए दे रही है—सत्यानी कहीं की!"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इतना कहते-कहते सुलोचना का कंठ गद्गद हो गया, और वह मुँह ढाँपकर रोने लगी।

माता को दुःखी देखकर शंभूनाथ के भी नेत्र डबडबा उठे। उन्होंने कहा—"जो कुछ होना था, वह हो चुका। अब दुःखी होने से कोई लाभ नहीं।"

सुलोचना बोली—"दुःख कैसे न मानूँ। मेरा तो यह बात सुनके कलेजा चुचा आता है। कहीं उसे कोई रोग लग गया, तो उसकी तो जान पर आ बनेगी। उस निगोड़ी की क्या, वह तो पत्ता झाड़के अलग हो जायगी—कोई और ले लेगी; पर मैं दुखिया कहीं की न रहूँगी। वह मेरे पास नहीं आता, नहीं रहता—इसकी मुझे चिंता नहीं, पर मेरी ममता थोड़ी ही कम हो गई है। मैं यह थोड़ा ही सह सकती हूँ कि उसे कोई दुःख हो या वह बुरी संगत में पड़के अपने हाथों अपना नास मार ले।"

शंभूनाथ—"नहीं माताजी, तुम इसकी चिंता मत करो। वह अब अधिक नहीं बिगड़ने पायगा। मैं उसे ठीक रास्ते पर लाऊँगा। बाबू साहब ने भी मुझसे ऐसा करने को कहा है।"

सुलोचना कुछ विस्मित होकर बोली—"क्या कहा—तू उसे ठीक रास्ते पर लायगा?"

शंभूनाथ—"हाँ!"

सुलोचना—"कैसे?"

शंभूनाथ—"अब यह मत पूछो।"

सुलोचना—"क्या तुझे विश्वास है कि वह सुधर जायगा?"

शंभूनाथ—"हाँ, पूरा विश्वास है। सबसे पहले तो मैं उसका विवाह कराता हूँ। मैंने बाबू साहब से कह दिया है। अब उसका विवाह शीघ्र ही हो जायगा।"

सुलोचना कुछ प्रसन्न होकर आँसू पोंछते हुए बोली—"यह तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तूने अच्छी सोची। विवाह हो जायगा, तो बहू से कुछ मोह होगा ही। मैं भी यही आस लगाए बैठी हूँ कि उसके और तेरे लड़के-बालों का मुँह देखकर मरूँ। मुझे और तो कोई सुख मिला नहीं! इसी एक बात की आस पर जी रही हूँ। देखो, जो भगवान् ने चाहा, तो—पर यह नया सोच पीछे लगा। अब इसके मारे रोज़ घून सूखेगा।"

शंभूनाथ—"इसका सोच मत करो, ईश्वर चाहेगा, तो सब अच्छा ही होगा।"

सुलोचना—"तेरे मुँह में घी-सक्कर। अब तो मुझ नसीबा-जली का सहारा तू ही है। तेरे बाप से मुझे न कभी कोई आस रही, और न है। मेरा दुःख-सुख सुननेवाला तू ही है। लाख कुछ हो, श्यामू तेरा भाई है। तुझे उसका ध्यान रखना चाहिए।"

शंभूनाथ—"इसके कहने की कोई आवश्यकता नहीं। मैं स्वयं इस बात को समझता हूँ।"

सुलोचना—"हाँ-हाँ, समझेगा क्यों नहीं। क्या सदा नासमझ ही बोदा बना रहेगा। उसे एक दिन मेरे पास तो ला, मैं उसे समझाऊँ। वह तो मुझे भूल ही गया।"

शंभूनाथ—"अभी ठहर जाओ। भगवान् चाहेगा, तो वह स्वयं तुम्हारे पास आयगा।"

सुलोचना अपना पल्ला पसारकर तथा आकाश की ओर देखकर बोली—"हे भगवान्! मुझ दुखिया के ये ही दो लाल हैं, इन्हें तू जीता-जागता और सुखी रखना। मैं और कुछ नहीं माँगती। मुझे न धन चाहिए, न दौलत! मैं बस इतनी ही भीख माँगती हूँ।"

शंभूनाथ ने माता के मुख-मंडल को देखा। उस मुख-मंडल पर उस समय एक दैवी तेज था, एक स्वर्गीय ज्योति थी। वह, वह ज्योति थी, वह तेज था, जो एक माता के मुख पर होता है, चाहे वह माता राजरानी हो, चाहे भिखारिणी। शंभूनाथ उस तेजोमय मुख-मंडल को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS,MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

देखकर गद्गद हो गए, उनका मस्तक अपने आप ही उस दिव्य मूर्ति के सामने नत हो गया।

सत्रहवाँ परिच्छेद

रात के दस बज चुके हैं। चुन्नी अपने शयनागार में पड़ी हुई स्वामी के आने की बाट जोह रही है। क्षण-क्षण में वह कमरे में लगे हुए क्लॉक की ओर देखती है। इस समय उसे एक-एक क्षण एक-एक घंटे के समान प्रतीत होता है। कभी कोई पुस्तक लेकर पढ़ने लगती है, और जब उसमें जी नहीं लगता, तो उसे अलग रखके पुनः चिंता-सागर में गोते खाने लगती है। कभी उठकर टहलने लगती है। उसके मुख-मंडल पर कभी रोष, कभी दुःख, कभी आतुरता तथा चिंता के भाव आते और दो-चार क्षण पश्चात् विलीन हो जाते हैं। ज़रा-सा भी खटका होने पर वह चौंककर कमरे के प्रवेश-द्वार की ओर देखने लगती। कुछ क्षणों के लिये उसके मुख पर हल्की-सी मुस्किराहट दौड़ जाती है। परंतु जब उसे यह ज्ञात होता है कि वह अभी नहीं आए, तो उसका मुख-मंडल खिले हुए पुष्प की भाँति कुम्हला जाता है। कभी-कभी वह अपने ही आप कहने लगती है—"आज मेरी-उनकी लड़ाई होगी, कहाँ तक सबर करूँ, उनका तो नित्य यही हाल रहता है।" इसी प्रकार प्रतीक्षा करते-करते ग्यारह बजने का समय आ गया।

ठीक ग्यारह बजे मकान का मुख्य द्वार किसी ने खटखटाया। गोकुलप्रसाद का नौकर द्वार के निकट देहलीज़ में ही सोता था। उसने उठकर द्वार खोल दिया। गोकुलप्रसाद चुपचाप दबे-पैरों ज़ीने पर चढ़के अपने कमरे के प्रवेश-द्वार पर पहुँचे। चुन्नी तो जाग ही रही थी। उसने पति के पैरों की आहट पाते ही उठकर द्वार खोल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुलप्रसाद ने कमरे में पहुँचकर पहले प्रवेश-द्वार बंद किया, तत्पश्चात् कपड़े उतारकर खूँटी पर लटकाए, और पलंग पर बैठ गए। चुन्नी भी पलंग के पैताने चुपचाप सिर झुकाकर बैठ गई। गोकुल-प्रसाद ने देखा—पत्नी का मुख भारी है। उन्होंने सोचा, आज देर अधिक हो गई, इसी कारण यह मान है। थोड़ी देर चुप रहकर उन्होंने पूछा—"आज कैसा जी है?"

चुन्नी उसी प्रकार मस्तक नत किए हुए मृदु-स्वर में बोली—"तुम्हें मेरे जी से क्या मतलब?"

गोकुल—"क्यों, मतलब क्यों नहीं?"

चुन्नी—"मतलब होता, तो मैं अकेले आधी रात तक पड़ी तड़पती रहती?"

गोकुल—"आज कारण-वश इतनी देर हो गई।"

चुन्नी—"आज क्यों, नित्य ही इसी समय पर आते हो। रोज़ दस बज जाते हैं।"

गोकुल—"तो क्या तुम यह चाहती हो कि संध्या से ही घर में घुसकर बैठ रहा करूँ?"

चुन्नी—"यह मैं कब कहती हूँ।"

गोकुल—"मतलब तो तुम्हारा यही है।"

चुन्नी—"हाँ, या तो घर से निकलो ही नहीं, और जो निकलो, तो आधी रात को लौटो। मेरी समझ में तो ये दोनो बातें बुरी हैं। मैं तो यह समझती हूँ कि भले आदमी पाँच-छ बजे घूमने जाते हैं, और आठ-साढ़े आठ तक घर लौट आते हैं।"

गोकुल—"ओहो, तुम तो उपदेश देने लगीं।"

चुन्नी—"मैं बेचारी तुम्हें उपदेश क्या दूँगी। जी कुढ़ता है, तो कहे बिना नहीं रहा जाता।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुल—"यदि देर-सबेर हो ही जाय, तो इसमें इतना बुरा मानने की कौन-सी बात है।"

चुन्नी रुआंसी होकर बोली—"हूँ, तुम्हें क्या, तुम तो बाहर मौजें मारा करते हो—तुम्हें बुरी कैसे लगे? मेरी तरह एक दिन तुम्हें यहाँ बैठना पड़े, और मैं ग्यारह बजे घूमकर लौटूँ—तब तुम्हें पता लगे।"

गोकुल—"स्त्रियों का काम ही घर में बैठना है।"

चुन्नी—"और मर्दों का काम यह है कि घर में घरवाली पड़ी तड़पती रहे, और वह बाहर आनंद करते घूमें? क्यों?"

गोकुल—"मेरी समझ में नहीं आता कि इसमें तड़पने का क्या कारण है। आखिर घर ही में तो बैठी रहती हो; कुछ जंगल में तो बैठना नहीं पड़ता।"

चुन्नी—"सूना घर जंगल से भी अधिक हो जाता है। माजी, पिताजी इत्यादि सब सो जाते हैं—मैं ही अकेली यहाँ पड़ी तड़पा करती हूँ। नींद आती है, तो इस डर के मारे सो नहीं सकती कि कदाचित् तुम्हारे आने पर मेरी नींद न खुली, तो तुम्हें कष्ट होगा। द्वार कौन खोलेगा। अधिक खटका करने पर माताजी तथा पिताजी सुनेंगे, और व्यर्थ में बात बढ़ जायगी।"

गोकुल ने चुन्नी का हाथ पकड़ लिया, और उसे अपनी ओर घसीटते हुए बोले—"निस्संदेह, यह तुम्हारी बुद्धिमानी है, और इसके लिये मैं तुम्हारा कृतज्ञ हूँ।"

यह कहते हुए गोकुलप्रसाद ने चुन्नी को हृदय से लगा लिया, और उसके अश्रु सिक्त मुख को चूमकर बोले—"तुम बड़ी जल्दी रूठ जाती हो।"

चुन्नी पति के वक्ष-स्थल पर अपना सिर धरके बोली—"न-जाने भगवान् ने पुरुषों को इतना निष्ठुर क्यों बनाया, इनके हृदय में दया नाम-मात्र को भी नहीं होती। कोई मरे, चाहे जिए, इन्हें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

केवल अपने मनोरंजन से काम है। और, इधर यह दशा है कि ज़रा भी देर होती है, तो अनेक चिंताएँ होने लगती हैं कि न-जाने क्यों देर हुई, कहीं कोई दुर्घटना तो नहीं हो गई।"

गोकुल—"ये सब व्यर्थ बातें हैं। मैं कोई बच्चा तो हूँ नहीं, जो कोई बहका लेगा, या रास्ता भूल जाऊँगा।"

चुन्नी—"तो इतनी देर तक कहाँ घूमा करते हो?"

गोकुल—"घूमा कहाँ करता हूँ। थोड़ी देर बाग़ में बैठता हूँ, इसके पश्चात् किसी मित्र के यहाँ चला जाता हूँ—बस, वहीं बैठे-बैठे देर हो जाती है।"

चुन्नी—"तो जिनके यहाँ जाते हो, वे भी ग्यारह बजे तक जागते रहते हैं।"

गोकुल—"और नहीं तो क्या कोई शाम से ही सो रहता है?"

चुन्नी—"ऐसे कौन हैं, जो ग्यारह-ग्यारह बजे रात तक बैठे रहें। उनके घर में कोई कहने-सुननेवाला न होगा।"

गोकुल—"यह तुमने कैसे जाना? हमारे ही घर में क्या कहने-सुननेवालों की कमी है? परंतु कभी कोई कुछ कहता है?"

चुन्नी—"कहनेवाले तो बहुत कुछ हैं; पर उन्हें ख़बर ही नहीं लगती। यदि माताजी और पिताजी यह सुनें कि तुम नित्य ग्यारह-बारह बजे आते हो, तो वे अवश्य कहें।"

गोकुलप्रसाद पुनः चुन्नी के गुलाबी कपोलों को चूमकर बोले—"तुम्हें तो ख़बर रहती है।"

चुन्नी किंचित् मुस्किराकर बोली—"मुझे ख़बर होने से लाभ क्या होता है, तुम मेरी मानते हो?"

गोकुल—"तुम्हारी न मानूँगा, तो रहूँगा कहाँ?"

चुन्नी मुस्किराकर बोली—"बात बनानी ख़ूब आती है। ऐसे ही मीठी-मीठी बातें बनाके मर्द भोली-भाली स्त्रियों को भुला लेते हैं। [illegible],

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यह तो बताओ, क्या तुम्हें यह बात अच्छी लगती है कि मैं यहाँ अकेली पड़ी तड़पती रहूँ, और तुम दोस्तों में बैठकर गुलछर्रे उड़ाओ ?"

इस प्रश्न ने गोकुलप्रसाद को निरुत्तर कर दिया। न वह यह कह सकते थे कि हाँ, अच्छी लगती है, और न यह कहते बनता था कि 'नहीं अच्छी लगती'। क्योंकि 'नहीं अच्छी लगती' कहने पर फिर यह प्रश्न होता कि यदि अच्छी नहीं लगती, तो फिर ऐसी बात करते क्यों हो।

चुन्नी—"क्यों, चुप क्यों हो गए ?"

गोकुल—"चुप न हो जाऊँ, क्या करूँ ? तुम तो बाल की खाल निकालती हो। बात यह है कि मित्रों में बैठ जाने पर देर-सबेर हो ही जाती है। तुम घर के भीतर बैठनेवाली इन बातों को नहीं समझ सकतीं।"

चुन्नी—"ख़ैर, जो बात मेरी समझ में न आवे, वह तुम समझा दो—मैं मान लूँगी।"

गोकुल—"तो बस, तुम यह मान लो कि मैं स्वयं अपनी ओर से विलंब करके नहीं आता।"

चुन्नी—"कभी-कभी तो ऐसा हो सकता है कि देर हो जाय ; परंतु नित्य तो ऐसा तभी हो सकता है, जब तुम्हारी भी ऐसा करने की इच्छा हो।"

गोकुल—"अच्छा, तो तुम यह समझती हो कि मैं स्वयं देर करके आता हूँ।"

चुन्नी—"नहीं, मैं निश्चय-पूर्वक तो कुछ भी नहीं समझती, मैं तो केवल अपने विचार प्रकट करती हूँ।"

गोकुल—"तुम्हें ऐसे विचार हृदय में न लाने चाहिए।"

चुन्नी—"मैं कुछ अपनी ओर से तो ये विचार लाती नहीं हूँ। जब ऐसा अवसर आता है, तब विचार आते ही हैं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुल—"ख़ैर, ईश्वर ने चाहा, तो अब ऐसा अवसर न आवेगा कि तुम्हारे हृदय में ऐसे विचार आवें।"

चुन्नी हँसकर बोली—"इस समय कहते हो, सबेरा होते ही सब भूल जाओगे।"

गोकुल—"वाह! भूलना क्या कोई हँसी-खेल है? और, यदि मैं भूल भी जाऊँ, तो तुम याद दिला देना—अब तो संतोष हुआ?"

यह सुनकर चुन्नी ने मुख ऊपर उठाकर पति की ओर देखा। उसके नेत्रों से प्रेम बरस रहा था—रक्त-वर्ण ओठों पर मधुर मुस्कान नृत्य कर रही थी। उसने अपनी दोनों बाहें पति के गले में डाल दीं और संतोष तथा सुख की एक गहरी श्वास ली। गोकुल उस मोहन मुख-मंडल को देखकर सब कुछ भूल गए। इस समय उनके हृदय में केवल यह विचार था कि चुन्नी-सी अतुल सुंदरी उनकी अर्द्धांगिनी है—उनके लिये यह क्या कम सौभाग्य की बात है?

अठारहवाँ परिच्छेद

श्यामनाथ इस चिंता में पड़ गए कि दो सौ रुपयों का प्रबंध कैसे और कहाँ से करें। वह अपनी माता सावित्रीदेवी से, अनेकों प्रकार के बहाने करके, प्रति मास सौ-डेढ़ सौ रुपए हथिया लेते थे। बाबू ब्रजमोहनलाल जो कुछ देते थे, वह अलग रहा। बाबू ब्रजमोहनलाल कभी भी उन्हें चालीस-पचास रुपए से अधिक नहीं देते थे, और जब से उन्हें यह संदेह हो गया था कि श्यामनाथ वेश्या-गमन करता है, तब से उन्होंने इसमें भी कमी कर दी थी। और, जब शंभूनाथ द्वारा उन्हें यह पता लगा कि उनका संदेह ठीक निकला, तबसे उन्होंने और भी हाथ खींच लिया। अब उन्होंने श्यामनाथ को पंद्रह-बीस रुपए महीने से अधिक देना अनुचित समझा। अब श्री सावित्री-

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

देवी को भी उन्होंने मना कर दिया था कि श्यामनाथ को एक पैसा भी न दिया जाय।

परंतु इस बात का सावित्रीदेवी पर केवल इतना प्रभाव पड़ा कि अब वह आँख मूँदकर रुपए नहीं देती थीं। जब श्यामनाथ उनसे रुपए माँगता था, तब वह उससे पूछतीं—"रुपए क्या करोगे?" इस पर श्यामनाथ कोई बहाना कर देते थे। बहुधा सावित्रीदेवी श्यामनाथ पर विश्वास करके उन्हें रुपए दे देती थी। परंतु यदि कभी उन्होंने कह दिया—"अभी रुपए नहीं हैं।" तो इस पर श्यामनाथ बड़ा रूप लाते थे—भोजन नहीं करते थे, दिन-भर एकांत में पड़े रहते थे, न किसी से बोलते, न बात करते। अंत में सावित्रीदेवी श्यामनाथ का कोप-रूप देखकर डर जाती थीं, और रुपए दे देती थीं। इस प्रकार अनेक भाँति के छल-प्रपंच करके श्यामनाथ अब भी सवा सौ मासिक के लगभग लेते थे। इनमें से सत्तर-अस्सी रुपए मासिक तो वह बंदीजान की भेंट कर देते थे। शेष जो बचते थे, उनमें अपना पान-तंबाकू का ख़र्च चलाते थे। ऐसी दशा में एकमुश्त दो सौ रुपयों का प्रबंध करना श्यामनाथ के लिये असंभव-सा था। वह दिन-भर पड़े सोचते रहे कि किस युक्ति से दो सौ रुपए इकट्ठा करें। और कल ही तक इनका प्रबंध हो जाना चाहिए, क्योंकि कल ही का वादा है। यदि यह वादा पूरा न हुआ, तो बड़ी किरकिरी होगी। उनकी रईसी तथा अमीरी में बट्टा लग जायगा।

अंत में बहुत कुछ सोच-विचार करने पर उन्हें एक युक्ति सूझी। वह मुँह लटकाए हुए सावित्रीदेवी के पास पहुँचे, और बोले—"बहूजी, हमारा एक मित्र बेचारा बड़ी मुसीबत में है।"

सावित्रीदेवी बोलीं—"कैसी मुसीबत?"

श्यामनाथ—"उसके ऊपर एक व्यक्ति के दो सौ रुपए चाहिए। उस बेचारे के पास इस समय रुपए हैं नहीं। जिसके रुपए चाहिए,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह कहता है कि यदि कल तक रुपए नहीं मिल जायँगे, तो वह उन पर नालिश करके उन्हें जेलख़ाने में डलवा देगा।"

सावित्रीदेवी—"तो फिर ?"

श्यामनाथ—"वह मुझसे बोला—भाई श्यामनाथ, इस समय तुम मेरी सहायता करो, दो सौ रुपयों का प्रबंध कर दो। मैं शीघ्र ही तुम्हारे रुपए लौटा दूँगा। मैंने उससे यह कहा कि मैं चेष्टा करूँगा, यदि रुपए मिल गए, तो दे दूँगा। अब मैं इसी सोच में पड़ा हूँ कि क्या कहूँ, रुपए कहाँ से लाऊँ। है बेचारा बड़ा भला आदमी, मुझसे बड़ी मुहब्बत रखता है। मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि उसे सहायता दी जाय; पर मेरे पास इतने रुपए हैं नहीं।"

सावित्रीदेवी बोलीं—"दो सौ रुपए तो बहुत हैं, चालीस-पचास की बात होती, तो मैं दे देती। दो सौ रुपए तो मेरे पास हैं नहीं।"

श्यामनाथ—"तो बाबूजी से लेकर दे दो।"

सावित्री—"तू ही बाबूजी से क्यों नहीं कहता ?"

श्यामनाथ—"उनसे तो मैं कदापि नहीं कहूँगा। वह बात तो समझेंगे नहीं, उल्टे नाराज़ होने लगेंगे।"

सावित्री—"जब तू उन्हें समझा देगा, तो नाराज़ क्यों होंगे।"

श्यामनाथ—"प्रथम तो वह मेरी बात का विश्वास ही न करेंगे।"

सावित्री—"तो अपने उस मित्र को उनसे मिला देना, तब तो विश्वास करेंगे ?"

श्यामनाथ—"मेरा मित्र बाबूजी के पास कभी न आवेगा।"

सावित्री—"क्यों, आवेगा क्यों नहीं ?"

श्यामनाथ—"वह ऐसा-वैसा आदमी थोड़ा ही है, जो हरएक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से माँगता फिरे। मेरी-उसकी तो मित्रता है, इस कारण मुझसे उसने कहा। बाबूजी से तो उसकी मित्रता है नहीं।"

सावित्री—"तो बेटा, मैं इसमें क्या करूँ? मेरे पास रुपए होते, तो दे देती।"

श्यामनाथ—"बड़ी मुसीबत है! वह अपने जी में कहेगा कि इतने बड़े आदमी, और इनके पास दो सौ रुपए न निकले।"

सावित्री—"तू उससे साफ़-साफ़ कह देना कि भाई, चालीस-पचास रुपए की बात हो, तो मैं दे दूँ। दो सौ रुपए मेरे किए नहीं हो सकते।"

श्यामनाथ—"मेरा ऐसा कहने का साहस नहीं पड़ेगा।"

सावित्री—"क्यों?"

श्यामनाथ—"क्यों क्या? उससे इतनी गाढ़ी मित्रता है, उसने आज तक मुझसे कभी कुछ माँगा नहीं। अवसर पड़ा, तो मेरे लिये अपने पास से दस-पाँच रुपए खर्च कर देता रहा। अब आज उस पर मुसीबत पड़ी, तो मैं उससे यह कह दूँ कि मेरे पास रुपए नहीं हैं। यह बात मित्रता के विरुद्ध है। मुसीबत और विपत्ति पड़ने पर ही मित्र की परख होती है।"

सावित्री—"तो बेटा, जितनी जिसकी समाई है, वह उतनी ही सहायता तो कर सकता है। समाई के बाहर कौन करता है, मित्रता चाहे जितनी हो। तुम्हीं को आवश्यकता पड़ती और तुम उससे सौ-दो सौ माँग बैठते, तो क्या वह दे देता?"

श्यामनाथ—"इस समय तो वह स्वयं कंगाल है, इस समय कहाँ से दे सकता है। हाँ, यदि उसके पास होते, तो निश्चय दे देता।"

सावित्री—"तो तेरे पास भी तो नहीं हैं, होते, तो तू भी दे देता।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्यामनाथ—"मेरे पास न सही, मेरे मा-बाप के पास तो है।"

सावित्री—"मेरे पास तो हैं नहीं, अपने बाबूजी से तू कहना नहीं चाहता, फिर काम चले, तो कैसे। दूसरे, तेरे ब्याह की बातचीत हो रही है; भगवान् ने चाहा, तो अगले महीने ब्याह होगा—उसकी तैयारी भी करनी है। ब्याह में छ-सात हज़ार रुपया लगेगा। हमें उसकी चिंता भी तो है।"

श्यामनाथ—"तो जहाँ इतना ख़र्च होगा, वहाँ दो सौ और सही, समझ लेना कि विवाह में दो सौ अधिक ख़र्च हो गए।"

सावित्री—तो बेटा, पास भी तो हों, समझ तो सब कुछ लूँ।"

श्यामनाथ—"अच्छी बात है, न समझो।" यह कहकर श्यामनाथ क्रोध-पूर्ण मुद्रा बनाकर सावित्रीदेवी के सामने से चले आए। उस दिन वह दिन-भर अपने कमरे में पड़े रहे। संध्या-समय जब भोजन को बुलावा आया, तो कह दिया—"भूक नहीं है, भोजन नहीं करेंगे।"

यह सूचना पाकर सावित्रीदेवी उनके पास पहुँचीं, और उन्होंने पूछा—"क्यों बेटा, भोजन क्यों नहीं करोगे?"

श्यामनाथ बोले—"मेरा एक मित्र, जो मुझ पर प्राण देता है, वह तो विपत्ति में पड़ा हुआ है और मेरी सहायता की प्रतीक्षा कर रहा है, और मैं भोजन करूँ। यह कदापि नहीं हो सकता। जब तक उसके लिये दो सौ रुपयों का प्रबंध न कर लूँगा, तब तक अन्न ग्रहण नहीं करूँगा। यदि मैं अपने एक मित्र के संकट में उसके काम न आया, तो मुझे धिक्कार है। ऐसे जीने से मरना भला है।"

इतना कहते-कहते श्यामनाथ का कंठ गद्गद हो उठा, नेत्रों में आँसू भर आए।

सावित्री—"तू भी तो नित एक-न-एक ख़र्च खड़ा कर लेता है। रोज कोई कहाँ तक दे। दस-बीस रुपए की बात दूसरी है। जब तूने माँगे, तब मैंने सदा दे दिए। अब दो सौ रुपए कोई कहाँ से लावे?"

CC-0. In Public Domain. Funding by MoE-IKS

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्यामनाथ—"ख़ैर, नहीं दे सकतीं, तो अब मैं तुमसे माँगता भी तो नहीं।"

सावित्री—"तो फिर ब्यालू क्यों नहीं करता?"

श्यामनाथ—"यह मेरी इच्छा! मैंने प्रतिज्ञा की है कि जब तक रुपयों का प्रबंध न हो जायगा, तब तक अन्न ग्रहण न करूँगा।"

सावित्री—"आख़िर कहाँ से प्रबंध करेगा?"

श्यामनाथ—"कहीं से करूँ, तुमसे क्या मतलब, चाहे चोरी करूँ, चाहे डाका डालूँ। जब समय पड़ने पर मुझे सौ-दो सौ रुपए भी नहीं मिल सकते, तो मेरे इस घर में रहने से लाभ? रोटी-कपड़ा तो मुझे अपने घर में भी मिल सकता है।"

अपने घर से श्यामनाथ का तात्पर्य लाला घासीराम के घर से था। इस कथन से श्यामनाथ का यह तात्पर्य था कि सावित्रीदेवी के हृदय में यह भय उत्पन्न होगा कि कहीं यह फिर अपने असली माँ-बाप के पास न चला जाय।

श्यामनाथ ने जो सोचा था, हुआ भी वही। सावित्रीदेवी घबरा गईं। उन्होंने किंचित् दुःख-पूर्ण स्वर में कहा—"तो मैंने तुझे इसी लिये पाला था कि तू जब सयाना हो, तो हमें छोड़कर चला जाय?"

श्यामनाथ—"आख़िर करूँ क्या। यहाँ रहने से लाभ क्या? लोग समझते हैं कि मैं अमीरों-रईसों का लड़का हूँ, इस कारण वह मेरे साथ वैसा ही व्यवहार करते हैं। उसने जो दो सौ रुपए मुझसे माँगे, तो यही समझकर तो माँगे कि मैं अमीरों का लड़का हूँ और इतने रुपए दे सकता हूँ। परंतु यहाँ यह दशा है। इससे अच्छा यह है कि वहीं जाकर रहूँ। वहाँ रहने से लोग यह समझ लेंगे कि ग़रीब आदमी का लड़का है। अतएव वह कभी मुझसे माँगने-वाचने का साहस न करेंगे। इस प्रकार मेरे प्राण तो बचे रहेंगे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यहाँ रहने में तो कोरी शान-ही-शान है। इस शान में किसी दिन विष खाने की नौबत आ जायगी।"

दुखी होकर सावित्रीदेवी बोली—"तेरे मारे तो नाक में दम है, जब सोचेगा, तब उल्टी ही बात सोचेगा।"

श्यामनाथ—"मेरी तो आबरू पर पानी फिरा जा रहा है, और तुम मज़ाक़ समझती हो।"

सावित्री—"अच्छा, चल उठ, ब्यालू कर चलके, कल सबेरे रुपए मिल जायँगे। पर बेटा, तूने यह बात अच्छी नहीं कही कि अपने घर चला जाऊँगा। मैंने अपने आपा जला-जलाकर तुझे पाला, तेरे पीछे तेरे बाप-भाई के बर-भर का ख़र्चा उठाया—उसका बदला तू यह देता है कि मुझे छोड़कर चला जाने को तैयार है। मेरे प्यार का यही बदला है।" यह कहते-कहते सावित्रीदेवी के नेत्र अश्रु-पूर्ण हो गए।

श्यामनाथ उठकर सावित्रीदेवी से लिपट गया, और बोला—"मैंने भी तो अपने मा-बाप छोड़ दिए। बहू, जब जी दुखता है, तो ऐसी ही बातें निकलती हैं। जो तुम पहले ही रुपए देना स्वीकार कर लेतीं, तो मैं काहे को ऐसी बातें सोचता। और, सच बात तो यह है कि मैं तुम्हें छोड़कर कहीं जा सकता हूँ। मैं तो तुम्हीं को अपनी मा समझता हूँ। मैंने अपनी असली मा को तो कभी जाना ही नहीं। जो तुम हो, वह अब कोई नहीं हो सकता, यों क्रोध में चाहे जो कह दूँ।"

सावित्रीदेवी ने श्यामनाथ को हृदय से लगाकर कहा—"तुझे ऐसी बात नहीं कहनी थी—तेरी इस बात से मुझे बड़ा दुःख हुआ।"

श्यामनाथ—"अच्छा, अब कभी न कहूँगा। ग़ुस्से में मुँह से निकल गया। मुझे स्वयं इस बात का खेद है कि मैंने ऐसी भद्दी बात क्यों कही।"

सावित्री—"अब तो कभी न कहेगा?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्यामनाथ—"अब कभी न कहूँगा, क़सम खाता हूँ।"

यह सुनकर सावित्रीदेवी को संतोष हो गया, और वह श्यामनाथ को बड़े प्रेम-सहित ब्यालू कराने ले गईं।

उन्नीसवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन श्यामनाथ दो सौ रुपयों के नोट जेब में रखकर ठीक सात बजे विश्वनाथ के घर पर पहुँच गए। विश्वनाथ उन्हें देखकर बोले—"क्यों, रुपए लाए?"

श्यामनाथ—"लाए नहीं, तो क्या तुम्हारी तरह ज़बानी जमा-ख़र्च रखते हैं।"

विश्वनाथ—"ओहो! इस समय तो बड़ी अकड़ में हो।"

श्यामनाथ—"रुपए नहीं लाए हैं। तुम्हारे किए तो दो सौ सात जन्म में भी न होते।"

विश्वनाथ—"बात तो यार ठीक है। हमारी-तुम्हारी क्या बराबरी। तुम लखपती आदमी ठहरे।"

श्यामनाथ—"अच्छा, तो अब चलिए! बहुत बातें न बनाइए।"

विश्वनाथ—"गोकुलप्रसाद को भी आ जाने दो।"

श्यामनाथ—"उसका कौन ठीक, आवे, न आवे।"

विश्वनाथ—"वह! आवेगा क्यों नहीं।"

श्यामनाथ—"आने का समय तो हो गया, आता, तो अब तक आ जाता।"

विश्वनाथ—"आवेगा अवश्य, मुझसे वादा कर चुका है।"

श्यामनाथ—"अच्छी बात है, थोड़ी देर और देख लो।"

विश्वनाथ—"बंदीजान के यहाँ नहीं जाओगे?"

श्यामनाथ—"कल तो गया था।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ—"बंदीजान से भी उचाट हो गया क्या ?"

श्यामनाथ—"नहीं, उचाट तो नहीं हुआ, परंतु इस समय दूसरी ही धुन है।"

विश्वनाथ—"दो-चार दिवस में बंदीजान को बिल्कुल भूल जाओगे।"

श्यामनाथ—"बंदीजान को तो भूलना कठिन है। उससे मुझे कुछ प्रेम-सा हो गया है।"

विश्वनाथ व्यंग्य से बोले—"हाँ, प्रेम तो अवश्य हो गया होगा। प्रेम हो गया होता, तो शम्सुन्निसा के पीछे पागल न होते।"

श्यामनाथ—"इससे क्या होता है। इन बातों से प्रेम थोड़ा ही कम होता है। उसे भी तो मुझसे प्रेम है।"

विश्वनाथ श्यामनाथ की इस अनभिज्ञता पर मन-ही-मन हँसे। ये दोनो बातें कर ही रहे थे कि गोकुलप्रसाद भी आ पहुँचे। उन्हें देखते ही विश्वनाथ और श्यामनाथ उठ खड़े हुए। श्यामनाथ ने उनसे पूछा—"इतनी देर कहाँ लगाई ?"

गोकुलप्रसाद—"देर लगी तुम्हारी बहन के कारण। उसके मारे घर से निकलना आफ़त है !"

विश्वनाथ—"सच कहना, कहीं मार तो नहीं पड़ी।"

गोकुलप्रसाद—"वह बेचारी स्वयं मरी जा रही है, मुझे क्या मारेगी। यार, ईमान की बात तो यह है कि उसे अकेली छोड़के आने में जी दुखता है। छाती पर पत्थर रखकर आता हूँ।"

विश्वनाथ—"क्यों, छाती पर पत्थर रखने का क्या कारण ?"

गोकुल—"वह मुझसे इतना प्रेम करती है कि मुझे एक क्षण के लिये भी नहीं छोड़ना चाहती। मैं ज़बरदस्ती अनेक प्रकार के बहाने करके आता हूँ। अब, जब तक मैं नहीं जाऊँगा, तब तक वह बेचारी मेरी प्रतीक्षा में जागती रहेगी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ—"तब फिर क्यों आते हो ?"

गोकुल—"यह अपने बस की बात थोड़ा ही है । तुम बदमाशों ने ऐसे चक्कर में डाल रक्खा है कि बिना आए जी भी तो नहीं मानता ।"

गोकुलप्रसाद का वर्तालाप सुनकर एक क्षण के लिये श्यामनाथ के हृदय में यह विचार उत्पन्न हुआ कि गोकुल मेरी बहन के साथ कितना बड़ा विश्वासघात कर रहा है । और, मैं भी इसमें इसका साथी बना हुआ हूँ । यदि मेरी बहन यह सुने, तो उसकी क्या दशा हो !

वह यह सोच ही रहे थे कि विश्वनाथ ने कहा—"अच्छा, अब चलो, अधिक देर करना ठीक नहीं ।"

श्यामनाथ चौंक पड़े । जो विचार उनके हृदय में उठे थे, वे सब पुनः हृदय में ही विलीन हो गए । उन्होंने कहा—"चलो ।"

विश्वनाथ गोकुलप्रसाद से बोले—"तुम भी चलोगे ?"

गोकुल—"इसका क्या तात्पर्य ?"

विश्वनाथ—"तात्पर्य यह है कि हमारे साथ चलोगे या घर लौट जाओगे ।"

गोकुल—"घर लौट जाना होता, तो यहाँ आता ही क्यों ?"

विश्वनाथ—"मैंने समझा कि शायद यह कहने आए हो कि आज नहीं चल सकोगे ।"

गोकुल—"आज तो आप बिल्कुल चौंचपने की बातें कर रहे हैं ।"

विश्वनाथ—"आप ही अभी कह रहे थे कि छाती पर पत्थर रखकर आया हूँ, जी दुखता है । जब तुम्हें इतना कष्ट होता है, तो तुम्हें घर लौट जाना चाहिए ।"

गोकुल—"घर लौटनेवाले पर लानत भेजता हूँ । मैं तो तुमसे भी आगे चलूँगा ।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ—"तो फिर यह बहुरूपियापन क्यों करते हो ?"

गोकुल—"मन में जो विचार आए, वह तुम्हें बता दिए इसमें बहुरूपिएपन की कौन-सी बात है।"

विश्वनाथ—"जोरू के ग़ुलामों का हमारे साथ गुज़ारा होना कठिन है। हमारे साथ तो मर्दों का काम है।"

गोकुल—"आप भी अपने को मर्द समझते हैं ?"

विश्वनाथ—"हद्दे हैं! यहाँ तो आज तक कभी जोरू की परवाह ही नहीं की। जो अपने जी में आया, वह किया। क्या मजाल, जो कभी जोरू चूँ तक कर ले।"

श्यामनाथ—"अब यहीं लड़ते रहोगे या चलोगे ?"

गोकुल—"अच्छा भैया, तुम बड़े मर्द हो, मान लिया। अब चलोगे कि नहीं।"

विश्वनाथ—"हम तो चलेंगे ही, चलो!"

तीनों आदमी बेगम के मकान की ओर चले।

ठीक इसी समय शंभूनाथ और राधाकृष्ण पार्क में एक बेंच पर आकर बैठे। शंभूनाथ ने बैठने के दस मिनट पश्चात् कहा—"आज श्यामनाथ घर से इतना पहले क्यों चल दिया।"

राधाकृष्ण—"पता नहीं—कहीं जाना होगा।"

शंभूनाथ—"क्या किसी अन्य कार्य से ?"

राधाकृष्ण—"जो कुछ हो, यदि इधर नहीं आए, तो कहीं अन्यत्र अवश्य गए हैं। किस कार्य से गए ? इसके संबंध में कुछ नहीं कहा जा सकता।"

शंभूनाथ—"हूँ! तो अब घर चलना चाहिए।"

राधाकृष्ण अपनी 'रिस्ट वाच' देखकर बोले—"पौने आठ बजे हैं।"

शंभूनाथ—"ठीक है! पंद्रह मिनट रास्ते के हो गए, ठीक आठ बजे घर पहुँच जायँगे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"अच्छी बात है, चलो।"

दोनो उठकर चले। पार्क से निकलकर ये दोनो चौक के द्वार की ओर चले। द्वार के निकट पहुँचने पर हठात् शंभूनाथ ने ठिठुककर राधाकृष्ण से कहा—"श्यामनाथ तो यह जा रहा है।"

राधाकृष्ण ने देखा—श्यामनाथ दो अन्य आदमियों के साथ चौक का द्वार पार करके चौक में प्रवेश कर रहा है।

राधाकृष्ण ने शंभूनाथ से पूछा—"ये दो अन्य व्यक्ति कौन हैं?"

शंभूनाथ—"मैं भली भाँति देख नहीं सका।"

राधाकृष्ण—"इन दोनो को देखना चाहिए।"

शंभूनाथ—"ये लोग जा कहाँ रहे हैं?"

राधाकृष्ण—"जायँगे कहाँ, वहीं बंदीजान के घर जाते होंगे।"

शंभूनाथ—"जाने दो, आओ घर चलें।"

राधाकृष्ण—"देख तो लो।"

शंभूनाथ—"क्या देख लें?"

राधाकृष्ण—"पहले तो यह देख लो कि श्यामनाथ के दोनो साथी कौन हैं?"

शंभूनाथ प्रसन्नमुख होकर बोले—"ओ ठीक है, यह तो बड़ी आवश्यक बात है। मैं भूल कर रहा था। आओ चलें।"

यह कहकर शंभूनाथ लपके, राधाकृष्ण भी उनके साथ चले। श्यामनाथ और उनके दोनो साथी इन दोनो से लगभग पचास पग आगे जा रहे थे। परंतु इन दोनो ने अपनी द्रुत-गति से इस दूरी को शीघ्र ही कम कर दिया। शंभूनाथ लपककर श्यामनाथ इत्यादि से दस क़दम आगे निकल गए, और एक गली की आड़ में खड़े होकर उन्होंने श्यामनाथ और उनके साथियों पर दृष्टि डाली। दृष्टि पड़ते ही वह चौक पड़े, और उनके मुख से 'अरे' निकल गया। इतनी ही देर में श्यामनाथ और उनके दोनो मित्र पुनः उनसे आगे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

निकल गए। शंभूनाथ गली में पुनः सड़क पर आ गए। उसी समय राधाकृष्ण भी उनके पास पहुँच गए, और उन्होंने शंभूनाथ से पूछा—"क्यों, देखा।"

शंभूनाथ—"हाँ, देखा।"

राधाकृष्ण—"उनके दोनो साथी कौन हैं?"

शंभूनाथ—"एक को तो मैं पहचानता नहीं कि कौन है।"

राधाकृष्ण—"अच्छा, उसे जाने दो, दूसरा कौन है?"

शंभूनाथ एक दीर्घ निःश्वास लेकर बोले—"क्या बताऊँ!"

राधाकृष्ण—"क्यों, क्या कोई भय है?"

शंभूनाथ—"ओफ़्! मुझे नहीं मालूम था कि यह भी इसका साथी है।"

राधाकृष्ण—"कौन?"

शंभूनाथ—"गोकुलप्रसाद—मेरा बहनोई।"

राधाकृष्ण—"क्या गोकुलप्रसाद भी श्यामनाथ के साथ हैं?"

शंभूनाथ—"हाँ!"

राधाकृष्ण—"अरे! यह तो तुमने बुरी सुनाई। तब तो इनका पीछा अंत तक करना चाहिए। आओ, बढ़ो, वह देखो, वे लोग आँखों से ओझल हुए जा रहे हैं।"

यह कहकर राधाकृष्ण बढ़े, शंभूनाथ भी उनके पीछे चले। थोड़ी ही देर में ये दोनो पुनः उनके निकट पहुँच गए। जिस समय श्यामनाथ और उनके दोनो मित्र चौक से बेगम के मकान की ओर मुड़े, उस समय शंभूनाथ ने राधाकृष्ण से कहा—"आज तो ये लोग कहीं दूसरी जगह जा रहे हैं, बंदीजान के यहाँ नहीं जायँगे।"

राधाकृष्ण—"यही तो देखना है कि कहाँ जाते हैं, कहीं अन्यत्र अड्डा बनाया है क्या?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इसी प्रकार धीरे-धीरे बातें करते हुए दोनो श्यामनाथ के पीछे-पीछे चलते रहे।

जिस समय श्यामनाथ बेगम के मकान के सामने रुके, उस समय ये दोनो भी उनसे थोड़ी दूर पर अँधेरे में खड़े हो गए। श्यामनाथ के साथियों में से एक ने द्वार की कुंडी खटखटाई। द्वार खुला, तीनो भीतर चले गए। और, द्वार पुनः बंद हो गया। द्वार बंद हो जाने के पश्चात् शंभूनाथ ने राधाकृष्ण से पूछा—"यह किसका मकान है?"

राधाकृष्ण—"पता नहीं, आओ ज़रा पास से देखें।"

दोनो टहलते हुए बेगम के मकान के द्वार पर पहुँचे, और म्युनिसिपैलिटी के लैंप के मंद आलोक में मकान को ध्यान-पूर्वक देखने लगे।

राधाकृष्ण ने शंभूनाथ के कान में कहा—"यह तो किसी मुसलमान का मकान प्रतीत होता है।"

शंभूनाथ—"तब तो अवश्य ही किसी वेश्या का मकान है।"

राधाकृष्ण—"इधर तो वेश्याएँ नहीं रहतीं।"

शंभूनाथ—"तब फिर किसका हो सकता है?"

राधाकृष्ण—"मेरी समझ में तो इस मकान में कोई ख़ानगी रहती है।"

शंभूनाथ—"ख़ानगी—ख़ानगी से आपका क्या तात्पर्य है, क्या गृहस्थ?"

राधाकृष्ण—"ख़ानगी उन वेश्याओं को कहते हैं, जो रहती गृहस्थों की तरह हैं, परंतु कार्य वेश्या का करती हैं।"

शंभूनाथ—"तब तो वेश्या ही समझना चाहिए।"

राधाकृष्ण—"हाँ, होती तो वेश्याएँ ही हैं, परंतु वेश्याओं की तरह नहीं रहतीं, और न प्रत्येक व्यक्ति को यह पता ही रहता है कि यह वेश्या है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ—"परंतु यह तुम्हारा अनुमान-ही-अनुमान है।"

राधाकृष्ण—"हाँ, अनुमान तो है ही।"

शंभूनाथ—"इनका निश्चय किस प्रकार हो?"

राधाकृष्ण—"निश्चय कल दिन में हो सकता है।"

शंभूनाथ—"तो कल तुम निश्चय करके बताओगे?"

राधाकृष्ण—"अवश्य!"

शंभूनाथ—"तो आओ चलें।"

दोनो व्यक्ति वहाँ से लौटे। लौटकर वे चार ही पग चले थे कि बेगम के मकान का द्वार पुनः खुला, और एक आदमी बाहर निकला।

द्वार खुलने का शब्द सुनकर वे दोनो पुनः ठिठुक गए। मकान से एक व्यक्ति बाहर निकला—दो क़दम चलकर पुनः लौटा, और द्वार पर खड़े होकर उसने कहा—"पान लगे लाऊँ या सादे?"

भीतर से किसी ने कहा—"चार पैसे के लगे ले आना और चार के सादे।"

"अच्छी बात है।" कहकर उस व्यक्ति ने द्वार बंद कर लिया, और पान लेने चला। जिस समय वह इन दोनो के पास से निकला, तो राधाकृष्ण ने उससे पूछा—"क्यों मियाँ, यहाँ कोई मुंशी हरचरन-लाल रहते हैं।"

उस व्यक्ति ने कहा—"यहाँ तो मुंशी हरचरनलाल कोई नहीं रहते।"

राधाकृष्ण—"यहीं का पता दिया गया था। आप क्या इसी मुहल्ले में रहते हैं?"

वह व्यक्ति—"नहीं, इस मुहल्ले में तो नहीं रहता। आप अपना मतलब कहिए।"

राधाकृष्ण—"मतलब क्या, एक शख़्स से मिलना था, पता यहीं का बताया गया था।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह व्यक्ति—"यहाँ तो हरचरनलाल नाम के कोई साहब नहीं रहते।"

राधाकृष्ण ने बेगम साहबा के मकान की ओर संकेत करके कहा—"यह मकान किसका है ?"

वह व्यक्ति—"यह मकान हरचरनलाल का नहीं है।"

राधाकृष्ण—"इसमें कोई मुसलमान वकील तो नहीं रहते। उन्हीं के मकान के पास बताया था।"

वह व्यक्ति—"इसमें वकील नहीं, बेगम साहबा रहती हैं।"

राधाकृष्ण—"अच्छा! तब तो हम लोग गली भूल गए। वह किसी दूसरी गली में होंगे। राम-राम! कहाँ-से-कहाँ भटक आए। (शंभूनाथ से) आओ चलें। कल दिन में पता लगेगा।"

यह कहकर राधाकृष्ण शंभूनाथ-सहित चले। जिस ओर ये दोनो चले, उसी ओर वह व्यक्ति भी इनके साथ-साथ चला। थोड़ी दूर चलकर राधाकृष्ण ने उससे कहा—"आप न आते, तो हम लोग बहुत हैरान होते, अभी वहीं घूमते रहते।"

वह व्यक्ति—"जी! आपका दौलतखाना कहाँ है ?"

राधाकृष्ण—"शरीबखाना तो कानपुर में है। यहाँ हमारे एक दोस्त रहते हैं, उन्हीं के पास आए थे।"

वह व्यक्ति—"कल दिन में पता लगेगा, इस वक्त पता चलना मुश्किल है। नई जगह का वास्ता ठहरा, इतनी रात में पता लगना मुश्किल है।"

राधाकृष्ण—"जी हाँ, आपका फ़र्माना बजा है। आपका इस्म-शरीफ़ ?"

वह व्यक्ति—"बंदे को छुट्टनखाँ कहते हैं।"

राधाकृष्ण—"आप इन्हीं बेगम साहबा के यहाँ रहते हैं ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छुट्टन—"जी नहीं, रहता तो मैं दूसरे मुहल्ले में हूँ, मगर इनके यहाँ मुलाज़िम हूँ।"

राधाकृष्ण—"क्यों साहब, ये कहाँ की बेगम हैं?"

शंभूनाथ—"बेगम तो यहीं की हैं।"

राधाकृष्ण—"बेगम नाम है या बेगम हई हैं।"

छुट्टन—"अजी जनाब, ख़ानदानी बेगम हैं, वसीक़ा मिलता है।"

राधाकृष्ण—"ओ, जब वसीक़ा मिलता है, तब तो ज़रूर ख़ानदानी बेगम हैं। नवाब साहब भी हैं या..... ?"

छुट्टन—"नहीं, बेगम साहबा बेवा हैं।"

राधाकृष्ण—"तो कोई लड़का-वड़का होगा?"

छुट्टन—"दो लड़कियाँ हैं। अभी शादी नहीं हुई, इंशाअल्लाह इस साल हो जायगी।"

ये बातें करते हुए तीनो आदमी चौक में आ गए। चौक पहुँचकर राधाकृष्ण एक तँबोली की दूकान पर रुक गए, और उन्होंने उससे छ पान बनाने के लिये कहा।

छुट्टन ने भी दो आने फेंककर कहा—"चार पैसे के आठ पान बना दो और चार पैसे के सादे पान दे दो।"

तँबोली पान बनाने लगा। छुट्टन बोला—"अमाँ, ज़रा फ़ुर्ती हाथ चलाओ, क्या सिलिर-सिलिर कर रहे हो।"

तँबोली बोला—"जल्दी तो चला रहा हूँ साहब! और क्या मशीन हो जाऊँ।"

तँबोली ने पहले छ पान राधाकृष्ण को दिए।

राधाकृष्ण ने दो पान छुट्टन की ओर बढ़ाए।

छुट्टन ने कहा—"आप खाइए, मेरे पान भी बन रहे हैं।"

राधाकृष्ण—"तो क्या हर्ज है, ये भी तो आप ही के हैं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-IGOR

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छुट्टन ने मुस्किराकर पान ले लिए, और कहा—"तसलीम !"

राधाकृष्ण और शंभूनाथ ने भी पान खाए। पान खाकर शंभूनाथ ने राधाकृष्ण से पूछा—"अब कहाँ चलोगे ?"

राधाकृष्ण—"अब डेरे की ओर चलो। हाँ, एक बात का तो पता लगा लें।"

यह कहकर राधाकृष्ण ने छुट्टन से कहा—"आप एक बात बता सकते हैं ?"

छुट्टन—"फ़र्माइए !"

राधाकृष्ण—"ज़रा इधर अलग आइए।"

राधाकृष्ण छुट्टन को अलग ले जाकर बोले—"माफ़ कीजिएगा, बड़ी वैसी बात पूछ रहा हूँ ; आप कुछ ख़याल मत कीजिएगा।"

छुट्टन—"आप बेखटके कहिए !"

राधाकृष्ण—"यहाँ अल्लहबंदी तवायफ़ किस जगह रहती है ?"

छुट्टन—"अल्लहबंदी तो यहीं रहती है, आगे चलकर उसका कमरा है।"

राधाकृष्ण—"किस तरफ़ ?"

छुट्टन—"इसी बाईं पटरी में, एक पचास क़दम चलकर, एक गंधी की दूकान है, ठीक उसी के सामने।"

राधाकृष्ण—"बेहतर है। माफ़ कीजिएगा। आपको बड़ी तक-लीफ़ दी।"

छुट्टन—"ऐ, वाह हुज़ूर, तकलीफ़ किस बात की। यह काम ही कौन बड़ा भारी है। हुक्म हो, तो वहाँ पहुँचा आऊँ।"

राधाकृष्ण—"नहीं, अब आज तो हम जायँगे नहीं—कल देखा जायगा।"

छुट्टन—"इसके अलावा भी यहाँ बहुत नफ़ीस चीज़ें हैं—आपको शौक़ हो, तो मुझसे कहिएगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"अच्छा !"

छुट्टन—"जी हाँ, अल्लहबंदी गाने की वजह से मशहूर है, वरना सूरत में तो यहाँ एक-से-एक बढ़कर हैं।"

राधाकृष्ण—"सच ?"

छुट्टन—"आप झूठ मानते हैं। आप चाहें, तो आँखों से देख सकते हैं।"

राधाकृष्ण—"ज़रूर देखेंगे। यह हमारी ख़ुशक़िस्मती है कि आपसे मुलाक़ात हो गई।"

छुट्टन—"आपकी क्या, यह मेरी ख़ुशनसीबी है—तो जब मिज़ाज चाहे, तब चल सकते हैं।"

राधाकृष्ण—"अब आज तो बेवक़्त हो गया है।"

छुट्टन—"आज तो मुझे भी काम है। बेगम साहबा के यहाँ चंद मेहमान आए हुए हैं। उनके लिये पान ले जा रहा हूँ। कल चल सकता हूँ।"

राधाकृष्ण—"तो आपसे मुलाक़ात कहाँ होगी।"

छुट्टन—"जहाँ फ़र्माइए। कहिए, इसी तँबोली की दूकान पर मिलूँ।"

राधाकृष्ण—"अच्छी बात है, यहीं मिलना।"

छुट्टन—"कै बजे ?"

राधाकृष्ण—"यही कोई सात बजे के क़रीब।"

छुट्टन—"बेहतर है, मगर ज़रूर तशरीफ़ लाइएगा। ऐसा न हो के मैं यहाँ इंतज़ार ही करता रहूँ।"

राधाकृष्ण—"ऐसी बात है भला, हज़ार काम छोड़के आवें। च्छा, तो इजाज़त दीजिए।"

छुट्टन—"तसलीम !"

धाकृष्ण—"बंदगी !"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण छुट्टन से बिदा होकर शंभूनाथ के पास पहुँचे, और उन्हें लेकर एक ओर चल दिए।

रास्ते में शंभूनाथ ने राधाकृष्ण से कहा—"भई, आज तो मैं तुम्हें मान गया। ओफ़्फ़ोह! तुम तो पूरे डिटेक्टिव ही हो। किस मज़े से धीरे-धीरे सब बातें पूछ लीं। मुझे तो त्रिकाल में भी यह युक्ति न सूझती।"

राधाकृष्ण—"इसी से तो कहता हूँ कि तुम विचार-कुशल हो, व्यवहार-कुशल नहीं।"

शंभूनाथ—"निस्संदेह, और यह हरचरनलाल कौन है?"

राधाकृष्ण—"कोई नहीं, असल में छुट्टन से बात करने के लिये यह नाम गढ़ लिया।"

शंभूनाथ—"बड़े उस्ताद हो।"

राधाकृष्ण—"अब कल सिर्यां छुट्टन की सब कलई खुल जायगी।"

शंभूनाथ—"अलग ले जाकर उससे क्या पूछा था।"

राधाकृष्ण—"वह पीछे बताऊँगा, पहले आप यह बताइए कि छुट्टन की बातों से आपने क्या निष्कर्ष निकाला?"

शंभूनाथ—"यही कि कोई बेगम हैं, उन्हीं के यहाँ श्यामनाथ इत्यादि गए हैं।"

राधाकृष्ण—"हाँ, उन बेगम की दो जवान लड़कियाँ हैं, ये तीनो उन्हीं के फेर में हैं।"

शंभूनाथ—"तो बेगम अपनी लड़कियों से वेश्या-वृत्ति कराती होंगी।"

राधाकृष्ण—"मालूम तो यही होता है। देखो, दो-चार दिन में इसका पूरा पता लग जायगा। मैंने छुट्टन सिर्यां से दोस्ती गाँठी है। कल मैं उनसे फिर मिलूँगा।"

शंभूनाथ—"किस समय?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"शाम को सात बजे।"

शंभूनाथ—"मैं भी आऊँगा।"

राधाकृष्ण—"तुम मत आना। मैं अकेला ही मिलूँगा। मैं पहले ज़रा रंग-ढंग देख लूँ, फिर जैसी सलाह होगी, वैसा करेंगे।"

शंभूनाथ—"अच्छी बात है। क्या कहूँ, गोकुलप्रसाद को श्यामनाथ के साथ देखकर मैं स्तंभित हो गया। गोकुल को मैं बड़ा भला लड़का समझता था। वह भी वेश्यागामी निकला! एक चिंता तो थी ही, यह दूसरी मुसीबत खड़ी हो गई। ईश्वर ही सहायता करें, तो बेड़ा पार हो।"

राधाकृष्ण—"हाँ, है तो ठेढ़ी खीर। परंतु देखो, क्या होता है। एक बार तो हम लोगों को जान लड़ा ही देनी चाहिए—आगे ईश्वर के हाथ है।"

इसी प्रकार की बातें करते हुए दोनो घर की ओर चले।

उन्नीसवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन ठीक सात बजे राधाकृष्ण उसी तँबोली की दूकान पर पहुँच गए। वहाँ पहुँचकर उन्होंने इधर-उधर देखा, परंतु छुट्टन मियाँ न दिखाई पड़े। उन्होंने तँबोली की दूकान से पान लेकर खाए, और तँबोली से पूछा—"क्यों जी, छुट्टन मियाँ तो नहीं आए थे?"

तँबोली—"कौन छुट्टन मियाँ?"

राधाकृष्ण—"वही, जो कल तुम्हारी दूकान से पान ले गए थे। जब हम दो आदमी यहाँ खड़े पान बनवा रहे थे, तब वह भी पान लेने आए थे।"

तँबोली—"वही, जो ठिगने-से हैं। उनका भला-सा नाम है। हाँ, छुट्टन! अभी तक तो नहीं दिखाई पड़े।" यह कहकर तँबोली किंचित् मुस्किराया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण ताड़ गए कि तँबोली छुट्टन को भली भाँति जानता है। अतएव उन्होंने पूछा—"क्यों जी, छुट्टन मियाँ क्या करते हैं ?"

तँबोली—"क्या आप नहीं जानते ?"

राधाकृष्ण—"मैं परदेसी आदमी ठहरा, मुझे क्या मालूम।"

तँबोली—"आप परदेसी हैं ! ऐसा अंधेर न कीजिए। दो वर्ष से तो मैं आपको यहाँ देख रहा हूँ। जो जानता न हो, उससे कहिए।"

राधाकृष्ण लिटपिटा गए, उनका मुँह उतर गया। परंतु शीघ्र ही अपनी दशा सुधारकर बोले—"तुम्हें धोका हुआ होगा। तुमने किसी दूसरे आदमी को देखा होगा।"

तँबोली हँसकर बोला—"अजी बाबूजी, ऐसा धोका हम लोग नहीं खा सकते। पहले मेरी दूकान अमीनाबाद में थी। दो बरस अमीनाबाद में रहा। वहाँ से इस साल यहाँ उठ आया। अमीनाबाद में मेरी दूकान डॉक्टर वर्मा की दूकान के बग़ल में थी। डॉक्टर वर्मा के यहाँ आप जाया करते थे।"

राधाकृष्ण मुस्किराकर बोले—"तब तो छिपाना व्यर्थ है। परंतु छुट्टन मियाँ से यह बात मत कहना।"

तँबोली—"इससे आप निसा-ख़ातिर रहिए। जो आप हैं, वह हमारे लिये छुट्टन थोड़ा हो सकते हैं, हमसे छुट्टन से क्या सरोकार ?"

राधाकृष्ण—"हाँ, तो यह छुट्टन करता क्या है ?"

तँबोली—"रंडियों की दलाली करता है।"

राधाकृष्ण—"मैंने भी यही समझा था।"

तँबोली—"समझना कौन कठिन बात है। जब वह यह पेशा ही उठाए हुए है, तब समझने में कौन देर लग सकती है।"

ठीक इसी समय छुट्टन मियाँ पहुँचे, और राधाकृष्ण को खड़े देखकर बोले—"बंदगी बाबूजी !"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"अरे मियाँ, कहाँ रह गए थे ? आध घंटे से तुम्हारा इंतज़ार कर रहा हूँ।"

छुट्टन—"ऐ हुज़ूर, क्या बताऊँ, एक दोस्त रास्ते में मिल गए। उन्होंने अमीरहमज़ा की दास्तान छेड़ दी—तमाम ज़माने की बातें करने लगे। बमुश्किल-तमाम पीछा छुड़ाकर आया हूँ।"

राधाकृष्ण ने पहले तो छुट्टन मियाँ को पान खिलाए, तत्पश्चात् वहाँ से धीरे-धीरे टहलते हुए चले।

छुट्टन मियाँ ने पूछा—"तो कहिए हुज़ूर, किस तरफ़ के इरादे हैं ?"

राधाकृष्ण—"जिस तरफ़ तुम ले चलो।"

छुट्टन—"जहाँ कहिए, वहाँ ले चलूँ।"

राधाकृष्ण—"पहले एक बात तो बताओ।"

छुट्टन—"फ़र्माइए !"

राधाकृष्ण—"यह बेगम कौन हैं, कोई ख़ानगी हैं, या वाक़ई बेगम हैं।"

छुट्टन—"हैं तो हुज़ूर बेगम ही।"

राधाकृष्ण—"मगर ?"

छुट्टन—"मगर-वगर कुछ नहीं, वह ख़ानदानी बेगम हैं।"

राधाकृष्ण—"ख़ानदानी बेगम तो सब कुछ हैं, मगर करती क्या हैं।"

छुट्टन—"करना क्या, सलीक़ा आता है, यही बैठे-बैठे खाती हैं।"

राधाकृष्ण—"मैंने सुना है, बेगम की लड़कियाँ बड़ी हसीन हैं।"

छुट्टन मियाँ मुँह बनाकर बोले—"हुज़ूर, ख़ुदा के लिये शरीफ़-ज़ादियों की निस्बत ऐसे ख़यालात दिल में मत लाइए।"

राधाकृष्ण—"अरे भई, तो क्या किसी के हुस्न की तारीफ़ करना भी गुनाह है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छुट्टन—"ग़ौर, इसमें कोई हर्ज नहीं, मगर और कोई ख़याल दिल में न आना चाहिए।"

राधाकृष्ण मुँह बनाकर बोले—"ऐसी हालत में तो उस्ताद, हमारी-तुम्हारी निभना कठिन है। तुम तो बोलने ही नहीं देते।"

छुट्टन—"मेरी क्या मजाल, जो हुज़ूर को न बोलने दूँ। मगर बात सिर्फ़ इतनी है कि मैं उनका नमक खाता हूँ, लिहाज़ा मैं उनकी निस्बत कोई ऐसी-वैसी बात नहीं सुनना चाहता।"

राधाकृष्ण—"अच्छी बात है, अब कुछ न कहूँगा। मैंने तो सिर्फ़ एक बात पूछी, और वह भी तब, जब मैंने सुना। वरना मुझे क्या ग़रज़ पड़ी थी।"

छुट्टन—"हुज़ूर ने क्या सुना?"

राधाकृष्ण—"अब क्या बताऊँ, कुछ कहूँगा, तो तुम फिर नाराज़ होने लगोगे।"

छुट्टन—"तोबा, अच्छा, कहिए, आपने क्या सुना, मैं चुपचाप सुन लूँगा; अगर ज़बान खोलूँ, तो गुनहगार!"

राधाकृष्ण—"ख़ाली सुन लेने से काम न चलेगा, यह भी बताना पड़ेगा कि जो कुछ मैंने सुना है, वह ठीक है या ग़लत।"

छुट्टन—"हाँ, यह बात बता दूँगा।"

राधाकृष्ण—"मैंने सुना है, यह बेगम इस क़िमाश (ढंग) की हैं कि अगर कोई रुपया ख़र्च करे, तो कुछ कामयाबी (सफलता) हो सकती है। अगर यह बात सच है, और हज़ार-पाँच सौ ख़र्च करने से कुछ मतलब निकल सकता है, तब तो मैं और मेरे दोस्त, जो कल मेरे साथ थे, हज़ार रुपए तक ख़र्च कर सकते हैं; और अगर वह ऐसी नहीं हैं, तो मैं अपनी सब बातें वापस लेता हूँ।"

यह कहकर राधाकृष्ण ने छुट्टन मियाँ के मुख के उतार-चढ़ाव को ध्यान-पूर्वक देखा। छुट्टन मियाँ कुछ क्षणों तक विचार करने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के पश्चात् बोले—"बात यह है हुज़ूर कि वह कुछ पेशेवर तो हैं नहीं, जो मैं यह कह दूँ कि हाँ, ऐसा हो सकता है।"

राधाकृष्ण—"ख़ैर, मतलब यह कि वहाँ दाल गलनी ग़ैर-मुमकिन् है।"

छुट्टन—"यह भी मैं नहीं कह सकता। उनसे मेल-मुहब्बत हो जाय, तो दाल गल भी सकती है। मुहब्बत वह चीज़ है कि इसमें पड़कर इंसान जान तक दे देता है।"

राधाकृष्ण—"मेल-मुहब्बत हो सकने का कोई ज़रिया है?"

छुट्टन—"कौन ज़रिया बताऊँ!"

राधाकृष्ण—"तुम तो वहाँ आते-जाते हो, और तुम ज़रिया नहीं बता सकते!"

छुट्टन—"हाँ, आता-जाता तो हूँ, मगर.....।"

राधाकृष्ण—"देखो मियाँ छुट्टन, अब साफ़-साफ़ बातें होनी चाहिए। हम लोग दरअसल बेगम साहबा के मुश्ताक़ (इच्छुक) हैं, कल हम लोग इसीलिये उधर गए थे।"

छुट्टन—"मगर हुज़ूर ने तो कोई और नाम लिया था, भला-सा नाम लिया था.....!"

राधाकृष्ण—"हाँ, हरचरनलाल का नाम लिया था, मगर वह सब बहानेबाज़ी थी।"

छुट्टन चकित होकर बोला—"हुज़ूर ने भी अच्छा गप्पा दिया, और ख़ुदा जानता है, मैं सच समझा था।"

राधाकृष्ण—"भई, मजबूरी से ऐसा किया। तुमसे जान-पहचान तो थी नहीं, इसलिये उस वक़्त बात बनाई कि तुम्हें शक न हो।"

छुट्टन—"ख़ैर, अगर यह बात है, तो हुज़ूर की दोस्ती और मुहब्बत की वजह से मैं इतना कर सकता हूँ कि हुज़ूर की रसाई (पहुँच) वहाँ तक करा दूँगा, आगे आप जानें, आपका काम!"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"क्या बात कही है। बस, तुम इतना कर दो, आगे हम समझ लेंगे। अगर तुमने इतना कर दिया, तो तुम्हें भी खुश कर देंगे।"

छुट्टन—"तसलीम! यह आपकी इनायत है! मुझसे जो कुछ हो सकता है, उसके लिये मैं ब-जानो-दिल तैयार हूँ।"

राधाकृष्ण—"तो बस, तुम इतना कर दो कि बेगम के यहाँ हमें पहुँचा दो, और उनसे हमारा मेल करा दो।"

छुट्टन—"बेहतर है।"

राधाकृष्ण—"तो कब?"

छुट्टन—"आज के सिवा और जिस दिन आप कहिए।"

राधाकृष्ण—"हाँ, यह तो बताओ, उनके यहाँ कोई और आदमी तो नहीं आते-जाते। कल जब हम उस तरफ़ गए थे, तो हमने तीन आदमियों को मकान के अंदर जाते देखा था, वे तीनो हिंदू ही मालूम पड़ते थे।"

छुट्टन ने अकचकाकर राधाकृष्ण पर एक तीव्र दृष्टि डाली। राधाकृष्ण ने छुट्टन का तात्पर्य समझकर बड़ी लापरवाही के साथ कहा—"बात यह है कि हम लोग यह नहीं चाहते कि कोई ग़ैर आदमी हमें बेगम के यहाँ आता-जाता देखे। इसमें बदनामी का ख़ौफ़ है! वह ठहरीं शरीफ़ज़ादी, इसलिये हम यह नहीं चाहते कि हमारी वजह से उनकी किसी तरह की बदनामी हो।"

छुट्टन प्रसन्न-मुख होकर बोला—"यह ख़याल हुज़ूर का निहायत पाकीज़ा (पवित्र) है—शराफ़त इसी का नाम है।"

राधाकृष्ण—"हम तो जैसा अपनी आबरू समझते हैं, वैसी दूसरे की भी समझते हैं।"

छुट्टन—"शरीफ़ों का यही शेवा है।"

राधाकृष्ण—"हाँ, तो वह तीनो आदमी कौन थे, यह तुमने न बताया।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छुट्टन—"वे तीनो यहीं के रहनेवाले हैं। बड़े शरीफ़ हैं। बेगम साहबा ने उनसे कुछ क़र्ज़ लिया है, इसी वजह से वे लोग आते-जाते हैं।"

राधाकृष्ण—"महज़ आना-जाना ही है—और कोई बात तो नहीं?"

छुट्टन दाँतों-तले जीभ दाबकर बोला—"क़तई नहीं, क्या मजाल, जो बुरी निगाह तो डाल लें।"

राधाकृष्ण—"ख़ैर, यह तो तुमने बेगम की बात कही। उन तीनो बाबुओं की नीयत का हाल तुम्हें क्या मालूम।"

छुट्टन—"हाँ, यह तो आपका फ़र्माना दुरुस्त है। उनकी नीयत का हाल मैं क्या जानूँ।" बातें करते हुए दोनो चौक के बाहर आ गए।

छुट्टन मियाँ चौंककर बोले—"अरे! हम लोग किधर आ गए, बातों में मालूम ही न हुआ।"

राधाकृष्ण—"ख़ैर, आओ, ज़रा देर पार्क में बैठें।"

छुट्टन—"अब तो शबनम् (ओस) पड़ने लगी है। पार्क में क्या बैठिएगा।"

राधाकृष्ण—"किसी पेड़ के नीचे बैठेंगे।"

एक वृक्ष के नीचे एकांत में एक बेंच पड़ी हुई थी। दोनो उसी पर जा बैठे।

कुछ देर तक मौन रहकर राधाकृष्ण बोले—"वे तीनो कौन ज़ात हैं?"

छुट्टन—"खत्री हैं।"

राधाकृष्ण—"उनमें से एक को तो मैं शायद जानता हूँ, अगर वही हैं, तो .....।"

छुट्टन—"किसे?"

राधाकृष्ण—"उनमें एक को झलक-भर मैंने देखी थी। उनका नाम तो शायद गोकुलप्रसाद है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छुट्टन ने पुनः राधाकृष्ण की ओर विस्मित होकर देखा, और कहा—"आप उन्हें जानते हैं ?"

राधाकृष्ण—"हाँ, जानता हूँ। उनके साथ जो दो और थे, उन्हें नहीं जानता। वे कौन हैं ?"

छुट्टन—"एक का तो नाम बिशुनाथ है, बैंक में नौकर हैं।"

राधाकृष्ण—"किस बैंक में ?"

छुट्टन ने बैंक का नाम बताकर कहा—"और दूसरे साहब का नाम बाबू श्यामनाथ है।"

राधाकृष्ण—"होंगे कोई, उन दोनो को मैं नहीं जानता।"

छुट्टन—"मगर आप कानपुर में रहते हैं, यहाँवालों को कैसे जानते हैं ?"

राधाकृष्ण—"अरे मियाँ, कानपुर में कौन मरदूद रहता है, वह सब बहानेबाज़ी थी।"

छुट्टन अट्टहास्य करके बोला—"ओफ़्फ़ोह ! वल्ला, कमाल है ! ख़ुदा जानता है, ऐसा उल्लू मैं उम्र-भर नहीं बना।"

राधाकृष्ण—"बात यह है कि तुमसे जान-पहचान तो थी नहीं, इसलिये यह बहाना करना पड़ा। बिना जाने-बूझे अपना भेद कोई कैसे दे दे ?"

छुट्टन—"यह बिलकुल दुरुस्त है।"

राधाकृष्ण—"अच्छा, अब यह बताओ कि बेगम के यहाँ हमें कब से चलोगे ?"

छुट्टन—"मैं तो अर्ज़ कर चुका कि जब चाहे, चलिए। चाहे आज ही ; मगर नहीं, आज नहीं—मुमकिन है, इस वक़्त विश्वनाथ वग़ैरह वहाँ डटे हों।"

राधाकृष्ण—"हाँ, ऐसे वक़्त पर न चलेंगे। ऐसे वक़्त पर चलना चाहिए, जब वहाँ कोई दूसरा आदमी मौजूद न हो।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छुट्टन—"बेहतर है! आज मैं बेगम साहबा से आपका ज़िक्र करूँगा, और वक्त भी ठीक कर लूँगा।"

राधाकृष्ण—"मगर यह तो बताओ, हमारी बाबत उनसे कहोगे क्या?"

छुट्टन—"बात यह है कि उन्हें कभी-कभी रुपयों की ज़रूरत पड़ती रहती है, इसलिये मैं यह कहूँगा—एक महाजन हैं—लेन-देन करते हैं। उनसे मेल-मुलाक़ात रहेगी, तो वक्त पर काम निकल जाया करेगा। मगर यह भी बता दीजिए कि आप जो हज़ार-पाँच सौ की बात कह चुके हैं, उस पर क़ायम रहेंगे—ऐसा न हो कि पिछली बातों की तरह वह भी महज़ हवाई हो।"

राधाकृष्ण—"नहीं, वह तो पक्की बात है, उसमें फ़र्क़ न पड़ेगा।"

छुट्टन—"हाँ, बिना इसके काम न चलेगा, क्योंकि उन लोगों ने कल ही दो सौ रुपए दिए हैं। उनके मुक़ाबले में बिना रुपया ख़र्च किए आपकी दाल नहीं गलेगी।"

राधाकृष्ण—"दो सौ किसने दिए हैं?"

छुट्टन—"दिए तो श्यामनाथ बाबू ने थे, मगर यह नहीं कह सकता कि वह उन्हीं के थे, या तीनों ने चंदा जमा करके दिए।"

राधाकृष्ण हँसकर बोले—"चंदे की एक ही कही!"

छुट्टन—"हाँ हुज़ूर, मैं मज़ाक़ नहीं करता, बहुत मुमकिन है, ऐसा हो, क्योंकि मुझे उन तीनों में कोई ऐसा नज़र नहीं आता, जो अकेला इतना रुपया ख़र्च कर सके। जिसमें विश्वनाथ बाबू तो एक ही ज़ाते-शरीफ़ मालूम होते हैं। ऐसा चलता हुआ आदमी तो मैंने देखा ही नहीं। हवा में गिरह लगाते हैं। मुझे दस-बारह रोज़ तक दौड़ाया, मगर एक कौड़ी न दी। जब मुलाक़ात हो, तो ऐसी बातें बनावें कि कुछ कहते न बन पड़े। वह समझते थे कि हम छुट्टन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मियाँ को बना रहे हैं। मगर छुट्टन मियाँ सब समझते थे। छुट्टन मियाँ ने भी हज़ारों ही की आँखें देख डाली हैं। बड़े-बड़े चलते-पुर्ज़ों से सावक़ा पड़ चुका है। मगर कभी-कभी अपना काम निकालने के लिये बेवक़ूफ़ भी बन जाना पड़ता है। हम भी सोच लेते हैं, अच्छा भाई, तुम्हीं उस्ताद सही। हमारा काम निकल जाय—हमारे लिये यही काफ़ी है।"

राधाकृष्ण—"श्यामनाथ कैसा आदमी है?"

छुट्टन—"वह अभी लौंडे हैं—मगर मालूम मालदार पड़ते हैं। और, मेरा तो ख़याल है, उन्होंने ही रुपए भी दिए हैं। विश्वनाथ ने उनको फाँसकर रुपए दिलाए। मुमकिन है, कुछ गोकुलप्रसाद बाबू ने भी दिए हों। मगर विश्वनाथ बाबू से यह उम्मीद नहीं कि उन्होंने कुछ दिया हो—वह बड़े हज़रत हैं।"

राधाकृष्ण—"तो रुपए किस तरह दिए हैं—यों ही, या क़र्ज़ में?"

छुट्टन—"अभी तो क़र्ज़ ही कहकर लिए गए हैं, मगर अब कौन देता है, और कौन लेता है।"

राधाकृष्ण—"कोई हुंडी-रुक़्क़ा लिखाया है?"

छुट्टन—"कुछ नहीं। पहले तो विशुनाथ बाबू रुक़्क़ा लिखाने को कहते रहे, मगर कल जब रुपए दिए गए, तो कुछ नहीं बोले। इसी से मैंने यह नतीजा निकाला कि उन्होंने अपने पास से नहीं दिए। अगर अपने पास से देते, तो रुक़्क़ा ज़रूर लिखा लेते।"

राधाकृष्ण—'ख़ैर, अगर वह माँगेंगे, तो हम दे देंगे। और, अगर बेग़म चाहें, तो उनके रुपए कल ही वापस कर दें।"

छुट्टन—"ख़ैर, अभी कौन जल्दी है, जब माँगेंगे, तब देखा जायगा।"

राधाकृष्ण—"तो अब इजाज़त दो। कल कहाँ मिलोगे?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छुट्टन—"जहाँ हुक्म हो ?"

राधाकृष्ण—"उसी तँबोली की दूकान पर मिलना।"

छुट्टन—"बेहतर है।"

चलते वक्त राधाकृष्ण ने पाँच रुपए निकालकर छुट्टन मियाँ को दिए। छुट्टन मियाँ ने दो-एक बार नहीं-नहीं करके ले लिए। राधाकृष्ण बोले—"यह तुम्हें मिठाई खाने के लिये दिए जाते हैं।"

छुट्टन—"हम तो आप-जैसे रईसों की बदौलत रोज़ ही मिठाई खाते हैं।"

बीसवाँ परिच्छेद

रात के आठ बज चुके हैं। बाबू व्रजमोहनलाल के कमरे में स्वयं बाबू साहब, शंभूनाथ तथा राधाकृष्ण बैठे हुए हैं। तीनो व्यक्तियों में किसी महत्त्व-पूर्ण विषय पर वार्तालाप हो रहा है। बाबू साहब कह रहे हैं—"हाँ बताइए, आपको क्या बातें ज्ञात हुईं ?"

राधाकृष्ण बोले—"पहली बात तो यह है कि कोई एक व्यक्ति विश्वनाथ है—वह बहुत चलता हुआ है। श्यामनाथ और गोकुल के अधःपतन का मुख्य कारण वही है। जब तक उसका साथ न छूटेगा, तब तक काम न बनेगा।"

बाबू साहब—"हाँ, उसे मैंने देखा है। वह दो-तीन बेर यहाँ आया है। मुझे भी उस व्यक्ति पर संदेह हुआ था। अच्छा, और ?"

राधाकृष्ण—"श्यामनाथ अब एक दूसरी जगह जाने लगे हैं। एक बेगम हैं। उनकी दो जवान लड़कियाँ हैं, उन्हीं के फेर में हैं। वहाँ भी श्यामनाथ और गोकुल को पहले विश्वनाथ ही ले गया था। केवल इतना ही नहीं, श्यामनाथ ने पाँच दिवस हुए, बेगम को दो सौ रुपए दिए हैं।"

बाबू साहब चौंककर बोले—"दो सौ रुपए ! श्यामनाथ ने दिए ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"न दो सौ दिए हों, कुछ कम दिए हों—मगर दिए कुछ ज़रूर हैं। संभव है, आधे गोकुलप्रसाद ने दिए हों। इस हिसाब से कम-से-कम सौ तो अवश्य ही दिए हैं।"

बाबू साहब—"इतने रुपए यह लाया कहाँ से, मैंने तो दिए नहीं!"

शंभूनाथ—"बहूजी के लिए होंगे।"

बाबू साहब ओंठ चबाकर बोले—"बहूजी ने ही तो उसे इस दशा पर पहुँचाया है। तुम्हें यह ठीक मालूम है कि रुपए दिए हैं?"

राधाकृष्ण—"अजी साहब, कल मैं उन बेगम के घर गया था। बेगम ने स्वयं मुझसे यह बात कही।"

बाबू साहब—"अच्छा और?"

राधाकृष्ण—"और क्या, केवल ये ही दो बातें हैं। पहले ये दो काम होने चाहिए—एक तो श्यामनाथ का बेगम के यहाँ जाना बंद करना, दूसरे, विश्वनाथ से उनका साथ छुड़ाना।"

शंभूनाथ बोल उठे—"और अज़हबंदी के संबंध में क्या होगा?"

राधाकृष्ण—"अज़हबंदी को इस समय श्यामनाथ भूले हुए हैं, उसके यहाँ जाते भी नहीं हैं। अब उसे छूटा ही समझिए। और, यदि न भी छूटे, तो उसे भी छुड़ा दिया जायगा।"

बाबू साहब शंभूनाथ से बोले—"यह तो उसकी दशा है, और तुम कहते हो, विवाह कर दो। विवाह पक्का भी हो रहा है। मेरी इच्छा तो यह है कि अभी विवाह टाल दिया जाय।"

शंभूनाथ—"विवाह तो हो ही जाना चाहिए, विवाह का हो जाना उसके सुधार में सहायक होगा।"

बाबू साहब—"ऐसा न हो कि पराई लड़की का गला कट जाय! मैंने अपने जीवन में एक भूल तो यह की कि लड़का गोद लेकर यह आपदा मोल ली। यदि मुझे गोद लेना था, तो सयाना पढ़ा-लिखा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और सच्चरित्र लड़का लेना था। खैर, वह तो जो होना था, हो गया। अब यह दूसरी भूल क्यों करूँ?"

शंभूनाथ—"नहीं, यह भूल नहीं होगी, क्यों भइ राधाकृष्ण, तुम्हारी क्या सम्मति है?"

राधाकृष्ण—"मैं भी यही उचित समझता हूँ कि विवाह अवश्य हो। इधर यह जितने दिन विवाह में फँसा रहेगा, उतने दिनों में बेगम के यहाँ मैं वह जाल फैलाऊँगा कि फिर यह वहाँ धँसने भी न पावेगा। विवाह हो जाने पर पत्नी की ओर कुछ आकर्षण होगा ही, वह हमारे कार्य में सहायक होगा। आप जितना शीघ्र हो सके, विवाह कर डालिए।"

बाबू साहब—"तो तुम दोनों के भरोसे होकर मैं ऐसा कर सकता हूँ।"

शंभूनाथ—"आप बेखटके रहिए। मैं और राधाकृष्ण मिलकर सब ठीक कर लेंगे। हम दोनों ने इस बात का प्रण कर लिया है कि श्यामनाथ और गोकुल को ठीक बनाके छोड़ेंगे।"

बाबू साहब—"अच्छी बात है! विवाह तो अगले महीने में ही हो जायगा। मैं ही टालता रहा, नहीं तो अब तक कभी का हो जाता।"

राधाकृष्ण—"हाँ, एक बात और है। इस कार्य में दो-चार सौ रुपए खर्च पड़ेंगे, वह आप देंगे? आप न दें, तो मैं दे दूँ।"

बाबू साहब बोले—"रुपए की चिंता मत करो, दो-चार सौ क्या, मैं दो-चार हज़ार तक खर्च करने को तैयार हूँ। इन दोनों लड़कों का जीवन सुधर जाय, यह बहुत मूल्यवान् बात है। यदि दो-चार हज़ार भी खर्च होकर सफलता मिल जाय, तो समझो, सस्ते छूटे।"

राधाकृष्ण—"इससे कम में ही काम हो जायगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबू साहब—"तो जब जितने रुपए की आवश्यकता पड़े, मुझसे ले लेना।"

राधा—"अच्छी बात है। परंतु एक बात का ध्यान रखिएगा, अब श्यामनाथ को रुपया न मिले।"

बाबू साहब—"दस-बीस रुपए की बात तो मैं कह नहीं सकता, परंतु इकट्ठे सौ-पचास रुपए तो मैंने उसे न कभी दिए, और न दूँगा।"

शंभूनाथ—"आप तो नहीं देंगे, परंतु साथ ही बहूजी को भी मना कर दीजिए।"

बाबू साहब—"अवश्य मना कर दूँगा—यह बड़ी बुरी बात है। ऐसा स्नेह किस काम का—ऐसा स्नेह घातक होता है।"

शंभूनाथ—"अच्छा, तो अब आज्ञा दीजिए।"

बाबू साहब—"दो मिनट ठहरो। मैं एक बात कहना चाहता हूँ। उसे ध्यान-पूर्वक सुन लो।"

शंभूनाथ—"कहिए।"

बाबू साहब—"तुम दोनो नवयुवक हो। यद्यपि यह मैं जानता हूँ कि तुम दोनो यथेष्ट बुद्धिमान् तथा पढ़े-लिखे हो—तुम्हें भले-बुरे का ज्ञान है, तथापि मैं तुम्हें सचेत किए देता हूँ कि बहुत सँभले हुए रहना। ऐसा न हो कि श्यामनाथ का उद्धार करने जाकर स्वयं ही फँस जाओ। जिस क्षेत्र में तुम लोग काम करने जा रहे हो, वह क्षेत्र बड़ा आकर्षक है, बड़ा मनोमोहक है। बड़े-बड़े बुद्धिमान् इसमें पड़कर पागल हो जाते हैं, बड़े-बड़े जितेंद्रिय च्युत हो जाते हैं। अतएव जब तक अपने ऊपर पूर्ण रूप से विश्वास न हो, तब तक इस कार्य में हाथ न डालना।"

शंभूनाथ मुस्किराकर बोले—"इससे आप निश्चित रहिए। जिस कार्य को बड़े-बड़े नहीं कर पाते, उसे कभी-कभी छोटे आदमी कर दिखाते हैं। आँधी में बड़े-बड़े वृक्ष ही गिरते हैं, छोटे पौधे नहीं गिरते।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबू साहब राधाकृष्ण की ओर देखकर बोले—"क्यों भइ, तुम इस संबंध में क्या कहते हो ?"

शंभूनाथ—"इनसे आप क्या पूछते हैं। यह तो मुझसे भी अधिक दृढ़-प्रतिज्ञ हैं। मैं तो चाहे एक बार फिसल भी पड़ूँ, पर यह टस-से-मस होनेवाले जीव नहीं।"

बाबू साहब—"इनका कुछ परिचय तो दो। इतना तो मुझे मालूम है कि यह हमारे सजातीय और तुम्हारे मित्र हैं। इससे अधिक इनके संबंध में मैं कुछ नहीं जानता।"

शंभूनाथ—"यह मेरे सहपाठी रहे हैं, एफ़्० ए० तक मैं और यह साथ-साथ पढ़ते रहे। एफ़्० ए० से इन्होंने पढ़ना छोड़ दिया था। इनके पिता की मृत्यु हो जाने के कारण घर की देख-रेख करनेवाला कोई रहा नहीं, इसलिये इन्हें पढ़ना छोड़ना पड़ा।"

बाबू साहब—"अब यह क्या करते हैं ?"

शंभूनाथ—"घर ही का काम-काज देखते हैं। कुछ ज़मींदारी है, यहाँ शहर में कुछ रियासत है। कुछ लेन-देन करते हैं। इन सबसे चार-पाँच सौ रुपए मासिक की आमदनी है। यही इनकी जीविका है।"

बाबू साहब—"इनके कोई भाई-बाई भी है, या अकेले हैं ?"

शंभूनाथ—"एक छोटा भाई है—बारह-तेरह बरस का। सातवें दर्जे में पढ़ता है, घर पर मैं पढ़ाता हूँ। एक बहन है, १५-१६ बरस की।"

बाबू साहब—"अच्छा, तुम इनके यहाँ ट्यूशन करते हो ?"

शंभूनाथ—"ट्यूशन क्या, यह इनकी कृपा है। इसी बहाने कुछ सहायता कर देते हैं। बाबूजी, यह मेरे सच्चे मित्र हैं। सदैव मेरी सहायता करते रहे, और अब भी जो कुछ कर रहे हैं, वह आप देख ही रहे हैं। पूरे सद्गृहस्थ और सच्चरित्र हैं। हँसमुख इतने हैं कि आदमी को घंटों हँसाते रहें !"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबू साहब—"तब तो बड़े योग्य आदमी हैं। सद्गृहस्थ हैं, तो फिर किसी के जाल में नहीं फँस सकते।"

शंभूनाथ—"जाल में फँसना तो बहुत दूर की बात है—यह ऐसे आदमी हैं कि इनकी घात में चढ़ जाय, तो यह येश्या के कपड़े तक बेच खायँ। इन्हें एश्या-वेश्याओं से स्वाभाविक घृणा है। यह किसी के जाल-बाल में नहीं फँस सकते—इससे आप निश्चित रहिए।"

बाबू साहब—"ऐसा ही आदमी इस कार्य में हाथ डालकर सफलता प्राप्त कर सकता है। इनका विवाह तो हो ही चुका होगा?"

शंभूनाथ—"विवाह हुए पाँच-छ वर्ष हो गए, चार वर्ष का एक पुत्र भी है।"

बाबू साहब—"बड़ी प्रसन्नता की बात है।"

शंभूनाथ—"अच्छा, तो अब आज्ञा दीजिए! आप भी आराम कीजिए।"

बाबू साहब ने दीवार पर लगी हुई घड़ी की ओर देखा, और कहा—"हाँ, नौ बजने के निकट हैं—अब तुम भी जाओ, मैं भी जाता हूँ।"

दोनों उठ खड़े हुए। बाबू साहब ने नौकर को आवाज़ दी। नौकर के आने पर उससे बोले—"कमरा बंद करो—हम ऊपर जाते हैं। हाँ, खूब याद आया—अरे भइ शंभूनाथ, ज़रा सुनना।"

शंभूनाथ अपने जूते पहन रहे थे। बाबू साहब के बुलाने पर पुनः जूता उतारकर आए, और बोले—"कहिए।"

बाबू साहब—"मैं तुम्हें एक शुभ संवाद तो सुनाना भूल ही गया। कल मैं कलेक्टर साहब से मिलने गया था। उनसे ज्ञात हुआ कि तुम्हारी अर्ज़ी मंज़ूर हो गई है, और शीघ्र ही तुम्हारा नामीनेशन डिप्टी-कलेक्टरी में हो जायगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ के मुख पर प्रसन्नता तथा कृतज्ञता का भाव उदय हुआ। वह सिर झुकाकर बोले—"यह सब आपकी ही कृपा का फल है।"

बाबू साहब—"मेरी कृपा क्या, यह तुम्हारे परिश्रम, तुम्हारी योग्यता और उसके साथ ईश्वर के अनुग्रह का फल है—मैंने तो केवल थोड़ी-सी सहायता-मात्र दी है। अच्छा जाओ, बस यही कहना था।"

शंभूनाथ तथा राधाकृष्ण चले गए।

बाबू साहब अपने शयनागार में पहुँचे। उनके पहुँचते ही सावित्री-देवी भी आ गईं। उन्हें देखते ही बाबू साहब ने उनसे पूछा—"श्यामनाथ आया?"

सावित्री—"अभी तो नहीं आया—आता ही होगा।"

बाबू साहब की भृकुटी चढ़ गई। सावित्रीदेवी बोलीं—"क्यों, क्या बात है?"

बाबू साहब—"वह नित्य दस-ग्यारह बजे आता है, और तुम उसे डाँटती नहीं?"

सावित्री—"दस-ग्यारह बजे तो नहीं आता—नौ-साढ़े नौ बजे तक आ जाता है।"

बाबू साहब—"नौ तो बज चुका है।"

सावित्री—"तो अब आता ही होगा। कहीं यार-दोस्तों में बैठ गया होगा।"

बाबू साहब—"हूँ, यार-दोस्तों में बैठ गया होगा। वह बैठा होगा किसी रंडी की बग़ल में—तुम समझती हो, यार-दोस्तों में बैठा है।"

सावित्री—"बस, तुम्हें तो ऐसी ही बातें सूझती हैं।"

बाबू साहब—"सूझती नहीं, यह सच्ची बात है। तुम्हें कुछ पता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है। तुमने ही तो दुलार करके उसे इस दशा पर पहुँचाया है। तुमने उसे छ-सात दिन हुए, दो-सौ रुपए दिए थे ?"

सावित्रीदेवी का गौर मुख-मंडल कुछ क्षणों के लिये पीला पड़ गया। वह घबराकर बोलीं—"मैंने ? मैंने तो नहीं दिए—क्यों ?"

सावित्री की घबराहट देखकर बाबू साहब समझ गए कि बात सच्ची है। अतएव वह कुछ कर्कश स्वर में बोले—"तुमने रुपए अवश्य दिए हैं—तुम झूठ बोलती हो।"

सावित्रीदेवी समझ गईं कि बाबू साहब को रुपयों के संबंध में पक्का समाचार मिल गया है, अन्यथा इतनी दृढ़ता-पूर्वक न कहते। अब छिपाना ठीक नहीं। यह सोचकर वह बोलीं—"मैंने दो सौ रुपए दिए अवश्य हैं, पर उसको थोड़ा ही दिए हैं।"

बाबू साहब—"तो फिर किसे दिए हैं ?"

सावित्री—"वह तो उसके किसी मित्र को दिए गए हैं।"

बाबू साहब—"तुमने किसे दिए—श्यामनाथ को, या उसके मित्र को ? यदि मित्र को दिए, तो किस मित्र को ?"

सावित्री—"मैंने तो श्यामू को ही दिए थे ; पर मुझसे उसने यह कहकर माँगे थे कि उसके किसी मित्र को आवश्यकता है, और उसने उधार माँगे हैं।"

बाबू साहब—"हूँ ! उसने कहा, और तुमने विश्वास कर लिया ?"

सावित्री—"जब उसने बहुत कहा-सुना, बोला—जो रुपए न दोगी, तो मेरी आबरू चली जायगी, मैं दोस्त को मुँह दिखाने योग्य न रहूँगा—तब मैंने दिए। पहले तो मैंने बिलकुल नाहीं ही कर दी थी, पर वह दिन-भर मुँह लपेटे पड़ा रहा—खाने को नहीं आया, तब लाचार होकर मैंने दे दिए।"

बाबू साहब—"लाचार होकर दे दिए। लाचारी किस बात की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

थी—भोजन नहीं किया था, तो न करता। मर जाता, तो अच्छा था। ऐसे कपूत का मरना ही भला है।"

सावित्री—"पराया लड़का कुछ मार डालने के वास्ते थोड़ा ही लिया है। ऐसी छोटी-छोटी बात पर मरने दें, तो बस हो चुका।"

बाबू साहब—"यह छोटी बात है? इसे तुम छोटी बात समझती हो? जानती हो, उसने वह रुपए क्या किए?"

सावित्री—"मैं क्या जानूँ, क्या किए—मुझसे जो कहा, वह मैं जानती हूँ।"

बाबू साहब—"वह रुपए उसने रंडी को दिए हैं।"

सावित्री—"अब यह उसका ईमान-धरम जाने, चाहे जिसे दिए हों।"

बाबू साहब—"तुम्हें मेरी बात पर विश्वास नहीं?"

सावित्री—"तो फिर क्या करूँ? आख़िर वह भी तो आदमी ही है। मुझे दो बरस रटते हो गए कि ब्याह कर दो, पर तुम्हारे कान पर जूँ नहीं रेंगती। ब्याह हो जाता, तो वह क्यों रंडी-मुंडियों में फिरता। कुछ बच्चा नहीं है, जवान हुआ है।"

बाबू साहब—"ख़ैर, अब ब्याह भी हो रहा है—ब्याह करके भी देख लो।"

सावित्री—"ब्याह हो जायगा, तो रंडी-मुंडी सब छूट जायँगी।"

बाबू साहब—"तुम्हारे मारे छूटने पावेंगी, तो छूट जायँगी।"

सावित्री—"तो मैं क्या उससे कहती हूँ कि तू रंडी-मुंडियों जा। सारा दोष मुझी पर लादने लग जाते हैं। मैं ही सस्ती मिल गई हूँ।"

बाबू साहब—"तुम्हारा दोष तो है ही है। तुम उसे डाँट-डपट से रखतीं, रुपए-पैसे देने में विवेक से काम लेतीं, तो उसकी यह दशा क्यों होती।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सावित्री—"हाँ-हाँ, सारे झगड़ों की जड़ मैं ही हूँ। भगवान् मुझे मौत दे दे, तो अच्छा है, सारा पाप कट जाय!"

यह कहते-कहते सावित्रीदेवी के सुदीर्घ नेत्रों में आँसू भर आए। उन आँसुओं ने बाबू साहब के क्रोधाक्त्त चित्त पर तुषार का काम किया। वह नम्र होकर बोले—"बस, कोई कुछ कहे, तो रोना आरंभ कर देती हैं।"

सावित्री—"तुम बात ही ऐसी कहते हो। ज़रा कोई बात होगी, बस, मुझी को डाँटने लगोगे। आप तो जैसे घर में रहते ही नहीं, कोई मतलब ही नहीं। जो काम मुझसे बन नहीं पड़ता, वह तुम करो। सो कुछ करें-धरेंगे तो हैं नहीं—मुझे डाँटने को तैयार हो जायँगे।"

यह कहकर सावित्रीदेवी आँचल से नेत्र पोंछने लगीं।

बाबू साहब बोले—"ख़ैर, जो हुआ, सो हुआ, अब उसे मुझसे पूछे बिना रुपए-पैसे न देना। दो-चार रुपए तक माँगे, तो दे देना—इससे अधिक कभी एक कौड़ी मत देना। समझीं?"

सावित्री—"अच्छी बात है, न दूँगी।"

इक्कीसवाँ परिच्छेद

सुबह के आठ बज चुके हैं। बंदीजान अपने कमरे में गुलाबी रंग का दुशाला ओढ़े बैठी चाय पी रही हैं—पास ही उसकी माता भी बैठी हुई पान लगा रही है। बंदीजान ने चाय का घूँट पीकर कहा—"आज कई दिन से श्यामू बाबू नहीं आते, क्या बात है?"

वृद्धा बोली—"क्या ख़बर, क्या बात है। जिस रोज़ नाच में जाना था, उसी दिन आए थे, तब से नहीं आए।"

बंदो—"उसके बाद तो बीच में एक दिन आए थे।"

वृद्धा सोचते हुए बोली—"आए थे? हाँ, एक दिन आए थे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बंदो—"उस दिन उनका बर्ताव मुझे कुछ रूखा-सा मालूम पड़ा था।"

वृद्धा—"रूखा कैसा ?"

बंदो—"रूखे से मेरा मतलब यह है कि उनकी बातों में पहले-जैसी मुहब्बत की बू नहीं थी।"

वृद्धा सिर हिलाकर बोली—"इसकी दो ही वजह हो सकती हैं।"

बंदो—"कौन-कौन-सी ?"

वृद्धा—"एक वजह तो यह हो सकती है कि कहीं दूसरी जगह दिल लगाया हो।"

बंदो ने चाय का ख़ाली प्याला अलग रख दिया, और आँचल से मुँह पोंछते हुए बोली—"और ?"

वृद्धा—'और दूसरी बात यह हो सकती है कि तुझसे कोई हरकत ऐसी हुई हो, जिससे नाराज़ हो गए हों।"

बंदो—"मुझसे तो कोई हरकत ऐसी नहीं हुई। अगर ऐसा हुआ होता, तो वह मुझसे उसका ज़िक्र ज़रूर करते।"

वृद्धा—"यह तुझे पूरे तौर से यक़ीन है ?"

बंदो—"हाँ, पूरे तौर से।"

वृद्धा—"तब तो फिर एक यही बात हो सकती है कि कहीं दूसरी जगह आँख लड़ी।"

यह सुनकर बंदो के मुख-मंडल पर कुछ अप्रसन्नता का भाव उदय हो आया।

वृद्धा ने बंदो को पान दिया—बंदो ने लेकर खाया।

वृद्धा बोली—"अगर ऐसी बात है, तब तो उन्हें हाथ से निकला समझो।"

बंदो कुछ क्षणों तक बैठी सोचती रही, तत्पश्चात् मुँह बिचका-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कर बोली—"उँह ! निकलें, तो निकल जायँ, उनके बिना कुछ भूकों तो मर न जायँगे—उन-जैसे सत्तर पैदा हो जायँगे।"

वृद्धा—"हाँ, यह तो ठीक है—मगर आसामी अच्छा है—मालदार और भोला ! सिर्फ़ इतनी ही-सी बात है ! महीने में सत्तर-अस्सी रुपए दे ही देता है।"

बंदो—"इतना ही तो ख़्याल है। मगर अभी यह भी नहीं कहा जा सकता कि कहीं दूसरी जगह दिल लगा है। मुमकिन है, कोई और वजह हो—फ़ुर्सत न मिली हो, या कहीं बाहर चले गए हों।"

वृद्धा—"हाँ, यह भी मुमकिन हो सकता है।"

बंदो—"मैं उन्हें आसानी से थोड़ा छोड़ दूँगी—अगर कहीं आँख लड़ी भी होगी, तो भी जहाँ तक होगा, पंजे से निकलने न दूँगी।"

वृद्धा—"बेशक, कोशिश तो ऐसी ही होनी चाहिए। इस चौक में तो तेरे टक्कर की दूसरी है नहीं, यहाँ तो कहीं फँस नहीं सकते। और कहीं की मैं कह नहीं सकती।"

बंदो—"ऐ, इन निगोड़े रंडोबाज़ों का क्या भरोसा—हरदेगी चमचे। ये कभी किसी एक के होके रहे हैं !"

वृद्धा—"श्यामू बाबू अभी उस हालत पर नहीं पहुँचे हैं। वह तो अभी बिल्कुल बच्चे हैं। इस कूचे (मार्ग) में क़दम रखने पर पहलेपहल वह यहीं आए हैं।"

बंदीजान अपने मन में श्यामू बाबू की अल्प-वयस्कता, उनकी सुकुमारता, उनके सौंदर्य, उनके भोलेपन, उनका संसारानभिज्ञता का ध्यान करके बोली—"हाँ, है तो ऐसी ही बात।"

अच्छी चीज़ सबको पसंद आती है। वेश्याएँ भी मनुष्य होती हैं। उन्हें भी ऐसा ही पुरुष अधिक पसंद आता है, जो स्वस्थ, सुंदर तथा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जवान हो—विशेषतः ऐसी दशा में, जब कि वह मालदार भी हो। श्यामू बाबू प्रत्येक दृष्टि से बंदीजान के चित्तानुकूल थे—इसी कारण श्यामू बाबू से संबंध-विच्छेद होने की आशंका उसे दुःखदायी प्रतीत हो रही थी। वह कुछ क्षणों तक चुप रहने के पश्चात् एक दीर्घ निःश्वास लेकर पुनः बोली—"इसमें शक नहीं, श्यामू बाबू बज़ात ख़ुद बड़े सीधे और शरीफ़ हैं, मगर उनकी सोहबत अच्छी नहीं। वह निगोड़ा विश्वनाथ और उसका साथी गोकुल, दोनो ही अज़हद आवारा हैं। श्यामू बाबू अगर कहीं दूसरी जगह फँसेंगे, तो उन्हीं दोनो की वजह से। दोनो ही हरजाई हैं—मुझे तो निगोड़ों की शक्ल से नफ़रत है। अपने पल्ले से तो टका ख़र्च करना जानते ही नहीं।"

वृद्धा—"इसमें शक नहीं, दोनो बिस की गाँठ हैं—जिसमें वह बिशुनाथ—तोबा, ख़ुदा बचावे निगोड़े से—शैतान का चेला है। गोकुलप्रसाद फिर भी ग़नीमत है।"

बंदो—"क्या ख़ाक ग़नीमत है—दोनो जैसे-के-तैसे याजूज-माजूज की जोड़ी है।"

वृद्धा—"जिस रोज़ हम लोग नाच में जा रहे थे, उस रोज़ तो दोनो आए थे। और, उनकी बातों से यह ज़ाहिर होता था कि श्यामू बाबू की ही तलाश में आए हैं।"

बंदो नेत्र विस्फारित करके बोली—"अम्मा, यह तुमने ख़ूब याद दिलाई। उसी दिन से श्यामू बाबू का रंग बदला है।"

वृद्धा—"तूने इस बात पर ग़ौर न किया होगा।"

बंदो—"अल्लाह जानता है, मेरा इस जानिब ध्यान भी नहीं गया था। बस, यही वजह है। उस रोज़ उन दोनो का आना इत्तफ़ाक़ से ख़ाली नहीं था। भला, उतनी रात को श्यामू बाबू से उनका क्या काम था।"

वृद्धा—"कहीं ले गए होंगे। वे मुए तो इसी तलाश में रहते

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हैं कि कोई नई चीज़ दिखाई पड़े। किसी को देखा-सुना होगा, खुद तो खर्च करने से रहे; इसलिये श्यामू बाबू की तलाश हुई होगी। जानते हैं कि रात में रोज़ यहाँ आते हैं—इसलिये यहीं आ गए।"

बंदो विषाद-युक्त हँसी हँसकर बोली—"और इत्तफ़ाक़ देखो कि उस रोज़ हमें नाच में जाना पड़ गया—यह उन्हें और भी अच्छा मौक़ा मिला।"

वृद्धा—"मौक़ा तो ख़ैर मिल ही जाता, उस रोज़ न मिलता, और किसी दिन मिल जाता। और उसी दिन ले जा सकते थे। ज़री ज़ोर देते, तो श्यामू बाबू साथ चले जाते। उनकी बात वह टाल नहीं सकते थे।"

बंदो—"लेकिन हमें यह पता तो लग जाता कि कहीं लिए जा रहे हैं—नाच में जाने से यह तो मालूम ही न हुआ।"

वृद्धा—"हाँ, सिर्फ़ इतना ही फ़ायदा होता। ख़ैर, यह तो अब भी मालूम ही हो जायगा—कब तक पोशीदा (गुप्त) रहेगा।"

बंदो—"अब की जिस रोज़ श्यामू बाबू आए, उसी दिन उनसे सब उगलवा लूँगी।"

वृद्धा—"हाँ, आवें, तब तो ऐसा हो सकता है, लेकिन अगर न आए, तो?"

बंदीजान कुछ भयभीत होकर बोली—"या अल्लाह! क्या एक-दम से क़िता-ताल्लुक़ (संबंध-विच्छेद) कर लेंगे? नहीं अम्मा, यह तुम्हारा ख़याल ग़लत है। श्यामू बाबू का दिल इतना सख़्त नहीं है। वह अगर ताल्लुक़ छोड़ेंगे भी, तो आहिस्ता-आहिस्ता—इस तरह एकदम से पल्ला नहीं झाड़ देंगे।"

वृद्धा—"ख़ैर, इसकी बाबत तो तू ही जान सकती है—मुझे इस की क्या ख़बर!"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बंदो—"हाँ, मैं जानती हूँ, उनके दिल में मेरी काफ़ी मुहब्बत है—वह मुहब्बत इस तरह एकदम से काफ़ूर नहीं हो सकती।"

वृद्धा—"तू तो है बेवक़ूफ़! इसी से मैं कहती हूँ कि तू अभी लौंडिया ही है। तू बड़ी जल्दी लोगों पर एतबार कर लेती है। ऐ मेरी बन्नो, रंडीबाज़ों की शुरू में यही हालत होती है, मगर रफ़्ता-रफ़्ता (क्रमशः) सब हरजाई हो जाते हैं। इनका एतबार करना रंडीपन के सरासर ख़िलाफ़ है।"

बंदीजान कुछ झुँझलाकर बोली—"ऐ, तो फिर जो होना होगा, होगा! आवें, तो वाह-वाह, न आवें, तो वाह-वाह। उनके लिये जान थोड़ा ही दे देंगें। हमारे हुस्न (सौंदर्य) और जोबन को अल्लाह सलामत रक्खे उन-जैसे तीन सौ साथ आवेंगे।"

वृद्धा—"ख़ैर, यह तो हई है, मगर जहाँ तक मुमकिन हो, वहाँ तक हाथ से क्यों जाने दें।"

बंदो—"तो फिर क्या करें?"

वृद्धा—"उनको बुलवाना चाहिए। किसी को उनके घर पर भेजना चाहिए—देखे कि वह यहीं हैं, या कहीं बाहर गए हैं। अगर यहीं हैं, तो उन्हें आज शाम को बुलवाया जाय!"

बंदो प्रसन्न होकर बोली—"ऐ, मैं क़ुर्बान! यह तो अम्मा तुमने अच्छी तरकीब सोची। सलारू को भेजो।"

वृद्धा—"सलारू को? सलारू को भेजना ठीक नहीं—वह लड़का है, नासमझ है। वहाँ जाकर किसी और से कुछ कह दिया, या किसी ने दम देकर पूछा, तो मुफ़्त में श्यामू बाबू परेशानी में पड़ जायँगे, और मामला और भी ज़्यादा ख़राब हो जायगा। किसी समझदार आदमी को भेजना चाहिए।"

बंदो—"तो मुहम्मदअली को भेज दो।"

मुहम्मदअली बंदीजान का तबलची था। वृद्धा ने सलारू को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुकारा, और कहा—"जा ज़री दौड़कर मुहम्मदअली को तो बुला ला।"

बंदीजान बोल उठी—"कहना, बड़ा ज़रूरी काम है, फ़ौरन् चलो।"

वृद्धा उसके सामने दो आने फेंककर बोली—"और ले, उधर ही से दो आने के पान भी लेते आना—बिना लगे लाना!"

सलारू पैसे उठाकर चलता बना।

सलारू के जाने के पश्चात् वृद्धा तो भीतर किसी कार्य से चली गई। बंदीजान चुपचाप एक ओर दृष्टि जमाकर विचार-सागर में डूब गई। बंदीजान के हृदय में इस समय वे ही भाव उत्पन्न हो रहे थे, जो एक स्त्री-हृदय में उस समय उठते हैं, जब प्रियतम किसी दूसरी स्त्री के अलकावलि-पाश में फँसकर निष्ठुर व्यवहार करने लगता है। बंदीजान वेश्या होते हुए भी स्त्री थी। वह सतीत्व-हीन होते हुए भी स्त्रीत्व-हीन नहीं थी। उसकी रुचि भी वैसी ही थी, जैसी एक स्त्री की स्वाभाविक रुचि होती है। यह बात दूसरी थी कि वह धन के कारण अपनी रुचि के प्रतिकूल कार्य करने को भी प्रस्तुत रहती थी, धन के कारण अरुचिकारक पुरुष से भी प्रेमालाप करती थी। केवल इतना ही नहीं—धन के कारण उसे ऐसे पुरुष का भी तिरस्कार करना पड़ता था, जिससे प्रेमालाप करने में उसके हृदय को आनंद प्राप्त होता था। इसीलिये वह वेश्या थी—यही उसमें वेश्यापन था।

इस समय बंदीजान को यही चिंता थी कि जहाँ तक संभव हो सके, श्यामनाथ उसी के होके रहें—किसी दूसरी स्त्री पर दृष्टि न डालें। किसी दूसरी स्त्री के साथ श्यामू बाबू के प्रेम-संबंध की कल्पना करने से उसके हृदय में सौतिया-डाह उत्पन्न हो रहा था। वह अपना ओंठ चबा-चबाकर चिंता-सागर का मंथन कर रही थी। इसी प्रकार १५ मिनट के लगभग व्यतीत हुए। हठात् उसी समय ज़ीने पर किसी का पद-शब्द सुनाई पड़ा। बंदीजान ने चौंककर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.
ज़ीने के द्वार की ओर दृष्टि फेरी। दूसरे ही क्षण मुहम्मदअली ने कमरे में प्रवेश किया। उसे देखते ही बंदीजान ने किंचित् मुस्किराकर कहा—"आओ, सलारू कहाँ रह गया?"

मुहम्मद—"आता है, पान ले रहा है।"

बंदीजान ने घर के भीतर की ओर मुँह करके पुकारा—"अम्मी जान—ऐ अम्मी जान! मुहम्मदअली आ गए।" यह कहकर उसने पुनः मुहम्मदअली की ओर देखकर कहा—"क्या कर रहे थे?"

मुहम्मद—"कुछ नहीं, नाश्ता करके उठा था—वैसे ही सलारू पहुँच गया। बोला—चलो बुलाती हैं। मैं उठकर चला आया, बल्कि हुक्का भी नहीं पिया।"

बंदीजान—"हुक्का यहाँ पी लो।"

मुहम्मद—"पहले यह बताइए कि इस वक्त बुलाया क्यों? मैंने सलारू से पूछा था कि मुजरा-वुजरा होगा क्या। उसने कहा—नहीं। तब मुझे और भी तशवीश (चिंता) हुई कि या खुदा, इतने सबेरे क्यों बुलाया।"

उसी समय वृद्धा आ गई। वह मुहम्मदअली को देखकर बोली—"आ गए!"

मुहम्मद—"हाँ, कहिए हुक्म!"

वृद्धा बैठकर बोली—"तुम्हें इस वक़्त इसलिये तकलीफ़ दी कि तुम ज़री श्यामू बाबू के मकान पर चले जाओ, और उन्हें अलहिदा बुलाकर कहना कि आप कई रोज़ से तशरीफ़ नहीं लाए—बड़ी तशवीश है। बंदो बहुत बेक़रार है। लिहाज़ा आज आप ज़रूर तशरीफ़ लावें। इसके अलावा और जो तुम मुनासिब समझना, अपने तरीक़े पर कह देना।—उनका घर तो जानते हो न?"

मुहम्मद—"हाँ जानता हूँ, एक बार हो आया हूँ।"

वृद्धा—"तो बस फिर चले जाओ—ज़रा ढंग से कहना।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मुहम्मद—"अजी, इस तरह लो कि .खुदा चाहे, तो घबराए हुए दौड़े आवें। मालूम होता है, कई रोज़ से आए नहीं। मैंने उन्हें इन बीचों यहाँ देखा नहीं।"

वृद्धा—"हाँ, कई रोज़ से नहीं आए। जिस रोज़ नवाब साहब की महफ़िल हुई थी, उसके बाद बीच में सिर्फ़ एक दिन आए थे।"

मुहम्मद—"अच्छा, तो मैं जाता हूँ।"

बंदीजान बोल उठी—"हाँ जाओ, मेरी जानिब से ख़ूब अच्छी तरह कह देना। और अलहिदा बुलाकर कहना। उनके किसी नौकर-चाकर को मत बतलाना कि कहाँ से आए हो।"

मुहम्मद—"मैं .खुद समझता हूँ—मुझसे ये बातें कहने की ज़रूरत ही नहीं।"

यह कहकर मुहम्मद उठने लगा, परंतु फिर बैठकर बोला—"लाओ कम-से-कम पान तो खिला दो—हुक्का तो लौटकर पिऊँगा।"

वृद्धा ने जल्दी से दो पान लगाकर मुहम्मदअली को दे दिए। पान खाकर मियाँ मुहम्मदअली चल दिए।

श्यामू बाबू के मकान पर पहुँचकर उसने द्वार पर खड़े हुए नौकर से पूछा—"बाबू श्यामनाथ हैं?"

नौकर ने कहा—"हाँ, हैं तो—काहे?"

मुहम्मद—"ज़री उन्हें बुला देना—उनसे कुछ काम है।"

नौकर—"तो उनते कही का?"

मुहम्मद—"यह कह देना कि मुहम्मदअली आपसे दो मिनट के लिये मिलना चाहता है। हाँ, ज़री चले तो जाना मेरे भाई—शाबाश है!"

नौकर भीतर जाने लगा, तो मुहम्मदअली ने पुनः कहा—"आज ही लौटना भैया—ऐसा न हो कि हम यहाँ खड़े टापते ही रहें।"

नौकर ने इसका कुछ उत्तर न दिया, और अंदर चला गया। मुहम्मदअली द्वार पर से कुछ दूर पर हटकर खड़े हो गए।

CC-0. In Public Domain. Funding by MoE-IKS

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लगभग ५ मिनट व्यतीत होने के पश्चात् कहार लौटा, और उसने हाथ के इशारे से मुहम्मदअली को बुलाया। उसके पास आ जाने पर उसने कहा—"उह तरफ़ कमरा म चलो, बाबूजी आवत हैं।"

मुहम्मदअली श्यामू बाबू के निजी कमरे की ओर चला। वहाँ पहुँचकर उसने देखा, श्यामू बाबू एक धुस्सा ओढ़े कमरे के बीच के द्वार पर खड़े हैं। मुहम्मदअली को देखते ही वह स्वयं कमरे के भीतर हो गए। और, मुहम्मदअली से भी कहा—"आओ।"

मुहम्मदअली भीतर चला गया। श्यामू बाबू ने खड़े-खड़े ही पूछा—"क्यों? कैसे आए?"

मुहम्मद—"आया क्या हुज़ूर, आप कई रोज़ से उधर तशरीफ़ नहीं ले गए। बंदीजान निहायत बेक़रार हैं। आज आपको बुलाया है। ख़ुदा जानता है, सैकड़ों क़समें दिलाई हैं। बोलीं—मेरी जानिब से कह देना कि उन्हें मेरे सिर की क़सम है, ज़रूर आवें। उन्हें तो यह फ़िक्र थी कि कहीं ख़ुदा-न-ख़्वास्ता दुश्मनों की तबियत नासाज़ (अस्वस्थ) हो गई। ख़ुदा का शुक्र है कि हुज़ूर राज़ी-ख़ुशी हैं।"

श्यामनाथ मुँह बनाकर बोले—"हाँ, तबियत तो कुछ ज़रूर ख़राब हो गई थी। ज़ुकाम हो गया था। दो-तीन रोज़ रात को हरारत रही। इसी वजह से नहीं आ सका। अब भी तबियत अच्छी तरह साफ़ नहीं हुई।"

मुहम्मद—"तो एक दस मिनट के लिये ज़री टहलते हुए चले आइएगा। मैं बीड़ा उठा करके आया हूँ कि बाबू साहब से आने का वादा लेकर आऊँगा, और अल्लाह क़सम, मैं यही जाकर कहूँगा कि श्यामू बाबू आज ज़रूर आवेंगे। तो ऐसा कीजिएगा कि मेरी बात न जाय।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्यामनाथ—"मैं कोशिश करूँगा।"

मुहम्मदअली—"कोशिश क्या, बस आ जाइएगा। चाहे सूरत ही दिखाकर लौट आइएगा। हुक्म हो, तो मैं सवारी लेकर हाज़िर हो जाऊँ।"

श्यामनाथ—"नहीं, सवारी की क्या ज़रूरत है।"

मुहम्मद—"ख़ैर, पैदल ही सही। टहलते हुए चले आइएगा।"

श्यामनाथ कुछ क्षणों तक विचार करके बोले—"अच्छी बात है, आऊँगा।"

मुहम्मद—"ज़रूर?"

श्यामनाथ—"हाँ, ज़रूर ही समझो।"

मुहम्मदअली विदा हुआ। जब वह घूमकर मुख्य द्वार की ओर आया, तो वहाँ उसने एक मुसलमान को खड़े देखा। उसे देखते ही उसने कहा—"अस्सलामवालैकुम!"

उसने कहा—"वालैकुमस्सलाम!"

मुहम्मदअली ने पूछा—"कहो, यहाँ कैसे खड़े हो?"

वह मुसलमान मुस्किराकर बोला—"पहले तुम बताओ, तुम यहाँ कैसे? जिस काम के मुतल्लिक़ तुम आए, उसी के मुतल्लिक़ हम आए।"

यह सुनते ही मुहम्मदअली चकराया। बोला—"क्या कहा? तुम्हें क्या मालूम, मैं किस काम से आया था।"

वह—"तुम यहाँ और किस काम के लिये आए होगे, वायफ़ा-वायफ़ा ठीक किया जाता होगा, उसी वास्ते आए होगे। हमारा-तुम्हारा तो हर जगह साथ होता है।"

अब मुहम्मदअली और भी विस्मित हुआ। बोला—"तुम बक क्या रहे हो, मेरी समझ ही में नहीं आता। कहीं सवेरे-सवेरे सब्ज़ी (भाँग) तो नहीं पी ली।"

CC-0. Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह—"तोबा ! तुम भी क्या बातें करते हो। अरे म्याँ, इस घर में शादी है कि नहीं ? पहले यह बताओ।"

मुहम्मदअली—"शादी ! किसकी शादी ? वल्लाह, मुझे कुछ भी पता नहीं।"

वह—"अच्छा ! मैं यही समझा था कि तुम भी शादी के मुतल्लिक़ आए होगे।"

मुहम्मदअली—"तो यहाँ कोई शादी है क्या ?"

वह—"हाँ !"

मुहम्मदअली—"किसकी ?"

वह—"बाबू बिरजमोहनलाल के साहबज़ादे (पुत्र) की ?"

मुहम्मदअली चकित होकर बोला—"कब ?"

वह—"बीस-पचीस रोज़ हैं।"

मुहम्मद—"तुम्हें आतशबाज़ी बनाने को बुलाया होगा।"

वह—"आतशबाज़ी की फ़र्मायश मिले, तो कई दिन हुए—आज कुछ रुपए लेने आया हूँ।"

मुहम्मद—"अच्छा ! वल्लाह, यह बात मुझे नहीं मालूम थी।"

उसी समय द्वार पर एक नौकर ने आकर आतशबाज़ से कहा—"आओ मियाँ, बाबूजी बुलावत हैं।"

आतशबाज़—"अच्छा !" कहकर बोला—"जाऊँ रुपए ले आऊँ।"

मुहम्मद—"जाओ, मैं भी जाता हूँ।"

आतशबाज़ उधर चला गया। इधर मुहम्मदअली मन-ही-मन इस बात पर विचार करता हुआ बंदीजान के घर पहुँचा। बंदीजान ने उसे देखते ही पूछा—"कहो, मिले थे ?"

मुहम्मद—"हाँ, मिले थे !"

बंदीजान—"बख़ैरियत तो हैं ?"

मुहम्मद—"जी हाँ, अल्लाह का शुक्र है। सिर्फ़ मुलाक़ात हो गयी

CC-0. In Public Domain. Funding by MoE-IKS

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

था—दो-तीन रोज़ ख़फ़ीफ़ हरारत भी रही।"

वृद्धा बोली—"तभी नहीं आ सके।"

बंदीजान—"आज आयँगे कि नहीं?"

मुहम्मद—"वादा तो पुख़्ता किया है। मैंने कहा भी इस तरीक़े पर कि हज़ार हाथ तो ज़रूर आयँगे—मगर एक बात और मालूम हुई।"

बंदीजान का कलेजा धड़कने लगा, बोली—"क्या?"

मुहम्मदअली—"उनकी शादी हो रही है।"

बंदीजान के हृदय में धक्का लगा। ग्लान-मुख होकर बोली—"सच?"

मुहम्मद—"क़ुरान क़सम—झूठ थोड़ा ही कहता हूँ।"

बंदीजान—"तुम्हें कैसे मालूम हुआ?"

मुहम्मद—"अब यह न पूछिए।"

वृद्धा—"आख़िर कुछ मालूम तो हो।"

मुहम्मद—"मैंने उनके एक नौकर को दम-दिलासा देकर पूछा।"

वृद्धा—"क्या पूछा, शादी की बाबत?"

मुहम्मद—"तोबा, पूरी बात सुनी ही नहीं, सवाल करने शुरू कर दिए। मुझे क्या मालूम कि शादी होनेवाली है। मैं शादी की बात पूछ ही कैसे सकता था?"

बंदी—"अम्मा, तुम चुपकी रहो, हाँ जी, तुम कहो।"

मुहम्मद—"मैंने नौकर से पूछा कि आजकल छोटे बाबू के क्या रंग-ढंग हैं। शाम को सैर-वैर के लिये जाते हैं या नहीं। इस पर वह बोला, आजकल तो नहीं जाते हैं। शादी की तैयारियाँ हो रही हैं, इसलिये घर से कम निकलते हैं। पहले तो वह कुछ बत-लाता ही नहीं था, अगर मैं तो तुम जानो एक ही काइयाँ हूँ, इन

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहारों-वहारों को बनाते क्या देर लगती है, मैंने उसे ऐसे दम-पुचारे दिए कि उसने सब बातें बता दीं।"

इस प्रकार सत्य की हत्या करके मुहम्मदअली ने अपनी कार्य-कुशलता तथा चतुरता का रंग जमाया। वृद्धा बंदीजान से बोली—"देखा, मुहम्मदअली के भेजने से इतना फ़ायदा हुआ। होशियार आदमी एक काम करने जाता है, तो दो काम अपनी समझ से करके आता है।"

बंदीजान का मुख शुष्क हो रहा था। उसने माता की बात का कुछ उत्तर नहीं दिया। मुहम्मदअली बोला—"अब ज़री हुक्का तो पिलवा दो, नाश्ता करने के बाद एक चिलम भी नहीं पी। जी मालिश कर रहा है।"

वृद्धा ने खलारू से कहा—"जा हुक्का भर ला।"

बंदीजान—"कब की शादी है, यह कुछ मालूम हुआ?"

मुहम्मद—"ठीक तारीख़ का तो पता नहीं लगा, मगर सिर्फ़ पंद्रह-बीस रोज़ बाक़ी हैं।"

वृद्धा—"तब तो मामला बिल्कुल क़रीब आ गया।"

मुहम्मदअली—"इसीलिये आते नहीं। घर से निकलने ही न पाते होंगे।"

वृद्धा—"यही बात है।"

बंदीजान—"अगर यह बात है, तो फिर आज आने का वादा उन्होंने कैसे कर लिया?"

मुहम्मदअली ने अपना रंग जमाने के लिये ये सब बातें गढ़ी थीं। श्यामू बाबू नित्य बेगम के यहाँ जाया करते थे, इसी कारण से बंदीजान के यहाँ नहीं आते थे। पहले तो वृद्धा तथा बंदीजान के मन में यह संदेह उत्पन्न हुआ था कि कहीं अन्यत्र आँख लड़ी है, वह बिल्कुल ठीक था। परंतु शादी के समाचार और उसमें मुहम्मद-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अली के मूढ़ता-पूर्ण लगाए हुए नमक-मिर्च ने उनके ध्यान को उस संदेह की ओर से विचलित कर दिया। उन्होंने यही समझा कि विवाह निकट होने के कारण श्यामू बाबू नहीं आते। अब बंदोजान के मन में यह प्रश्न उठा कि जब वह घर से निकल नहीं सकते, तो उन्होंने आज यहाँ आने का वादा कैसे कर लिया। इसीलिये उसने उपर्युक्त प्रश्न किया। इस प्रश्न को सुनकर मुहम्मदअली कुछ खिसियाए, परंतु शीघ्र ही सँभलकर बोले—"अगर आना चाहेंगे, तो हज़ार तरीक़े पैदा कर सकते हैं।"

वृद्धा—"हाँ, अगर आना चाहेंगे तो।"

उसी समय ललारू ने हुक्क़ा लाकर मुहम्मदअली के सामने रख दिया। मुहम्मदअली हुक्क़े की निगाली पकड़कर बोला—"वादा कर चुके हैं, इसलिये बहुत मुमकिन है, आ जायँ।"

वृद्धा—"खैर, वह आवें या न आवें, मगर यह बात पक्की हो गई कि अब वह हाथ से गए।"

मुहम्मदअली हुक्के का कश लेकर बोला—"हाँ, नई बीवी आवेगी। कम-से-कम चार-छ महीने तो उससे रब्त-ज़ब्त (मेल-मुहब्बत) रहेगा ही, बाद को अल्लाह मालिक है।"

वृद्धा सिर हिलाकर बोली—"श्यामू बाबू रंडीबाज़ी तो छोड़ नहीं सकते, यह तो ग़ैरमुमकिन है, मगर हाँ, यह मुमकिन है कि साल-छ महीने के लिये बंद कर दें—मगर यह तभी मुमकिन है, जब कि बीवी ख़ूबसूरत मिले।"

मुहम्मदअली—"हाँ, यह तो बात पक्की है। अगर बीवी पसंद न आई, तो शादी के एक हफ़्ते बाद फिर इसी कमरे में दिखाई पड़ेंगे।"

बंदीजान ऊबकर बोली—"ऐ, हटाओ भी इस तज़किरे (वृत्तांत) को—जो होनी होगी, होगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मुहम्मदअली—"शादी में कोई तायफ़ा तो जायगा ही—मुमकिन है, हमीं बुलाए जायँ।"

बंदीजान विषाद-युक्त हँसी हँसकर बोली—"हूँ, मुँह धो रखिए!"

मुहम्मदअली—"क्यों, इसमें मुँह धोने की कौन-सी-बात है? हम न सही, हमारे भाई-बंद दूसरे सही। शादी में क्या नाच न होगा?"

वृद्धा—"आजकल हिंदुओं में नाच होते कहाँ हैं। नाच के तो ये लोग सख़्त ख़िलाफ़ होते जा रहे हैं। जब से गांधी-मत चला है, तब से नाच तो बंद ही हो गए।"

मुहम्मदअली—'आख़िर नाच क्यों बंद हुए, यह मेरी समझ ही में नहीं आता!"

वृद्धा—"मैंने भी एक बार एक हिंदू से यही सवाल किया था; उन्होंने कहा कि नाच इसलिये बंद हो गए कि नाच की वजह से नौजवानों में ऐयाशी बढ़ती है।"

मुहम्मदअली—"तोबा, यह किसी औंधी खोपड़ी की उपज है। जब से नाच बंद हुए, तब से ऐयाशी और बढ़ गई।"

वृद्धा—"और क्या। नाच बंद कर दिए, मगर रंडीबाज़ी बंद न हुई—वह दिन-ब-दिन बढ़ती ही जाती है। हाँ, रंडियाँ बेचारी अलबत्ता ज़लील हो गईं। पहले सैकड़ों रंडियाँ सिर्फ़ नाच-गाने का ही पेशा करती थीं, क़सब करने के पास भी न फटकती थीं। किसी एक शख़्स से ताल्लुक़ हो जाता था, उसी के साथ उम्र कट जाती थी। मेरी वाल्दह अपनी तमाम उम्र में सिर्फ़ दो आदमियों के पास रहीं, तीसरे का मुँह नहीं देखा। इसकी वजह यह थी कि नाच-गाने से काफ़ी आमदनी रहती थी; उन्हें इस बात की ज़रूरत ही न रहती थी कि क़सब करें। और, न किसी की यह हिम्मत पड़ती थी कि कोई उनसे इस बात की दरख़्वास्त करे। अगर किसी ने हिम्मत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

करके कुछ कहा भी, तो साफ़ इनकार ! क़सब से और नाच-गाने से दुश्मनी है। क़सब करनेवाली रंडी कभी अच्छी गानेवाली हो ही नहीं सकती। जब तक सीने में ताक़त न होगी—दम पर क़ाबू न होगा—तब तक अच्छा गाना गाया ही नहीं जा सकता। एक टीप लगाने में ही ख़ून थूकने लगे। जब से नाच बंद हुए, तब से रंडियों ने गाना-नाचना सीखना छोड़ दिया। अब जिसे देखो, वह क़सब ही करती है। आख़िर करें क्या, किसी तरह गुज़र तो चले। जो ज़रा ख़ान-दानी हैं, वे अलबत्ता कुछ गाना-रीरी सीख लेती हैं। मगर इल्म मौसीक़ी (संगीत-शास्त्र) की उन्हें हवा भी नहीं लगती। नतीजा यह हो रहा है कि हम लोगों में से यह इल्म उठता जा रहा है, और उसकी जगह क़सब लेता जा रहा है। पहले शहर में सौ रंडियाँ होती थीं, तो उनमें से २०-२५ सिर्फ़ गाने का पेशा करती थीं, और बाक़ी अपना क़सब करती थीं; मगर अब जिस शहर में १०० रंडियाँ हैं, तो वे सब-की-सब क़सब ही करती हैं। करें क्या, बिना इसके काम ही नहीं चलता। अब बताओ, यह रंडीबाज़ी बढ़ने के आसार (लक्षण) हैं या घटने के। ऐयाशी नाच बंद होने से थोड़ा ही बंद हो सकती है। ऐयाशी तो तब बंद हो, जब लोगों को रंडी की ज़रूरत ही महसूस न हो।"

मुहम्मदअली बोल उठा—"सो यह होना नामुमकिन है। रंडियों की ज़रूरत इंसान हमेशा महसूस करता रहेगा। हाँ, अगर यह हो जाय कि लोग अपने घरों में ही काम निकालने लगें, तो बात दूसरी है।"

वृद्धा—"सो तो हो ही रहा है। रंडी के नाम से सौ कोस भागेंगे; क्योंकि रंडी के यहाँ जाने में लोग जान जाते हैं और बदनामी होती है; मगर पराई बहू-बेटी ख़राब करते फिरते हैं, वह जायज़ (उचित

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है, क्योंकि उसमें हाल खुलने का ख़ौफ़ कम रहता है। पहले लोग यह समझा करते थे कि रंडियाँ शरीफ़ों की इज़्ज़त-आबरू बचाने का ज़रिया हैं। जिन लोगों के औरत नहीं, जो लोग शादी नहीं कर सकते, वह रंडियों से अपना काम निकाल लेते हैं। अगर रंडियाँ न हों, तो वे भले घरों की बहू-बेटियों को ताकेंगे या नहीं?"

मुहम्मदअली—"ज़रूर ताकेंगे। महज़ ताकना ही नहीं, ख़राब करने की कोशिश करेंगे। हरएक शहर में ऐसे हज़ारों आदमी होते हैं, जिनके औरत-वौरत कुछ नहीं होती, रंडियों से ही काम चलाते हैं। अब अगर रंडियाँ नेस्त-नाबूद हो जायँ, तो वे लोग क्या करेंगे। यह तो हो नहीं सकता कि वे सब्र करके बैठ रहें।"

वृद्धा—"अजी, तोबा करो—ऐसा कभी हो सकता है?"

मुहम्मदअली—"तो बस, वे लोग भले घरों की बहू-बेटियाँ ख़राब करने की कोशिश करेंगे।"

बंदीजान बोल उठी—"ऐ, हटाओ भी, कहाँ की दास्तान छेड़ दी।"

वृद्धा ने दीवार पर लगी हुई घड़ी की ओर देखा, दस बज चुके थे। अतएव वह मुहम्मदअली से बोली—"अच्छा, अब तुम भी जाओ, खाना-वाना खाओ। हम भी खाना खाने जाते हैं।"

बाईसवाँ परिच्छेद

शंभूनाथ राधाकृष्ण के घर सवेरे आठ बजे जाया करते थे। आठ बजे से नौ-सवा नौ तक उनके कनिष्ठ भ्राता बालकृष्ण को पढ़ाया करते थे। राधाकृष्ण की भगिनी सुभद्रा भी उनके पास आ बैठती थी। वह बालिका-विद्यालय में पढ़ती थी, और इसी वर्ष मिडिल की परीक्षा देनेवाली थी। सुभद्रा अधिक सुंदर नहीं थी, परंतु यह भी नहीं कहा जा सकता कि वह कुरूपा थी। वर्ण गौर था, मुख

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कुछ लंबा, नेत्र सामान्य, दोनों भौंहें घनी तथा जुटी हुई। शरीर की दुबली-पतली थी। अंग-प्रत्यंग की अलग-अलग आलोचना करने से तो सुभद्रा अधिक सुंदर नहीं कही जा सकती थी, परंतु जिस समय वह सामने आ खड़ी होती थी, और उसकी समस्त देह पर दृष्टि पड़ती थी, तो वह सुंदर प्रतीत होती थी। मुख-मंडल की शोभा तो उसकी घनी तथा जुटी हुई भ्रुकुटियों के कारण बढ़ गई थी, और शरीर की शोभा उसकी सुकुमारता तथा कोमलता के कारण। दुबली-पतली होने के कारण उसमें सुकुमारता तथा कोमलता का आधिक्य प्रतीत होता था। उसके हाव-भाव, उसके उठने-बैठने तथा चलने-फिरने से उसकी नज़ाकत प्रकट होती थी। उसकी यह विशेषता उसके सौंदर्य की न्यूनता को बहुत कुछ दबाए हुए थी। उसमें एक गुण और था—उसका कंठ-स्वर अत्यंत मधुर था, और वह गाना तथा हारमोनियम बजाना भी अच्छा जानती थी। शंभूनाथ से वह नियमबद्ध-रूप से नहीं पढ़ती थी, वरन् कभी-कभी कोई बात पूछ लिया करती थी।

साढ़े आठ बज चुके थे। शंभूनाथ नियमानुसार राधाकृष्ण के बाहरी कमरे में बैठे बालकृष्ण को पढ़ा रहे थे। राधाकृष्ण का कमरा हिंदोस्तानी ढंग से सजा हुआ था। बैठक फ़र्श की थी। फ़र्श पर दरी तथा श्वेत चाँदनी के ऊपर मोटे ऊनी क़ालीन बिछे हुए थे, और तीन गाव-तकिए धरे थे। कमरे के एक ओर एक छोटी मेज़ धरी थी। इस मेज़ पर लिखने-पढ़ने का सामान रक्खा रहता था, और पास ही दो-तीन कुर्सियाँ पड़ी रहती थीं। इसी मेज़ के पास एक कुर्सी पर शंभूनाथ बैठे हुए थे, और मेज़ के दूसरी ओर, शंभूनाथ के ठीक सामने, एक कुर्सी पर बालकृष्ण बैठा हुआ था। बालकृष्ण की बग़ल में एक दूसरी छोटी कुर्सी पड़ी थी। शंभूनाथ बालकृष्ण को गणित का एक प्रश्न समझा रहे थे। उसी समय कमरे का अंतःपुर-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

संबंधी द्वार धीरे-धीरे खुला, और सुभद्रा ने कोमल पुष्प-शाखा की भाँति लचकते हुए प्रवेश किया। शंभूनाथ और बालकृष्ण, दोनो प्रश्न में इतने दत्तचित्त थे कि उन्हें सुभद्रा के आने का पता ही न लगा। वे दोनो सिर झुकाए अपना कार्य कर रहे थे। सुभद्रा धीरे-धीरे मेज़ के पास आई, और बालकृष्ण के पास पड़ी हुई ख़ाली कुर्सी की पीठ पर हाथ धरकर खड़ी हो गई। शंभूनाथ प्रश्न-संबंधी बातें बालकृष्ण को समझा रहे थे। सुभद्रा चुपचाप खड़ी होकर उनकी बातें सुनने लगी। सुभद्रा की दृष्टि शंभूनाथ के मुख-मंडल पर लग गई। शंभूनाथ का गौर मुख-मंडल, बड़े-बड़े नेत्र—जो ठीक उनकी माता सुलोचना के नेत्रों के प्रतिरूप थे, घनी तथा छोटी-छोटी मूँछें, जो अत्यंत काली तथा चमकदार थीं, सिर के बाल—यद्यपि बिल्कुल सादे हिंदोस्तानी ढंग पर कटे हुए थे, परंतु उनमें यथेष्ट चमक तथा कृष्णता थी, इन सब बातों से शंभूनाथ एक सुंदर युवक दिखाई पड़ते थे। इन सबसे अधिक उनकी विद्वत्ता, बुद्धिमत्ता तथा उनके सज्जन-स्वभाव का एक अपूर्व तेज उनके मुख पर था। इस तेज ने उनके मुख-मंडल के प्रकृत-सौंदर्य में चार चाँद लगा दिए थे। सुभद्रा अपनी स्थिर दृष्टि की सहायता से मानो नेत्रों द्वारा शंभूनाथ के रूप-सुधा को पान कर रही थी।

कुछ क्षण इसी प्रकार व्यतीत हो जाने पर शंभूनाथ ने अपना कार्य समाप्त करके सिर उठाया, और किंचित् चौंककर सुभद्रा के मुख की ओर देखा। शंभूनाथ को सिर उठाते देख सुभद्रा ने अपनी आँखें नीची कर लीं। शंभूनाथ सुभद्रा को देखकर किंचित् मुस्किराते हुए बोले—"क्यों सुभद्रा, क्या है? कुछ पूछना है क्या?"

सुभद्रा उसी प्रकार नेत्र नीचे किए हुए मृदु स्वर में बोली—"हाँ, एक सवाल पूछना है।"

शंभूनाथ—"लाओ, कौन-सा सवाल है?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुभद्रा ने अपने आँचल के भीतर से एक कापी निकालकर शंभूनाथ के सामने रख दी। शंभूनाथ ने उसे देखकर पूछा—"इसमें क्या बात तुम्हारी समझ में नहीं आती ?"

सुभद्रा ने बता दिया। शंभूनाथ ने कहा—"अच्छा, तो कुर्सी पर पैठ जाओ, मैं अभी समझाए देता हूँ।"

सुभद्रा धीरे से कुर्सी पर बैठ गई।

शंभूनाथ पेंसिल हाथ में लेकर सवाल समझाने लगे।

शंभूनाथ पेंसिल से लिखते भी जाते थे, और मुख से भी बोलते जाते थे। जब वह दृष्टि नीची करके कापी की ओर देखने लगते थे, तब सुभद्रा उनके मुख की ओर ताकने लगती थी, और जब वह सुभद्रा के मुख की ओर दृष्टि उठाते थे, तब सुभद्रा कापी की ओर देखने लगती थी। इसी प्रकार होते-होते एक बेर ऐसा संयोग उपस्थित हो गया कि उन दोनो की आँखें चार हो गईं। सुभद्रा ने जल्दी से अपनी दृष्टि नीची कर ली। शंभूनाथ रुककर बोले—"तुम समझ नहीं रही हो, तुम्हारा ध्यान कहीं और है।" सुभद्रा के गोरे मुख-मंडल पर लज्जा की लालिमा दौड़ गई। उसने कहा—"समझ तो रही हूँ।" शंभूनाथ पुनः समझाने लगे। अब सुभद्रा का साहस न हुआ कि वह शंभूनाथ के मुख की ओर देखे। जब तक शंभूनाथ समझाते रहे, तब तक सुभद्रा बराबर कापी की ओर देखती रही। समझा चुकने पर शंभूनाथ ने पूछा—"समझ गई ?"

सुभद्रा ने कहा—"हूँ।"

शंभूनाथ ने कमरे में लगे हुए क्लॉक की ओर देखा, साढ़े नौ बजने में पाँच मिनट बाक़ी थे। उन्होंने बालकृष्ण से कहा—"जाओ, समय हो गया, तुम्हें स्कूल जाना है।"

बालकृष्ण ने अपनी पुस्तकें समेटकर मेज़ पर एक ओर रख दीं, और घर के भीतर चला गया। उसके पीछे-पीछे सुभद्रा भी चली

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Funding by MoE-IKS

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गई। जब तक सुमद्रा की पीठ शंभूनाथ की ओर रही, तब तक शंभूनाथ उसकी ओर देखते रहे। द्वार के उस ओर पहुँचकर सुमद्रा को द्वार बंद करने के लिये पुनः शंभूनाथ की ओर घूमना पड़ा। ज्यों ही वह घूमी, उसकी दृष्टि शंभूनाथ पर पड़ी। शंभूनाथ तो उसकी ओर पहले से ही देख रहे थे, अतएव दोनों की आँखें पुनः मिल गईं। शंभूनाथ ने जल्दी से अपना मुँह दूसरी ओर घुमा लिया। दूसरे ही क्षण द्वार बंद हो गया।

द्वार बंद हो जाने पर शंभूनाथ कुछ क्षण तक बैठे सोचते रहे। तत्पश्चात् एक दीर्घ निःश्वास छोड़कर उठे। वह उठे ही थे कि द्वार पुनः खुला, और राधाकृष्ण ने कमरे में प्रवेश किया। शंभूनाथ को देखकर उन्होंने मुस्किराते हुए कहा—"क्या चल दिए?"

शंभूनाथ—"हाँ, साढ़े नौ बजे हैं, दस तक घर पहुँचूँगा, तब तक भोजन का समय हो जायगा।"

राधाकृष्ण—"थोड़ी देर बैठो, फिर जाना—अभी भोजन की कौन जल्दी है। भूक लग आई क्या? भूक लगी हो, तो कुछ मँगाऊँ?"

शंभूनाथ—"नहीं, ऐसी भूक तो नहीं लगी है।"

राधाकृष्ण—"तो फिर बैठो।"

यह कहकर राधाकृष्ण ने नौकर को आवाज़ दी। उसके आने पर उससे बोले—"जाओ अंदर से पान ले आओ।"

नौकर अंदर गया। इधर राधाकृष्ण ने एक सिगरेट सुलगाई, और क़ालीन पर तकिए के सहारे बैठ गए। शंभूनाथ भी उनके पास ही आ बैठे। शंभूनाथ ने पूछा—"और कहो, क्या समाचार है।"

राधाकृष्ण—"कल दोपहर को मैं बेगम के यहाँ फिर गया था।"

शंभूनाथ—"क्या दिन ही में पहुँच गए?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"दिन के सिवा रात में अवसर नहीं मिलता, रात में श्यामनाथ पहुँच जाते हैं।"

शंभूनाथ—"अच्छा, फिर तुमने वहाँ की दशा देखकर क्या निष्कर्ष निकाला?"

राधाकृष्ण—"अभी मैं केवल दो बार वहाँ गया हूँ। इतने समय में मैं जो कुछ समझ सका हूँ, वह यह है कि बेगम है तो निश्चय शरीफ़ज़ादी, परंतु दरिद्रता के कारण अब वह अपनी कन्याओं के द्वारा धन कमाना चाहती है।"

शंभूनाथ—"यदि यह बात ठीक है, तो बड़ी बुरी बात है। यह तो बड़ा अनर्थ है—यदि पहले से यह मालूम होता, तो उन लड़कियों को बचाने की चेष्टा की जाती।"

राधाकृष्ण—"बस, लगे वही बेवक़ूफ़ी की बातें करने। तुम्हारे बचाए वह बच जातीं?"

शंभूनाथ—"चेष्टा करते!"

राधाकृष्ण—"क्या चेष्टा करते, उनको धन की आवश्यकता है, बिना यथेष्ट धन मिले बेगम यह विचार त्यागेंगी नहीं, तो इतना धन तुम उन्हें कहाँ से लाके देते?"

शंभूनाथ—"इस समय उनकी आवश्यकता पूरी कर दी जाती, तो कुछ दिनों के लिये वह अपना यह विचार त्याग देतीं—फिर देखा जाता।"

राधाकृष्ण—"मेरी समझ में नहीं आता कि तुम डिप्टी-कलेक्टरी कैसे करोगे। तुम्हारे-जैसे बेवक़ूफ़ और संसार से अनभिज्ञ आदमी को डिप्टी-कलेक्टर बनाना बड़ी ग़लती है। तुम इतना नहीं समझ सकते कि धन-लिप्सा की कोई सीमा नहीं होती। यदि कोई सीमा हो, तब तो ऐसा हो सकता है। मान लो, बेगम को केवल दो सहस्र रुपयों की आवश्यकता है। यह आवश्यकता पूर्ण हो जाने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर फिर उनके हृदय में ऐसा विचार उत्पन्न न होगा। यदि ऐसा हो, तब तो तुम्हारी योजना सफल हो सकती है। परंतु बात ऐसी नहीं है। बेगम तो इस पर तुली हैं कि लड़कियों द्वारा जितना अधिक धन कमाया जा सके, उतना कमावें। ऐसी दशा में तुम क्या कर सकते हो।"

शंभूनाथ—"हाँ, यदि ऐसी बात है, तब तो कठिन है। परंतु सुनो तो। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि किसी युक्ति से उनका विवाह करा दिया जाय।"

राधाकृष्ण मुस्किराकर बोले—"हाँ, यह ठीक है, यह दूर की सोची, और बड़ी बढ़िया सोची। तो अब कल से आप वरों की खोज आरंभ कर दीजिए, और वर मिल जाने पर बेगम से विवाह कर देने की प्रार्थना कीजिए। यदि सहज में न मानें, तो ज़बरदस्ती विवाह करा दीजिए।"

शंभूनाथ कुछ झुँझलाकर बोले—"बात करते हो, या मज़ाक उड़ाते हो?"

राधाकृष्ण—"तुम बात ही ऐसी पोच कहते हो।"

शंभूनाथ—"अच्छी बात है, अब मैं चुप रहूँगा। आप ही कहिए।"

राधाकृष्ण—"मुझे अब कुछ नहीं कहना है, मुझे जो कहना था, वह कह चुका।"

शंभूनाथ—"तो आपकी समझ में उनका उद्धार होना असंभव है।"

राधाकृष्ण—"आप श्यामनाथ और गोकुलप्रसाद के उद्धार की फ़िक्र कीजिए, यदि उसी लपेट में बेगम भी सँभल जायँ और ठीक रास्ते पर आ जायँ, तब तो ठीक है। अन्यथा उन्हें छोड़ो। हमने कुछ सारे संसार को सुधारने का ठेका नहीं लिया है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IkS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ—"लड़कियों को तुमने देखा है ?"

राधाकृष्ण—"हाँ, देखा है। लड़कियाँ हैं तो खूबसूरत, इसमें कोई संदेह नहीं। वैसे तो दोनों अच्छी हैं, परंतु छोटी तो बिलकुल हूर की बच्ची है। तुम देखो, तो राल टपक पड़े।"

शंभूनाथ—"क्या बेहूदा बकते हो !"

राधाकृष्ण—"तुम बहुत संतपना छाँकते हो, किसी दिन मुझे तुम्हारा यह संतपन देखना है। तुम्हारे-जैसे आदमी जब लपेट में आ जाते हैं, तो फिर उनकी दशा साधारण मनुष्यों से भी गई-बीती हो जाती है।"

शंभूनाथ—"हो जाती होगी, हमें उनसे कोई मतलब नहीं।"

राधाकृष्ण—"खैर, देखा जायगा। अच्छा, एक बेर वहाँ चलकर उनको देख तो लो।"

शंभूनाथ—"क्या करूँगा देखके ?"

राधाकृष्ण—"डर मालूम होता होगा कि कहीं चोट न खा जाओ।"

शंभूनाथ—"डर-वर कुछ नहीं, मुझे दुःख होगा। जब मुझे केवल सुनने-मात्र से कष्ट हो रहा है, तब देखूँगा, तो और भी कष्ट होगा। वे लड़कियाँ इस योग्य थीं कि किसी पुरुष-रत्न की अर्द्धांगिनी बनतीं, न कि व्यभिचारियों की काम-वासना की भेंट। राम-राम !"

राधाकृष्ण—"सो तो अभी तक वे सर्वथा पवित्र हैं। अभी तक उनके कोई हाथ तक नहीं लगा सका है।"

शंभूनाथ—"क्या वाक़ई ऐसी बात है ?"

राधाकृष्ण—"मैं झूठ थोड़ा ही कहता हूँ।"

शंभूनाथ—"तो श्यामनाथ इत्यादि वहाँ क्यों जाते हैं ?"

राधाकृष्ण—"दाल में लगे हैं। आशा है, इसलिये जाते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ—"दो सौ रुपए क्या यों ही दे दिए ?"

राधाकृष्ण—"अरे, एक-दो सौ क्या, वे न-जाने कितना दो सौ खाएँगी, तब कहीं हत्थे चढ़ेंगी। बेगम अत्यंत चतुर है। दो सौ तो उसने ख़ाली सूरत-दिखाई के ले लिए। बिना हज़ार-पाँच सौ लिए वह हाथ तो लगाने देगी नहीं।"

शंभूनाथ—"तब तो यार, हम लोगों के लिये बड़ी सरलता हो गई।"

राधाकृष्ण—"काहे की ?"

शंभूनाथ—"श्यामनाथ के पंजे से उन्हें छुड़ाने की।"

राधाकृष्ण—"पहले उनके पंजे से श्यामनाथ को छुड़ाओ—पीछे श्यामनाथ के पंजे से उन्हें छुड़ाने की चेष्टा करना।"

शंभूनाथ—"ख़ैर, चाहे यों कहो, चाहे वों—बात एक ही है, दोनो का परिणाम एक ही है।"

राधाकृष्ण—"अच्छा, मान लिया। श्यामनाथ के पंजे से तुमने उन्हें छुड़ा दिया, फिर ?"

शंभूनाथ—"फिर क्या ?"

राधाकृष्ण—"फिर यही कि वह कोई दूसरा मालदार ढूँढ़ लेंगी। और, जब उनके पास ऐसी सुंदर लड़कियाँ हैं, तो उन्हें मिल भी अनेक जायँगे। तुम जो चाहो कि वह जन्म-भर के लिये इस काम से तोबा कर लें, सो नहीं हो सकता। हाँ, शायद जन्म-भर के लिये उनके समस्त ख़र्च का भार उठाने का वादा करो, तो उस दशा में कदाचित् ऐसा हो सके।"

शंभूनाथ—"वर्तमान स्थिति में तो मैं ऐसा कर नहीं सकता। परंतु यदि मेरे पास इतना रुपया होता कि मैं ऐसा कर सकता, तो मैं ऐसा अवश्य करता।"

राधाकृष्ण—"यदि इतना रुपया होता, तो आप रक्षा करना भूल-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कर स्वयं भक्षण करने की चेष्टा करते। नहीं है, तभी यह साधुता दिखा रहे हो।"

शंभूनाथ—"अब तुम्हें तो किसी की शुद्ध-हृदयता पर विश्वास ही नहीं होता, तुम तो दुनिया-भर को धूर्त तथा ढोंगी समझते हो।"

राधाकृष्ण—"नहीं, मैं यह तो विश्वास करता हूँ कि तुम इस समय जो कुछ कह रहे हो, वह शुद्ध तथा सच्चे हृदय से कह रहे हो; परंतु प्रत्येक परिस्थिति में तुम्हारी यह शुद्ध-हृदयता स्थिर रह सकेगी, इसमें मुझे संदेह है। यदि ऐसी परिस्थिति आ जाय कि बेगम बिल्कुल आपके आश्रय में हो जाने के कारण उन लड़कियों का सतीत्व सर्वथा आपके वश में कर दें, और उस समय यदि आप इतने ही शुद्ध-हृदय बने रहें, जितने अब हैं, तब मैं मान सकता हूँ। न होने में तो सभी शुद्ध-हृदय रहते हैं। वह कहावत है कि 'असमत बीवी अज़ बेचादरी।' बीवी का पर्दा इसलिये क़ायम है कि पास चादर नहीं, जो ओढ़कर बाहर निकलें।"

शंभूनाथ—"अच्छा, ऐसी ही सही। बस, अब तो प्रसन्न हो।"

राधाकृष्ण—"एक दफ़े बेगम के घर तो हो आओ।"

शंभूनाथ—"मैं क्या करूँगा, वहाँ के लिये तुम्हीं काफ़ी हो।"

राधाकृष्ण—"कौन ? इस भरोसे न रहिएगा। आपको भी साथ रहना पड़ेगा। नहीं तो मैं भी अपने घर बैठूँगा। मुझे क्या ग़रज़ है, जो ख़ा-मख़ाह मारा-मारा फिरूँ।"

शंभूनाथ मुस्किराकर बोले—"अरे यार, ऐसा न करना। नहीं सब गुड़-गोबर हो जायगा।"

राधाकृष्ण—"तो कम-से-कम एक दफ़े तो आपको वहाँ चलना ही पड़ेगा। नहीं सच कहता हूँ, मैं अकेला कुछ न करूँगा।"

शंभूनाथ—"क्या आवश्यक है ?"

राधाकृष्ण—"हाँ, आवश्यक है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ—"अच्छी बात है, चलूँगा।"

राधाकृष्ण—"आज दोपहर को चलो।"

शंभूनाथ—"आज ही ?"

राधाकृष्ण—"हाँ।"

शंभूनाथ सोचकर बोले—"अच्छा।"

राधाकृष्ण—"तो ठीक बारह बजे यहाँ आ जाना। जाइए, तशरीफ़ ले जाइए, और खाना-वाना खाकर आ जाइएगा।"

तेईसवाँ परिच्छेद

शंभूनाथ ठीक साढ़े ग्यारह बजे राधाकृष्ण के मकान पर पहुँच गए। राधाकृष्ण भी भोजन से निवृत्त होकर अपने कमरे में बैठे शंभूनाथ की प्रतीक्षा कर रहे थे। शंभूनाथ को देखते ही वह मुस्किराकर बोले—"आ गए ?"

शंभूनाथ—"जब वादा कर गया था, तो आता कैसे न !"

राधाकृष्ण—"क्या हुआ। सनकी आदमी का कौन भरोसा।"

शंभूनाथ राधाकृष्ण की बग़ल में बैठते हुए बोले—"हाँ भाई, सनकी कहो, पागल कहो—जो चाहे, सो कहो—तुम्हें सब अधिकार है।"

राधाकृष्ण—"अब बैठने का काम नहीं है—चलिए।"

शंभूनाथ—"आप कपड़े तो पहनिए।"

राधाकृष्ण तुरंत उठ खड़े हुए। पहले उन्होंने आवाज़ देकर कहा—"अरे कोई है ? चार पान दे जाना।" इसके पश्चात् उन्होंने कपड़े पहनने आरंभ किए।

थोड़ी देर में कमरे का अंतःपुर से संबद्ध द्वार खुला, और सुभद्रा हाथ में पानों की तश्तरी लिए द्वार पर दिखाई दी। शंभूनाथ को देखते ही उसके मुख-मंडल पर हल्की सुर्ख़ी दौड़ गई। वह सिर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

झुकाए हुए आई, और शंभूनाथ के सामने तश्तरी रखकर पुनः भीतर चली गई।

शंभूनाथ ने पान खाए। राधाकृष्ण कपड़े पहन चुके थे। अतएव उन्होंने कहा—"उठो। चलो चलें।"

शंभूनाथ उठ खड़े हुए, और दोनो बेगम के मकान की ओर चल दिए।

बेगम के मकान के द्वार पर पहुँचकर राधाकृष्ण ने द्वार की कुंडी खटखटाई। भीतर से द्वार के पास आकर किसी ने पूछा—"कौन है?"

राधाकृष्ण ने धीमे स्वर में कहा—"हम हैं राधाकिसन!"

द्वार खुल गया, और दोनो अंदर प्रविष्ट हो गए। द्वार दासी ने खोला था। राधाकृष्ण ने उससे पूछा—"क्यों बी ज़हूरन, छुट्टन मियाँ नहीं हैं क्या?"

ज़हूरन ने द्वार बंद करके कहा—"अभी खाना खाकर कहीं चले गए।"

राधाकृष्ण—"क्या आजकल खाना यहीं खाते हैं?"

ज़हूरन—"उनका कोई ठीक है—जहाँ खाने का वक़्त हो गया, वहीं खा लिया।"

राधाकृष्ण—"बेगम साहबा क्या करती हैं?"

ज़हूरन—"अभी वह भी खाना खाके उठी हैं। आइए!"

यह कहकर ज़हूरन आगे-आगे चली, उसके पीछे ये दोनो चले। ज़हूरन ने दोनो को उसी चिर-परिचित कमरे में ले जाकर कहा—"अगर यहाँ बैठिए, तो यहाँ बैठिए—और जो धूप में बैठना चाहें, तो बाहर चारपाई डाल दूँ।"

राधाकृष्ण—"नहीं, यहीं ठीक है।"

यह कहकर राधाकृष्ण वहीं बैठ गए—उनके पास ही शंभूनाथ भी बैठ गए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"अच्छा, बेगम साहबा को इत्तिला कर दो।"

ज़हूरन "बहुत अच्छा!" कहकर अंतःपुर में पहुँची। अंतःपुर के बीच में एक साधारण आकार का प्रांगण था—दो ओर दो कमरे और एक ओर बावर्चीख़ाना था। एक ओर से मकान के बाहरी भाग में, जहाँ राधाकृष्ण और शंभूनाथ बैठे थे, आने-जाने का रास्ता था। प्रांगण के मध्य धूप में दो चारपाइयाँ पड़ी हुई थीं। एक चारपाई पर बेगम साहबा बैठी थीं, दूसरी चारपाई पर बड़ी बहन लेटी थी, और छोटी बैठी हुई थी। दोनो बहनें इस समय काली छींट के पाजामे तथा श्वेत ठंडी क़मीज़ें पहने और मलमल के बसंती दुपट्टे ओढ़े थीं। धूप में बैठने के कारण दोनो के शुभ्र गौर गाल सुर्ख़ हो रहे थे, जिससे उनका मुख-मंडल अत्यंत सुंदर प्रतीत हो रहा था।

ज़हूरन ने जाकर कहा—"बाबू राधाकिसन आए हैं। एक आदमी और साथ है।"

यह सुनते ही बड़ी बहन क़मरुन्निसा बोली—"लो बा, मुओं ने अच्छा घर ताका, जब देखो, यहीं धरे हैं।"

छोटी बहन बोली—"एक घर देख जाता है, तो दूसरे को साथ लगाकर ज़रूर जाता है।"

बेगम ने कहा—"ऐ, तो अपना क्या हर्ज है—आने दो। ज़हूरन, उन्हें अच्छी तरह बिठाओ, मैं अभी आती हूँ। वह दूसरे साहब किस बला-क़ता के हैं?"

ज़हूरन—"गोरे-चिट्टे ख़ूबसूरत जवान हैं, उम्र तेईस-चौबीस के क़रीब होगी।"

बेगम बोली—"तो राधाकिसन बाबू के वही दोस्त होंगे, जिनका ज़िक्र उन्होंने किया था। तू चलके उन्हें बिठला, मैं आती हूँ।"

ज़हूरन—"बिठला तो मैं आई हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यह कहकर ज़हूरन बाहर चली गई।

शम्सुन्निसा बोली—"अम्मीजान, इन लोगों का आना-जाना हमें एक आँख नहीं भाता।"

यह सुनते ही बड़ी बहन भी उठकर बैठ गई, और बोली—"शम्सो, अल्लाह जानता है, तूने मेरे दिल की बात कही। न-जाने अम्मीजान इन हिंदुओं को क्यों मुँह लगाती हैं। इन धोती-परशादों से मुझे सख़्त नफ़रत है।"

छोटी बहन—"बाजीजान के सिर की क़सम, यही हालत मेरी भी है, मुझे भी इन लोगों से नफ़रत है।"

बड़ी झुँझलाकर बोली—"ऐ, हटो भी! तुम्हें हज़ार मर्तबे मना किया कि हमारे सिर की क़सम न खाया करो, मगर तुम्हारी ऐसी ख़राब आदत है कि जब क़सम खाओगी, तब हमारे ही सिर की। वाह! हमारा सिर भी कोई कद्दू समझ रक्खा है।"

छोटी बहन—"ऐ, तो कोई झूठी क़सम थोड़ा ही खाई है, झूठी क़सम नहीं खाना चाहिए।"

बड़ी बहन—"भइ, चाहे झूठी हो, चाहे सच्ची, हमें यह आदत अच्छी नहीं लगती।"

छोटी बहन बेगम की ओर देखकर बोली—"देखा अम्मा, ज़री-ज़री-सी बात पर तिनगने लगती हैं।"

बेगम—"ऐ, तो तुम्हीं चुप रहो—मुफ़्त (मुफ़्त) की ठायँ-ठायँ हमें अच्छी नहीं लगती। (उठकर) हम बाहर जाते हैं। मौक़ा देखेंगे, तो तुम्हें भी बुला लेंगे। ज़री शायस्तगी के साथ आना, हुरदंगपन मत करना।"

बड़ी बहन भ्रकुटी चढ़ाकर बोल उठी—"शम्सो चली आयगी, हम तो न आयँगे।"

शम्सो बोल उठी—"हाँ, शम्सो ही निगोड़ी तो क़ाबलू है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बेगम—"खुदा न करे, फ़ाक़ातू न तुम हो, न यह है। मगर बेटा, बात यह है कि ये लोग मालदार हैं, इनसे चार पैसे का फ़ायदा होने की उम्मीद है। इसलिये ज़री देर बैठने-उठने में अपना कुछ बनता-बिगड़ता नहीं। हमें उनसे कोई रिश्ता थोड़ा ही जोड़ना है।"

बड़ी बहन दबी-ज़ीभ से बोली—"जब हिजाब (पर्दा) उठ गया, तब रिश्ते से ज़्यादा है।"

यह सुनकर बेगम कुछ कर्कश स्वर में बोली—"तो यह सब मुझे तुम्हारे ही दोनों के वास्ते तो करना पड़ रहा है, वरना मुझे क्या ज़रूरत है। मुझे तो माश की दाल और रोटी काफ़ी है। तुम्हारी यह हालत है कि दो वक़्त क़ोरमा, कोफ़्ता चाहिए। पहनने को तनज़ेब और अतलस चाहिए। आख़िर यह सब कहाँ से आवे?"

यह कहकर बेगम बाहर की ओर चलीं। दहलीज़ में पहुँचकर उन्होंने पुकारा—"ऐ ज़हूरन!"

राधाकृष्ण बोले—"ज़हूरन तो यहाँ नहीं है, आदाब अर्ज़!"

बेगम—"जीते रहो, ख़ुदा ख़ुशी-ख़ुर्रम रक्खे। अकेले हो या कोई और साथ है?"

राधाकृष्ण—"मेरे वही दोस्त हैं, जिनका ज़िक्र मैंने किया था।"

बेगम—"तो मैं बाहर आ जाऊँ। कोई हर्ज तो नहीं?"

राधाकृष्ण—"आप शौक़ से आ जाइए, हर्ज कुछ नहीं। यह मेरे जिगरी दोस्त हैं।"

यह सुनते ही बेगम बाहर कमरे में चली गईं, और फ़र्श पर तकिए के पास बैठ गईं। उन्होंने एक बार शंभूनाथ को सिर से पैर तक देखा। शंभूनाथ ने, उन्हें अपनी ओर देखते देख, आँखें नीची कर लीं।

बेगम ने पूछा—"इनका नाम क्या है?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"इनका नाम शंभूनाथ है। यह बहुत जल्द डिप्टी-कलेक्टर होनेवाले हैं।"

बेगम—"वाक़ई ?"

राधाकृष्ण—"जी हाँ, बिल्कुल सही बात है।"

बेगम—"बड़ी ख़ुशी की बात है, अल्लाह मुबारक करे। जब डिप्टी-कलेक्टर हो जायँगे, तो भला, हम ग़रीबों को क्यों याद करेंगे ?"

राधाकृष्ण—"आप भी क्या बातें करती हैं, ऐसा कहीं मुमकिन हो सकता है। यह निहायत शरीफ़ आदमी हैं, यह ऐसे नहीं हैं, जो भूल जायँ। (शंभूनाथ से) क्यों भइ, भूल तो नहीं जाओगे ?"

शंभूनाथ बेचारे सिर झुकाए बैठे मन-ही-मन राधाकृष्ण को बुरा-भला कह रहे थे कि दुष्ट ने कहाँ लाकर बिठा दिया। राधाकृष्ण के पूछने पर मृदु-स्वर में बोले—"नहीं, भूलने की कौन-सी बात है।"

राधाकृष्ण—"आज शम्सो-क़मरो नहीं दिखाई पड़तीं।"

बेगम—"भीतर हैं, देखिए अभी बुलवाती हूँ।"

यह कहकर बेगम ने ज़हूरन को पुकारा। ज़हूरन के आने पर उससे बोलीं—"ज़रा लड़कियों को बुला ले, डली-इलायची भी लेती आना। छुट्टन न-जाने कहाँ चला गया। पान मँगाने थे।"

राधाकृष्ण—"रहने दीजिए, अभी पान खाए चले आ रहे हैं।"

ज़हूरन भीतर चली गई। थोड़ी देर में दोनों बहनें शर्माती-सिकुड़ती हुई आ पहुँचीं, और बेगम की बग़ल में बैठ गईं। ज़हूरन एक तश्तरी में डली-इलायची लाकर रख दी। राधाकृष्ण ने उसमें से थोड़ी लेकर तश्तरी शंभूनाथ के सामने सरका दी, और कहा—"लो खाओ।"

शंभूनाथ तश्तरी में से डली-इलायची लेते हुए एक बार

CC-0. Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ऊपर दृष्टि करके दोनो बहनों की ओर देखा। धूप के कारण अब भी दोनो बहनों का मुख तमतमाया हुआ था। शंभूनाथ ने एक बार दृष्टि-भरकर दोनो को देखा, तत्पश्चात् पुनः दृष्टि नीची कर ली।

राधाकृष्ण ने पूछा—"विशुनाथ बाबू आते हैं?"

बेगम बोलीं—"हाँ, शाम को दूसरे-तीसरे दिन आ जाते हैं।"

राधाकृष्ण—"उसका आना-जाना बंद कर दीजिए। और, जितने उनके दोस्त हैं, उनको भी मत आने दीजिए। वे सब बड़े हज़रत हैं, आपको बदनाम कर देंगे।"

बेगम—"मेरा भी ऐसा ही ख़याल है। मैंने छुट्टन से कहा भी था कि मुझे इन लोगों का आना-जाना अच्छा नहीं लगता। मगर चूँकि उन्होंने वक्त पर हमारी मदद की, इसलिये एकबारगी कहते भी अच्छा नहीं लगता, रफ़्ता-रफ़्ता बंद हो जायगा।"

राधाकृष्ण—"उनके रुपए वापस क्यों नहीं कर देतीं?"

बेगम—"रुपया हो, तो वापस कर दूँ।"

राधाकृष्ण—"आपके वास्ते रुपए की क्या कमी है, अगर कहिए, तो आज शाम को ही रुपए भिजवा दूँ। बात यह है कि हम लोग नहीं चाहते कि कोई दूसरा शख़्स यहाँ आवे-जावे। इसमें हमारी भी बदनामी होने का डर है, और आपकी तो बहुत बड़ी बदनामी हो जाने का अंदेशा है।"

बेगम—"आपका फ़र्माना दुरुस्त है। मुझे भी यह ख़ौफ़ लगा रहता है।"

राधाकृष्ण—"तो इस ख़ौफ़ को दूर कर दीजिए। मेरी समझ में तो मैं आज रुपए भिजवा दूँगा। वह उन्हें वापस करके उनसे साफ़-साफ़ कह दीजिएगा कि अब न आवें।"

बेगम—"अच्छी बात है। जैसा आप कहें। हम तो अब आप ही के भरोसे हैं, जो आप कहेंगे, वही करेंगे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"मेरी तो यही राय है कि आप इन लोगों से कोई वास्ता न रक्खें। और, अगर आपको यह मंज़ूर न हो, तो फिर हम लोग आपसे कोई वास्ता रक्खेंगे।"

बेगम—"नहीं-नहीं, ऐसा मत कहिए। जब आप हमारे सच्चे ख़ैरख़्वाह और मददगार हैं, तो हमें किसी दूसरे से क्या मतलब ?"

राधाकृष्ण—"अगर आप ऐसा समझती और महसूस करती हैं, तो हम भी हर तरह से आपकी मदद करने को तैयार हैं।"

बेगम—"ख़ुदा आप दोनों साहबों को सलामत रक्खे, हमें आपसे ऐसी ही उम्मीद है।"

राधाकृष्ण कुछ क्षणों तक मौन रहकर बोले—"इन लड़कियों की शादी की बातचीत कहीं लगी है ?"

बेगम—"नहीं, अभी तो नहीं लगी, मगर.....।"

राधाकृष्ण—"आपको इनकी शादी की फ़िक्र करनी चाहिए। लड़कियाँ काफ़ी सयानी हो गई हैं, सयानी लड़कियों का ज़्यादा दिनों तक कुँआरा रहना अच्छा नहीं।"

राधाकृष्ण के ये वाक्य सुनकर बेगम ने चकित-भाव से उनकी ओर देखा। उन्हें राधाकृष्ण की ओर से ऐसा प्रस्ताव किए जाने की स्वप्न में भी आशा नहीं थी। उन्हें यह विश्वास नहीं हुआ कि राधाकृष्ण ने यह बात शुद्ध-हृदय से कही है। अतएव उन्होंने कहा—"क्या आपका यह मतलब है कि इनकी शादी कर दूँ ?"

राधाकृष्ण गंभीर होकर बोले—"जी हाँ, मेरा यही मतलब है, क्या आप कुछ और समझी थीं ?"

बेगम शीघ्रता-पूर्वक बोलीं—"जी नहीं, और कुछ तो नहीं समझी थी। हाँ, शादी की फ़िक्र में तो मैं हूँ, मगर दो बातों की वजह से अभी शादी का कुछ ठीक-ठाक नहीं होता। एक तो अभी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दिल के मुताबिक़ रिश्ता नहीं मिला। ग़ौर, यह कोई ऐसी बात नहीं, कोशिश की जाय, तो मिल सकता है। मगर दरअसल वजह यह है कि शादी के लिये रुपया भी तो चाहिए।"

राधाकृष्ण—"कितना रुपया ख़र्च होगा ?"

बेगम—"वैसे तो चाहे जितना रुपया ख़र्च कर दो। लेकिन अगर सहज़ निकाह ही हो, तब भी दोनो के लिये कम-से-कम दो हज़ार रुपए तो चाहिए। न दो हज़ार हों, डेढ़ ही हज़ार हों, इससे कम में तो काम चल ही नहीं सकता। बारात का कम-से-कम एक वक़्त का खाना, दहेज़ में कुछ बर्तन, कुछ कपड़ा, यह तो ज़रूर ही होना चाहिए।"

राधाकृष्ण—"आप लोगों में तो इससे भी कम में निकाह हो जाते हैं।"

बेगम—"हाँ, हो जाते हैं, मगर अपनी हैसियत भी तो कोई शै (वस्तु) है। अपनी हैसियत के मुवाफ़िक़ काम किया जाता है, तो नेकनामी रहती है। हालाँकि हम लोग उस ख़ानदान के हैं कि अगर दोनो की शादी में बीस हज़ार भी ख़र्च कर दें, तब भी कम है। मगर वह ज़माने तो लद गए, अब तो किसी तरह गुज़र करना है। लाख लट जायँ, लाख तबाह हो जायँ, मगर फिर भी कुछ-न-कुछ करना ही पड़ता है। कोई नीच क़ौम तो हैं नहीं, जो खाकी मिस्त्री के कूज़े और बताशे बाँटकर निकाह पढ़ा लें।"

राधाकृष्ण—"इसमें नीच-ऊँच की बात नहीं, यह तो न होने की बात है। नीच लोग भी होने पर काफ़ी धूम-धाम करते हैं, और न होने पर ऊँच लोग भी मिस्त्री के कूज़े बाँटकर ही निकाह पढ़ा लेते हैं।"

बेगम—"हाँ, यह बात तो आपकी बिलकुल दुरुस्त है—न होने की तो बात ही है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण एक अँगड़ाई लेकर बोले—"अच्छा, तो अब हम लोगों को इजाज़त दीजिए।"

बेगम—"जाओगे ? अच्छा, ख़ुदा हाफ़िज़।"

राधाकृष्ण उठते हुए बोले—"तो अगर कहिए, तो दो सौ रुपए भिजवा दूँ।"

बेगम—"हाँ, भिजवा देना—मगर दो सौ नहीं, ढाई सौ भिजवाना। पचास रुपए घर-ख़र्च के लिये हो जायँगे।"

राधाकृष्ण—"अच्छी बात है। मगर एक बात याद रखिएगा कि उन्हें रुपए वापस कर दीजिएगा, और उनसे साफ़ कह दीजिएगा कि यहाँ मत आवें। अगर कहीं आपने ऐसा किया कि रुपए रख लिए, और उनको वापस न किए, तो हमें बहुत रंज होगा।"

बेगम—"तोबा-तोबा, ऐसा कहीं हो सकता है। आख़िर ऐसा करने की मुझे ज़रूरत क्या है।"

राधाकृष्ण—"क्या हुआ, शायद कोई आपको बहकावे कि रुपए रखिए—राधाकृष्ण बाबू को क्या पता चल सकता है। इधर उन लोगों की आमद-रफ़्त बनी रहे, और हम लोगों से कह दिया जाय कि अब नहीं आते। अगर ऐसा हुआ, तो हम लोगों को बहुत रंज होगा।"

बेगम—"नहीं बाबू साहब, ऐसा नहीं होगा। मैं ऐसी कमीनी नहीं हूँ, जो अपने मददगारों को धोका दूँ। ऐसा क़यामत (प्रलय) तक न हो पायगा।"

राधाकृष्ण—"तो बस, ठीक है—रुपए आज ही आपको मिल जायँगे।"

यह कहकर राधाकृष्ण शंभूनाथ-सहित बिदा हुए।

इनके बाहर चले जाने पर बड़ी बड़की क़मरुन्निसा बोली—"अम्मीजान, ये होते तो आदमी तो अच्छेमानुस मालूम होते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छोटी बहन शम्सुन्निसा बोली—"कौन ? मैं तो यह कहती हूँ कि जितने आदमी यहाँ आते-जाते हैं, उन सबमें ये दोनो शरीफ़ हैं, जिसमें वह दूसरे बाबू जो बैठे थे, वह तो निहायत शरीफ़ हैं। इतनी देर बैठा रहा—मगर उस बेचारे ने आँख ऊपर नहीं उठाई—बराबर नीची नज़र किए बैठा रहा।"

बेगम—"वाक़ई हैं दोनो शरीफ़ ! उन तीनो से तो कहीं अच्छे हैं।"

बड़ी लड़की बोली—"ऐ, तोबा ! किन ख़ुदाई ख़्वारों का नाम लिया। थू-थू ! जब मुए आयँगे, तो ऐसे आँखें फाड़-फाड़ देखेंगे, जानो खा जायँगे। मुझे तो निगोड़ों की आँखों से ख़ौफ़ मालूम होता है।"

छोटी—"हाँ, बातें तो अम्मीजान से करते हैं, मगर निगाह इधर ही रहती है। उस रोज़ बाजी, जब तुम्हारे सर में दर्द था, तुम भीतर ही लेटी रही थीं, मैं यहाँ अम्मीजान के पास बैठी हुई थी। इत्तफ़ाक़ से अम्मा दो मिनट के लिये अंदर गईं। अम्मा के उठते ही उन्होंने मेरी तरफ़ इस बुरी तरह से घूरना शुरू किया कि क़सम अली-अब्बास की, मेरा कलेजा धड़-धड़ करने लगा। ऐसा जी हुआ कि उठकर भाग जाऊँ। अगर अम्मा दो-चार मिनट और न आतीं, तो मैं भाग खड़ी होती।"

यह सुनकर बड़ी बहन ने क़हक़हा लगाया। छोटी बहन भी हँसते हुए बोली—"मैं तुमसे क्या कहूँ बाजी, जैसे फ़ाक़ों का मारा पुलाव-ज़र्दे की तरफ़ देखे। ख़ुदा करे, निगोड़ों पर अली की फटकार पड़े।"

यह सुनकर बड़ी बहन पुनः उच्च स्वर से हँसी। बेगम भी किंचित् मुस्किराकर बोली—"अच्छा, चली जाओ, बहुत बेहूदा मत बको।"

इधर तो ये बातें हो रही थीं—उधर शंभूनाथ और राधाकृष्ण

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बेगम के मकान से निकलकर चले, तो राधाकृष्ण ने पूछा—"क्यों भई शंभूनाथ, क्या राय है ?"

शंभूनाथ—"वास्तव में हैं तो दोनो सुंदर —और छोटी बहन तो हज़ारों में एक है। मैंने तो सिर्फ़ एक ही बेर दृष्टि भरकर देखा, दुबारा देखने का साहस ही न पड़ा।"

राधाकृष्ण—"क्यों, साहस क्यों नहीं पड़ा ?"

शंभूनाथ—"एक तो बार-बार देखना मुझे शराफ़त के खिलाफ़ मालूम हुआ। दूसरे,..... !"

राधाकृष्ण—"दूसरे क्या ?"

शंभूनाथ—"सच बताऊँ !"

राधाकृष्ण—"अच्छा ! तो क्या झूठ बोलने का भी विचार है ?"

शंभूनाथ—"मुझे यह भय हुआ कि कहीं अधिक देखने से हृदय में कोई अपवित्र भावना न उत्पन्न हो जाय।"

यह सुनते ही राधाकृष्ण ने अट्टहास किया। हँसते हुए बोले—"ओफ़ओफ़ ! आज फँसे चिड्डा गुलफ़ौरू ! बड़े संत की दुम बनते थे। आज पता लग गया ! अरे भई, दूर-दूर रहकर तो सभी संत बने रह सकते हैं। बात तो तब है, जब ऐसे लोगों में उठ बैठकर भी हृदय पवित्र रक्खे।"

शंभूनाथ—"निस्संदेह बड़ा ही कठिन काम है। यार, सच पूछो, तो जो तुम्हें जानता न हो, वह तुम्हारी ये बातें देख-सुनकर तुम्हारे चरित्र पर संदेह करने लगे। यों भी यदि किसी से कहा जाय, तो उसे विश्वास न हो।"

राधाकृष्ण गंभीर होकर बोले—"निस्संदेह तुम्हारा कथन अक्षरशः सत्य है।"

शंभूनाथ—"परंतु तुम तो पत्थर हो—पत्थर !"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"बात यह है कि मैं आरंभ में बड़े उत्पात कर चुका हूँ। मेरे लिये इन बातों में न कोई नवीनता रही है, न कोई आकर्षण। दो-तीन वर्ष तक मैंने इसके अतिरिक्त और कुछ किया ही नहीं। परंतु ईश्वर ने मेरे ऊपर दया की। दो-ही-तीन वर्षों में मैं इन बातों से ऊब उठा। और, इनके प्रति हृदय में घृणा उत्पन्न हो गई, क्योंकि मुझे यह अनुभव प्राप्त हुआ कि इस काम में वास्तविक सुख, वास्तविक आनंद कभी नहीं मिलता—केवल तृष्णा-ही-तृष्णा रहती है। आनंद और सुख वहीं मिलता है, जहाँ हार्दिक प्रेम होता है—और एक ओर नहीं, दोनों ओर होता है।"

शंभूनाथ—"भला, छोटी बहन को देखकर तुम्हारे हृदय में किसी समय कोई अपवित्र भावना उत्पन्न हुई—सच बताना।"

राधाकृष्ण—"मैं ईश्वर को साक्षी करके कहता हूँ कि ज़रा भी नहीं। इसके कारण हैं। एक तो मैं इससे भी कहीं अधिक सुंदर स्त्रियाँ देख चुका हूँ। दूसरे, केवल सौंदर्य में मेरे लिये कोई आकर्षण नहीं रहा। प्रेम-विहीन सौंदर्य मेरे लिये एक मिट्टी के खिलौने का सौंदर्य हो गया है। शम्सुन्निसा को देखकर मेरे हृदय में वैसी ही भावना उत्पन्न होती है, जैसी किसी सुंदर खिलौने को देखकर होती है। वह केवल नेत्रों को अच्छी मालूम होती है—बस! इससे अधिक और कुछ नहीं।"

शंभूनाथ—"इसका कारण?"

राधाकृष्ण—"इसका कारण मैंने बतलाया न कि जब तक मुझे यह विश्वास न हो कि वह भी मुझे सच्चे हृदय से चाहती है, मुझसे प्रेम करती है, तब तक मैं उसकी ओर कभी आकर्षित हो ही नहीं सकता, वह चाहे जितनी सुंदर हो। यद्यपि मैं अपनी पत्नी से इतना प्रेम करता हूँ कि उसके होते हुए किसी दूसरी स्त्री के प्रेम का प्रभाव मुझ पर पड़ सकता है, इसमें बहुत बड़ा संदेह है। संदेह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैं इसलिये कहता हूँ कि अभी तक ऐसा कोई अवसर नहीं पड़ा, परीक्षा नहीं हुई। संभव है, अवसर पड़ने पर मैं डगमगा जाऊँ। परीक्षा होने पर फ़ेल हो जाऊँ। अन्यथा वैसे तो मैं विश्वास-पूर्वक कह सकता हूँ कि उस दशा में भी मैं अपने हृदय को वश में रख सकूँगा।"

शंभूनाथ—"हाँ, यह तो मुझे मालूम है कि आप अपनी पत्नी से बड़ा प्रेम करते हैं। और, वह तो आपको अपना इष्टदेव ही समझती है।"

राधाकृष्ण—"यही तो कारण है कि मुझे इन बातों से घृणा हो गई। कामोपासना का आनंद भी मैंने जी भरकर उठाया। इसके पश्चात् प्रेमोपासना में पड़ा। परंतु सच्चा आनंद और सुख प्रेमोपासना में ही प्राप्त हुआ, कामोपसना में अशांति, तृष्णा तथा लिप्सा के कारण आनंद तो नाम-मात्र का मिला, अधिकांश क्लेश और दुःख ही मिला।"

शंभूनाथ—"बड़े भाग्यवान् हो।"

राधाकृष्ण मुस्किराकर बोले—"क्यों?"

शंभूनाथ—"इतनी ही उम्र में सारे अनुभव प्राप्त कर लिए। सब आनंद लूट लिए, और सबसे अलग भी हो गए।"

राधाकृष्ण—"यह कुछ ईश्वर की दया है कि मेरा स्वभाव, मेरी प्रकृति इस प्रकार की है। अन्यथा लोग तो अपने जीवन-भर इन कामों में पड़े रहते हैं, फिर भी उनकी तुष्टि नहीं होती।"

शंभूनाथ—"अच्छा, अब यह बताओ कि शाम को इन्हें रुपए पहुँचाओगे?"

राधाकृष्ण—"पहुँचाना ही पड़ेंगे, वादा कर आए हैं।"

शंभूनाथ—"तो बाबूजी से रुपए लेने पड़ेंगे।"

राधाकृष्ण—"अभी तो मैं अपने पास से दे दूँगा—फिर देखा जायगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ—"उन्हीं से लेंगे, तुम क्यों दो ?"

राधाकृष्ण—"पीछे देखा जायगा।"

शंभूनाथ—"यार, इन लड़कियों को तुम बचा लो, और इनका विवाह करा दो, तो ईश्वर जानता है, बड़ा काम करो।"

राधाकृष्ण—"तो क्या तुम इसमें कुछ संदेह भी समझते हो ? यह तो होगा ही।"

शंभूनाथ—"परंतु अब यह सब तुम्हीं करना, मैं अब इस घर में पैर न धरूँगा।"

राधाकृष्ण—"बस, बोल गए ? तुम्हारे-जैसे आदमी भला किसी का उद्धार क्या कर सकते हैं ?

"भाईजी, केवल उपदेश से काम नहीं चलता। केवल उपदेश देने से, प्लेट-फ़ार्म पर खड़े होकर व्याख्यान फटकार देने से बुराई दूर नहीं होती।

"प्रत्येक जाति के धर्म में बुरी बात बुरी ही कही गई है, और बुरी बातों से बचने के लिये उपदेश भी यथेष्ट हैं; तो जब उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता, तो उन नेताओं तथा उपदेशकों का प्रभाव क्या पड़ सकता है, जिनकी देश-भक्ति, नेतृत्व, सुधार-योजना मंच पर से उतरते ही समाप्त हो जाती है। ऐसे लोगों के व्याख्यान और उपदेश से लोग सुधरने लगें, तो मैं दावे के साथ कहता हूँ कि एक वर्ष में ही इस संसार की कायापलट हो जाय। आवश्यकता इस बात की है कि आप स्वयं बुराई के अंदर ग़ोता लगावें, और उसकी तह में जाकर उसकी जड़ को काटें। बुरे लोगों से हिलें-मिलें, उनमें घुल-मिलकर उनकी बुरी चेष्टाओं में बाधा डालें—उनके मित्र बनकर उनको बुरे काम से बचाने में सहायता दें। आवश्यकता पड़े, तो इसमें धन भी ख़र्च करें। तब कुछ सुधार हो सकता है। और, जो आप बुरों की छाया पड़ने से भी नाक-भौं सिकोड़ें, और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सातवें आसमान पर बैठे हुए केवल अपनी मौखिक सहानुभूति दर्शाकर और लंबी-चौड़ी बातें करके बुराइयों को दूर कर दें, तो यह असंभव है। अधिकांश लोग व्याख्यान देते अथवा लेख लिखते समय प्रथम श्रेणी के सच्चरित्र, संयमी और धर्मात्मा बन जाते हैं, क्योंकि इनमें तो केवल बातें ही करनी पड़ती हैं न, परंतु यदि इन लोगों को ऐसे क्षेत्र में घुसकर काम करना पड़े, जिसमें हम लोग काम कर रहे हैं, तो सारी बातें भूल जायँ, और सुधार करना तो दूर रहा, स्वयं ही सुधर जायँ।"

राधाकृष्ण शंभूनाथ से इसी प्रकार की बातें करते हुए अपने घर की ओर चले।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

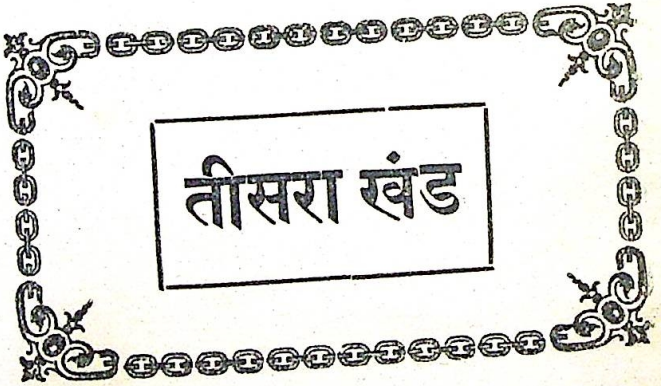

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहला परिच्छेद

श्यामनाथ का विवाह बड़ी धूम के साथ हो गया। बारात इलाहाबाद गई थी। जिनकी कन्या से श्यामनाथ का विवाह हुआ, वह भी इलाहाबाद के प्रतिष्ठित रईस हैं।

विवाह में बाबू व्रजमोहनलाल के बहुत कम संबंधियों ने योग दिया। उनके छोटे भाई बनवारीलाल तो पूरा असहयोग कर बैठे। बाबू साहब ने भी अधिक ज़ोर नहीं दिया, क्योंकि उन्हें यह ज्ञात हुआ कि बनवारीलाल केवल इसलिये विवाह में सम्मिलित नहीं हो रहे हैं कि वह श्यामनाथ के गोद लिए जाने पर बाबू साहब से रुष्ट हैं। बाबू साहब के दूसरे भाई तहसीलदार साहब ने विवाह में बड़े हर्ष तथा उत्साह-पूर्वक योग दिया। तहसीलदार साहब ने बनवारीलाल को भी बहुत कुछ समझाया, और विवाह में योग देने के लिये कहा-सुना, परंतु बनवारीलाल ने किसी की बात नहीं सुनी। उन्होंने स्पष्ट कह दिया—"जिसके कारण भाई साहब ने मुझे अपने से पृथक् कर दिया, मैं उसी के विवाह में योग दूँ—ऐसा त्रिकाल में भी नहीं हो सकता।" यह बनवारीलाल की बहानेबाज़ी थी। अन्यथा पाठक भली भाँति जानते हैं कि बनवारीलाल स्वयं ही बाबू साहब से अलग हुए थे। बाबू साहब ने जब बनवारीलाल का यह कथन तहसीलदार साहब के मुख से सुना, तो वह विषाद-पूर्ण मृदु-हास्य के साथ बोले—"अच्छी बात है—कोई चिंता नहीं। जहाँ और अनेक बातें हैं, वहाँ एक यह कलंक भी सही।"

विवाह में श्यामनाथ के कहने से उनकी माता भी बाबू साहब के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहला परिच्छेद

श्यामनाथ का विवाह बड़ी धूम के साथ हो गया। बारात इलाहाबाद गई थी। जिनकी कन्या से श्यामनाथ का विवाह हुआ, वह भी इलाहाबाद के प्रतिष्ठित रईस हैं।

विवाह में बाबू व्रजमोहनलाल के बहुत कम संबंधियों ने योग दिया। उनके छोटे भाई बनवारीलाल तो पूरा असहयोग कर बैठे। बाबू साहब ने भी अधिक ज़ोर नहीं दिया, क्योंकि उन्हें यह ज्ञात हुआ कि बनवारीलाल केवल इसलिये विवाह में सम्मिलित नहीं हो रहे हैं कि वह श्यामनाथ के गोद लिए जाने पर बाबू साहब से रुष्ट हैं। बाबू साहब के दूसरे भाई तहसीलदार साहब ने विवाह में बड़े हर्ष तथा उत्साह-पूर्वक योग दिया। तहसीलदार साहब ने बनवारीलाल को भी बहुत कुछ समझाया, और विवाह में योग देने के लिये कहा-सुना, परंतु बनवारीलाल ने किसी की बात नहीं सुनी। उन्होंने स्पष्ट कह दिया—"जिसके कारण भाई साहब ने मुझे अपने से पृथक् कर दिया, मैं उसी के विवाह में योग दूँ—ऐसा त्रिकाल में भी नहीं हो सकता।" यह बनवारीलाल की बहानेबाज़ी थी। अन्यथा पाठक भली भाँति जानते हैं कि बनवारीलाल स्वयं ही बाबू साहब से अलग हुए थे। बाबू साहब ने जब बनवारीलाल का यह कथन तहसीलदार साहब के मुख से सुना, तो वह विषाद-पूर्ण मृदु-हास्य के साथ बोले—"अच्छी बात है—कोई चिंता नहीं। यहाँ और अनेक बातें हैं, वहाँ एक यह कलंक भी सही।"

विवाह में शंभुनाथ के कहने से उनकी माता भी बाबू साहब के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घर गई थीं। दस वर्ष के पश्चात् सुलोचना ने अपने पुत्र श्यामनाथ को देखकर सुख तथा संतोष की गहरी श्वास ली। श्यामनाथ ने भी माता से यद्यपि शुष्क व्यवहार नहीं किया, परंतु साथ ही जननी के दर्शन करके उन्हें कुछ अधिक हर्ष तथा आनंद प्राप्त नहीं हुआ और न हृदय में माता के प्रति स्नेह उत्पन्न हुआ। सुलोचना ने भी श्यामनाथ के व्यवहार को समझा। परंतु इससे उसे अधिक दुःख नहीं हुआ। उसने यह समझकर मन को धैर्य दिया कि—"जब श्यामू सावित्रीदेवी की गोद में पलकर बड़ा हुआ—उसने होश सँभालने पर केवल सावित्रीदेवी को ही अपनी माता समझा—तब उसे मुझसे स्नेह कैसे हो सकता है।" यद्यपि सुलोचना विवाह में सम्मिलित हुई, परंतु उसे अधिक हर्ष तथा आनंद नहीं हुआ। उसे केवल इतनी प्रसन्नता तो अवश्य हुई कि श्यामू का विवाह है। किस श्यामू का विवाह? उसके प्राण-सम पुत्र का विवाह! उसके उस श्यामू का विवाह, जिसकी मनोहर बाल-मूर्ति का चित्र अब तक उसके हृदय-पटल पर अंकित है। बस, इस भावना से जितना सुख, जितना हर्ष, एक माता को प्राप्त हो सकता है, उतना ही सुलोचना को भी हुआ। जो सुख माता को पुत्र का विवाह-कार्य अपने हाथों से संपन्न करने में, माता की हैसियत से विवाह की उन रस्मों को पूरा करने में, जिन्हें केवल माता ही करती है—प्राप्त होता है, वह सुख सुलोचना को प्राप्त नहीं हुआ, क्योंकि उसके इन अधिकारों को सावित्रीदेवी ने अपहरण कर लिया था। एक मौन दर्शक की भाँति सुलोचना ने विवाह में योग दिया, और उसे सुख भी केवल उतना ही मिला, जितना कि ऐसे दर्शक को प्राप्त होता है, जो अपनी प्रिय वस्तु को केवल आँखों से देख सकता है, परंतु उसको हाथ नहीं लगा सकता।

बाबू व्रजमोहनलाल ने इस शुभ अवसर पर श्यामनाथ की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भगिनी चुन्नी को भी बुलाया था। और, उसके साथ व्यवहार भी उसी प्रकार किया, मानो वह बाबू साहब की पुत्री और श्यामनाथ की बहन है। सावित्रीदेवी ने चुन्नी के बुलाने पर आरंभ में आपत्ति की, परंतु जब बाबू साहब ने उन्हें बहुत कुछ समझाया और सावित्रीदेवी की आपत्ति पर अप्रसन्नता प्रकट की, तब सावित्रीदेवी सहमत हो गईं। वैसे चाहे वह सहमत न होतीं, परंतु विवाह के हर्षोल्लास में भरे होने के कारण उनका हृदय कुछ उदार हो गया था, अतः इसी क्षणिक उदारता के वशीभूत होकर उन्होंने ऐसा किया।

बाबू व्रजमोहनलाल ने चुन्नी को सम्मिलित करने में इतना उत्साह प्रदर्शित क्यों किया? इसका कारण एक तो यह था कि बाबू साहब सज्जन और न्यायप्रिय थे। वह समझते थे कि चुन्नी श्यामनाथ की सगी बहन है, अतएव इस शुभ अवसर पर उसका मान भी उसी प्रकार होना चाहिए। यदि ऐसा न होगा, तो उसे हार्दिक दुःख होगा। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह कार्य शंभूनाथ पर दृष्टि रखकर भी किया। यदि यह कहा जाय कि शंभूनाथ के साथ आत्मीयता तथा घनिष्ठता प्रकट करने की भावना उनके हृदय में अन्य भावनाओं की अपेक्षा अधिक प्रबल थी, तब भी इसमें तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं। क्योंकि शंभूनाथ की सज्जनता, उनकी विद्वत्ता, और बाबू साहब के प्रति उनकी सहानुभूति तथा स्नेह ने बाबू साहब की दृष्टि में उन्हें बहुत ही आदृत बना दिया था। बाबू साहब शंभूनाथ को अपना समझने लगे थे। केवल अपना ही नहीं, वरन् वह शंभूनाथ से श्यामनाथ की अपेक्षा अधिक स्नेह करने लगे थे।

चुन्नी की ओर से भी विवाह में उतना ही सहयोग किया गया, जैसा एक सगे भाई के विवाह में भगिनी की ओर से किया जाता है। समस्त लेन-देन की सारी रस्में भी उसी भाँति पूरी की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गई थीं। बारात में गोकुलप्रसाद भी गए थे, और उनके साथ भी वैसा ही व्यवहार किया गया, जैसा एक मान्य के साथ किया जाता है।

श्यामनाथ ने विश्वनाथ को भी निमंत्रण दिया था। यह जानकर पहले तो बाबू साहब की इच्छा हुई कि वह श्यामनाथ से यह स्पष्ट कह दें कि विश्वनाथ को विवाह में सम्मिलित नहीं होने दिया जायगा। परंतु शंभूनाथ ने इस पर यह आपत्ति की कि यदि ऐसा कहा जायगा, तो श्यामनाथ और उनके मित्रों को संदेह हो जायगा कि बाबू साहब उन लोगों के आचरणों से विज्ञ हैं। अभी ऐसा होना उचित नहीं, इससे वे लोग बहुत सतर्क हो जायँगे। शंभूनाथ का यह परामर्श मानकर बाबू साहब चुप हो रहे, और विश्वनाथ आनंद-पूर्वक विवाह में सम्मिलित हुए।

बाबू साहब ने राधाकृष्ण को भी निमंत्रण दिया था, और उनकी हार्दिक इच्छा थी कि राधाकृष्ण भी विवाह में सम्मिलित हों, परंतु राधाकृष्ण ने स्वीकार न किया। उन्होंने कहा—"मैंने श्यामनाथ इत्यादि के लिये जो मंसूबे बाँध रक्खे हैं, उसके अनुसार मेरा श्यामनाथ और उनके मित्रों से सामना पड़ेगा—ऐसी दशा में उन पर यह प्रकट होना अच्छा नहीं कि मैं आपसे अथवा शंभूनाथ से परिचित हूँ। इसके अतिरिक्त विवाह में सम्मिलित होने से श्यामनाथ और उनके मित्रों से भी परिचय हो जायगा। यह बात मेरी योजना के विरुद्ध पड़ेगी, और जो कार्य मैं करना चाहता हूँ, उसके लिये मैं सर्वथा अयोग्य हो जाऊँगा। अतएव इस समय यही उचित है कि मैं अभी उन लोगों के लिये अपरिचित ही रहूँ।" शंभूनाथ ने भी राधाकृष्ण की इस बात को मान लिया। अतएव बाबू साहब को भी इन दोनों की बात माननी पड़ी।

शंभूनाथ के पिता लाला घासीराम इन सब बातों से पूर्णतया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अनभिज्ञ थे। शंभूनाथ जानते थे कि उनके पिता पेट के बड़े हल्के हैं, उनके पेट में बात नहीं पचती। यह बात उनको सुलोचना ने ही समझाई थी। उसने कहा था—"देखो बेटा, जो बात छिपाने की हो, उसे अपने बाप से कभी मत कहना। उनके पेट में बात नहीं पचती—तुम लाख मना कर दोगे, पर वह दुनिया-भर में उसे गायँगे।" शंभूनाथ ने भी माता की इस बात को मान लिया था, क्योंकि वह स्वयं भी अपने पिता के स्वभाव से पूर्णतया परिचित थे। अतएव उन्होंने श्यामनाथ के संबंध की कोई बात घासीराम को नहीं बताई थी, और बाबू साहब को भी इस संबंध में सावधान कर दिया था। लाला घासीराम विवाह में बड़ी शान के साथ सम्मिलित हुए थे। उनको इस बात का अभिमान था कि उनके पुत्र का विवाह इस धूम से हो रहा है। विवाह में आए हुए प्रायः समस्त मेहमानों से उन्होंने अपना परिचय देते समय यही कहा था—"मैं श्यामनाथ का सगा बाप हूँ।" दो-चार आदमियों ने बाबू साहब से कहा—"लाला घासीराम सबसे ऐसा कहते हैं।" इस पर बाबू साहब ने उन लोगों से किंचित् मुस्किराकर कहा था—"भइ, बात तो ठीक ही है—कहते हैं, तो कहने दो।"

विवाह के पश्चात् प्रथम मिलन में श्यामनाथ पत्नी का रूप-यौवन देखकर मुग्ध हो गए थे। बाबू साहब ने, विवाह-संबंध करते समय, श्यामनाथ की मनोवृत्ति जानने के कारण, इस बात पर बहुत ध्यान रक्खा था कि लड़की सुंदर हो। उन्होंने अपना एक विश्वासपात्र आदमी भेजकर लड़की को दिखवा भी लिया था। यही कारण था कि श्यामनाथ को पत्नी सुंदर मिली।

विवाह होने के पश्चात् श्यामनाथ नवयौवना पत्नी पर मुग्ध रहने के कारण दस-पंद्रह दिन घर से ही न निकले थे। परंतु कामोपासक तथा व्यभिचारी मनुष्य एक स्त्री से कभी संतुष्ट नहीं रह सकता—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चाहे वह कितनी ही रूपवती क्यों न हो। यही दशा श्यामनाथ की भी हुई। पंद्रह दिन के पश्चात् पत्नी में जो कुछ नवीनता थी, जो कुछ मधुरता थी, श्यामनाथ के लिये वह सब समाप्त हो गई। अतएव उनकी मुग्धता में भी कमी हो गई। इधर उनके मित्र विश्वनाथ ने उनको फिर बहकाना आरंभ किया कि—"अरे यार, ऐसे जोरू के गुलाम मत बनो। जोरू तो घर की मुर्गी होती है। वह की मुर्गी दाल-बराबर! उसके पल्ले से क्यों बँधे जाते हो! ज़रा बाहर निकलकर दुनिया का आनंद लूटो। बेगम साहबा तुम्हें कई दफ़े याद कर चुकी हैं कि श्यामनाथ बाबू नहीं आते—क्या नाराज़ हो गए। मैंने उनसे यह कह दिया कि अभी उनका नया-नया विवाह हुआ है, इसलिये नहीं आते। यह सुनकर शम्सुन्निसा ने कहा—तो अब हम लोगों को भला क्यों याद करेंगे?"

इस प्रकार विश्वनाथ ने झूठ के पुल बाँधकर श्यामनाथ को पुनः उभारा। श्यामनाथ भी शम्सुन्निसा का नाम सुनकर बेचैन हो गए। शम्सुन्निसा के प्रति उनके हृदय की अतृप्त आकांक्षा पुनः जाग्रत् हो उठी। अतएव उन्होंने पुनः बेगम के यहाँ आने-जाने का क्रम आरंभ किया।

दूसरा परिच्छेद

श्यामनाथ के विवाह के पश्चात् चुन्नी सुसराल न जाकर अपने मायके में ही रह गई। उसके चार-छ दिन रहने पर सुलोचना को ज्ञात हुआ कि चुन्नी कुछ उदासीन तथा चिंतित रहती है। सुलोचना ने पहले तो यह समझा कि चुन्नी गर्भवती है, इस कारण संभव है, चित्त उदास रहता हो, क्योंकि उस समय चुन्नी को तीन मास का गर्भ था। परंतु सुलोचना ने यह भी देखा कि चुन्नी बहुत ठंडी साँसें

CC-0. In Public Domain. Funding by MoE-IKS

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भरा करती है। यह देखकर सुलोचना ने अनुमान लगाया कि इसके हृदय में किसी बात का दुःख अवश्य है—अन्यथा गर्भ-जनित मलिनता तथा उदासीनता में ठंडी साँसों का क्या काम। यह निश्चय होने पर उसने एक दिन दोपहर को भोजन इत्यादि से निवृत्त होकर चुन्नी को बुलाकर पास बिठाया, और बोली—"बेटी, मैं कई दिन से देख रही हूँ कि तू दिन-भर ठंडी साँसें भरा करती है। तुझे क्या दुःख है? जो तुझे किसी बात का दुःख हो, किसी बात की तकलीफ़ हो, तो मुझे बता दे।"

चुन्नी ने सिर झुकाकर कहा—"नहीं अम्मा, दुःख काहे का, दुःख कोई नहीं।"

परंतु चुन्नी के कहने के ढंग से सुलोचना को उसकी बात पर विश्वास नहीं हुआ। उसने कहा—"यह तो मैं कभी नहीं मानूँगी—तुझे किसी बात का दुःख तो ज़रूर है। तू छिपाती है।"

चुन्नी उसी प्रकार बोली—"नहीं, छिपाने की कौन बात है।"

सुलोचना—"तू समझती है कि तेरी इन बातों से मैं तेरी बात मान लूँगी? अरे बेटी, मैंने दुनिया देखी है, चालीस बरस से ऊपर की मेरी उमर हो गई। क्या मैं इतना भी नहीं समझ सकती?"

इसका उत्तर चुन्नी ने कुछ न दिया, केवल पैर के अँगूठे से दरी पर नख-प्रहार करने लगी।

सुलोचना पुनः बोली—"आख़िर तू मुझसे छिपाती क्यों है? क्या कोई ऐसी बात है, जो मुझे बताने लायक़ नहीं।"

चुन्नी—"नहीं, ऐसी बात तो कोई नहीं।"

सुलोचना—"तू फिर बताती क्यों नहीं?"

चुन्नी मौन रही।

सुलोचना ने चुन्नी की चिबुक पकड़कर उसका मुँह ऊपर को उठाया। चुन्नी की आँखें सुलोचना की आँखों से मिलीं। चुन्नी के नेत्रों में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अश्रु-बूँद तैर रहे थे। यह देखकर सुलोचना ने कहा—"आँखों में तो तेरी आँसू भरे हैं, और मुँह से कहती है, कुछ नहीं। बात क्या है?"

चुन्नी के ओंठ क्रंदन-वेग न सँभाल सकने के कारण फड़कने लगे। उसने अपने दोनों हाथ मा के गले में डाल दिए, और उसके गले से लगकर रोने लगी।

सुलोचना चुन्नी की पीठ पर हाथ फेरते हुए बोली—"हाय बेटी! इतना तो तेरे पेट में दुःख भरा है, और फिर भी तू कहती है, कुछ नहीं।"

इस बात का उत्तर कौन देता, चुन्नी की तो हिचकी बँधी हुई थी।

सुलोचना का हृदय भी भर आया। नेत्रों में आँसू भरकर गद्गद कंठ से बोली—"मैंने कैसे-कैसे दुःख सहकर तुझे पाला-पोसा, इतना बड़ा किया। ब्याह भी ऐसी जगह किया, जहाँ तुझे रामजी की दया से सब तरह का सुख है। मैंने सोचा था कि मेरी चुन्नी ने बड़े दुःख उठाए हैं, अब भगवान् चाहेगा, तो सुखी होगी, पर सुख होना तो दूर, तुझे उल्टा दुःख हो गया। तुझे कौन-सा दुःख है। क्या सास कुछ कहती-सुनती है, कोई तकलीफ़ देता है?"

परंतु अपनी बात के उत्तर में सुलोचना को केवल चुन्नी की सिसकियाँ सुनाई पड़ीं।

सुलोचना मौन रही। उसने सोचा, पहले इसे जी भरकर रो लेने दो। जब चुन्नी का करुण-रुदन कुछ कम हुआ, तो वह पुनः उससे प्रश्न करने लगी। जब सुलोचना ने कई बार प्रश्न किया, तो चुन्नी नेत्र पोंछते हुए बोली—"अम्मा, तुमने मेरे लिये सब कुछ किया, पर जब भगवान् ने मेरे भाग्य में सुख लिखा ही नहीं, तब मुझे सुख कैसे मिल सकता है?"

सुलोचना—"तो कुछ बात भी तो बता, भगवान् ने तेरे भाग में सुख क्यों नहीं लिखा?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चुन्नी केवल नेत्र पोंछती रही, माता की बात का उत्तर उसने कुछ न दिया।

सुलोचना ने सोचा—जान पड़ता है, कोई ऐसी बात है, जो मेरे से कहने लायक नहीं, यह सोचकर उसने कहा—"अच्छा, इस वक्त रहने दे, जब तेरा चित्त सावधान हो, तब बताना।"

यह सुनकर सुलोचना ने वह प्रसंग बदल दिया। परंतु उसी समय से उसके हृदय में एक पीड़ा-सी उठ खड़ी हुई। वह अपने मन में रह-रहकर यही सोचती थी—"मेरी चुन्नी को कोई बड़ा दुःख है, तभी वह इतनी बिलख-बिलखकर रोई है।" यह सोचते-सोचते उसके नेत्रों में आँसू भर आते थे और उसकी इच्छा होती थी कि खूब जी भरकर रोवे, परंतु बिना कारण जाने अच्छी तरह रोना भी तो नहीं आता। सुलोचना समस्त दिन इसी चिंता में रही। अंत में जब उसका जी न माना, तब उसने शंभूनाथ को बुलाकर कहा—"बेटा शंभूनाथ, चुन्नी को तो कोई बड़ा दुःख हो गया। आज वह ऐसी बिलख-बिलखकर रोई है कि मैं तेरे से क्या कहूँ। मैंने बहुत कुछ पूछा, पर वह कुछ बताती नहीं। बाली रोती है। क्या कहूँ? जब से मैंने उसकी यह दशा देखी है, तब से मेरा जी कलप रहा है। क्या करूँ, उसके मन की कैसे मालूम हो। मेरी जान में तो उसकी ससुरालवाले उसे कुछ दुःख देते हैं। इसी मारे वह बताती नहीं।"

माता की बात सुनकर शंभूनाथ सन्नाटे में आ गए। उन्हें जिस बात का भय था, वही बात सामने आ गई। वह भली भाँति जानते थे कि चुन्नी को क्या दुःख हो सकता है। परंतु उन्हें यह विश्वास नहीं था कि गोकुलप्रसाद के दुराचरणों का प्रभाव चुन्नी पर इतना अधिक पड़ेगा। माता से अभी तक उन्होंने गोकुलप्रसाद के संबंध में कुछ नहीं कहा था। उसने सोचा था कि माता श्याम-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नाथ के कारण ही यथेष्ट दुःखी हैं, अतएव गोकुलप्रसाद की बात कहकर उनके दुःख में वृद्धि क्यों की जाय। उन्हें स्वप्न में भी यह ध्यान न आया था कि बात यहाँ तक बढ़ जायगी। अब वह क्या करें? माता से सब वृत्तांत कह दें? यदि कहते हैं, तो वही बात सामने आती है, जिसके कारण वह अभी तक मौन रहे। और नहीं कहते, तो माता की चिंता प्रतिदिन बढ़ेगी।

सुशीला शंभूनाथ को मौन देखकर बोली—"तू तो गुम-सुम हो गया।"

शंभूनाथ ने सोचा—जब बात यहाँ तक बढ़ गई है, तो अब छिपाना ठीक नहीं, माता से झूठ बोलने का पाप करना उचित नहीं। अब सब बातें स्पष्ट कह देनी चाहिए—परिणाम चाहे जो हो।

यह सोचकर उन्होंने कहा—"मुझे मालूम है कि चुन्नी क्यों दुःखी है, और मैं उसका दुख दूर करने में जी-जान से लगा हूँ। ईश्वर ने चाहा, तो उसका दुःख शीघ्र ही दूर हो जायगा।"

सुशीला अत्यंत उत्सुक होकर बोली—"क्या बात है बेटा, जल्दी बता!"

शंभूनाथ—"गोकुल के आचरण अच्छे नहीं। जो श्यामनाथ की दशा है, वही उसकी भी। दोनों में दोस्ती भी है।"

यह सुनकर माता पर दूसरा वज्रपात हुआ। वक्ष कलेजे पर हाथ रखकर बोली—"हाय! यह तू क्या कह रहा है?"

शंभूनाथ—"जो बात है, वह कह रहा हूँ।"

सुशीला—"यह दशा कितने दिनों से है?"

शंभूनाथ—"यह दशा है तो बहुत दिनों से, पर मुझे अभी दो-ढाई महीने से पता लगा है।"

सुशीला स्तंभित होकर बोली—"हाय बेटा, तूने मुझसे यह बताया क्यों नहीं?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ सिर नीचा करके बोले—"इसीलिये नहीं बताया था कि तुम्हें दुःख होगा।"

सुलोचना दुःखी स्वर से बोली—"दुःख तो मेरे करम ही में बदा है, तू मेरा दुःख कहाँ तक बँटाएगा। इसीलिये मैंने तुझसे कहा था कि बेटा, लड़के की जाँच अच्छी तरह कर लेना—और चाहे कुछ न हो, पर लड़का अच्छे सील-सुभाव का हो।"

शंभूनाथ जानते थे कि माता उनसे यह बात अवश्य कहेगी। यह भी एक कारण था, जिससे कि उनका इतना साहस नहीं पड़ा कि वह माता से गोकुल के संबंध में कुछ कहें।

शंभूनाथ बोले—"उस समय तो मैंने भली भाँति जाँच-पड़ताल कर ली थी, परंतु बात यह है कि किसी आदमी के गुप्त आचरणों का पता लगना भी तो सहज नहीं है। मैं उस समय जो कुछ जान सका, वह इधर-उधर पूछकर ही जान सका। जिन लोगों से मैंने पूछ-ताछ की, वह भी यह नहीं जानते थे—जानते होते, तो अवश्य बता देते।"

सुलोचना—"हाय राम! मैं तो समझी थी कि जनम-भर दुःख भोगा, अब बुढ़ापे में तो कल से बैठना नसीब होगा, पर जान पड़ता है कि मैं इसी तरह रो-रोके मरूँगी। मेरी फूल-सी बच्ची, खेलने-खाने के दिन, उसकी यह दशा कि दिन-भर ठंडी साँसें भरा करती है, और बात पूछो, तो फूट-फूटकर रोती है। हाय! मुझे मौत भी नहीं आती। अपनी आँखों से तो यह दुःख न देखूँ।"

यह कहकर सुलोचना ने मुँह पर आँचल रखकर रोना आरंभ किया। माता को इस प्रकार व्याकुल देखकर शंभूनाथ के नेत्रों में भी आँसू भर आए। वह आँसुओं को पीने की चेष्टा करते हुए बोले—"अम्मा, तुम व्यर्थ दुःख मानती हो। मैं श्यामनाथ के साथ-ही-साथ उसके भाग्य को सुधारने की पूरी चेष्टा करूँगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलोचना—"बेटा, तू किस-किसको सुधारेगा। तू अब अपना रोज़-गार-धंधा देखेगा या इन कुकर्मियों के पीछे अपना जन्म ख़राब करेगा।"

शंभूनाथ—"रोज़गार-धंधा भी देखूँगा, और यह काम भी करूँगा।"

सुलोचना—"यह कुछ नहीं, तू गोकुल के बाप से मिलकर उससे यह सब हाल कह।"

शंभूनाथ—"उनसे कहने से कुछ लाभ नहीं होगा। वह डाँट-डपटकर छोड़ देंगे। इससे अधिक वह और क्या कर सकते हैं।"

सुलोचना—"डाँटे-डपटेंगे, तो उसे कुछ विचार तो होगा।"

शंभूनाथ—"कुछ भी न होगा। मैं तो ऐसी युक्ति से काम कर रहा हूँ कि उसके आचरण अपने-आप छूट जायँगे।"

सुलोचना—"अपने-आप तो छूट चुके।"

शंभूनाथ—"तुम मानती ही नहीं, मेरी बात का तो विश्वास करो।"

सुलोचना कुछ देर तक सोचकर नेत्र पोंछती हुई बोली—"अच्छी बात है, जो तू ठीक समझ, वह कर। भगवान् की जो इच्छा है, वह तो होगा ही।"

शंभूनाथ—"भगवान् की इच्छा तो मुख्य ही है, पर चेष्टा करना भी अनुचित नहीं। मनुष्य का काम तो चेष्टा करना ही है।"

सुलोचना—"अच्छा बेटा, तू भी अपनी-सी करके देख ले। उन पुरोहितजी को तो ज़रा बुला, बड़ी बड़ाई करते थे कि लड़का ऐसा है, लड़का वैसा है। मेरी बच्ची का गला फँसा दिया।"

शंभूनाथ—"पुरोहितजी बेचारों का क्या अपराध? जब उसके माता-पिता को उसके आचरणों का पता नहीं, तो दूसरा क्या जान सकता है। इसमें पुरोहितजी को दोष देना अनुचित है।"

सुलोचना—"मैं किसी को दोष क्या दूँगी, मैं तो सारा दोष

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अपने करम को देती हूँ। न-जाने पूर्व जन्म में कौन पाप किए थे, जिनका फल इस जन्म में भोगना पड़ रहा है। जिसे अपना समझो, वही दुश्मनी करने पर उतारू है।"

शंभूनाथ ने माता को बहुत कुछ आश्वासन देकर शांत किया, और उससे यह वादा किया कि वह गोकुलप्रसाद के संबंध में पूरी चेष्टा करेंगे। सुलोचना ने भी यह सोचकर कि उनका सुयोग्य पुत्र जो कहता है, उसके लिये अवश्य प्राण-पण से चेष्टा करेगा, हृदय को धैर्य दिया; परंतु इस समाचार से उनके हृदय पर जो गहरा धक्का लगा, उसका प्रभाव उसके हृदय पर से नहीं गया।"

तीसरा परिच्छेद

संध्या के सात बज चुके हैं। विश्वनाथ, गोकुलप्रसाद तथा श्यामनाथ चौक से होते हुए बेगम के मकान की ओर जा रहे हैं। श्यामनाथ कह रहे हैं—"यार, चल तो रहे हो, परंतु ऐसा न हो कि धकियाए जाओ।"

विश्वनाथ—"धकिया कौन सकता है? उनके यहाँ धकियाने-वाला है कौन?"

श्यामनाथ—"यह तो मैं जानता नहीं, परंतु तुम सोच-समझ लो। बेगम एक दफ़ा मना कर चुकी हैं कि यहाँ मत आया करो, हमारी बदनामी होती है।"

गोकुल बोल उठे—"यह सब नख़रे की बातें हैं। असल बात यह है कि वह कुछ और लेना चाहती हैं।"

श्यामनाथ—"दो सौ रुपए तो ले चुकी हैं, अब और क्या किसी का घर लेंगी?"

गोकुल—"तुम्हारे विवाह के पूर्व एक दिन मैं और विश्वनाथ बेगम के यहाँ गए थे। उस दिन तो उन्होंने कुछ इस ढंग की बातें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

की थीं कि जिससे मालूम हुआ कि वह, यदि हम लोग चाहें, तो रुपए लौटा सकती हैं ?"

श्यामनाथ—"क्या यह सच बात है ?"

गोकुल—"हाँ, सच नहीं, क्या झूठ है।"

श्यामनाथ—"क्यों भई विश्वनाथ, क्या बात है ?"

विश्वनाथ—"बात कुछ नहीं—उन्होंने यही कहा था कि आप लोग मत आया कीजिए, इसमें हमारी बदनामी होने का ख़ौफ़ है। इस पर मैंने कहा—"हम आपकी बदनामी नहीं करना चाहते। हम लोग आपके ख़ैरख़्वाह हैं।" इस पर बेगम बोलीं—"हाँ, यह तो हमें यक़ीन है। अगर आप हमारे ख़ैरख़्वाह न होते, तो हमारी मदद क्यों करते। लेकिन बात यह है कि ज़ियादा आने-जाने में बदनामी होती है। इसलिये आप लोग आना-जाना कम कर दें, तो अच्छा है। शायद आप ख़याल करें कि रुपए मिल जाने पर अब ऐसा कहती हैं, सो यह बात नहीं है—अगर आप ऐसा ख़याल करें, तो मैं आपके रुपए वापस कर दूँ।"

श्यामनाथ—"यह कब की बात है ?"

विश्वनाथ—"यह तुम्हारे विवाह से चार-छ दिन पहले की बात है। तुम तो उन दिनों घर से निकल न पाते थे, इसलिये मैं और गोकुल गए थे।"

श्यामनाथ—"मालूम होता है, उन्हें घसीक़े के रुपए मिल गए।"

विश्वनाथ—"कह नहीं सकते, क्या बात है।"

गोकुल—"छुट्टन से पूछा, वह भी कुछ नहीं बताया।"

श्यामनाथ—"क्या कहता है ?"

गोकुल—"आयँ-बायँ बकता है, साफ़ बात नहीं बताता।"

श्यामनाथ—"जब यह बात है, तो अब उन्हें हाथ से निकला समझो।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुल—"अगर हाथ से निकल गई, तो बड़ी किरकिरी होगी।"

श्यामनाथ—"किरकिरी काहे की ?"

गोकुल—"किरकिरी से मतलब बदनामी का नहीं है, मज़ा किरकिरा हो जायगा—यों समझो।"

विश्वनाथ—"समझाया खूब ! कहते कुछ हैं, और समझाते कुछ हैं।"

गोकुल—"अरे, तो क्या हुआ, एक बात मुँह से निकल गई।"

श्यामनाथ—"यार विश्वनाथ, तुमने बैठे-बिठाए हमें फिर शम्बु-निसा की याद दिला दी, तो अब कुछ ऐसा करो कि हमारा मनोरथ भी पूरा हो, नहीं तो हमारी हत्या तुम्हारे सिर पड़ेगी।"

विश्वनाथ—"अच्छा, क्या संखिया खाने का इरादा है ?"

श्यामनाथ—"मेरा इरादा तो नहीं है, पर मालूम होता है कि तुम खिला के छोड़ोगे।"

विश्वनाथ—"बको मत, चुपचाप चले चलो।"

श्यामनाथ—"चल तो रहे ही हैं, परंतु ख़ाली चलने-फिरने से क्या होता है।"

विश्वनाथ—"एक दो सौ रुपए और ख़र्च कर डालो, तो बस मामला फ़तह।"

श्यामनाथ—"हाँ, मैं ख़र्च करने को तैयार हूँ।"

विश्वनाथ—"रुपए तैयार हैं ?"

श्यामनाथ—"तैयार—बिलकुल तैयार !"

विश्वनाथ—"हाँ, अभी तो ससुराल का माल पास है। सच बताओ, कितने रुपए मिले ?"

श्यामनाथ—"रुपए तो तीन-चार सौ मिले, पर मेरे पास कुल डेढ़ सौ रुपए बचे। शेष सब बाबूजी ने ले लिए।"

विश्वनाथ—"डेढ़ सौ कौन लिए ?"

CC-0. Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्यामनाथ—"उन्हें पता होता, तो एक पैसा न छोड़ते, पर उन्हें पता ही नहीं लगा।"

गोकुल—"तब तो दो सौ हो गए। डेढ़ सौ तुम्हारे पास हैं, पचास मैं दे सकता हूँ।"

विश्वनाथ—"तो बस ठीक है।"

गोकुल—"तुमने उस्ताद, कभी अपनी टेंट से कुछ न निकाला।"

विश्वनाथ—"भइ, बात यह है कि किसी का दिमाग़ ख़र्च होता है, किसी का रुपया। अब मैं सारे प्रबंध भी करूँ, दिमाग़ भी ख़र्च करूँ, इधर-उधर दौड़-दौड़कर पता लगाकर चीज़ भी पैदा करूँ, और फिर ऊपर से रुपया भी ख़र्च करूँ! तो जनाब, मैं ऐसा उल्लू नहीं हूँ।"

श्यामनाथ—"तुम उल्लू काहे को, उल्लू तो हम हैं, जो ख़र्च करते हैं।"

विश्वनाथ—"नहीं, यह मत समझिए कि मैं आपको उल्लू बना रहा हूँ। आप मेरा काम अपने ऊपर ले लीजिए—रुपए ख़र्च करने के लिये मैं तैयार हूँ। मैं एक ही काम कर सकता हूँ—दोनो काम नहीं कर सकता।"

इसी प्रकार की बातें करते हुए ये तीनो व्यक्ति बेगम के द्वार पर पहुँच गए। विश्वनाथ ने द्वार खटखटाया। भीतर से ज़हूरन ने पूछा—"कौन है?"

विश्वनाथ ने कहा—"बिशुनाथ।"

ज़हूरन बोली—"ठहर जाइए, बेगम से पूछ लूँ।"

विश्वनाथ—"पहले दरवाज़ा खोल दो, फिर बेगम से पूछना।"

ज़हूरन—"बेगम नाराज़ न हों।"

विश्वनाथ—"तोबा। अरे बी, हम कुछ चोर-डाकू तो हैं नहीं। जब तक बेगम न कहेंगी, तब तक हम भीतर नहीं आवेंगे—मगर दरवाज़ा तो खोल दो।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ज़हूरन ने दरवाज़ा खोल दिया। तीनो व्यक्ति भीतर पहुँच गए। विश्वनाथ ने ज़हूरन से पूछा—"ज़हूरन, सच बताओ, बेगम हम लोगों से क्यों नाराज़ हो गईं।"

ज़हूरन—"अब ले हुज़ूर, मैं क्या जानूँ। मैं तो एक ग़रीब ख़ादिमा (दासी) ठहरी।"

विश्वनाथ—"बातें तो बनाओ नहीं—तुम्हें सब मालूम है। गोकुलप्रसाद! बी ज़हूरन को हमने आज तक कुछ नहीं खिलाया, यह बड़ी बेजा बात है। अच्छा, इस वक़्त फ़िलहाल मिठाई खाने के लिये पाँच रुपए तो इनकी नज़र करो, फिर आयंदा ज़ियादा ख़याल किया जायगा।"

गोकुल ने तुरंत पाँच रुपए निकालकर ज़हूरन की ओर बढ़ाए। ज़हूरन रुपए लेकर बोली—"सलामती रहे—अल्लाह मुरादें पूरी करे।"

विश्वनाथ—"इस वक़्त एक मुराद तो तुम पूरी कर सकती हो।"

ज़हूरन—"फ़र्माइए, लौंडी की ताक़त के भीतर की बात होगी, तो ज़रूर पूरी हो जायगी।"

विश्वनाथ—"यह बताओ कि बेगम हम लोगों से एकाएक क्यों ख़फ़ा हो गईं। कहाँ तो वह मीठी-मीठी बातें, वह मेल-मुहब्बत, और कहाँ यह रुखाई। इसकी क्या वजह है?"

ज़हूरन—"हुज़ूर, वह वादा करें कि बेगम साहबा या छुट्टन से इसका ज़िक्र न करेंगे, तो बताऊँ। ऐसा न हो कि आप तो कहके अलग हो जायँ, और मुझ रँडिया की नाक-चोटी काटी जाय।"

विश्वनाथ—"तोबा! ऐसा हर्गिज़ न होगा। हम ऐसे बेवक़ूफ़ नहीं हैं कि ऐसी बात ज़बान पर लावें। तुम बेख़ौफ़ होकर बताओ।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ज़हूरन—"बात यह है कि बेगम के यहाँ एक साहब तशरीफ़ लाने लगे हैं, उन्हीं के कहने से यह हुआ।"

विश्वनाथ—"वह कौन हैं, हिंदू या मुसलमान!"

ज़हूरन—"हैं तो हिंदू ही। राधाकृशन नाम है।"

विश्वनाथ ने गोकुलप्रसाद तथा श्यामनाथ की ओर देखकर पूछा—"इस नाम के किसी आदमी को जानते हो?"

दोनो ने कुछ क्षणों तक सोचकर कहा—"नहीं, हमारी जान में राधाकृष्ण नाम का कोई आदमी नहीं है। वैसे तो कई हैं, पर ऐसा कोई नहीं है, जो इस ढंग का हो।"

विश्वनाथ ज़हूरन से बोले—"अच्छा, और?"

ज़हूरन—"तो वह एक डेढ़-दो महीने से आते-जाते हैं।"

विश्वनाथ—"डेढ़-दो महीने से!"

ज़हूरन—"हाँ!"

विश्वनाथ—"रोज़ आते हैं?"

ज़हूरन—"जी नहीं, तीसरे-चौथे।"

विश्वनाथ—"शाम को न आते होंगे, क्योंकि शाम को तो हम लोग भी आते-जाते रहे हैं, पर हमने उन्हें कभी नहीं देखा।"

ज़हूरन—"वह शाम को नहीं आते, दोपहर में आते हैं!"

विश्वनाथ सिर हिलाकर बोले—"मैं तो पहले ही समझ गया था कि कोई ख़ास वजह है। हाँ, तो उन्होंने क्या कहा?"

ज़हूरन—"वह बोले कि आप किसी को अपने यहाँ न आने दें। आपको जो कुछ ज़रूरत हो, हमसे कहें।"

विश्वनाथ—"मालदार आदमी हैं क्या?"

ज़हूरन—"मालूम तो मालदार ही होते हैं, बेगम को तीन सौ रुपए दे भी चुके हैं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यह सुनते ही तीनो व्यक्तियों का चेहरा उतर गया। उसी समय भीतर से बेगम ने पुकारा—"ऐ ज़हूरन!"

ज़हूरन शीघ्रता-पूर्वक वहाँ से चली गई।

इधर इन तीनो में सलाह होने लगी। श्यामनाथ बोले—"अब यहाँ दाल गलना कठिन है।"

गोकुल—"हाँ, लक्षण अच्छे नहीं हैं।"

विश्वनाथ—"हाँ, कुछ कठिनता तो अवश्य बढ़ गई, पर अभी हताश न होना चाहिए!"

श्यामनाथ—"तो यहाँ खड़े क्या करते हो, या तो भीतर चलो, या बाहर!"

विश्वनाथ—"आओ भीतर चलें, बाहर जाने के क्या अर्थ हैं।"

यह कहकर विश्वनाथ आगे-आगे चले, ये दोनो उनके पीछे-पीछे। कमरे में पहुँचकर विश्वनाथ ने देखा कि बेगम खड़ी ज़हूरन से बातें कर रही हैं। इन्हें देखते ही किंचित् मुस्किराकर बोलीं—"आइए!"

तीनो व्यक्ति बेगम को सलाम करके यथास्थान पर बैठ गए। बेगम भी थोड़ी दूर पर उनके सामने बैठ गईं। श्यामनाथ की ओर देखकर उन्होंने कहा—"श्यामू बाबू तो आज बहुत दिनों बाद तशरीफ़ लाए।"

विश्वनाथ—"जी हाँ, इधर यह बाहर चले गए थे।"

बेगम—"तभी!"

थोड़ी देर तक सब लोग चुपचाप बैठे रहे। इसके पश्चात् विश्वनाथ बोले—"मालूम होता है, आप हम लोगों से कुछ नाराज़ हैं।"

बेगम—"नाराज़! ऐ नहीं, नाराज़ होने की कौन-सी वजह है।"

विश्वनाथ—"यह तो आप ही जानिए।"

बेगम—"नाराज़-वाराज़ कुछ नहीं। यह महज़ आपका ख़याल है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ—"तो फिर हम लोगों पर यह ज़ुल्म क्यों हो रहा है ?"

बेगम—"कैसा ज़ुल्म ?"

विश्वनाथ—"यही कि हम लोगों की आमद-रफ़्त में रुकावट डाली जाती है।"

बेगम—"इसकी वजह तो मैं बतला चुकी हूँ। बात यह है कि हमारे एक रिश्तेदार हैं—उन्होंने शायद किसी रोज़ आपको अंदर आते या बाहर जाते देखा होगा। इसलिये वह हम पर बहुत नाराज़ हुए। महज़ इस वजह से आपको मना किया। आप जानिए, हम लाख ग़रीब हों, मगर हैं आबरूदार। आबरू को ख़तरे में डालकर हम कोई काम नहीं करना चाहते। इंसान की आब तभी तक है, जब तक कि आबरू है—आबरू गई, और इंसान कौड़ी का तीन-तीन हुआ।"

विश्वनाथ—"आपके वह रिश्तेदार क्या यहीं रहते हैं ?"

बेगम—"जी हाँ, यहाँ से क़रीब ही मकान है।"

विश्वनाथ—"वह कैसे रिश्तेदार हैं कि न तो ख़ुद आपकी कुछ मदद करते हैं, और न दूसरों को करने देते हैं।"

बेगम—"वह बेचारे मदद क्या करेंगे, वह भी बाल-बच्चेदार आदमी हैं—आमदनी ज़ियादा है नहीं। फिर भी जो बन पड़ता है, वह करते ही हैं।"

विश्वनाथ—"तो उन्हें तो आप समझा सकती हैं कि हम लोग आपके मददगार व ख़ैरख़्वाह हैं।"

बेगम—"यह सब ठीक है, मगर फिर भी एतराज़ तो होता ही है। यों कभी-कभी आना-जाना हो, तो हर्ज नहीं, मगर रोज़ाना की आमद-रफ़्त तो छिपी नहीं रह सकती।"

विश्वनाथ—"ख़ैर, जैसा आप मुनासिब समझें। हम तो इस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

हालत में भी आपकी हर तरह से मदद करने को तैयार हैं। आज हम लोग सिर्फ़ यह पूछने आए थे कि आपको कोई तकलीफ़ तो नहीं है।"

बेगम—"तकलीफ़ कैसी ?"

विश्वनाथ—"यही रुपए-पैसे की, या और किसी क़िस्म की ?"

बेगम—"जी नहीं, आपकी इनायत और अल्लाह का फ़ज़्ल है। बल्कि मैं तो यह चाहती हूँ कि आप अपने दो सौ रुपए ले लें, तो बेहतर है। अभी मौजूद हैं, फिर ख़र्च-वर्च हो जायँगे, तो मुश्किल होगी।"

विश्वनाथ—"ख़र्च हो जायँगे, तो ख़र्च हो जाने दीजिए। हमने तो आपको ख़र्च करने के लिये ही दिए थे, वापस करने के लिये नहीं।"

बेगम—"यह आपकी मेहरबानी है, मगर अब हमें ज़रूरत नहीं।"

विश्वनाथ—"रुपए की ज़रूरत तो इंसान को हर वक़्त रहती है ?"

बेगम—"हाँ, यों तो रुपया किसी को कब बुरा लगता है। मगर हमारी ज़रूरत तो रफ़ा हो गई। आपकी इनायत से उस वक़्त काम चल गया, अब कोई ज़रूरत नहीं।"

विश्वनाथ—"मगर अफ़सोस है कि हमारी इनायतों का यह बदला मिला कि अब हमारी सूरत से भी नफ़रत है।"

बेगम—"आप तो काँटों में घसीटते हैं।"

विश्वनाथ—"और उल्टा हमीं पर काँटों में घसीटने का इल्ज़ाम! हमें तो आपसे बड़ी-बड़ी उम्मीदें थीं, मगर अफ़सोस! सब ख़ाक में मिल गईं।"

बेगम ने इस बात का अभी कुछ उत्तर न दिया था कि भीतर से उन्हें किसी ने पुकारा। बेगम ने कहा—"आती हूँ।" वह यह कहकर उठीं और विश्वनाथ से बोलीं—"मुआफ़ कीजिएगा। आज

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ज़रा शम्सो की तबीयत ख़राब है, इसलिये उसके पास बैठना ज़रूरी है।"

श्यामनाथ बोले—"क्या ख़राब है?"

बेगम—"ज़ुकाम हो गया है, इसलिये सर में दर्द और ख़फ़ीफ़ हरारत है।"

श्यामनाथ बेचैन होकर बोले—"तो किसी डॉक्टर या हकीम को बुलवावें?"

बेगम—"जी नहीं, डॉक्टर-हकीम की क्या ज़रूरत है? ज़ुकाम तो जोशाँदा पीने से साफ़ हो जाता है। जोशाँदे से बढ़कर ज़ुकाम की कोई दवा नहीं।"

श्यामनाथ—"जोशाँदा तो ख़ैर हुई है। अगर कुछ ज़्यादा तकलीफ़ हो, तो डॉक्टर को बुलवा दें।"

बेगम—"जी नहीं, ऐसी ज़ियादा तकलीफ़ नहीं है। अच्छा! इजाज़त चाहती हूँ।"

यह कहकर बेगम भीतर चली गईं।

बेगम के जाने के पश्चात् ये लोग कुछ देर तक सन्नाटे में बैठे रहे। इनके मुख पर निराशा की मलिनता छाई हुई थी। गोकुलप्रसाद ने एक दीर्घ निःश्वास छोड़कर कहा—"चलो, अब यहाँ क्या धरा है।"

विश्वनाथ—"चलते हैं, ज़रा देर बैठो।"

इसी समय ज़हूरन बाहर आई और बोली—"बेगम साहबा अब नहीं आयेंगी, आप लोग तशरीफ़ ले जायँ।"

विश्वनाथ—"क्या शम्सुन्निसा की तबीयत ज़्यादा ख़राब है?"

ज़हूरन—"तबीयत तो ज़्यादा ख़राब नहीं है, मगर छोटी बेगम उन्हें छोड़ती नहीं हैं। कहती हैं, हमारे पास बैठो।"

यह सुनकर विश्वनाथ अपने साथियों की ओर देखकर बोले—"चलो भाई, अब क्या करोगे बैठके।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुल—"मैंने तो पहले ही कहा था, मगर आप तो जब तक गर्दन न नापी जाय, तब तक उठना जानते ही नहीं।"

तीनो व्यक्ति उठ खड़े हुए। ज़हूरन द्वार बंद करने के लिये पीछे-पीछे आई। द्वार के पास पहुँचकर विश्वनाथ ज़हूरन से बोले—"क्या सचमुच छोटी बेगम की तबियत ख़राब है, या फ़क़त बहाने-बाज़ी है।"

ज़हूरन—"कुछ ख़राब भी है, कुछ बहाना भी है।"

विश्वनाथ—"मैं तो पहले ही समझ गया था। अच्छा, यह बताओ, अब राधाकिशन बाबू किस रोज़ आवेंगे?"

ज़हूरन—"यह मैं क्या जानूँ, वह रोज़ तो आते नहीं।"

विश्वनाथ—"इधर कितने रोज़ से नहीं आए?"

ज़हूरन—"तीन-चार रोज़ से नहीं आए।"

विश्वनाथ—"तब तो कल या परसों आवें?"

ज़हूरन—"मुमकिन है!"

तीनो व्यक्ति मकान से निकलकर बाहर आए, और चौक की ओर चले। श्यामनाथ बोले—"यहाँ का खेल तो समाप्त हो गया।"

गोकुल—"हाँ, मालूम तो ऐसा ही होता है।"

श्यामनाथ—"अफ़सोस! सारे अरमान ख़ाक में मिल गए।"

गोकुल—"यार, मेरे कलेजे में तो दर्द होने लगा। हाय! क्या प्यारा माशूक़ था!"

विश्वनाथ—"था! मर गया क्या?"

श्यामनाथ—"भगवान् न करे! क्या वाहियात बकते हो।"

गोकुल—"हमारे लिये तो मरा ही-सा है।"

श्यामनाथ—"क्यों किसी को कोसते हो?"

गोकुल—"हमारा तो जी कलप रहा है, कोसें न, क्या करें? हमारे काम नहीं आया, तो ईश्वर करे, किसी के काम न आवे;

CC-0. Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

संसार से अछूता ही उठ जाय। मगर यारो, यह राधाकृष्ण कौन है? इसका पता लगाना चाहिए। यह कोई हमारा भी गुरु पैदा हुआ। ओफ़्ओह! ऐसा कलो से काटा है कि झप खाते चले जा रहे हैं।"

श्यामनाथ—"जी चाहता है, गोली मार दूँ! यह दुष्ट न-जाने कहाँ से टपक पड़ा।"

विश्वनाथ—"टपक कहाँ से पड़ा, छुट्टन लाया होगा।"

गोकुल—"हाँ उस्ताद, ख़ूब सोचो, बात यही है। यह छुट्टन ही का काम है। वह एक ही हरामज़ादा है।"

विश्वनाथ—"वह मिले, तो कुछ हाल खुले।"

गोकुल—"वह बतावेगा ही क्यों?"

विश्वनाथ—"बतावेगा क्यों नहीं। हम तो पूछ ही लेंगे, और किसी को चाहे न बतावे।"

श्यामनाथ—"दो सौ रुपए भी गए, और नतीजा कुछ न निकला। दो सौ रुपए बंदीजान को देते, तो दो महीने तक आने-जाने का डौल हो जाता।"

विश्वनाथ—"अभी से इतने निराश मत हो। मैं सहज में छोड़नेवाला आदमी नहीं हूँ। दो सौ रुपए हराम के नहीं हैं।"

गोकुल—"कुछ करो, परंतु अब कोई लाभ न होगा। अब तो चिड़िया उड़ गई।"

चौक में पहुँचकर श्यामनाथ बोले—"अब अपने राम तो आज बंदीजान के यहाँ जाते हैं।"

गोकुल—"अच्छा! अभी बंदीजान से संबंध नहीं छूटा।"

श्यामनाथ—"शम्सुन्निसा के इश्क़ के कारण छूटा हुआ था। अब उधर से निराश हुई, तो बंदीजान की याद आई।"

विश्वनाथ—"अरे, तुम भी कहाँ जाते हो। इससे अच्छा तो यह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

है कि घर चले जाओ। बंदीजान से तो नवीन अभी तुम्हारी जोरू ही है। चलना ही है, तो कहीं नई जगह चलो।"

श्यामनाथ—"जोरू में बंदीजान की-सी सफ़ाई, नज़ाकत, अदाएँ व मुहब्बत कहाँ ?"

विश्वनाथ—"तो ये बातें दूसरी जगह भी मिलेंगी, और साथ में नवीनता भी ?"

श्यामनाथ—"ख़ैर, अब आज तो वहीं जाने को जी चाह रहा है—नई जगह फिर किसी दिन सही।"

विश्वनाथ गोकुलप्रसाद से बोले—"अच्छा, इन्हें बंदीजान के यहाँ जाने दो। आओ हम-तुम चलें।"

गोकुल—"कहाँ चलोगे ?"

विश्वनाथ—"चलो, कहीं हम लोग भी दिल बहलाएँ।"

गोकुल—"चलो, परंतु रुपए तो तुमने उस चिड़ी ज़हूरन को दिला दिए। इन रुपयों के जाने का अफ़सोस हुआ।"

विश्वनाथ—"गधे हो, उन्हीं रुपयों की बदौलत तो राधाकृष्ण का हाल मालूम हुआ।"

गोकुल—"मालूम हुआ, तो लाभ क्या हुआ ? और निराशा बढ़ी।"

विश्वनाथ—"आप तो हैं पूरे चोंच ! अच्छा, अब यह बताओ, जेब में कुछ और भी है, या दीवाला निकल गया।"

गोकुल—"पहले आप बताइए, आप भी कभी कुछ लेकर चलते हैं, या सदा पराए भरोसे ही रहते हैं।"

विश्वनाथ—"मेरे पास क्या धरा है, दो-तीन रुपए पड़े हैं।"

गोकुल—"बस, दो-तीन रुपए पड़े हैं। अपनी तो यह दशा है, दूसरों को दीवालिया बताते हैं। फोकट में रंडीबाज़ी करते तुम्हीं को देखा—कमाल है !"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ—"हम तो कह चुके कि हम तो दिमाग़ ख़र्च करते हैं, रुपए आप ख़र्च कीजिए।"

गोकुल—"क्या सरल युक्ति ढूँढ़ी है।"

विश्वनाथ—"अच्छा, अब बहुत बहको नहीं, कहीं चलना हो, तो चलो, नहीं घर में जाकर सो रहो।"

गोकुल—"घर में क्या धरा है, वहाँ भी सन्नाटा है।"

विश्वनाथ—"तो फिर क्या करोगे, गोमती में डूबोगे जाके क्या? कहीं चलना हो, तो रुपए दिखाओ।"

गोकुल—"चलो, रुपए भी हो ही जाएँगे। तुम्हारी तरह कंगाल थोड़ा ही हैं।"

श्यामनाथ—"अच्छा, मैं तो चला। जय रामजी की!"

विश्वनाथ—"जाइए, जय रामजी की।"

चौथा परिच्छेद

विश्वनाथ तथा गोकुलप्रसाद से बिदा होकर श्यामनाथ बंदीजान के कमरे पर पहुँचे। वहाँ उस समय मुजरा हो रहा था। दो-तीन नवयुवक तकियों के सहारे बैठे थे, और बंदीजान उन्हें गाना सुना रही थीं। जिस समय श्यामनाथ ज़ीने पर चढ़ने लगे, और उनके कानों में गाने-बजाने का स्वर सुनाई दिया, तो पहले उनकी इच्छा हुई कि लौट चलें, परंतु फिर यह सोचकर कि देखें कौन लोग बैठे हैं—ऊपर चढ़ गए। इन्हें देखकर बंदीजान ने गाते हुए ही मुस्किराकर इनका अभिवादन किया, सारंगियों ने सलाम किया। जो लोग बैठे गाना सुन रहे थे, उन्होंने श्यामनाथ को सिर से पैर तक देखा। उनमें से एक बोला—"आइए, तशरीफ़ लाइए!"

श्यामनाथ बोले—"जी हाँ, हाज़िर हुआ।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

यह कहकर उन्होंने जूते उतार दिए, और उन्हीं लोगों के पास एक ओर जा बैठे।

वे तीनो नवयुवक मुसलमान थे। उनमें से एक बोला—"अजी जनाब, आप भी कहाँ बैठ गए—इधर तकिए के सहारे बैठिए आराम से।"

श्यामनाथ कुछ आगे खिसककर बोले—"कोई हर्ज नहीं, बड़े आराम से बैठा हूँ।"

थोड़ी देर तक तो श्यामनाथ बैठे गाना सुनते रहे। इसके पश्चात् उनका जी ऊबने लगा। अतएव उन्होंने सलारू को, जो वहीं एक कोने में बैठा था, इशारे से बुलाया। उसके निकट आने पर उससे धीमे स्वर में पूछा—"बड़ी बी कहाँ हैं?"

सलारू—"अंदर बैठी हैं।"

श्यामनाथ—"मैं उनसे मिलना चाहता हूँ।"

सलारू—"तो मैं उनसे पूछ आऊँ—जो कहेंगी, तो वहीं बुला लूँगा।"

श्यामनाथ—"अच्छी बात है, कहना—एक ज़रूरी काम है।"

सलारू चला गया। पाँच मिनिट के पश्चात् उसने भीतर के द्वार से ही श्यामनाथ को संकेत करके कहा—"आइए।"

श्यामनाथ चुपचाप उठकर भीतर पहुँच गए। बड़ी बी अपने शयनागार में पलँग पर लिहाफ़ ओढ़े पड़ी थीं। उनके पलँग के पास ही दो-तीन कुर्सियाँ बिछी थीं। श्यामनाथ उन्हीं में से एक पर जाकर बैठ गए।

उन्हें देखते ही बड़ी बी उठकर बैठ गईं, और बोलीं—"आइए, बाबूजी, आपने तो हम ग़रीबों को भुला ही दिया।"

श्यामनाथ—"यह तो आप ज़बरदस्ती करती हैं।"

बड़ी बी—"और सुनिए, ज़बरदस्ती ख़ुद करें, और ऊ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लें। जिस रोज़ मुहम्मदअली को आपके पास भेजा था, उस रोज़ आप दस मिनिट के लिये आए थे—बस, उस दिन के बाद आप आज तशरीफ़ लाए हैं।"

श्यामनाथ—"उसके बाद तो मैं शादी में पड़ गया।"

बड़ी बी—"शादी में पड़ गए थे, तो क्या घर से निकलते भी नहीं थे?"

श्यामनाथ—"हर्गिज़ नहीं। मैं तो सब कुछ निकलता, मगर जब निकलने भी पाता।"

बड़ी बी—"तो उस रोज़ के पश्चात् आप निकलने नहीं पाए?"

श्यामनाथ—"निकलने पाता, तो यहाँ न आता।"

बड़ी बी मुस्किराकर मौन रहीं।

श्यामनाथ—"आपको क्या मेरी बात पर यक़ीन नहीं होता?"

बड़ी बी—"वैसे तो चाहे यक़ीन हो जाता, मगर जो बात मालूम हो चुकी है, उसके देखते हुए आपकी बात पर कैसे यक़ीन हो।"

श्यामनाथ—"क्या मालूम हो चुका है?"

बड़ी बी—"अब उसको जाने ही दीजिए!"

श्यामनाथ का हृदय धड़कने लगा। वह समझे, शायद उन्हें हमारे बेगम के यहाँ जाने का हाल मालूम हो गया है। उन्होंने ऊपर से हुलिया सँभालकर कहा—"आख़िर कुछ मालूम तो हो।"

बड़ी बी—"जाने दीजिए, उस ज़िक्र को छोड़िए। हम लोग तो बड़ी-बड़ी उम्मीदें लगाए बैठे थे कि श्यामू बाबू की शादी है—हम लोगों को इनाम-इकराम मिलेगा; मगर जब आप ही नाराज़ हैं, तो इनाम-इकराम कैसा? इतनी ही बड़ी इनायत हुई, जो आज इधर आ पड़े।"

श्यामनाथ पर मन-ही-मन अत्यंत लज्जित हुए, उन्होंने सोचा, मैं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

यहाँ व्यर्थ ही आया। ऐसा जानता, तो कभी न आता। प्रकट रूप में बोले—"अगर आपको मेरा आना नागवार गुज़रा हो, तो चला जाऊँ।"

बड़ी बी—"हम तो आपके लौंडी-ग़ुलाम हैं। हमें तो आपका आना कभी नागवार नहीं गुज़र सकता। आप चाहे जैसी बेमुरौवती करें, चाहे जितने नाराज़ हों; मगर हमको हमेशा आपके आने से ख़ुशी होगी।"

श्यामनाथ ने इसका उत्तर कुछ न दिया, चुप बैठे रहे।

थोड़ी देर मौन रहकर बड़ी बी बोलीं—"कहिए, शादी बख़ैरो-आफ़ियत हो गई?"

श्यामनाथ—"जी हाँ, आपकी इनायत से ख़ूब अच्छी तरह हो गई।"

बड़ी बी—"बीवी ख़ूबसूरत मिली?"

श्यामनाथ कुछ झेंपते हुए बोले—"हाँ, अच्छी है। हालाँकि जो बात मैं चाहता हूँ, वह तो है नहीं।"

बड़ी बी बोलीं—"क्या?"

श्यामनाथ—"सलीक़ा, तमीज़, सफ़ाई, बातचीत वग़ैरह! ये बातें तो ईश्वर ने आप ही लोगों को दी हैं।"

बड़ी बी—"अजी, आप भी क्या बातें करते हैं। हमारी और घर-गिरस्थ शरीफ़-ज़ादियों की क्या बराबरी। हम लोग तो बाज़ारू आदमी हैं। हाँ, इतना ज़रूर है कि जिनसे हमारी मुहब्बत हो जाती है, उनको हम लोग ख़ुश रखते हैं। जिसका पैसा लेते हैं, उसे हलाल करके खाते हैं।"

इसी समय गाना बंद हो गया, और बंदीजान कमर लचकाती हुई वहाँ आ पहुँची। श्यामनाथ की ओर देखे बिना ही अपनी माता से बोली—"ऐ अम्मीजान, तुमने इन्हें क्यों बिठा रक्खा है। ऐसे बेमुरौवत से तो बात भी नहीं करनी चाहिए।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बड़ी बी बोलीं—"दुर निगोड़ी, ऐसी बेहूदा बात मुँह से निकालती है।"

श्यामनाथ बोल उठे—"क्यों साहब, हम पर इतनी ख़फ़गी क्यों है?"

बंदीजान—"अब यह अपने ही दिल से पूछिए।"

श्यामनाथ—"ख़ैर, कुछ आप भी तो बताइए।"

बंदीजान—"क्या नन्हे बनते हैं, गोया कुछ जानते ही नहीं।"

बड़ी बी बोल उठीं—"भइ, मेरी खोपड़ी पर तो लड़ो नहीं, लड़ना है, तो दूसरे कमरे में जाकर लड़ो। मेरी तबीयत अच्छी नहीं है।"

यह सुनते ही श्यामू बाबू उठ खड़े हुए, और बंदीजान का हाथ पकड़कर बोले—"चलो, दूसरे कमरे में चलें।"

बंदीजान हाथ छुड़ाने की चेष्टा करती हुई बोली—"बस, रहने दीजिए, यह झूठी मुहब्बत मत दिखाइए।"

बड़ी बी कर्कश स्वर में बोलीं—"ऐं, तो उनकी भी तो सुन ले, या अपनी ही कहे जायगी। इस बौंडिया को ख़ुदा जाने, कब शऊर आयगा।"

बंदीजान बोली—"अच्छा, चलिए, देखूँ, आप क्या कहते हैं।"

श्यामनाथ बंदीजान का हाथ पकड़े हुए दूसरे कमरे में ले गए। यह कमरा बड़ी बी के कमरे के बग़ल ही में था। इस कमरे में एक बड़ा पलँग पड़ा हुआ था। भूमि पर श्वेत फ़र्श बिछा था और एक तकिया रक्खा हुआ था। कमरे के द्वार पर चिकें पड़ी हुई थीं। यह कमरा भी ख़ूब सजा था। दीवारों पर चारो ओर बड़े-बड़े चित्र लगे हुए थे। पलँग के पैताने की ओर एक बड़ा आइना लगा हुआ था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

बंदीजान कमरे में पहुँचते ही पलँग पर बैठ गई, और बोली—"कहिए, क्या कहना है।"

बंदीजान की बग़ल में बैठकर श्यामनाथ बोले—"आप हमसे नाराज़ क्यों हैं?"

बंदीजान एक हृदयहारी कटाक्ष के साथ तुनककर बोलीं—"हाँ जनाब, हमीं नाराज़ हैं। हमीं ने दो महीने से किसी की बात नहीं पूछी, और हमीं बेगम के यहाँ जाते हैं।"

बेगम का नाम सुनते ही श्यामनाथ का मुख श्वेत पड़ गया। मुस्किराने की व्यर्थ चेष्टा करते हुए बोले—"यह बेगम कौन हैं?"

बंदीजान ने उनका मुँह पकड़कर दर्पण की ओर घुमाया, और बोली—"पहले ज़री चेहरे को देख लो, फिर बातें बनाओ।"

श्यामनाथ की दृष्टि अपने मुख पर पड़ी। इस समय उनके चेहरे पर झेप के स्पष्ट चिह्न विद्यमान थे।

श्यामनाथ बोले—"अब तुम इस तरह किसी को झेपाने की कोशिश करोगी, तो ज़रूर झेपना पड़ेगा। मगर मैं तुम्हें यक़ीन दिलाता हूँ, मैं किसी बेगम-वेगम को नहीं जानता।"

बंदीजान—"ऊँह! इस बेहयाई का भी कोई ठिकाना है। तुम मर्दों की ज़ात कितनी बेशर्म होती है—थू-थू! आँखें तो सामने नहीं होतीं, मगर ज़बान से इनकार ही करते रहेंगे।"

श्यामनाथ—"मालूम होता है, किसी ने तुमसे हमारी चुग़ली खाई है।"

बंदीजान—"चुग़ली कैसी, मुहम्मदअली ने आपको अपनी आँखों से बेगम के यहाँ जाते देखा।"

श्यामनाथ का मुख पुनः फ़क़ हो गया, घबराकर बोले—"कब?"

बंदीजान ने उनके वक्षःस्थल पर हाथ रखकर कहा—"ओहो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बड़ा ताज्जुब हुआ। मगर ज़री इस दिल को तो सँभालो—धड़-धड़ कर रहा है। यह तुम्हारा पर्दा-फ़ाश कर देगा।"

श्यामनाथ—"तुमसे तो बात करना भी मुश्किल है।"

बंदीजान—"बेशक मुश्किल होगा, दिल तो बेगम के यहाँ धरा है। जाइए, वह आपकी चहेती आपके इंतज़ार में बेक़रार होगी।"

श्यामनाथ—"बंदीजान, तुम क्यों हमें इतना परेशान कर रही हो? हमसे कौन क़ुसूर हुआ?"

यह बात श्यामनाथ ने बड़ी दीनता-पूर्वक कही। बंदीजान ने उनका कान पकड़कर धीरे से उमेठा, और बोली—"फिर वही चालबाज़ी, साफ़ बात न कहोगे—क्यों?"

श्यामनाथ कान छुड़ाकर बोले—"कोई बात भी तो हो, या ख़ामख़ाह क़ुसूरवार बन जाऊँ।"

बंदीजान—"अल्लाह जानता है, तुम्हारा-सा बेग़ैरत निर्लज्ज भी शायद ही कोई होगा। न ख़ुद शरमाओ, न शरमाने दो।"

श्यामनाथ—"अच्छा, ख़ैर, जो कुछ हुआ, उस पर ख़ाक डालो। हम तुम्हारे पास अपनी नई-नवेली दुल्हन छोड़कर दौड़े आए, इसका तो ख़याल करो। तुमसे मुहब्बत न होती, तो क्यों आते।"

बंदीजान—"ऐ, हटो! काली-कलूटी होगी, इसलिये आए।"

श्यामनाथ—"कौन, तुम देखो, तो ग़श आ जाय!"

बंदीजान—"ऐ, तब तो ज़रूर देवनी होगी, तभी रात में ख़ौफ़ खाकर यहाँ भाग आए। बस, मैं समझ गई।"

श्यामनाथ—"ईमान से कहता हूँ—तुमसे ज़्यादा हसीन है।"

बंदीजान—"तो फिर यहाँ क्या झख मारने आए हो?"

श्यामनाथ—"तुम्हारी मुहब्बत खींच लाई।"

बंदीजान—"तोबा! इस झूठ का भी कोई ठिकाना है—देखो, कहीं आसमान न फट पड़े।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्यामनाथ बंदीजान के गले में बाँह डालकर बोले—"तुम्हारी मुहब्बत में जो न हो, सो थोड़ा है।"

बंदीजान श्यामनाथ की बाँह अपने गले में से निकालकर बोलीं—"बस, बस! बहुत चोचले न बघारो। ये चोचले घर की जुरुआ ही सहेगी—बंदी सहनेवाली नहीं है। दो महीने तक वह भी न पूछा कि बंदी मरी है या जीती—आज अपने मतलब के लिये मुहब्बत जताने आए।"

बंदीजान ने ये शब्द इतनी रुखाई के साथ कहे कि श्यामनाथ अप्रतिभ-से हो गए, परंतु साहस करके बोले—"शादी की वजह से.....।"

श्यामनाथ का वाक्य पूरा भी नहीं हुआ था कि बंदी बोल उठी—"ऐ, ख़ुदा से डर मरदुए! दीदे की सफ़ाई तो देखो, आँख में आँख डाले सफ़ेद झूठ बोल रहा है। शादी में ज़्यादा-से-ज़्यादा एक हफ़्ता लगा होगा। यह एक महीना कहाँ गँवाया? हमारी मुहब्बत होती, तो मौक़ा मिलते ही फ़ौरन् दौड़े आते।"

श्यामनाथ—"आज मौक़ा मिला—आज ही दौड़ा आया।"

बंदीजान—"अल्लाह जानता है, मैं उठकर चली जाऊँगी। ज़री तो शर्माओ श्यामू बाबू—या निगोड़ी शर्म भी भून खाई। उन मूँछी-काटे विशनाथ और गोकुल का ढंग तुमने भी अख़्तियार किया। तोबा, तोबा! मैं तो पहले ही जानती थी कि उन दोनों की सोहबत तुम्हें ख़राब कर देगी। जैसे वे हरजाई हैं, वैसा ही तुम्हें भी उन्होंने बना दिया।"

श्यामनाथ—"भगवान् जाने, तुम इतनी बदगुमान क्यों हो?"

बंदीजान—"तुम्हारी हरकतों से!"

श्यामनाथ—"ख़ैर, जो कुछ हुआ, उस पर ख़ाक डालो—अब आयंदा ऐसा न होगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बंदीजान—"तुम्हारी बात का क्या एतबार!"

श्यामनाथ—"खैर, एक मर्तबा और एतबार करके देख लो।"

बंदीजान—"अच्छा, पहले दो महीने का ख़र्च निकालो बाएँ हाथ से—फिर दूसरी बातचीत।"

श्यामनाथ—"ख़र्च मैं कुछ बाँधकर थोड़ा ही लाया हूँ।"

बंदीजान—"ऐहै, ज़री सच कहना! ख़र्च बाँधकर नहीं लाए। क्यों नहीं लाए?"

श्यामनाथ—"मैंने सोचा था, फिर दे दूँगा। मुझे क्या मालूम था, तुम इतनी बेसब्री दिखाओगी?"

बंदीजान—"हाँ-हाँ, मैं बेसब्री दिखाती हूँ। तुम्हारे भरोसे रहे, तो फ़ाक़ों पर नौबत आ जाय। यह न सोचा कि दो महीने से बंदी को ख़र्च नहीं पहुँचा, वह तकलीफ़ में होगी, चलो ख़र्च लेते चलें। इतना भी ख़याल न हुआ। और मुहब्बत हुई है।"

श्यामनाथ—"तो ख़र्च तो मिल ही जायगा। आज न सही, कल सही।"

बंदीजान उठकर बोली—"तो फिर कल ही बात करना आकर।"

श्यामनाथ जेब में हाथ डालकर बोले—"फ़िलहाल मेरे पास दस रुपए हैं, यह ले लो!"

बंदीजान—"उन्हें जेब ही में रहने दो, गेहूँ भरवा लेना।"

श्यामनाथ ने रुपए निकालकर पलँग पर रख दिए।

बंदीजान चिबुक पर उँगली रखकर बोली—"ऊँई! इत्ते ही दिनों में क्या-क्या गुन सीख लिए। दस रुपए दिखाकर बहलाना चाहते हो?"

श्यामनाथ—"तुम तो हर बात में शक़ निकालती हो।"

बंदीजान—"लो, सच्ची बात कहना शक़ निकालना है। अच्छी बात है, अब हम कुछ न बोलेंगे—ए लो, जाते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

श्यामनाथ ने लपककर बंदीजान के दुशाले का कोना पकड़ लिया, और बोले—"कहाँ जाती हो ?"

बंदीजान—"बाहर चार भलेमानुस इंतज़ार में बैठे हैं।"

श्यामनाथ—"बैठे रहने दो, मैं नहीं जाने दूंगा।"

बंदीजान—"ऐ वाह ! यह अच्छी कही, जाने क्यों न दोगे ?"

श्यामनाथ—"मेरी मर्ज़ी।"

बंदीजान—"वाह री तेरी मर्ज़ी ! अच्छी मर्ज़ी है।"

श्यामनाथ—"हाँ, ऐसी ही मर्ज़ी है। इस वक्त तुम जा नहीं सकतीं—चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय।"

बंदीजान—"ऐ, होश की दवा कर मरदुए—चला वहाँ से बड़ा वारिस-खाँ बनकर। मैं क्या तेरी लौंडी-बाँदी हूँ ? ये नख़रे उसको दिखाओ जाकर, जिसे ब्याह कर लाए हो। मेरे सामने ये नख़रे नहीं चलेंगे। तेरे-ऐसे यहाँ दिन-भर में बहत्तर आते हैं।"

यह कहकर बंदीजान ने दुशाला पकड़कर एक झटका दिया। दुशाले का कोना श्यामनाथ के हाथ से छूट गया। और, बंदीजान चिक उठाकर क्षण-मात्र में बाहर हो गई।

श्यामनाथ म्लान-मुख होकर थोड़ी देर खड़े ओठ चबाते रहे। इसके पश्चात् उन्होंने अपनी रिस्ट-वाच पर दृष्टि डाली—दस बज चुके थे। अतएव वह एक दीर्घ निःश्वास छोड़कर चले, और सीधे बाहर का रास्ता पकड़ा। बाहरी कमरे में आकर उन्होंने देखा, बंदीजान उन लोगों से हँस-हँसकर बातें कर रही है। श्यामनाथ की ओर उसने देखा तक नहीं।

श्यामनाथ सीधे घर पहुँचे, और दबे-पैरों अपने शयन-गृह में घुस गए। उनकी नवोढ़ा पत्नी पलँग पर तकिए के सहारे अर्द्ध-शयनावस्था में बैठी सो रही थी। जान पड़ता था, बैठी कुछ सोच रही थी—उसी अवस्था में आँख लग गई। लैंप का शुभ्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रकाश उसके चंद्र-मुख पर पड़ रहा था। नाक में छोटी-सी नथ, गालों पर श्यामवन केशों की अलकें छूटी हुई, पतले-पतले रक्तवर्ण सुधाधर अधर कुछ खुले हुए, उनके मध्य से छोटे-छोटे श्वेत मुक्ता-वत् दाँत झाँक रहे थे। रेशमी लिहाफ़ वक्षःस्थल पर से सरक गया था। अतएव गोरी-गोरी गर्दन, लैंप का प्रकाश पड़ने से, बिल्लौर की भाँति शोभायमान हो रही थी। सर्ज के चुस्त सलूके में से पीन, सुगोल, सुदृढ़ तथा उन्नत कुचद्वय बाहर निकलने की चेष्ट कर रहे थे। इस प्रकार श्यामनाथ को पत्नी तारा मूर्तिमान् निद्रित सौंदर्य प्रतीत हो रही थी। श्यामनाथ पलँग के पास खड़े होकर उसकी इस छवि को देखने लगे। उनके नेत्रों को इस समय तारा इतनी रूपवती दिखाई पड़ी कि श्यामनाथ सोचने लगे—

"क्या वंदीजान इससे अधिक सुंदर है? कदापि नहीं। उसके मुख-मंडल पर इतना भोलापन कहाँ? उसके वर्ण में इतनी स्वच्छता तथा शुभ्रता कहाँ? इस रूप में जो एक पवित्रता-सी झलक रही है—वह उसके रूप में कहाँ!"

यह सोचते हुए श्यामनाथ ने झुककर तारा के अधरद्वय चूम लिए। ज्यों ही श्यामनाथ ने ओंठ चूमकर ऊपर सिर उठाया, त्यों ही तारा की आँख खुल गई। पति को अपने मुख पर झुका हुआ देखकर तारा एक मधुर मुस्कान के साथ सलज्ज तथा अलसाए हुए नेत्रों से पति की ओर देखकर बोली—"अरे! तुम खड़े हो, और मैं पड़ी सोती रही।" यह कहकर तारा शीघ्रता-पूर्वक वस्त्र सँभालती हुई उठकर बैठ गई। श्यामनाथ उस मधुर मुस्कान तथा निद्रा-भरे सलज्ज नेत्रों को देखकर व्याकुल हो गए। उन नेत्रों में प्रेम की धारा बह रही थी, उस मधुर मुस्कान में से हृदय की प्रसन्नता इस प्रकार फूटी निकल रही थी, जिस प्रकार नव-विकसित कलिका में से सुगंधि निकलती है। श्यामनाथ के हृदय में प्रेम की तरंग

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इस वेग के साथ उठी कि वह अपने को वश में न रख सके। वह पलँग पर बैठ गए, और उन्होंने पत्नी को अंक में लेकर हृदय से लगा लिया।

आज यह प्रथम दिन था कि श्यामनाथ ने तारा को हृदय से लगाकर सच्चा सुख अनुभव किया, सच्चा आनंद प्राप्त किया, और उस आनंद में मग्न होकर संसार को विस्मृत कर दिया।

पाँचवाँ परिच्छेद

शाम के चार बजे का समय है। सुलोचना तथा चुन्नी बैठी परस्पर इधर-उधर की बातें कर रही हैं। इसी समय शंभूनाथ ने घर के आँगन में आकर पुकारा—"मा!"

सुलोचना ऊपर से बोली—"कौन, संभू?"

शंभूनाथ ज़ीने पर चढ़ते हुए बोले—"हाँ, मैं हूँ।"

यह कहते हुए वह ऊपर आ गए। उनके हाथ में एक बड़ा लिफ़ाफ़ा था, मुख-मंडल से प्रसन्नता प्रस्फुटित हो रही थी। उन्होंने माता के सामने पहुँचते ही कहा—"लो अम्मा, मेरी नियुक्ति हो गई।"

सुलोचना बोली—"क्या हो गई?"

शंभूनाथ—"मुझे डिप्टी-कलेक्टरी मिल गई।"

सुलोचना प्रसन्न होकर बोली—"सच्ची?"

शंभूनाथ हाथ का लिफ़ाफ़ा दिखाकर बोले—"सच्ची नहीं, तो क्या झूठी—यह देखो, हुक्म आ गया है।"

चुन्नी ने लपककर शंभूनाथ के हाथ से लिफ़ाफ़ा छीन लिया, और उसके अंदर से पत्र निकालकर पढ़ने की चेष्टा करने लगी।

शंभूनाथ मुस्किराकर बोले—"तेरी समझ में न आवेगा।"

चुन्नी—"वाह वा, आवेगा क्यों नहीं, मैं शब्द तो पढ़ लेती हूँ।"

शंभूनाथ—"ख़ाली शब्द पढ़ने से क्या होता है—अर्थ भी तो समझना चाहिए।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलोचना गद्गद होकर बोली—"बड़ी खुशी की बात है बेटा, भगवान् ने मुझ गरीबनी की बिनती सुन ली।"

शंभूनाथ—"पंद्रह दिन की मोहलत मिली है, पंद्रह दिन के अंदर आगरे पहुँच जाना पड़ेगा।"

सुलोचना का प्रसन्न मुख हठात् गंभीर हो गया। उसने पूछा—"कहाँ जाना पड़ेगा?"

शंभूनाथ—"आगरे!"

सुलोचना—"क्यों?"

शंभूनाथ—"वहीं की डिप्टी-कलेक्टरी मिली है।"

सुलोचना चिंतित होकर बोली—"वहाँ कितने दिन रहना पड़ेगा।"

शंभूनाथ—"जब तक वहाँ से किसी दूसरी जगह की बदली न होगी, तब तक वहीं रहना पड़ेगा।"

सुलोचना—"हे भगवान्, तो क्या नखलऊ छोड़ना पड़ेगा?"

शंभूनाथ—"हाँ! काम वहाँ करूँगा, तो फिर लखनऊ में कैसे रह सकता हूँ।"

सुलोचना के मुख-मंडल पर से सारी प्रसन्नता लुप्त हो गई।

शंभूनाथ ने माता के इस आकस्मिक परिवर्तन को देखा। अतएव उसने कहा—"क्यों मा, तुम उदास क्यों हो गईं?"

सुलोचना बोली—"यह तो ठीक नहीं हुआ। नखलऊ छोड़ना तो मुझे अच्छा नहीं लगता।"

शंभूनाथ—"तो तुम सब यहीं रहना—मैं चला जाऊँगा।"

सुलोचना बोली—"तू अकेला वहाँ रहेगा?"

शंभूनाथ—"क्या हर्ज है!"

सुलोचना—"क्यों, हरज क्यों नहीं, हम यहाँ रहें, तू वहाँ रहे—यह क्या थोड़े हरज की बात है?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ—"छुट्टियों में आ जाया करूँगा। साल में कुछ दिनों की छुट्टी भी तो मिला करेगी।"

सुलोचना ने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया, चुपचाप सिर झुकाए बैठी रही।

शंभूनाथ माता को चिंतित देखकर स्वयं भी कुछ चिंतित हो गए। वह माता के सम्मुख बैठ गए, और बोले—"तुम्हारा जी लखनऊ छोड़ने को नहीं चाहता।"

सुलोचना—"अरे बेटा, मुझे क्या—मैं तो तेरे साथ जंगल में भी रह सकती हूँ। मैं अपने वास्ते थोड़ा ही सोचती हूँ।"

शंभूनाथ—"तो फिर ?"

सुलोचना—"क्या बताऊँ ? साँप-छछूँदर की-सी गत है।"

शंभूनाथ—"आख़िर तुम इतनी चिंता क्यों करती हो, चिंता की कौन-सी बात है ?"

सुलोचना—"तेरे लिये न हो, मेरे लिये तो है।"

शंभूनाथ—"मुझे भी तो कुछ मालूम हो।"

सुलोचना—"तेरे बाप को तो अभी इसका पता होगा नहीं।"

शंभूनाथ—"हो गया है। उनके सामने ही तो बाबू ब्रजमोहन-लाल ने चिट्ठी दी थी।"

सुलोचना—"तो वह क्या बोले ?"

शंभूनाथ—"बोलेंगे क्या, प्रसन्न हुए। वह तो दूकान छोड़कर घर आगे आ रहे थे, पर एक आवश्यक कार्य आ गया, इससे रुक गए। वह आते ही होंगे, इस समय दूकान पर उनका जी थोड़ा ही लग रहा है।"

चुन्नी चिट्ठी को लिफ़ाफ़े में धरते हुए बोली—"अम्मा, तुम सोच-विचार क्या कर रही हो। क्या आदमी परदेश कमाने नहीं जाते ?"

सुलोचना—"जाते क्यों नहीं। मुझे इस बात की चिंता थोड़ा है कि तू परदेस जा रहा है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चुन्नी—"तो किस बात की चिंता है ?"

सुलोचना—"तुझे क्या बताऊँ, किस बात की चिंता है।"

शंभूनाथ—"मेरी समझ में नहीं आता, तुम किस सोच-विचार में हो।"

सुलोचना ने पुत्र पर एक रहस्य-पूर्ण दृष्टि डालकर कहा—"तू तो आगरे जाकर बैठेगा, यहाँ श्यामू का क्या होगा ? और...।"

यह कहकर सुलोचना रुक गई, और उसने चुन्नी की ओर देखा।

माता की यह बात सुनते ही शंभूनाथ इस प्रकार नेत्र विस्फारित करके माता का मुँह ताकने लगे, मानो वह माता का तात्पर्य समझ गए, और उन्हें भी माता के कथन में कुछ सार प्रतीत हुआ। सुलोचना भी शंभूनाथ के इस भाव-परिवर्तन को देखकर बोली—"मेरा मतलब तू समझ गया ?"

शंभूनाथ—"हाँ, समझ गया। मुझे इस बात का ध्यान नहीं आया था।"

सुलोचना—"तुझे ध्यान क्या आता, तू तो नौकरी पाने की खुशी में सब भूल गया ; पर मैं थोड़ा ही भूल सकती हूँ। मेरे सामने तो रात-दिन वही बात रहती है। इसी से तो कह ती हूँ कि किसी बात को उठाना सहज है, पर उसे पूरा करना कठिन।"

शंभूनाथ के मुख पर लज्जा का भाव उदय हो आया, उन्होंने सिर झुकाकर कहा—"नहीं, भूला तो नहीं ; उसके लिये भी प्रबंध हो सकता है।"

सुलोचना—"क्या हो सकता है ?"

शंभूनाथ—"मेरा एक मित्र है, वह यह काम कर सकता है। जो सच पूछो, तो अब भी वही कर रहा है ; मैं तो केवल उसे सलाह-बताह देता रहता हूँ, कभी-कभी साथ भी हो लेता हूँ।"

सुलोचना—"बेटा, अभी तेरी लड़कई बुद्ध नहीं गई। अपना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

काम अपने ही से होता है, दूसरा आदमी नहीं कर सकता। तू जब चला जायगा, तो वह भी हाथ उठाकर बैठ रहेगा। जब उसे कोई साथी न मिलेगा, कोई कहनेवाला न रहेगा, तो उसे क्या गरज पड़ी है, जो वह तुम्हारा काम करे।"

शंभूनाथ—"नहीं, वह ऐसा तो है नहीं; परंतु हाँ, यह ठीक है कि मेरे कहने से वह अधिक उत्साह से काम करता रहता है।"

सुलोचना—"यही तो बात है, बिना अपने मरे सुरग (स्वर्ग) देखने को नहीं मिलता। आप काल महाकाल! जब तक काम पूरा नहीं होता, तब तक तेरा यहाँ रहना बड़ा ज़रूरी है। जितनी तुझे फिकर है, उतनी दूसरे को नहीं हो सकती। तू यहाँ से टला और सारा काम बिगड़ा।"

शंभूनाथ ने माता की बात की सत्यता को पूर्णतया अनुभव किया। वह मौन धारण किए बैठे रहे। सुलोचना पुनः बोली—"तूने मुझे उस दिन जो धीरज बँधाया था, और कहा था कि मैं सब ठीक कर लूँगा। वह क्या सब भूला गया?"

शंभूनाथ—"तो फिर तुम्हीं बताओ, क्या करूँ?"

सुलोचना—"मैं क्या बताऊँ। तू अपने आप सोच ले, मैं पर्दे की बैठनेवाली क्या बताऊँ। मैं तो ख़ाली इतना जानती हूँ कि जो अपना घर ही न सुधरा, तो तू डिप्टी-कलक्टर नहीं, लाट हो जा, पर मुझे सुख से बैठना नसीब न होगा। और, जो हमारा घर सुधर गया, हमारे बाल-बच्चे सुखी हो गए, तो चाहे चने भी मिलें, उसमें भी सुख है।"

शंभूनाथ मन में सोचने लगे—"माता कहती तो ठीक है। मेरे चले जाने से श्यामनाथ और गोकुलप्रसाद पर कोई अंकुश न रहेगा। अतएव वे अपने दुराचरण नहीं छोड़ेंगे—संभव है, उनके दुराचरण नित्यप्रति बढ़ते जायँ। बाबू व्रजमोहनलाल स्वयं कुछ नहीं कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.
सकेंगे। मेरे चले जाने से राधाकृष्ण भी हाथ खींच लेगा। यदि हाथ न भी खींचे, तो इतने उत्साह से कार्य न करेगा। उससे मेरी मित्रता है। मुझसे वह स्नेह रखता है, इसलिये केवल मेरे कारण वह दौड़ा-दौड़ा फिरता है। अन्यथा उसे क्या ग़रज़ है, जो ऐसे कार्य में पड़े, जिसके पास वह जाना भी पसंद नहीं करता।"

यह सब सोच-समझकर उन्होंने माता से पूछा—"तो फिर तुम्हारी यह राय है कि न जाऊँ, जवाब दे दूँ।"

सुलोचना—"मैं क्या जानूँ, जो तेरी समझ में आवे, सो कर; पर मेरे इन बच्चों की देख-भाल कौन करेगा।"

चुन्नी बोल उठी—"अम्मा, मेरी समझ में नहीं आता कि तुम क्या कह रही हो। किन बच्चों की देख-भाल करने को कहती हो। भैया श्यामनाथ की देख-भाल करनेवाले तो बाबूजी हई हैं।"

सुलोचना बोली—"तू बीच में क्यों बोलती है। बात समझे, न बात की जड़।"

चुन्नी कुछ अप्रतिभ होकर चुप हो गई। उसे यह पता नहीं था कि शंभूनाथ किस कार्य में लगे हुए हैं। उसे श्यामनाथ के संबंध में इतना तो ज्ञान था कि वह कुछ आवारा-मिज़ाज का हो गया है, परंतु इससे अधिक वह और कुछ भी नहीं जानती थी। और, अपने पति गोकुल के संबंध में तो वह पूर्णतया अनभिज्ञ थी। गोकुल-प्रसाद के चरित्र से तो वह पूर्णतया अनभिज्ञ नहीं थी—वह यह जानती थी कि गोकुलप्रसाद उससे प्रेम नहीं करते, और उसे यह भी संदेह था कि वह किसी दूसरी स्त्री से संबंध रखते हैं। इसी कारण वह दुखी रहती थी; परंतु उसे यह पता नहीं था कि वह इतने दुराचारी हैं, और यह तो वह बिलकुल ही नहीं जानती थी कि शंभूनाथ उनके उद्धार की चेष्टा कर रहे हैं। यही कारण था कि माता तथा भाई के वार्तालाप का मर्म उसकी समझ में नहीं आ रहा था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

माता को अपने ऊपर अप्रसन्न होते देख, वह चुप हो गई, और मन-ही-मन सोचने लगी—भगवान् जाने, क्या बात।

ठीक इसी समय ब्यालू बनानेवाली ब्राह्मणी आ गई। उसने आँगन में खड़े होकर कहा—"बहू, हम आय गइन—ब्यालू खातिर सीधा भेजो।"

सुलोचना ने चुन्नी से कहा—"जा मिसरानी को सीधा निकाल दे।"

चुन्नी उठकर चली गई। चुन्नी के चले जाने पर सुलोचना बोली—"तू मेरी बात समझ गया न?"

शंभूनाथ—"हाँ, समझ गया।"

सुलोचना बोली—"मुझे इस लड़की का मुँह देख-देखकर इतना दुःख होता है कि क्या बताऊँ। यह अपने जी का हाल नहीं बताती; पर इसकी आत्मा दुःखी रहती है। न कभी हँसे, न खेले—बड़ों-बूढ़ों की तरह गुम-सुम बैठी रहती है। कोई बात पूछो, तो जवाब दे देगी; काम बताओ, तो काम कर देगी, बस! आज तेरे डिप्टी-कलक्टर होने की बात सुनकर इसके मुँह पर तनिक बहाली आई है। जो इसकी ऐसी ही दशा रही, तो इसका जीना कठिन है। मेरी सारी उमर इन्हीं दुःखों में बीत गई। जवानी-भर खाने-पहनने का दुःख रहा—तेरे बाप के सुभाव के मारे दुःखी रही। अब जब खाने-पहनने का दुःख दूर हुआ, तो यह दुःख खड़ा हो गया। न-जाने मेरे ऊपर भगवान् का इतना कोप क्यों है, मैं तो कभी उन्हें भूली नहीं—सदा उन्हीं पर भरोसा रक्खा; फिर भी मुझ दुखिया पर वह दया नहीं करते।"

अंतिम वाक्य कहते-कहते सुलोचना का कंठ भर आया, नेत्रों में आँसू भर आए। माता के वाक्य सुनकर और उसकी करुणा-मुद्रा देखकर शंभूनाथ बड़े प्रभावित हुए। उन्होंने दृढ़ता-पूर्वक कहा—"अच्छी बात है, मैंने निश्चय कर लिया।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलोचना—"क्या ?"

शंभूनाथ—"इस नौकरी को अस्वीकार कर दूँगा। मेरा पहला कर्तव्य यहाँ रहकर इस कार्य को पूरा करना है।"

सुलोचना—"फिर भी यह नौकरी मिल सकती है ?"

शंभूनाथ—"फिर नहीं मिलेगी।"

यह सुनकर सुलोचना विचार-सागर में डूब गई। उसका हृदय इस समय शंभू के भविष्य की ओर था। वह सोच रही थी कि ऐसी अच्छी नौकरी से शंभूनाथ की उन्नति होती, उसका दारिद्र्य मिट जाता ; परंतु साथ ही श्यामनाथ तथा गोकुल की रक्षा का भी ध्यान था। अंत में खूब सोच-विचार करने पर उसने यही निश्चय किया कि नौकरी यह न सही, और मिल जायगी, इतनी अच्छी न मिलेगी, तो ऐसी तो मिल ही जायगी, जिससे रोटी-कपड़े का दुःख न रहे। हमारे लिये यही बहुत है ; पर यदि मेरे श्यामू और चुन्नी का सर्वनाश हो गया, तो ऐसी अच्छी नौकरी होने से भी सुख न मिलेगा। यह सोचकर उसने कहा—"बेटा, भगवान् पर भरोसा रक्खो, जब तूने इतना पढ़ा-लिखा है, तो पेट पालने-भर को नौकरी मिल ही जायगी ; पर जो तेरा भाई, तेरी बहन दुःखी रही, तो यह सब अकारथ रहेगा।"

शंभूनाथ बोले—"तुम्हारा कहना ठीक है। मैं अपना निर्वाह ट्यूशन करके भी कर सकता हूँ, किसी स्कूल की मास्टरी कर लूँगा, श्यामनाथ और चुन्नी की रक्षा करना इस समय मुख्य है।"

सुलोचना—"तू खुशी मन से यह कहता है ना ?"

शंभूनाथ मुस्किराकर बोले—"और नहीं, तो क्या कुछ दुःखी होकर कह रहा हूँ।"

इसी समय लाला घासीराम भी हाँफते हुए आ पहुँचे। आते ही उन्होंने शंभूनाथ को अंक में भर लिया, और उसे गोद में उठाने की

CC-0. In Public Domain. Funding by MoE-IKS

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चेष्टा करके बोले—"शाबाश है बेटा, तू पूरा सपूत निकला। मैं तो पहले ही जानता था कि तू अपने बाप का नाम चमकाएगा।"

शंभूनाथ ने कठिनता से स्वयं को पिता के बाहु-पाश से छुड़ाया। लाला बासीराम सुलोचना से बोले—"शंभू की मा, आगरे चलने की तैयारी करो—बस, दो-चार दिन में कूच होगा।"

सुलोचना बोली—"तुम्हीं जाओ आगरे, मुझे आगरे नहीं जाना है।"

बासीराम—"धुत् पगली, जायगी कैसे नहीं, तुझे जाना पड़ेगा। जहाँ मैं जाऊँगा, जहाँ मेरा सपूत शंभू जायगा, वहीं तुझे भी जाना पड़ेगा।"

सुलोचना—"आज दुकान से जल्दी क्यों चले आए?"

बासीराम शंभू की ओर देखकर बोले—"देखा बेटा, इस बेवकूफ़ की बातें। पूछती है, जल्दी क्यों चले आए। अरी, अब मैं भला नौकरी करूँगा? हुँह! जिसका बेटा डिप्टी-कलक्टर, वह बज़ाज़ों की नौकरी करे। मैं तो आज बाबू साहब से कह आया कि अब मैं नौकरी नहीं करूँगा, मेरा इस्तीफ़ा है।"

सुलोचना बोली—"तो क्या अब नहीं जाओगे?"

बासीराम—"नहीं, अभी एक-दो दिन तो जाना पड़ेगा। दो दिन में अपना काम सब समेट दूँगा, बस, फिर न जाऊँगा।"

यह सुनकर सुलोचना ने संतोष की एक साँस छोड़ी।

शंभूनाथ अपने पिता की बातें सुन रहे थे, और मन में सोच रहे थे—माता और पिता में कितना अंतर है। एक तो इतनी गंभीर, इतनी शांत; और दूसरा इतना उच्छृंखल। एक अपने बाल-बच्चों की शुभ-कामना में संसार की समस्त प्रभुता पर लात मारने को उद्यत, दूसरा अपने सुख, अपने स्वार्थ के लिये अपने बाल-बच्चों का बलिदान चढ़ाने को प्रस्तुत। एक में ज्ञान और अशिक्षित होते हुए भी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इतनी बुद्धिमत्ता, इतना विवेक ; और दूसरा पुरुष और कुछ शिक्षित होते हुए भी इतना मूढ़, इतना विवेक-शून्य ! यदि इनको इस समय यह ज्ञात हो जाय कि मैं डिप्टी-कलेक्टरी अस्वीकार करने जा रहा हूँ, तो इनकी क्या दशा हो।

शंभूनाथ इसी प्रकार की बातें सोच रहे थे कि घासीराम बोले—"जो कहीं शंभूनाथ यहीं का डिप्टी हो जाता, तो आनंद आ जाता। पहले तो मैं शोभाराम दुष्ट को जेलख़ाने भिजवाता। वह मेरा जन्म का शत्रु है। अब भी जिस समय वह यह समाचार सुनेगा, तो नानी मर जायगी।"

शंभूनाथ पिता की यह अनर्गल बात सुनकर मन-ही-मन हँसे, परंतु ऊपर से शांत तथा गंभीर रहे। अंत में उन्होंने बाबू साहब से मिलकर उन्हें अपनी असमर्थता का समाचार सुनाना निश्चय किया। यह निश्चय करके उन्होंने कहा—"मैं ज़रा बाबू साहब से मिलने जाता हूँ।"

यह कहकर वह चल दिए। घासीराम बोल उठे—"कल सबेरे कलेक्टर साहब को जाकर सलाम कर आना, उन्हीं की बदौलत यह नौकरी मिली है, समझा ?"

शंभूनाथ ने पिता की बात का कुछ उत्तर न दिया, और घर से निकलकर सीधे बाबू साहब की दूकान पर पहुँचे। बाबू साहब ने उन्हें देखते ही मुस्किराकर कहा—"कहो शंभूनाथ, आज तो तुम्हारे पिता प्रसन्नता के मारे आपे से बाहर हैं।"

शंभूनाथ ने कहा—"उनकी तो आदत ही ऐसी है, आपसे उनका स्वभाव छिपा थोड़ा ही है।"

बाबू साहब—"हाँ, अच्छी तरह जानता हूँ ; परंतु बात भी तो प्रसन्नता की है।"

शंभूनाथ—"मैं आपसे कुछ बातें करना चाहता हूँ। ज़रा अलग चलिए।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबू साहब उठकर बोले—"चलो !"

यह कहकर बाबू साहब उन्हें दूकान के भीतरी दर्जे में ले गए। वहाँ पहुँचकर शंभूनाथ ने उनको सब वृत्तांत सुना दिया। सब सुनकर बाबू साहब बोले—"इसमें संदेह नहीं कि तुम्हारी माता ने बात तो बहुत दूर की सोची। इसके लिये मैं उनकी प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकता। मैंने स्वयं यह सोचा था कि तुम्हारे चले जाने से श्यामनाथ और गोकुल पुनः हाथ से बेहाथ हो जायँगे। परंतु बेटा, यह बात है कि मैं तुम्हारी उन्नति में बाधा नहीं डालना चाहता था। धन्य है तुम्हारी माता को। उन्होंने स्त्री होकर भी इतनी बुद्धिमत्ता की बात कही। मेरा तो रोम-रोम उनकी प्रशंसा कर रहा है। ईश्वर ऐसी माता सब बालकों को दे।"

शंभूनाथ ने कहा—"तो फिर अब आपकी क्या सलाह है ?"

बाबू साहब—"जो तुम्हारी समझ में आवे, सो करो। तुम्हारी क्या इच्छा है ?"

शंभूनाथ—"मैं तो यही ठीक समझता हूँ कि इसको अस्वीकार ही कर देना चाहिए।"

बाबू साहब—"ऐसी नौकरी फिर नहीं मिलेगी।"

शंभूनाथ विषाद-युक्त मुस्कान के साथ बोले—"न मिलेगी, तो न मिले—किसी स्कूल-विस्कूल की मास्टरी कर लूँगा। जीविका चलाने का कुछ-न-कुछ प्रबंध तो ईश्वर कर ही देगा।"

बाबू साहब—"ख़ैर, यह तो सब हो ही जायगा। परंतु एक बात बड़ी बुरी है। मैं कलक्टर साहब से क्या कहूँगा ?"

शंभूनाथ—"इसकी तो बड़ी सरल युक्ति है। मैं एक पत्र लिख दूँगा कि इस समय कुछ ऐसी परिस्थित उपस्थिति हो गई है कि मैं अभी तीन-चार महीने लखनऊ के बाहर नहीं जा सकता। यदि लखनऊ में ही जगह दी जाय, तो मैं सेवा करने के लिये प्रस्तुत हूँ,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अन्यथा मेरा नामनिर्देशन रद्द कर दिया जाय। आपको कलक्टर साहब से मिलने की कोई आवश्यकता नहीं।"

बाबू साहब—"तब भी उन्हें पता तो लग ही जायगा।"

शंभूनाथ—"हाँ, पता तो अवश्य लग जायगा।"

बाबू साहब—"उस दशा में वह और भी बुरा मानेंगे। कहेंगे, हमसे बताया भी नहीं।"

शंभूनाथ—"तो न हो कल आप उनसे मिलकर यही बात कह दीजिएगा।"

बाबू साहब कुछ क्षण सोचकर बोले—"यही ठीक है, मैं उनसे कल कह दूँ। और, यदि उनको कुछ अनुकूल पाऊँगा, तो यह भी कह दूँगा कि यदि वह चेष्टा करके यहीं पर नियुक्ति करा दें, तो अच्छा है। क्यों, है न ठीक?"

शंभूनाथ—"हाँ, ठीक है। हाँ, एक और बात है, पिताजी यह सुनेंगे, तो बड़ी हाय-तोबा मचायेंगे। उनको कैसे समझाया जाय।"

बाबू साहब—"हाँ, यह बात भी है। इसका भी कुछ उपाय होना चाहिए।"

शंभूनाथ—"इसका उपाय भी आप ही को करना पड़ेगा।"

बाबू साहब—"किस प्रकार?"

शंभूनाथ—"आप उन्हें किसी ढंग से समझा दीजिएगा। मैं उनसे इस संबंध में कुछ न कहूँगा। मेरा साहस नहीं पड़ता। वह ज़रा-सी देर में अनाप-शनाप बकने लगते हैं।"

बाबू साहब किंचित् मुस्किराकर बोले—"अच्छी बात है, कोई उपाय सोचूँगा। असली बात तो उन्हें बताना नहीं चाहिए, कुछ बहाना करना पड़ेगा।"

शंभूनाथ—"अब आप जो ठीक समझिएगा, वह कह दीजिएगा। मैं जाता हूँ, कल पत्र लिखकर भेज दूँगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबू साहब—"अच्छी बात है।"

शंभूनाथ चलने को उद्यत हुए, परंतु फिर हठात् रुककर बोले—"हाँ, श्यामनाथ के क्या हाल-चाल हैं?"

बाबू साहब—"अब तो कई दिनों से वह जल्दी घर लौट आता है—आठ बजे तक आ जाता है।"

शंभूनाथ—"बड़ी प्रसन्नता की बात है—लक्षण शुभ हैं।"

बाबू साहब—"हाँ, देखो, जो ऐसा ही रहे।"

शंभूनाथ—"जब सब द्वार बंद कर दिए जायँगे, तब बिलकुल ठीक हो जायगा।"

बाबू साहब—"देखो, ईश्वर तुम्हारे परिश्रम और तुम्हारे इस अनुपम स्वार्थ-त्याग को सुफल करे। यदि अब भी ठीक न हुआ, तो इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं—यह उसके और मेरे भाग्य का दोष होगा।"

शंभूनाथ—"जब इतना परिश्रम हो रहा है, तो ईश्वर सब अच्छा ही करेगा।"

यह कहकर शंभूनाथ चल दिए।

छठा परिच्छेद

राधाकृष्ण के कमरे में शंभूनाथ बैठे हुए हैं। उनके पास ही राधाकृष्ण बैठे हैं। दोनों में वार्तालाप हो रहा है।

राधाकृष्ण कह रहे हैं—"निस्संदेह तुम्हारी माता का यह कार्य अद्भुत है।"

शंभूनाथ—"मैं सत्य कहता हूँ कि मेरे मस्तिष्क में यह बात नहीं आई थी।"

राधाकृष्ण—"तुम्हारे मस्तिष्क में कैसे आती, तुम तो उच्च पद पाने की प्रसन्नता में भरे हुए थे।"

CC-0. Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ—"नहीं, प्रसन्नता तो ऐसी कुछ विशेष नहीं हुई थी ; परंतु यह विचार पहले ही से मस्तिष्क में जड़ जमाए था कि यह काम करना है। जब उसके लिये चेष्टा की, तो उसकी प्राप्ति पर अन्य विचार कैसे आ सकता था।"

राधाकृष्ण—"तुम्हारी माता अशिक्षित होते हुए भी इतनी बुद्धिमती है—यह बड़ी सराहनीय बात है।"

शंभूनाथ—"भाई राधाकृष्ण, मैं जो कुछ हूँ—मेरा हृदय तथा मस्तिष्क जो कुछ है—वह मेरी माता का बनाया हुआ है। मैं तुमसे क्या बताऊँ। वह मुझे रात-दिन तोते की तरह पढ़ाया करती थीं। मुझे अच्छी तरह याद है, रात को जब वह मुझे सुलाने के लिये मेरे पास पड़ती थीं, तो जब तक मैं जागता रहता था, तब तक अनेक प्रकार की बातें बताया करती थीं। बेटा, अमुक काम बुरा है, उससे आदमी की ऐसी बुरी दशा होती है—ऐसा होता है। इस प्रकार वह मुझे समझाया करती थीं। जिस बात को कहतीं, उस पर कहानी भी सुनाती थीं। भगवान् जाने, उन्हें कितनी कहानियाँ याद हैं या बना-बनाके कहती थीं। सत्य बोलना, ब्रह्मचर्य, बड़ों का आदर करना, पराई मा-बहन को अपनी मा-बहन समझना, इत्यादि कोई बात ऐसी नहीं, जिस पर उन्होंने मुझे पाठ न पढ़ाए हों, कहानियाँ न सुनाई हों। ये सब भाव मेरे मस्तिष्क में उन्होंने इतने ठूँस-ठूँसकर भर दिए हैं कि वे अब इस जन्म में मस्तिष्क से निकल नहीं सकते। भाई, मैं अच्छा या बुरा जो कुछ भी हूँ, अपनी माता का बनाया हुआ हूँ। मेरी शिक्षा में भी उन्हीं की सहायता, उन्हीं के प्रोत्साहन ने काम किया। शाम को पास आकर बैठ जातीं और कहतीं—'शंभू, आज तूने क्या पढ़ा, मुझे सुना।' मैं उन्हें सुनाता। यद्यपि उनकी समझ में कुछ नहीं आता था ; परंतु इस बहाने से वह मुझे मेरा पाठ याद करने में सहायता करती थीं। घर के काम के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पश्चात् जितना समय उन्हें मिलता था, उसका अधिकांश वह केवल मेरे ऊपर खर्च करती थीं। परीक्षा के दिन निकट आने पर जो वस्तु मुझे अत्यंत प्रिय होती और उनकी क्षमता के भीतर होती, उसके लिये मुझे प्रलोभन देतीं, कहतीं—'शंभू, अब की तू पास हो गया, तो तुझे वही चीज़ ले दूँगी।' इस प्रकार अपनी इच्छित वस्तु पाने की चाट में मैं परीक्षा में पास होने के लिये ख़ूब परिश्रम करता था। परिणाम यह होता था कि मैं सदैव पास ही होता गया। यह उस समय की बात है, जब मैं बच्चा और नासमझ था, होश सँभालने पर तो मुझे स्वयं अपना भले-बुरे का ज्ञान हो गया था। परंतु तब भी वह मुझे बच्चा और नासमझ ही समझती थीं, और अपना कर्तव्य उसी प्रकार पालन करती थीं।"

राधाकृष्ण प्रभावित होकर बोले—"ख़ूब! तुम्हारी माता, क्या कहूँ—आदर्श कहूँ या जन्म की माता कहूँ.....।"

शंभूनाथ बोल उठे—"मेरी माता एक सच्ची माता हैं। यही कारण है कि संसार में मैं सबसे अधिक उनसे स्नेह रखता हूँ। संसार में न कोई ऐसी वस्तु है, न कोई ऐसा प्राणी है, जो मुझे माता से अधिक प्रिय हो।"

राधाकृष्ण—"और पिता, उनके प्रति तुम्हारे कैसे भाव हैं?"

शंभूनाथ—"पिता के प्रति मेरे हृदय में आदर है, सहानुभूति है, और इस भाव के कारण कि वह मेरे पिता हैं, कुछ स्नेह भी है; परंतु माता के मुक़ाबले में मैं उनको भी कुछ नहीं समझता। मेरे पिता न कभी अच्छे पति रहे और न अच्छे पिता। माता को उन्होंने जितना तंग किया है, उनके चिड़चिड़े, हठी, स्वार्थमय तथा मूढ़ता-पूर्ण स्वभाव के कारण मेरी माता को कष्ट उठाने पड़े हैं; पर उन्होंने कभी उनका अनादर नहीं किया, सदैव उन्हें अपना सर्वस्व समझती रहीं, और उन्हें प्रसन्न करने की प्राण पण से चेष्टा करती रही। हाँ,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उनकी बुद्धि, उनके परामर्श पर निर्भर होकर उन्होंने कभी कोई काम नहीं किया। मेरे पिता के वश की बात होती, तो मेरी शिक्षा भी अपूर्ण रह जाती। उन्होंने पचासों बेर मेरी शिक्षा बंद कराने के लिये हठ की, कई बार इसके लिये माता से लड़े भी, उनको भर्त्सना भी की, परंतु माता ने इस संबंध में उनकी एक नहीं मानी। अंत को वह भी हार मानकर चुप हो जाते थे। कहाँ तक कहूँ, उनके किन-किन गुणों का वर्णन करूँ—तुम यही कहोगे कि गप्पें हाँक रहा है, अथवा माता का अंध-भक्त है।"

राधाकृष्ण दाँतों-तले जीभ दाबकर बोले—"कदापि नहीं, मैं सब समझता हूँ, और मेरी आत्मा तुम्हारी इन बातों का आनंद ले रही है। ऐसा मालूम होता है कि उसे कोई स्वादिष्ठ भोजन मिल रहा है।"

शंभूनाथ—"भाई, मेरे लिये तो संसार में माता के अतिरिक्त और कोई नहीं। मैं तो कहता हूँ कि ईश्वर यदि माता दे, तो ऐसी ही दे, अन्यथा मातृहीन ही रक्खे।"

यह कहते हुए शंभूनाथ के नेत्रों में आँसू छलछला आए।

राधाकृष्ण को रोमांच हो आया। वह बोले—"मेरी तो यही इच्छा होती है कि मैं उनके चरणों पर सिर रख दूँ। यदि पर्दे की प्रथा बाधक न होती, तो मैं ऐसा अवश्य करता।"

शंभूनाथ—"तो यह कौन कठिन बात है। तुमसे काहे का पर्दा, तुम मेरे भाई के तुल्य हो, उनके लिये जैसा मैं, वैसे तुम।"

राधाकृष्ण—"यदि यह बात है, तो मैं किसी दिन उनके दर्शन अवश्य करूँगा। ऐसी देवी के दर्शन करने में भी पुण्य है।"

शंभूनाथ कुछ देर तक मौन रहकर बोले—"अच्छा, अब यह बताओ कि बेगम के क्या हाल-चाल हैं?"

राधाकृष्ण—"अच्छे हाल-चाल हैं। विश्वनाथ इत्यादि का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

आना-जाना तो वहाँ एक प्रकार से बंद ही समझो। यह अवश्य है कि विश्वनाथ एक बार पुनः चेष्टा करेगा, परंतु उसके लिये भी मैंने युक्ति सोच ली है।"

शंभूनाथ—"क्या ?"

राधाकृष्ण—"उन्हें उस मुहल्ले से टाले दे रहा हूँ।"

शंभूनाथ—"इसका क्या मतलब ? कहीं बाहर भेज रहे हो ?"

राधाकृष्ण—"नहीं, बाहर नहीं, यहीं किसी दूसरे मुहल्ले में प्रबंध कर दूँगा। यह इसलिये कि जब विश्वनाथ इत्यादि को उनके रहने का स्थान ज्ञात नहीं होगा, तो फिर विवश हो जायँगे।"

शंभूनाथ—"हाँ, यह युक्ति तो अच्छी है। परंतु कहीं छुट्टन के द्वारा उन्हें पता न लग जाय।"

राधाकृष्ण—"छुट्टन को तो मैंने इस प्रकार मुट्ठी में कर लिया है कि वह मेरे विरुद्ध कोई कार्य कर ही नहीं सकता।"

शंभूनाथ मुस्किराकर बोले—"अच्छा ! यह कैसे ?"

राधाकृष्ण—"वह रुपए का आदमी है, इसलिये रुपए से ही वश में हो सकता है।"

शंभूनाथ—"तुम उसे रुपए देते रहते हो ?"

राधाकृष्ण—"हाँ, जब मिलता है, कुछ-न-कुछ दे ही देता हूँ।"

शंभूनाथ—"परंतु वह जिस प्रकार का आदमी है, उसको देखते हुए उस पर अधिक विश्वास नहीं करना चाहिए।"

राधाकृष्ण—"तुम्हारा यह कथन यथार्थ है। मैं भी यह बात समझता हूँ ; परंतु इससे अधिक और हम कर ही क्या सकते हैं ?"

शंभूनाथ—"हाँ, यह तो ठीक है। भाई, बेगम की लड़कियों का विवाह करा देने का प्रयत्न करो। जहाँ इतना किया है, तो यह भी सही।"

राधाकृष्ण—"हाँ-हाँ, करूँगा। मैं इसी प्रयत्न में हूँ। चलो, एक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दिन उनके यहाँ हो तो आओ, बेगम कई बार तुम्हें याद कर चुकी और दोनो लड़कियाँ भी कई बार तुम्हें पूछ चुकी हैं।"

शंभूनाथ—"भइ, मेरा साहस नहीं पड़ता।"

राधाकृष्ण—"क्यों?"

शंभूनाथ—"सच बताऊँ?"

राधाकृष्ण—"और नहीं, तो क्या मुझसे भी झूठ बोलोगे?"

शंभूनाथ—"सच बात यह है कि उस दिन बेगम के यहाँ गया था, उसका प्रभाव मेरे हृदय पर कई दिन तक रहा।"

राधाकृष्ण—"कैसा प्रभाव?"

शंभूनाथ कुछ शरमाते हुए बोले—"यार, क्या बताऊँ, शम्सुन्निसा का ध्यान रहा।"

राधाकृष्ण नेत्र विस्फारित करके बोले—"सच?"

शंभूनाथ—"तुम्हारी शपथ लेकर कहता हूँ कि कई दिनों तक शम्सुन्निसा का चित्र मेरी आँखों के सामने घूमता रहा। और, हृदय में न-जाने कितने भाव उत्पन्न हुए, कभी अपवित्र, कभी पवित्र।"

राधाकृष्ण—"ऐं! क्या अपवित्र भाव भी उत्पन्न हुआ?"

शंभूनाथ सिर झुकाकर बोले—"हाँ, हुआ!"

राधाकृष्ण मुस्किराकर बोले—"तुम्हारे ज्ञान, तुम्हारी शिक्षा, तुम्हारे अच्छे संस्कारों के होते हुए भी?"

शंभूनाथ—"प्रकृति अपना काम सदैव करती है। सुंदर स्त्री की ओर मन और हृदय का आकर्षित होना प्रकृति का काम है। इससे कोई बच नहीं सकता। शिक्षा केवल अच्छे-बुरे का ज्ञान उत्पन्न करा देती है, परंतु बुराई से बचना और भलाई के प्रति अनुराग उत्पन्न होना, यह संयम, इंद्रिय-दमन तथा आत्मबल का कार्य है। केवल शिक्षा और ज्ञान इस कार्य को पूरा नहीं कर सकते।"

राधाकृष्ण—"यह ठीक है। ऐसी बातों में अनुभव भी बड़ा काम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

करता है। अनुभव-हीन हृदय पर प्रत्येक बात का प्रभाव शीघ्र पड़ जाता है। परंतु जब हृदय पर अनुभव का आवरण चढ़ जाता है, तो वह हृदय के लिये कवच का काम करता है; फिर उस पर किसी ऐसी-वैसी बात का प्रभाव इतना शीघ्र नहीं पड़ता। तो इसीलिये तुम वहाँ जाने से घबराते हो?"

शंभूनाथ—"हाँ, मुझे यह भय है कि कहीं मेरा हृदय शम्सुन्निसा के रूप-पाश में न फँस जाय। यदि ईश्वर न करे, कहीं ऐसा हो गया, तो फिर मैं कहीं का न रहूँगा।"

राधाकृष्ण—"अरे, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता।"

शंभूनाथ—"यह मत कहो, मैं कोई संत नहीं, महात्मा नहीं, एक साधारण मनुष्य हूँ। मैं अपनी दुर्बलताओं को भली भाँति समझता हूँ। मैं अपने को उस समय तक परीक्षा में नहीं डालना चाहता, जब तक मुझे अपने ऊपर पूरा विश्वास नहीं हो जाता।"

राधाकृष्ण—"मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि शम्सुन्निसा भी तुम्हारी ओर कुछ आकर्षित हुई है। बड़ी बहन तो कभी-कभी तुम्हें पूछती है, पर छोटी सदैव पूछती रहती है। जब मैं जाता हूँ, तभी तुम्हें पूछती है।"

शंभूनाथ—"भाई, ईश्वर के लिये मेरे सामने ये बातें न कहो, मित्र होकर शत्रुता पर कमर मत बाँधो।"

राधाकृष्ण—"इसमें शत्रुता काहे की?"

शंभूनाथ—"मैं उसके संबंध की कोई ऐसी बात नहीं सुनना चाहता, जो मेरे हृदय को उसकी ओर प्रेरित करे।"

राधाकृष्ण—"बड़े कमज़ोर दिल के हो।"

शंभूनाथ—"क्या करूँ! अपने वश की बात थोड़ा ही है। हृदय में बल तो क्रमशः ही उत्पन्न होगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण—"अच्छी बात है, जब तुम हृदय के इतने दुर्बल हो, तो जाने दो।"

शंभूनाथ—"हाँ, श्यामनाथ की बात तो मैं तुमसे कहना भूल ही गया। अब वह हज़रत शाम से ही घर लौट आते हैं।"

राधाकृष्ण—"बड़ी प्रसन्नता की बात है।"

शंभूनाथ—"जान पड़ता है, बंदीजान से भी संबंध छूट गया।"

राधाकृष्ण मुस्किराकर मौन रहे।

शंभूनाथ—"क्यों, मुस्किराए क्यों?"

राधाकृष्ण—"कुछ नहीं, ऐसे ही।"

शंभूनाथ—"कुछ तो!"

राधाकृष्ण—"वहाँ भी यारों का जाल फैल गया।"

शंभूनाथ—"सच!"

राधाकृष्ण—"हाँ, सच!"

शंभूनाथ उत्सुक होकर बोले—"कैसे? क्या किया?"

राधाकृष्ण—"मेरे एक मुसलमान दोस्त हैं, उन्हें वहाँ नियुक्त कर दिया।"

शंभूनाथ—"वह कैसे आदमी हैं, सच्चरित्र हैं?"

राधाकृष्ण—"इससे हमें क्या सरोकार। सच्चरित्र हों, तो क्या, दुश्चरित्र हों, तो क्या। हमें अपने काम से काम है।"

शंभूनाथ—"आख़िर तुमने उनसे कहा क्या?"

राधाकृष्ण—"उनसे यही कहा कि तुम दो मास के लिये बंदी-जान पर ऐसा अधिकार जमा लो कि किसी दूसरे का आना-जाना वहाँ न हो सके।"

शंभूनाथ—"तो उन्होंने क्या किया?"

राधाकृष्ण—"दो महीने के लिये उन्होंने बंदीजान को नौकर रख लिया।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शंभूनाथ—"केवल दो महीने के लिये बंदीजान क्यों राज़ी हो गई ?"

राधाकृष्ण—"तुम तो बड़े ही सीधे हो। बंदीजान से तो यही कहा कि सदैव के लिये। दो महीने पश्चात् उनकी इच्छा होगी, तो छोड़ देंगे; नहीं तो अपना आते-जाते रहेंगे। फिर हमसे क्या मतलब ?"

शंभूनाथ—"तो फिर दो महीने के क्या अर्थ हैं ?"

राधाकृष्ण—"दो महीने के अर्थ यह हैं कि बंदीजान की दो महीने की तनख़्वाह मैं दूँगा।"

शंभूनाथ—"यह बात है। अब मैं समझ गया। परंतु एक बात है कि तुमने एक को छुड़ाने की चेष्टा में दूसरे को वहाँ फँसा दिया।"

राधाकृष्ण—"वह फँसनेवाला आदमी नहीं है। बहुत चलता हुआ है। यह मैं नहीं कहता कि वह वेश्यागमन करता ही नहीं। जितना वह करता है, उतना वह सदैव करता रहेगा, उससे उसका मुक्त होना असंभव है—चाहे मैं उससे कहता या न कहता। परंतु इससे अधिक वह नहीं कर सकता। वह ऐसा नहीं है कि उसमें लिप्त हो जाय।"

शंभूनाथ—"तब भी तुमने उसे सहायता तो दी।"

राधाकृष्ण—"यदि ऐसी भावुकता और ऐसे सिद्धांत लेकर काम करना चाहोगे, तो कुछ भी न कर सकोगे। प्रत्येक मनुष्य को यदि आप दूध का धोया बनाना चाहें, तो यह असंभव है। बहुत-से ऐसे लोग हैं कि वे ऐब करते हैं, परंतु हुनर के साथ। उससे उन्हें किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचती, इसीलिये वह उसे ऐब भी नहीं समझते। ऐसे व्यक्ति पूर्ण सच्चरित्रता के क़ायल नहीं होते, और जब तक स्वयं उन्हें ही उसमें कोई कटु अनुभव प्राप्त न हो, तब तक उसे वे छोड़ते भी नहीं। वे ऐसी बातों में इतने पक जाते हैं कि उनके लिये वह नित्य-क्रिया की-सी हो जाती है। मेरा मित्र सज्जादहुसैन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भी ऐसे ही लोगों में से है। उसे आप न दुश्चरित्र ही कह सकते हैं और न सच्चरित्र ही। दुश्चरित्र वह इसलिये नहीं है कि वह गृहस्थ है, कमाता-धमाता है, गृहस्थी के सब कर्तव्य पालन करता है। ऐसा नहीं है कि रंडीबाज़ी के पीछे अपनी पत्नी को भूल जाय, या उसकी ओर से उदासीन हो जाय, या अपनी दौलत लुटा दे, या नवयुवकों को बिगाड़ने की चेष्टा करे। उसका यह सिद्धांत है कि महीने में दस-बीस रुपए इस कार्य में भी ख़र्च कर देता है। बस !"

शंभूनाथ—"यदि वे दस-बीस रुपए वह बचावे, तो कितना लाभ हो ?"

राधाकृष्ण—"तुमसे जीतना कठिन है। यह कौन कहता है कि उसे ऐसा करना ही चाहिए, अथवा वह ऐसा नहीं करता, तो कोई बड़ा अच्छा कार्य करता है। पूर्ण सच्चरित्रता तो प्रत्येक दशा में अच्छी है। मनुष्य को चेष्टा भी इसी के लिये करना चाहिए; परंतु साथ ही कुछ सहनशीलता भी होनी चाहिए। बहुत-से लोग कबूतरबाज़ी करते हैं, पतंगबाज़ी करते हैं, बहुतों को अच्छा खाने की लत होती है, बहुतेरे कपड़े पहनने में आवश्यकता से अधिक ख़र्च करते हैं, बहुतेरे नशेबाज़ी में ख़र्च करते हैं, तो इस प्रकार के ख़र्चों को आप कहाँ तक घटा सकते हैं ? मेरे एक जान-पहचान के व्यक्ति प्रति मास पंद्रह-बीस रुपए के उपन्यास ख़रीद डालते हैं। यह भी व्यर्थ ही है, यद्यपि आप इसे दुश्चरित्रता नहीं कह सकते। ऐसे मनुष्य, जो दस-बीस रुपए मासिक किसी व्यसन में ख़र्च कर सकते हैं, केवल रोटी-कपड़े से संतुष्ट नहीं रह सकते। जिस ओर उनके चित्त की प्रवृत्ति होगी, जिस बात का उन्हें शौक़ होगा, उसमें वे उसे अवश्य ख़र्च करेंगे। हाँ, प्रारंभ में ही यदि प्रयत्न किया जाय, तो ऐसी बातें भी कम हो सकती हैं अथवा छूट सकती हैं; परंतु जब ये बातें मनुष्य का स्वभाव बन जाती हैं, तब उनका छूटना कठिन है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"तो बस, इसी काम के लिये आपको तकलीफ़ दी थी।—तो ये काम कब तक हो जायँगे।"

"मकान तो मैं दो-चार रोज़ के अंदर ही बदलवा दूँगा। मकान बदलवाने के बाद दूसरा काम भी करूँगा।"

"मकान बदलवाने के बाद ?"

"जी हाँ, वह काम मकान बदल जाने के बाद ही हो सकेगा, पेश्तर नहीं।"

"ख़ैर, बाद को ही सही ; मगर ख़याल रखना।"

"हुज़ूर भी क्या बातें करते हैं—मैं क्या भूल भी सकता हूँ। मुझ पर तो इसी वक़्त से फ़िक्र सवार हो गई। अच्छा, तो इजाज़त दीजिए, फिर मिलूँगा।"

राधाकृष्ण ने जेब से पाँच रुपए निकालकर छुट्टन मियाँ की ओर बढ़ाए, और कहा—लो, ख़र्च की ज़रूरत होगी, इन्हें रख लो।"

छुट्टन ने रुपए लेकर कहा—"तसलीम ! ये पाँच रुपए पाँच अशरफ़ी के बराबर हैं। हालाँकि पाँच रुपयों की बिसात कुछ नहीं, मगर हुज़ूर ग़ुलाम का इतना ख़याल तो रखते हैं, बस, इसी बात पर मैं मरता हूँ। आज अभी जब मैं इस तरफ़ आने लगा, तो मेरी बुढ़िया बोली कि राधाकिशन बाबू से कुछ ख़र्च माँग लाना। यह सुनते ही मुझे तैश (क्रोध) आ गया। मैंने डाँटकर कहा—मैं उनसे माँगूँ। राधाकिशन बाबू माँगने की नौबत ही नहीं आने देते। (शंभूनाथ की ओर देखकर) बतलाइए हुज़ूर ! जो शख़्स ख़ुद ख़याल रखता है, उससे किस मुँह से माँगूँ—यह महज़ कमीनापन है। ऐसे मालिक से तो कभी सवाल करे ही नहीं। हाँ, जो लोग सयानपन करते हैं, उनकी तो हम गर्दन पर सवार होकर ले लेते हैं, वहाँ रू-रियायत नहीं करते। मगर हुज़ूर तो सख़ी (दाता) आदमी हैं, हुज़ूर से सवाल करना हुमाक़त है। अच्छा, तो इजाज़त दीजिए। आदाब !"

CC-0. Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छुट्टन मियाँ के चले जाने पर राधाकृष्ण शंभूनाथ से बोले—"बस, इसीलिये आपको बुलाया था।"

शंभूनाथ बोले—"मगर ये दोनो काम यह कर सकेगा ?"

"निस्संदेह ! आप इसे समझते क्या हैं, पूरा विष की गाँठ है। इसके काटे का मंत्र ही नहीं। देखना, तीनो में कैसा जूता चलवाता है।"

"हाँ, है तो बहुत चलता हुआ। पहले तो हज़रत कानों पर हाथ धरते थे, कहते थे कि ऐसा हो ही नहीं सकता।"

"और पचास रुपयों का नाम सुनते ही कितनी जल्दी राज़ी हो गया।"

"रुपया ऐसी ही चीज़ है। परंतु तुमने एकदम से पचास कह दिए, पहले पचीस कहते।"

"यही तो तुम समझते नहीं। यह काम हो जाय, तो पचास रुपए भी कम हैं। इसीलिये मैंने एकदम से पचास कह दिए कि इनकार ही न कर सके।"

"तुम अभी तक कितना रुपया खर्च कर चुके हो ?"

"क्यों-क्यों, रुपयों की चिंता क्यों उत्पन्न हुई ?"

"तुम अपने पास से खर्च कर रहे हो, यही चिंता है। बाबू साहब से तो अभी तुमने एक पैसा नहीं लिया।"

"सब इकट्ठा ले लूँगा।"

"यह ठीक नहीं, आज मैं बाबू साहब से कहकर कुछ रुपए लाऊँगा।"

"अभी कुछ मत कहो, बाद को देखा जायगा। जल्दी क्या है।"

"खैर, तुम यह बताओ, अभी तक कितना रुपया खर्च कर चुके हो ?"

"अब आप यह समझ लीजिए कि चार सौ तो बेगम को दे चुका हूँ। सौ के लगभग मियाँ छुट्टन को, दो सौ सज्जादहुसैन को देने पड़ेंगे। इस प्रकार सात सौ के लगभग हुए। पचास छुट्टन को और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS Mgt.

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

देने पड़ेंगे, बस, इसके बाद फिर आवश्यकता न पड़ेगी, यदि पड़ी भी, तो अधिक-से-अधिक सौ-पचास की। हाँ—यदि आपके इच्छानुसार उन लड़कियों की शादी कराई जायगी, तो उसमें अधिक रुपया लगेगा।"

शंभूनाथ ने पूछा—"कितना रुपया ?"

"कम-से-कम हज़ार और अधिक-से-अधिक पंद्रह सौ।"

"इस हिसाब से तो ढाई-तीन हज़ार का टोटल हो जायगा।"

शंभूनाथ —"बहुत रुपया ख़र्च होगा। और क्या !"

"बाबू व्रजमोहनलाल तो इससे कहीं अधिक रुपया ख़र्च करने को उद्यत हैं।"

"हाँ, वह तो उद्यत हैं—मैं अपने विचार से कह रहा हूँ।"

"यदि तीन हज़ार रुपए ख़र्च होकर भी दोनो लड़के ठीक हो जायँ, तो समझो कि सस्ते छूटे। जानते हो, इन कामों में आजकल के नौजवान लाखों की रियासत तबाह कर देते हैं।"

"हाँ, यह तो ठीक है; मगर यदि कोई ग़रीब आदमी का लड़का हो, और उसे इसी युक्ति से ठीक करने की चेष्टा की जाय, तो इतना रुपया कहाँ से आवे ?"

राधाकृष्ण हँसकर बोले—"आप बिलकुल कॉलेज के रँगरूट हैं। ग़रीब आदमी का लड़का भला क्या खाके रंडीबाज़ी करेगा।"

"क्या ग़रीब लोग रंडीबाज़ी करते ही नहीं ?"

"करते हैं, मगर फिर वह साथ ही चोरी भी करते हैं, जुआ भी खेलते हैं। चोरी करके, जुआ खेलकर जो धन लाते हैं, वही वह वेश्या के यहाँ ख़र्च करते हैं।"

"हाँ, यह हो सकता है।"

"हो सकता है नहीं—यही होता है। जब कभी आप किसी ग़रीब तथा साधारण स्थिति के आदमी को इस श्रेणी का वेश्याराधन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

करते देखें, तो समझ लें कि यह चोरी करता है या जुआरी है—अथवा इसी श्रेणी का कोई अन्य कुकर्म करता है।"

"इस श्रेणी का वेश्याराधन से आपका क्या तात्पर्य है?"

"अर्थात् ऊँचे दर्जे की वेश्याओं के यहाँ आना-जाना! निम्न श्रेणी की निकृष्ट वेश्याओं के यहाँ जो जाते हैं, वे ग़रीब भी हो सकते हैं, और साथ ही ऐसे भी हो सकते हैं, जो चोरी इत्यादि नहीं करते। ऐसे लोग विवश होकर केवल आवश्यकता-वश कभी-कभी वेश्या के यहाँ चले जाते हैं।"

"अच्छा, होगा, जाते होंगे। हटाओ इस वार्तालाप को। जब से इस झगड़े में पड़े हैं, तब से जब देखो, वही वेश्याओं और वेश्याराधकों का चर्चा रहता है। नाक में दम हो गया। कभी किसी अच्छे विषय पर बातचीत ही नहीं होने पाती।"

"तुम जब शंकाएँ करते हो, तो उनका निवारण करने के लिये मुझे ये बातें करनी पड़ती हैं, नहीं तो मुझे कुछ इन बातों का शौक़ थोड़ा ही है। अच्छा, हटाओ, अब कोई दूसरी बातें करो।"

आठवाँ परिच्छेद

उपर्युक्त घटना के पश्चात् दो सप्ताह बीत गए। रात के आठ बज चुके हैं। छुट्टन मियाँ चौक के द्वार पर पार्क के सामने टहल रहे हैं, और राह चलनेवालों को ध्यान-पूर्वक देख रहे हैं। इसी प्रकार टहलते रहने पर साढ़े आठ बजे के निकट चौक के भीतर से विश्वनाथ निकले, और पार्क की ओर चले। विश्वनाथ को देखते ही छुट्टन मियाँ लपककर उनके पास पहुँचे, और निकट पहुँचकर बोले—"आदाब-अर्ज़ है हुज़ूर।"

विश्वनाथ ने घूमकर देखा, और छुट्टन पर दृष्टि पड़ते ही उनके मुँह से निकला—"छुट्टन मियाँ!"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छुट्टन मियाँ बोले—"हुज़ूर ! मिज़ाज शरीफ़ ?"

विश्वनाथ ने छुट्टन का हाथ पकड़कर कहा—"ख़ूब मिले, मैं तो तुम्हारी तलाश ही में था।"

"तो देखिए, मैं मिल भी गया।"

"बहुत दिनों बाद दिखाई पड़े—कहाँ रहे ?"

"बाहर चला गया था, आज दस-बारह रोज़ बाद लौटा हूँ। यहाँ आया, तो एक बड़ी भारी परेशानी में पड़ गया।"

"वह क्या ?"

"बेगम को यार लोगों ने कहीं टहला दिया।"

"ऐं ! तो क्या तुम्हें भी पता नहीं कि बेगम कहाँ हैं ?"

"क़तई नहीं। इसी वास्ते तो मैं इस वक़्त आपकी तलाश में था—अल्लह जानता है, घंटे-भर से इसी नाके पर टहल रहा हूँ। एक-एक आदमी को ग़ौर से देखता था। आख़िर आप नज़र पड़े। आप भी इस फ़ुर्ती के साथ निकले कि अगर मैं ज़रा चूक जाता, तो फिर आज आपसे मुलाक़ात न होती।"

"अच्छा ! तुमको भी बेगम का पता नहीं। मैं तो समझा था कि यह तुम्हारी ही हरकत है।"

"किसकी, मेरी ? तोबा-तोबा ! ऐ हुज़ूर, मेरी क्या अटकी हुई थी, जो मैं ऐसा करता। और मज़ा यह कि मैं समझा था कि यह आपका काम है, इसी वास्ते तो मैं आपकी तलाश में था। आज दोपहर को बाहर से वापस आया, शाम के चार बजे यह सब क़िस्सा मालूम हुआ, तब से आपकी तलाश में हूँ।"

"मैं तो इस मामले में उतना ही बेगुनाह हूँ, जितना तुम अपने को बता रहे हो।"

"अच्छा ! तब फिर यह किसका काम है। बेगम अपने आप कहीं जा नहीं सकतीं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वनाथ छुट्टन मियाँ का हाथ पकड़े हुए वृक्ष के नीचे पड़ी हुई एक बेंच पर जा बैठे। छुट्टन मियाँ बोले—"यहाँ तो बड़ा अँधेरा है, कहीं रोशनी में बैठिए।"

"बैठो, थोड़ी देर तो बैठना है, अँधेरा ही सही।"

"तुम्हें यक़ीन है कि बेगम अपने आप कहीं नहीं जा सकतीं।"

"जी हाँ, पूरा यक़ीन है। अपने आप कैसे जातीं? बिना मेरी मदद के वह कहीं जा ही नहीं सकती थीं।"

विश्वनाथ मन में सोचने लगे—"तब तो मालूम होता है, यह राधाकृष्ण का काम है। उन्होंने मियाँ छुट्टन को भी चरका दिया। परंतु कहीं ऐसा तो नहीं कि छुट्टन भी उनका मददगार हो, और मुझे बेवक़ूफ़ बना रहा हो। किंतु यदि ऐसा होता, तो यह आज मुझे ढूँढ़कर मुझसे क्यों मिलता? इतने दिनों तक यह मुझसे फटा-फटा रहा, आज जो ख़ुद मेरे पास आया, तो क्यों? अवश्य कोई-न-कोई बात है।"

प्रकट रूप में विश्वनाथ ने कहा—"तब तो यह उनका काम है।"

"किनका?"

"वही जो एक नए बाबू बेगम के यहाँ आने-जाने लगे थे।"

छुट्टन इसके लिये पहले ही से प्रस्तुत था—वह जानता था कि राधाकृष्ण के आने-जाने की बात विश्वनाथ-ऐसे चालाक आदमी से छिपी न होगी, अतएव उसने कहा—"आप शायद बाबू राधाकिशन को कहते हैं?"

"अब नाम तो मैं जानता नहीं।"

छुट्टन—"हाँ-हाँ, वही हैं, वह चार-छ दफ़ा वहाँ गए हैं। यह उनका काम नहीं है।"

"यह तुमने कैसे जाना?"

"वह बेचारे तो आजकल यहाँ हैं नहीं। बाहर गए हैं—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कलकत्ते। वह तो मेरे सामने ही चले गए थे, और अभी तक वापस नहीं आए। यही तो मैं कहता हूँ कि इत्तफ़ाक़ देखिए—वह भी बाहर चले गए, और उनके जाने के दो-तीन रोज़ बाद मुझे भी बाहर जाना पड़ा। बस पीछे यार लोगों को मौक़ा मिल गया। अगर वह होते, या मैं होता, तो मजाल थी, जो कोई ऐसा इरादा भी करता।"

"क्या सच कहते हो?"

छुट्टन—"दादीजान के सर की क़सम खाकर कहता हूँ कि इसमें एक हर्फ़ भी ग़लत नहीं है। आख़िर मुझे झूठ बोलने से क्या फ़ायदा? सोचिए तो सही। यह कोई ख़ुशख़बरी तो है नहीं, जो हुज़ूर मुझे इनाम दे देंगे। आख़िर मैं जो आपको छेड़कर आपसे मिला, तो क्यों मिला—इसमें मेरा क्या नफ़ा? और हुज़ूर, मेरा तो दिल जल रहा है। मेरी तो बेगम के घर से रोटियाँ चलती थीं। ख़ुदा ग़ारत करे उस मरदूद को, जिसने यह हरकत की हो। ख़ुदा जानता है, पाऊँ, तो बोटियाँ नोच खाऊँ। मगर ख़ैर, चोर जाते रहे कि अँधियारी। मैं बिना बदला लिए चैन से थोड़ा ही बैठूँगा। मेरी तो रूह पर सदमा है।"

छुट्टन मियाँ ने ये बातें कुछ इस आवेश के साथ कहीं कि विश्वनाथ को उनकी सत्यता पर कुछ-कुछ विश्वास होने लगा। वह बोले—"तो फिर यह किसका काम हो सकता है?"

छुट्टन—"मुझे मालूम तो हो गया है, मगर ज़रा और पुख़्ता कर लूँ। फिर बताऊँ।"

"कौन है? बताओ न!"

"हुज़ूर, मैं अपने पेट का पाप आपको बताता हूँ, मेरा तो ख़याल था कि यह आप ही का काम है, क्योंकि मुझे उसके सुबूत मिले हैं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"यह तुम न-जाने क्या.....।"

छुट्टन विश्वनाथ को रोककर बोला—"पहले मेरी पूरी बात सुन लीजिए। पूछिए, मुझे आप पर शक क्यों हुआ। शक यों हुआ कि उस मुहल्ले में मेरे एक मिलनेवाले हैं—वैसे जान-पहचान तो बहुत लोगों से है, मगर वह मेरे दोस्त हैं। उनसे मुझे मालूम हुआ कि जिस दिन बेगम ने मकान छोड़ा है, उसके एक रोज़ पहले बेगम के मकान से दो हिंदू नौजवान निकले। वे दोनो बातें करते जा रहे थे। उनमें से एक ने कहा—'भाई गोकुल, अब काम पूरा हो जायगा। बेगम को इस मुहल्ले से टाल चले चलो।' अच्छा, इनमें से एक तो साफ़ गोकुल बाबू थे, और दूसरे की हुलिया जो उन्होंने बताई, वह श्यामू बाबू से मिलती है। इसलिये मैं यह समझ गया कि वे दोनो गोकुल बाबू और श्यामू बाबू थे। अब मैं अपने पेट का पाप आपको बताता हूँ। मेरा यह ख़याल था—और आपसे इस वक्त मुलाक़ात होने के पेश्तर तक रहा है—कि गोकुल और श्यामू बाबू के सब कामों में मुखिया आप ही रहते हैं। बिना आपके वह कोई काम नहीं करते, इसलिये इसमें भी ख़ास हाथ आपका ही है। यही वजह थी कि मैं आपकी तलाश में एक घंटे से हैरान हूँ। लिहाज़ा हुज़ूर, अगर वाक़ई आप जानते हों, तो ख़ुदा के लिये बता दीजिए। मैं हुज़ूर का एहसान मानूँगा, और कभी आपके हुक्म के ख़िलाफ़ कोई काम न करूँगा। पीछे मुझसे इतना क़ुसूर ज़रूर हुआ कि मैं बाबू राधाकिशन की बातों में आ गया था। मगर अब तोबा करता हूँ कि कभी किसी के चकमे में न आऊँगा। लिहाज़ा अब मुझ पर रहम कीजिए।"

विश्वनाथ विस्मय-पूर्ण स्वर में बोले—"भगवान् जाने, मैं बिलकुल नहीं जानता। मैं तो ख़ुद इस मामले में हैरान था, और तुम्हारी तलाश में था।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"तब तो मालूम होता है कि श्यामनाथ और गोकुलप्रसाद ने आपको भी चकमा दिया।"

"यह बात पक्की है कि वे दोनो गोकुल और श्यामनाथ थे ?"

"मेरे दोस्त के कहने से तो यही ज़ाहिर होता है, चलिए पूछा दूँ। ज़रा दूर का मामला तो हुई है।"

"ज़रूर चलूँगा। चलो !"

विश्वनाथ समझे थे कि मेरे ऐसा कहने से यदि छुट्टन झूठा होगा, तो तुरंत कोई बहाना करके टाल देगा। परंतु छुट्टन मियाँ ने पहले ही से सब प्रबंध कर रक्खा था, अतएव वह बोला—"चलिए !"

दोनो उठकर चले, और घूमते-घामते बेगम के मुहल्ले में पहुँचे। वहाँ पहुँचकर छुट्टन ने एक मकान से एक मुसलमान को बुलाया। उसके आने पर छुट्टन ने विश्वनाथ बाबू को दिखाकर पूछा—"यह बाबू थे ?"

उसने लैंप के क्षीण प्रकाश में विश्वनाथ को भली भाँति देखकर कहा—"यह तो नहीं थे। वह कोई दूसरे थे।"

छुट्टन ने कहा—"तुमने जो देखा है, वह सब फिर कह जाओ।"

उसने वही बात जो छुट्टन ने विश्वनाथ से कही थी, कह दी। तत्पश्चात् बोला—"उनमें से एक का तो नाम गोकुल था; क्योंकि उसके साथी ने गोकुल नाम लेकर कहा था। दूसरा आदमी एक ख़ूबसूरत-सा नौजवान था, उम्र यही कोई १८-१९ साल की होगी। दुबला-पतला था, अच्छे कपड़े पहने और इत्र लगाए हुए था, हाथ में एक पतला बेंत लिए था।"

सब सुन-समझकर विश्वनाथ छुट्टन से बोले—"यह हुलिया तो श्यामू बाबू का ही है।"

"सिवा उनके और कोई हो ही नहीं सकता।"

विश्वनाथ—"अच्छा चलो !"

दोनो व्यक्ति पुनः चौक की ओर लौटे। अब विश्वनाथ को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वास हो गया कि छुट्टन का कथन सत्य है। रास्ते में वह छुट्टन से बोले—"इन लौंडों ने मुझको भी चकमा दिया। अच्छा कोई चिंता नहीं, समझ लूँगा।"

"खुदा के लिये मेरा नाम न लीजिएगा, आप वह सब बड़े आदमी हैं, ऐसा न हो कि बीच में मैं ग़रीब मारा जाऊँ।"

"नहीं, तुम्हारा नाम नहीं लूँगा।"

"तो हुज़ूर क़सम खाकर कहिए, ताकि मुझे यक़ीन हो जाय।"

विश्वनाथ ने क़सम खाकर कह दिया।

छुट्टन बोला—"और मज़ा यह है कि राधाकिशन बाबू आएँगे, तो वह अलग मुझ पर जूता बरसाएँगे; क्योंकि उनको भी यही शक होगा कि यह मेरा ही काम है। वह मसल है कि बद अच्छा बदनाम बुरा! चूँकि मैं बदनाम हूँ, इसलिये सबका शक पहले मुझ ग़रीब पर ही होता है। अब मुझे यह फ़िक्र है कि राधाकिशन बाबू को कैसे समझाऊँगा। ख़ैर, मैंने भी सोच लिया है कि अव्वल तो मैं उनकी नज़रों के सामने पड़ूँगा ही नहीं, और शायद सामना हो ही गया, तो एक गवाह तो वही मेरा दोस्त है। दूसरे, अगर आप कुछ हर्ज न समझें, तो आपका नाम भी गवाही में पेश कर दूँ। आपके ज़री ज़बान हिला देने से मैं ग़रीब इलज़ाम से बच जाऊँगा।"

"जहाँ तक हो, मुझे बचाए रहना, और जो ऐसी बात आ पड़े कि बिना मेरे तुम्हारा काम ही न चले, तो कह देना।"

"सिर्फ़ कहने से काम न चलेगा, आपका सामना भी कराऊँगा।"

विश्वनाथ कुछ क्षणों तक विचार करके बोले—"सामना-वामना कराने की बात ग़लत है।"

"आख़िर फिर आपका नाम लेने से ही क्या नतीजा निकलेगा। मान लीजिए, वह कह बैठे कि अच्छा पुछाओ, तब मैं क्या जवाब दूँगा? अगर ख़ामोश रहा, तो सब समझा जाऊँगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

"अच्छी बात है। जैसा तुम कहो, मुझे मंज़ूर है। मगर मियाँ छुट्टन, इन लौंडों ने हम लोगों को भी जुल दिया, यह तो बड़ी बेजा बात है। आख़िर बेगम का पता तो लगाना ही चाहिए।"

"एक बात कीजिए, तो पता लगाने में आसानी हो, और मैं वादा करता हूँ कि पता लगाकर छोड़ूँगा।"

"वह क्या?"

"आप गोकुल और श्यामनाथ से इस बारे में कुछ न कहें, और न उनसे मिलें-जुलें, बस फिर मैं पता लगा लूँगा। और अगर कहीं आपने उनसे कुछ ज़िक्र किया, तो उनको आपकी जानिब से ख़ौफ़ पैदा हो जायगा, और वह बेगम को वहाँ से भी खिसका देंगे। लिहाज़ा आप ऐसे बन जाइए कि आपसे न तो बेगम से कोई सरोकार है, और न उन लोगों से कोई वास्ता है। बस, आप इतना कीजिए, पता लगाने का ज़िम्मा मेरा रहा।"

"उन लोगों से तो मुझे नफ़रत हो गई। मुझे यह उम्मीद नहीं थी कि वे दोनो मेरे साथ ऐसी दग़ा करेंगे।"

"हुज़ूर, मैं आपसे क्या अर्ज़ करूँ? मेरी आदत किसी की चुग़ली खाने की नहीं, इसलिये अभी तक आपसे ज़िक्र नहीं किया; मगर आज बात पड़ने पर कहता हूँ। गोकुलपरशाद बाबू ने एक बार मेरे सामने श्यामनाथ से यह कहा—भई श्यामनाथ, इस बिशनाथ को तो अलक़त (पृथक्) करना चाहिए। हम तो रुपए ख़र्च करें, और यह हराम में लुत्फ़ उठावें। श्यामनाथ ने भी उनके इस कलाम (कथन) की ताईद (समर्थन) की थी।"

"तुमने इस बात का ज़िक्र मुझसे क्यों न किया?"

"मैंने अर्ज़ किया न कि मेरी आदत ही ऐसी नहीं कि इधर की उधर लगाऊँ। बात यह है हुज़ूर कि हमारा तो पचासों आदमियों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से मिलना-जुलना रहता है। हर तरह की बातें सुनने में आती हैं। अब जो हम इधर की उधर कहने-सुनने लगें, तो बड़ी बेजा बात है। अपना तो यह उसूल है कि इस कान से सुनकर उस कान से निकाल दें।"

"ख़ैर, देखा जायगा।"

"तो हुज़ूर अगर इस बात का वादा करें कि न तो उनसे मिलें, और न इसका कोई ज़िक्र करें, तो मैं पता लगाऊँ। पता तो मैं वैसे भी लगाऊँगा, क्योंकि मेरी भी ग़रज़ है; मगर उस हालत में यह होगा कि आसानी पड़ेगी, वरना वे लोग बेगम को दूसरी जगह खिसका देंगे।"

"अच्छी बात है, मैं इसका ज़िक्र न करूँगा, और उनसे मिलूँगा भी नहीं। जब उन लोगों के ये ख़यालात हैं, तो उनसे मेल-जोल रखना फ़िज़ूल है।"

"शान की बात तो यही है। जो अपने से एक बार नफ़रत करे, उससे हज़ार बार नफ़रत करना चाहिए।"

"ठीक कहते हो। मैं अब उन लोगों से कोई तालुक़ न रक्खूँगा।"

"तो मैं बेगम का पता लगाता हूँ। इस बार पता लग जाने पर मैं वह चाल खेलूँगा कि वे लोग मुँह ताकते रह जायँ। बेगम को ऐसा टहलाऊँ कि उनके पीरों को भी पता न लगे।"

"हमें तो बताना ही पड़ेगा।"

"आपकी सलाह से तो सारा काम ही होगा। आपको तो सबसे पहले मालूम हो जायगा।"

"मगर राधाकिशन से क्या कहोगे?"

"जैसी आपकी सलाह होगी। आदमी तो वह मालदार हैं। अगर आप नामुनासिब न समझें, तो उन्हें भी शामिल कर लीजिएगा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैं उनसे आपकी मुलाक़ात करा दूँगा। आदमी बड़े ज़बरदस्त व मिलनसार हैं, आपकी उनकी पटेगी भी ख़ूब !"

विश्वनाथ प्रसन्न होकर बोले—"बस-बस, यह ठीक है। मेरी उनकी मुलाक़ात करा दो, और बेगम का पता लगाकर मुझे बताओ, उनसे ज़िक्र मत करो। बस, मैं सब ठीक कर लूँगा।"

"बेहतर है! यही तय रहा; मगर कहीं ऐसा न हो कि आप वह मिल जायँ, और मुझ ग़रीब को भुला दें!"

विश्वनाथ दाँतों तले जीभ दाबकर बोले—"भला ऐसा कहीं हो सकता है। हम तुम मिलकर ही तो राधाकृष्ण को सर कर सकेंगे। क्यों, है न पक्की बात?"

छुट्टन अट्टहास करके बोला—"बहुत दुरुस्त। ले मारिए हाथ-पर-हाथ!"

विश्वनाथ ने मुसकिराकर छुट्टन के हाथ-पर-हाथ रख दिया।

चौक में आकर विश्वनाथ छुट्टन से बिदा होकर अपने घर की ओर चले। मियाँ छुट्टन भी अपनी सफलता पर मन-ही-मन प्रसन्न होते हुए एक ओर चल दिए।

नवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन राधाकृष्ण से गोकुल के मकान का पता पूछकर छुट्टन मियाँ सबेरे वहाँ पहुँचे। द्वार पर बैठे हुए नौकर से उन्होंने पूछा—"बाबू गोकुलपरशाद घर में हैं?"

नौकर ने कहा—"हाँ हैं।"

छुट्टन—"ज़री बुला दो, एक काम है।"

गोकुलप्रसाद चाय-वाय पीकर अपने कमरे में बैठे एक समाचार-पत्र पढ़ रहे थे, उसी समय उनका कहार पहुँचकर बोला—"आपका एक मियाँ बलाहक हैं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुल ने पूछा—"कौन मियाँ ?"

"ले अब यौ हम का जानी।"

गोकुलप्रसाद कुछ सोचकर उठे, और द्वार पर आए। द्वार पर आकर उन्होंने देखा, छुट्टन मियाँ टहल रहे हैं। गोकुलप्रसाद को देखते ही छुट्टन मियाँ बोले—"आदाब अर्ज़ करता हूँ हुज़ूर !"

"आदाब ! कहो, कैसे आए ?"

"हुज़ूर से कुछ बातें करनी थीं, अगर फ़ुर्सत हो, तो दो मिनट का वक़्त दीजिए।"

गोकुल ने कहा—"आओ !" यह कहकर गोकुल ने छुट्टन को अपने कमरे में बुला लिया। दोनो एक-एक कुर्सी पर बैठ गए।

गोकुल ने कहा—"कहो, क्या कहना चाहते हो ?"

"पहले तो यह बताइए कि आपको बेगम का कुछ पता मालूम है ?"

गोकुल विस्मित होकर बोले—"ऐं ! क्या तुम्हें भी उनका पता नहीं मालूम ? मुझसे दो-तीन रोज़ हुए तब विश्वनाथ ने कहा था कि बेगम कहीं ग़ायब हो गईं !"

"कहीं ग़ायब हो गईं ! सुभान अल्लाह, क्या कही है। यह नहीं कहा कि हमने ग़ायब कर दिया।"

गोकुल ने विस्मित होकर कहा—"क्या ?"

"यह उन्हीं हज़रत की कारगुज़ारी है। ख़ुदा की क़सम मेरी आँखों में तो ख़ून उतरा हुआ है। अगर मैं मैं हूँ, तो बाबू बिशनाथ को इसका मज़ा चखाऊँगा। हुज़ूर, मेरा तो उस घर से भला होता था—रोटियों का सहारा था। जब तबीयत होती थी, वहीं खा लेता था, वहीं सो रहता था—ग़रज़ कि वह बिलकुल मेरा घर-सा था।"

"हाँ, यह तो हमने देखा था कि तुम अक्सर वहीं रहते थे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"हुज़ूर का ख़ुदा भला करे। हुज़ूर से कुछ छिपा थोड़ा ही है। सो ख़ुदा ग़ारत करे इस मरदूद बिशनाथ को—उसने मेरा रोज़ी का ठीकरा ही ग़ायब कर दिया। और श्यामनाथ बाबू भी इसमें शामिल हैं।"

गोकुलप्रसाद आश्चर्यान्वित होकर बोले—"क्या कहा, श्यामनाथ भी शामिल हैं?"

"जी! यही तो लुत्फ़ है। बिशनाथ बाबू कच्ची गोली नहीं खेलते हैं। श्यामनाथ को शामिल न करते, तो मुबलिग़ एलैहिस्सलाम (रुपए) कहाँ से आते? ख़ुद तो कभी दाँतों का मैल भी किसी को नहीं देते। आप तो सब जानते हैं—आपसे कुछ पोशीदा (गुप्त) थोड़ा ही है।"

"हाँ, यह बात तो बिल्कुल दुरुस्त है। निहायत चालाक आदमी है। मैं तो अक्सर इस बात पर उनसे बिगड़ उठता था। इस पर वह कह देते थे कि हम दिमाग़ ख़र्च करते हैं।"

"ऐसे ही तो बड़े दिमाग़दार हैं। क़सम है अब्बाजान की, एक ही मुतफ़न्नी (धूर्त) आदमी हैं। मैंने तो ऐसा आदमी ही नहीं देखा।"

"तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि यह उन्हीं का काम है?"

"ऐ हुज़ूर, हमसे भला कभी कोई बात छिप सकती है? हम लोग तमाम ज़माने की ख़बरें रखते हैं। सारे शहर से जान-पहचान है। और मैं यहाँ होता, तो उनकी मजाल थी, जो ऐसा कर लेते। वह तो कहिए उनकी ख़ुशनसीबी थी कि मैं दस-बारह रोज़ को बाहर चला गया, बस उन्हें मौक़ा मिल गया। बेगम को बहकाया होगा, वह सीधी-सादी तो हैं ही, आ गई होंगी बातों में, बस ले उड़े। और एक बात बताऊँ। एक बाबू राधाकिशन हैं, उनसे भी बेगम का मेल-जोल इन्हीं में हुआ था। वह बेचारे भी कलकत्ते गए हुए थे। वह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जब कल वापस आए, और बेगम को पुराने मकान में न पाया, तो मेरे पास दौड़े आए, और मुझसे पूछने लगे। अब मैं उन्हें क्या बताता, मुझे तो ख़ुद ही पता नहीं। मैंने सोचा, शायद आपको मालूम हो; क्योंकि आप हर काम में विशनाथ और श्यामनाथ के शरीक रहते हैं। इसीलिये आपके पास दौड़ा आया।"

"मुझे कुछ भी पता नहीं। मैं तो ख़ुद इस मामले में परेशान हूँ। मगर मेरे सामने तो विश्वनाथ ने ऐसी बातें की थीं कि गोया उन्हें भी पता नहीं।"

"अजी वह बड़े उस्ताद आदमी हैं। यह इसलिये किया होगा, जिसमें आपको उन पर शक न हो। मेरे पास इस बात के सुबूत हैं कि यह उन्हीं का काम है।"

"कैसा सुबूत ?"

"मेरे एक दोस्त हैं, वह उसी मुहल्ले में रहते हैं, जहाँ बेगम पहले रहती थीं। उन्होंने विशनाथ और श्यामनाथ को बातें करते सुना। उन्हीं से तो मुझे पता लगा कि यह उन दोनों का फ़ेल (काम) है।"

"उन्होंने क्या सुना ?"

"जिस रोज़ बेगम ने मकान छोड़ा है, उससे एक रोज़ पहले की बात है। मेरे दोस्त अपने मकान के दरवाज़े पर खड़े थे, उसी वक्त, विशनाथ और श्यामनाथ बेगम के मकान से निकले। विशनाथ ने श्यामनाथ से कहा, बेगम यहाँ से निकल जायँगी, अब सब ठीक हो जायगा; मगर भाई श्यामनाथ, गोकुल से इसका ज़िक्र न करना। इस पर श्यामनाथ ने कहा—नहीं जी, मैं क्या ऐसा पागल थोड़ा ही हूँ। अब आप ख़ुद नतीजा निकाल लीजिए कि इन बातों का क्या मतलब है ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"इससे तो साफ़ उन्हीं का काम मालूम होता है।"

"बेशक!"

"मगर तुम्हारे दोस्त क्या विश्वनाथ और श्यामनाथ को पहचानते हैं?"

"पहचानते तो नहीं हैं; मगर उन्होंने जो उन दोनो का हुलिया बताया है, उससे साफ़ वे ही दोनो मालूम होते हैं। श्यामनाथ का तो नाम ही लिया था।"

"अगर यह बात सच है, तो उन्होंने बड़ी बेजा बात की है।"

"मुझे तो पूरा यक़ीन है कि यह उन्हीं दोनो का काम है। अलिए, आप भी उनसे पूछ लीजिए।"

"किनसे?"

"मेरे दोस्त से!"

"उनसे पूछने की क्या ज़रूरत है, तुम क्या झूठ थोड़ा ही कहोगे।"

"इस क़िस्म का झूठ बोलने में मेरा कौन-सा फ़ायदा है?"

"कुछ नहीं!"

"आप उन्हें ख़र्च करने के लिये टोकते रहते थे, इसी वजह से उन्होंने श्यामनाथ से मिलकर आपको अलग कर दिया। श्यामनाथ अभी लौंडे तो हई हैं। आ गए उनकी बातों में! और देख लीजिएगा, श्यामनाथ बाबू ज़क (हानि) उठाएँगे।"

"इसमें क्या शक है। मगर अपने से क्या, जैसा करें, वैसा भरें!"

"यह तो हई है!"

"तो अब क्या होगा?"

"होगा क्या, मैं बेगम का पता लगाकर छोड़ूँगा। मैं ख़ामोश थोड़ा ही बैठ सकता हूँ। बतलाइए, जिस घर से मुझे दो रोटी का सहारा है, वह घर मैं आसानी से थोड़ा ही छोड़ दूँगा। और इस बार लुफ़ देखिएगा, कैसा दोनो को कलों उड़ाता हूँ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अगर उस जानिब रुख़ भी करें, तो मेरे मुँह पर थूक दीजिएगा। मैं सीधा भी बहुत हूँ और बदमाश भी काफ़ी हूँ; सीधों के साथ सीधा हूँ और बदमाशों के साथ बदमाश।"

"देखो, मैं विश्वनाथ से मिलकर उन्हें कैसा झाड़ता हूँ।"

"छुट्टन मियाँ नेत्र विस्फारित करके बोले—"ऐसा ग़ज़ब न कीजिएगा, नहीं तो सारा गुड़ गोबर हो जायगा।"

"क्यों?"

"जहाँ उन्हें यह मालूम हुआ कि आपको उनकी इस कारगुज़ारी का पता लग गया, बस वह बेगम को वहाँ से भी टहला देंगे, कोई ताज्जुब नहीं, जो लखनऊ से ही हटा दें। आप तो ऐसे बने रहिए, गोया कि आपको कुछ मालूम ही नहीं।"

"हाँ, यह तो तुमने ठीक कहा।"

"और मेरी तो यह सलाह है कि आप उन दोनो साहबों से कुछ दिनों के लिये मिलना-जुलना भी बंद कर दीजिए। अव्वल तो वह ख़ुद ही आपसे फटे-फटे रहेंगे; मगर आप भी फ़िरंट रहिए।"

"अच्छी बात है। श्यामनाथ तो अब बहुत कम घर से निकलते हैं।"

"इसीलिये कम निकलते होंगे, जिसमें आपका साथ न हो।"

"और मैं यह समझा कि बेगम की जानिब से नाउम्मेदी हो चुकी है। बंदीजान पुरानी हो चुकीं, नई-नई बीवी आई हैं; लिहाज़ा उसी की मुहब्बत में फँसे हैं।"

"जी, यह सब आपका वहम है। वहाँ मामला दूसरा ही है।"

"यह सब विश्वनाथ ने सुझाया होगा।"

"और नहीं तो क्या—श्यामनाथ में इतनी तमीज़ कहाँ है?"

"मुझे उनसे ऐसी उम्मीद नहीं थी।"

"आप तो सीधे-सादे आदमी हैं, और विश्वनाथ ठहरा चालाक आदमी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

"ग़ैर जी होगा, अपने से क्या! मुझे तो उस आदमी से शुरू से ही नफ़रत है।"

"ज़रूर होगी। हरएक शरीफ़ व भला आदमी उससे नफ़रत करेगा। अच्छा, तो अब इजाज़त दीजिए। सिर्फ़ इतनी ही बात पूछने के लिये आया था।"

"तो बेगम का पता ज़रूर लगाना। सच कहता हूँ, जब से शम्सुन्निसाँ को देखा है, तब से अब कोई निगाह में ही नहीं चढ़ती।"

"ज़रूर! वह चीज़ ही ऐसी है। अब की पता लग-भर जाय, और शर्तिया लगेगा। बस, फिर आप-ही-आप हैं, दूसरे की वहाँ परछाईं तक तो पहुँचने नहीं पावेगी।"

छुट्टन मियाँ गोकुलप्रसाद से बिदा होकर सीधे श्यामनाथ के यहाँ पहुँचे। वहाँ भी वह यही रूप लाए। श्यामनाथ से कहा कि विश्वनाथ और गोकुल ने बेगम को टहला दिया।

श्यामनाथ सब सुन-समझकर बोले—"बड़े दग़ाबाज़ निकले।"

"इस दग़ाबाज़ी का भी कोई ठिकाना है। रुपए आपने ख़र्च किए, और उससे फ़ायदा वे दोनो उठा रहे हैं।"

"वह राधाकृष्णवाला क्या क़िस्सा है। कोई राधाकृष्ण हैं, वह बेगम के यहाँ आने-जाने लगे थे, कहीं उनका काम तो नहीं है।"

यह सुनकर छुट्टन ने उनके संबंध की वही कलकत्ते जाने-वाली बात कह सुनाई, और कहा—"वह बेचारे भी परेशान हैं, मुझसे पूछते थे। मगर मैं तो ख़ुद नावाक़िफ़ हूँ, मैं उन्हें क्या बतलाता। पहले तो उन्हें मुझ पर शक हुआ। बोले—'तुम्हारी ही बदमाशी है, तुम्हीं ने कहीं भगा दिया होगा।' इस पर जब मैंने उन्हें यक़ीन दिलाया, उन अपने दोस्त से जाकर पुछवाया, तब उन्हें यक़ीन आया। बात यह है कि मैं उनके घर का मुख़्तार-सा था,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इसलिये सबका शक मुझ कंबख़्त पर ही होता है। जो असली मुजरिम हैं, उनकी तरफ़ किसी का ध्यान भी नहीं जाता।"

इसके पश्चात् छुट्टन मियाँ ने श्यामनाथ को भी वही पाठ पढ़ाया कि अब आप उनसे बात न कीजिएगा, मैं बेगम का पता लगाऊँगा, और इस बार पता लग जाने पर आप-ही-आप होंगे, कोई दूसरा धँसने भी न पाएगा।

श्यामनाथ ने छुट्टन मियाँ की बातों पर विश्वास कर लिया, और उनके कथनानुसार काम करने की प्रतिज्ञा की। इसके पश्चात् छुट्टन ने कहा—"अब सरकार शाम को चौक तशरीफ़ नहीं लाते?"

श्यामनाथ मुँह बनाकर बोले—"क्या करूँ आके, तबियत के मुआफ़िक़ कोई दिखाई नहीं पड़ता। हाँ, शम्सुन्निसाँ या उन्हीं की तरह का कोई हो, तो आने-जाने का लुत्फ़ भी है।"

"दुरुस्त है! देखिए, ख़ुदा ने चाहा, तो इस बार शम्सुन्निसाँ आप ही का दम भरेंगी। बंदीजान के यहाँ भी नहीं जाते?"

"बंदीजान ने मेरे साथ एक दिन ऐसा बेमुरव्वती का बर्ताव किया कि उस दिन से मुझे उससे नफ़रत हो गई। रंडी फिर रंडी ही है।"

"हाँ, यह तो दुरुस्त ही है। इसमें कोई कुछ कह ही नहीं सकता। जो ठीक है, उसे ठीक ही कहना पड़ेगा।"

"वैसे बिला वजह इधर-उधर मटरगश्ती करने से कोई नतीजा नहीं। मेरे घर में ख़ुद चाँद-सी बीवी मौजूद है, हज़ारों में एक! उससे बढ़कर कोई मिले, तो तबियत रुज़ू हो।"

"यही बात है। ख़ुदा मुबारक करे। हम तो हुज़ूर आसरे-ही-आसरे में रहे। शादी हो गई, सब कुछ हो गया, मगर हमें अभी तक कुछ न मिला।"

श्यामनाथ कुछ सोचकर बोले—"अच्छा, खड़े रहो!"

"हाँ, सलामती रहे, ख़ुदा जोड़ी सरकार रखे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्यामनाथ भीतर चले गए और पाँच रुपए का नोट ले आए। नोट छुट्टन के हाथ में देकर बोले—"लो, फ़िलहाल यह लो, फिर देखा जायगा।"

छुट्टन नोट लेकर बोला—"बस, पाँच ही रुपए!"

"इस वक़्त यही ले जाओ, फिर समझ लेंगे। अगर शम्सुन्निसा तक हमारी रसाई (पहुँच) करा दोगे, तो हम तुम्हें ख़ुश कर देंगे।"

"मैं तो पहले ही अर्ज़ कर चुका कि इस बार लिबा आपके और दूसरे की क्या मजाल, जो वहाँ क़दम तो रख ले।"

"कहीं विश्वनाथ और गोकुल कुछ गड़बड़ न करें।"

"क्या मजाल! अगर ज़रा भी चीं-चपड़ करें, तो क़सम है, कलाम मजीद की, ख़ून हो जाय। मैं बड़ा टेढ़ा आदमी हूँ। ज़रा देखिएगा तो, कैसा मज़ा चखाता हूँ। उन्होंने मुझे चकमा देकर अच्छे घर बायन दिया है। मैं भी यह तिगनी का नाच नचाऊँ कि उम्र-भर याद करें।"

"मुझे तो गोकुलप्रसाद पर ताज्जुब होता है—मुझे छोड़कर एक ग़ैर आदमी से मिल गए।"

"यह ज़माने की ख़ूबी है। आजकल ज़माना ही ऐसा है।"

इसके पश्चात् छुट्टन मियाँ श्यामनाथ से बिदा हुए।

दसवाँ परिच्छेद

उपर्युक्त घटना के एक मास पश्चात् शंभूनाथ को सरकार की ओर से एक पत्र मिला, जिसमें लिखा था—"तुम आगरे के बजाय कानपुर में डिप्टी-कलेक्टर नियुक्त किए जाते हो।.....तारीख़ को तुम वहाँ जाकर कार्य-भार सँभाल लेना।"

शंभूनाथ ने माता को सरकारी हुक्म सुनाया। माता ने कहा—"कानपुर में चलो या अकेला रहा, कानपुर तो पास ही है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"हाँ, कानपुर तो पास ही है, अब तो मेरी समझ में नौकरी स्वीकार कर लेनी चाहिए।"

"हाँ, अब स्वीकार कर ले। ऐसी नौकरी फिर नहीं मिलेगी।"

शंभूनाथ ने बाबू व्रजमोहनलाल को यह समाचार सुनाया। उन्होंने भी यही परामर्श दिया कि अब अवश्य स्वीकार कर लेना चाहिए। ज़रा-सी बात के लिये इतना बड़ा पद छोड़ना ठीक नहीं। शंभूनाथ ने व्रजमोहनलाल की बात का समर्थन किया।

"श्यामनाथ का क्या हाल है?" शंभूनाथ ने पूछा।

"वह अब पहले से ठीक है। शाम को कहीं नहीं जाता, घर पर ही रहता है।"

"अब ईश्वर चाहेगा, तो ठीक ही रहेगा। गोकुल और विश्वनाथ का साथ तो छूट ही गया। इसके अतिरिक्त अभी एक महीना तो मैं यहीं हूँ। कानपुर में 'चार्ज' लेने में अभी एक महीना बाक़ी है।"

"हाँ और क्या! कानपुर में तो तुम्हारे रहने के लिये सरकारी बँगला मिलेगा।"

"हाँ, इसके लिये मुझे एक दिन कानपुर जाना पड़ेगा, वहाँ जाकर सब देख-सुन आऊँ।"

"हाँ, अवश्य चले जाओ।"

व्रजमोहनलाल के पास होकर शंभूनाथ राधाकृष्ण के पास पहुँचे। उन्हें भी उन्होंने समाचार सुनाया। राधाकृष्ण भी बड़े प्रसन्न हुए। शंभूनाथ ने कहा—"अभी एक मास तक तो मैं यहाँ हूँ, इसके पश्चात् श्यामनाथ की देख-रेख तुम्हें रखनी पड़ेगी।"

"सो तो मैं रक्खूँगा ही, परंतु अब मेरा अनुमान है कि श्यामनाथ ठीक ही रहेंगे।"

"देखो, ईश्वर मालिक है। अब इस समय तो वह कहीं नहीं जाता। घर ही में रहता।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"बड़ी खुशी की बात है। परंतु यार, एक बात का थोड़ा-सा अफ़सोस होता है।"

"किस बात का?" शंभूनाथ ने उत्सुक होकर पूछा। "हमारा-तुम्हारा साथ छूट जायगा।"

"इस बात का तो मुझे भी बड़ा अफ़सोस है, परंतु क्या किया जाय, मजबूरी है।"

"हाँ, मजबूरी तो है ही। खैर जी, भगवान् तुम्हें सुखी रक्खे, कानपुर कुछ दूर नहीं है। जब चाहेंगे, मिल लिया करेंगे।"

इसके पश्चात् थोड़ी देर इधर-उधर की बातचीत करके शंभूनाथ घर चले आए। उसी दिन रात में सुलोचना ने घासीराम से कहा—"अब शंभू के विवाह की कोशिश करो। अब देर करना ठीक नहीं।"

घासीराम बड़े अभिमान-पूर्वक बोले—"जिस दिन चाहो, विवाह हो जाय। अब विवाह की कौन मुश्किल है। अब कौन ऐसा है, जो अपनी लड़की देना अस्वीकार करेगा?"

"पर लड़की तो ढूँढना चाहिए।"

"जिसे ग़रज़ होगी, वह आप दौड़ा आएगा।"

"दौड़े आने से क्या होता है—लड़की भी तो अच्छी होनी चाहिए।"

"सो तो होवेगी ही।"

"तो अभी से खोज करो।"

घासीराम बिगड़कर बोले—"तू तो है पागल, बूढ़ी होने आई; पर तुझे बुद्धि न आई। लड़कीवाले खोज करते हैं या लड़केवाले?"

"यह तो ग़रज़ की बात है, जिसे ग़रज़ होती है, वही खोज करता है।"

"चुप, ऐसा नहीं होता! यह लड़कीवाले का काम है कि लड़का ढूँढे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"इस तरह बैठे रहोगे, तो न-जाने कब होगा।"

वासीराम—"देखो, आज पुरोहितजी को बुलवाऊँगा। उनसे चर्चा करूँगा, वह कोई लड़की ठीक कर देंगे।"

"हाँ, यह बात चलन की है, तो आज ही उन्हें बुलवाकर कह दो।"

"शाम को चपरासी भेजकर पकड़वा बुलवाऊँगा।"

"पकड़वा बुलाओगे, ऐसा अंधेर! लड़का डिप्टी क्या हो गया—अब किसी को कुछ समझते ही नहीं। और अभी चपरासी है कहाँ। अभी तो लखनऊ में बैठे हो।"

"हमने किसी को कुछ समझा कब था। हम तो सदा से ही सबको ठेंगे पर मारते रहे।"

"हूँ, ठेंगे पर मारते रहे, ऐसे बड़े कहीं के अफ़लातून थे न?"

"चुप रहो, नहीं हवालात में बंद करा दूँगा।"

पति की यह बात सुनकर सुलोचना हँस पड़ी। बोली—"हाँ, अब यही बाक़ी रह गया है, सो यह भी कर डालो, साध क्यों रह जाय। बाहर भी लोगों से ऐसी ही बातें कहते होगे। वह अपने मन में क्या कहते होंगे?"

"कहने दो, हमें अब किसी की परवाह नहीं।"

"यही कहते होंगे कि डिप्टीसाहब के पिता तो बिलकुल पागलपन की बातें करते हैं।"

"बकते हैं! जिसका लड़का डिप्टी, वह पागलपने की बातें करे! ऐसा तुम्हारे-से मूर्ख ही सोचेंगे।"

शंभूनाथ ने जिस समय अपने विवाह की बातचीत सुनी, तो उनका ध्यान तुरंत सुभद्रा की ओर गया। इतने दिनों में उन्हें सुभद्रा से पूर्ण प्रेम हो गया था, वह यह भी जानते थे कि सुभद्रा भी उनसे प्रेम करती है। इस कारण उन्होंने यह प्रण-सा कर लिया था कि यदि विवाह करेंगे, तो सुभद्रा के साथ, अन्यथा अविवाहित ही

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहेंगे। उन्हें यह विश्वास था कि राधाकृष्ण को यदि ज्ञात हो जाय कि शंभूनाथ उनकी भगिनी से विवाह करना चाहते हैं, तो वह सहर्ष इसके लिये तैयार हो जायँगे, परंतु प्रश्न यह था कि उनसे कहे कौन? स्वयं शंभूनाथ तो उनसे कहने का साहस कर नहीं सकते थे।

शाम को बासीराम ने पुरोहितजी को बुलवाया। पुरोहितजी वृद्ध तो हो गए थे, अतएव लठिया टेकते हुए आए। आते ही उन्होंने अपनी बातों की झड़ी लगाई। शंभूनाथ के डिप्टी हो जाने पर बड़ा आनंद प्रदर्शित किया, और भविष्य के लिये अनेक आशीर्वाद दिए। सुलोचना ने उनसे कहा—"अब शंभूनाथ के लिये कोई लड़की तो ढूँढ़ो।"

पुरोहितजी बोले—"अरे बहू, अब लड़कियों की क्या कमी है। अब ऐसा कौन है, जो अपनी लड़की देने में आना-कानी करेगा। झूठो कहो, तो सचमुच दौड़े आवें। कहो, तो लड़कियों के ढेर लगा दूँ।"

"ढेर लगाने से काम नहीं चलेगा। हमें तो एक लड़की चाहिए। पर सुशील हो, सुंदर हो, और पढ़ी-लिखी हो।"

"और क्या, अब शंभूनाथजी के लिये ऐसी-वैसी लड़की थोड़े ही ली जायगी।"

बासीराम बोल उठे—"और देखो, लड़कीवाला धनवान् हो और प्रतिष्ठित हो। ऐसे-वैसे की लड़की से मैं अपने लड़के का विवाह नहीं करूँगा।"

पुरोहितजी—"नहीं बाबू, ऐसा कहीं हो सकता है? ब्याह-शादी बराबरवालों में ही होती है। मैं ऐसा कुछ पागल थोड़ा ही हूँ, जो सटर-पटर आदमी से संबंध करा दूँ। यही काम करते-करते मेरे बाल सफ़ेद हो गए। मैंने तुम्हारे घर के इतने काम कराए। श्याम-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नाथ को गोद दिलाया, चुन्नी बीबी का ब्याह कराया—इनमें कोई काम गड़बड़ हुआ ?"

सुलोचना बोली—"वह सब जो हुआ सो हुआ, पर यह काम अच्छा होना चाहिए।"

पुरोहितजी—"अच्छा लो, पिछले सबकामों से श्रेष्ठ रहे, तबकहना।"

पुरोहितजी जब विदा होने लगे, तो शंभूनाथ ने उन्हें बुलवाया। पुरोहितजी ने शंभूनाथ के सामने पहुँचकर खूब लोकाचार किया। शंभूनाथ और उनके साथ उनके वंश की विरदावली का बखान कर गए। शंभूनाथ झुँझलाकर बोले—"मैंने जिस काम के लिये आपको बुलवाया है, पहले उसे सुन लीजिए, फिर पीछे जितनी इच्छा हो, उतनी प्रशंसा कर लीजिएगा।"

पुरोहितजी दाँत निकालकर बोले—"आज्ञा!"

"आप मेरे लिये लड़की ढूँढ़ेंगे ?"

"अवश्य! समस्त संसार के काम छोड़कर...।"

शंभूनाथ ने उन्हें रोककर कहा—"ज़्यादा कहने की आवश्यकता नहीं, जितनी बात मैं पूछूँ, उतनी ही का उत्तर दीजिए। हाँ, तो आपकी दृष्टि में इस समय कोई लड़की है ?"

"लड़कियाँ तो अनेक हैं, पर आपके योग्य देखना पड़ेगी।"

"आप संसार-भर में न भटककर केवल एक काम कीजिए।"

"कहिए।"

"बाबू राधाकृष्ण को तो आप जानते ही होंगे ?"

"हाँ जानता हूँ, वह भी हमारे यजमान हैं। उनकी बहन भी विवाह-योग्य हुई। उन्होंने भी एक दिन लड़के के लिये मुझसे कहा था।"

"तो बस! मैं यदि विवाह करूँगा, तो उसी लड़की से। इस कारण आप दूर-दूर भटककर उनसे ही बातचीत कीजिए,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और जो कुछ कहिएगा, अपनी ओर से कहिएगा, अथवा मेरे माता-पिता की ओर से। यह प्रकट न कीजिएगा कि मैं ऐसा चाहता हूँ।"

पुरोहितजी दाँत निकालकर बोले—"नहीं बाबू, ऐसा थोड़ा ही हो सकता है। मैं बुड्ढा हो गया, तुम्हें मैंने गोदियों में खिलाया है—मुझसे ऐसी भूल नहीं हो सकती।"

"बस, तो जाइए, केवल इसी के लिये आपको कष्ट दिया था।"

पुरोहितजी शंभूनाथ से बिदा होकर सीधे राधाकृष्ण के पास पहुँचे। जाते ही उन्होंने राधाकृष्ण से कहा—"लो बाबू, मैंने सुभद्रा बीबी के लिये एक बड़ा योग्य वर ढूँढा है।"

राधाकृष्ण—"बड़ी प्रसन्नता की बात है—कौन-सा वर है?"

पुरोहितजी—"लाला घासीराम का लड़का शंभूनाथ, जो अभी-अभी डिप्टी-कलक्टर हुआ है।"

पुरोहितजी की यह बात सुनते ही राधाकृष्ण कुछ क्षणों के लिये स्तंभित रह गए। उनका ध्यान कभी शंभूनाथ की ओर नहीं गया था। उन्होंने कभी यह बात नहीं सोची थी कि शंभूनाथ सुभद्रा के लिये एक अच्छा वर है। पुरोहितजी की बात सुनकर उनका ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ और उन्होंने सोचा—निस्संदेह, सुभद्रा के लिये शंभूनाथ से बढ़कर अन्य कोई पात्र मिलना दुर्लभ है। उन्हें इस बात पर आश्चर्य हुआ कि आज तक उनके ध्यान में यह बात क्यों नहीं आई!

पुरोहितजी राधाकृष्ण को मौन देखकर बोले—"क्यों बाबू, चुप क्यों हो गए, क्या मेरी बात ध्यान में नहीं डटी?"

राधाकृष्ण बोले—"ध्यान में नहीं डटी, ऐसा मत कहिए। शंभूनाथ मेरे परम मित्र हैं। मेरी उनकी रात-दिन की उठक-बैठक है। मुझे उनसे बड़ा स्नेह है। मैं यही सोचता था कि मेरे ध्यान में स्वयं यह बात क्यों नहीं आई। सुभद्रा के विवाह के लिये इतना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चिंतित रहा; पर शंभूनाथ की ओर कभी ध्यान ही नहीं गया। ख़ैर, यह भी अच्छा हुआ, यह यश आपके ही भाग्य में लिखा था।"

पुरोहितजी राधाकृष्ण की बात सुनते ही हर्ष के मारे गद्गद हो गए। बोले—"बाबू, मैंने ये बाल धूप में सपेद नहीं किए। मैंने संसार देखा है। मेरी निगाह कच्ची नहीं है। मैं जानता हूँ कि कौन किसके योग्य है। इसीलिये सीधा यहाँ चला आया। मुझसे कसम ले लो, जो कहीं अन्य गया हूँ। जिस समय लाला घासीराम और उनकी बहू ने मुझसे लड़की ढूँढ़ने के लिये कहा, उसी समय मैंने सोच लिया था कि बस, सुभद्रा बीबी ही इस घर के योग्य है—दूसरी कोई हो ही नहीं सकती।"

राधाकृष्ण—"इस सूझ के लिये मैं आपकी प्रशंसा करता हूँ, और साथ ही मैं इसके लिये आपका अत्यंत कृतज्ञ हूँ।"

"तो मैं विवाह पक्का करूँ? सुभद्रा बीबी की कुंडली दीजिए, तो मैं लड़के की कुंडली से मिला लूँ।"

राधाकृष्ण ने सोचा—ऐसा न हो कि कुंडली न मिले, तो विवाह में बाधा पड़े। यह बात वह चाहते नहीं थे। अतएव वह बोले—"कुंडली-वुंडली का मैं क़ायल नहीं। ऐसा योग्य वर होते हुए कुंडली मिलाना मूर्खता है।"

पुरोहितजी—"अरे बाबू, ऐसा न कहो! पुरानी परिपाटी कोई छोड़ देता है। यह तो देख लो कि लड़की-लड़के के ग्रह मिलते हैं कि नहीं?"

राधाकृष्ण—"यह कुछ नहीं, मैं शंभूनाथ के स्वभाव से परिचित हूँ। अपनी बहन का भी स्वभाव जानता हूँ। दोनो एक दूसरे के लिये परम उपयुक्त हैं। कुंडली-वुंडली के झगड़े में पड़ना व्यर्थ है। यदि कहीं पंडितों ने कोई झगड़ा निकाल दिया, तो मुझे बड़ा दुःख होगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुरोहितजी दाँत निकालकर बोले—"जैसी आपकी इच्छा। पर कुंडली मिला ली जाती, तो अच्छा था।"

राधाकृष्ण पुरोहितजी की तुष्टि के लिये बोले—"तो मैं कुंडली मिलवा लूँगा; आप उसकी चिंता मत कीजिए। रही विवाह पक्का करने की बात, सो उसे आप पक्का ही समझिए।"

"आपकी ओर से तो पक्का है, पर उसकी ओर से...।"

राधाकृष्ण—"उनकी ओर से भी पक्का ही समझिए। हाँ, आप अपना कर्तव्य पालन कीजिए।"

"हाँ, मैं अपने कर्तव्य के लिये तो कहता हूँ—वैसे तो वह आपकी बात टाल थोड़े ही सकते हैं।"

"उनके माता-पिता चाहे एक बेर इनकार भी करें, पर शंभूनाथ कभी इनकार नहीं कर सकते। उन्हें मेरी प्रार्थना स्वीकार करनी ही पड़ेगी। इतना प्रेम-स्नेह होते हुए वह इनकार कर सकते हैं?"

पुरोहितजी मन में बोले—"वह क्या इनकार करेंगे, वह तो क़सम खाए बैठे हैं कि सुभद्रा के साथ ही विवाह करेंगे।" प्रकट रूप से बोले—"अजी राम भजो, ऐसा नहीं हो सकता कि वह इनकार करें।"

पुरोहितजी राधाकृष्ण से बिदा हुए। पुरोहितजी के जाने के पश्चात् ही राधाकृष्ण अपनी माता के पास पहुँचे और बोले—"बहू, सुभद्रा के लिये वर मिल गया।"

उनकी माता प्रसन्न होकर बोलीं—"कहाँ?"

"यहीं, लखनऊ में।"

माता उत्सुक होकर बोलीं—"कौन है, किसका लड़का है?"

"है कौन! रात-दिन साथ उठते-बैठते रहे, पर अभी तक उनकी ओर ध्यान नहीं गया। आज पुरोहितजी ने आकर कहा, तो ध्यान आया। ख़ैर, यह भी अच्छा ही हुआ, जो अब भी चेत गए।"

"अरे, तो कुछ बतावेगा भी कि कौन है?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"वही मेरे दोस्त शंभूनाथ, जो अभी डिप्टी-कलक्टर हुए हैं।"

"हाँ बेटा, वह तो बड़ा सुघड़ लड़का है।"

राधाकृष्ण—"सुघड़ तो हई है, पर साथ ही बड़ा योग्य, बड़ा सज्जन है। उस-जैसा लड़का दीपक लेकर ढूँढ़ोगी, तब भी न मिलेगा।"

"और घर भी अच्छा है।"

"घर को छोड़ो, लड़के को देखो। जो स्वयं डिप्टी-कलक्टर है, उसके घर को क्या देखना?"

"तो बस, ठीक है। कुंडली मिलवाकर देख ले। कुंडली मिल जाय, तो ब्याह पक्का कर ले।"

राधाकृष्ण ने कहा—"वह सब देख लिया जायगा।"

माता से बातें करके राधाकृष्ण पत्नी के पास पहुँचे और बोले—"देखो, इतने दिन व्यर्थ चिंता की, प्रत्येक समय साथ रहता रहा; पर यह बात न सूझी। वही कहावत हुई कि लड़का बग़ल में ढिंढोरा नगर में।"

पत्नी ने कहा—"चलो, बड़ा अच्छा हुआ। ऐसा लड़का दूसरा न मिलता।"

"अरे राम भजो! यह सुभद्रा के भाग्य ने ज़ोर मारा। नहीं तो मुझे तो यह बात कभी न सूझती। मैं केवल मित्रता ही में रहता।"

तुम्हारी और बहू की बातें सुभद्रा सुनती रही। उसके मुख से मालूम पड़ता है कि इस समय उसके पेट में आनंद समा नहीं रहा है।"

"यह और भी प्रसन्नता की बात है। लड़का लड़की को पसंद है, इससे बढ़कर और क्या हो सकता है, और पसंद क्यों न हो; शंभूनाथ में कोई ऐब भी तो नहीं। देखने-सुनने में सुंदर है, सज्जन है। ऐसी अभागी लड़की कौन होगी, जो शंभूनाथ को पसंद न करेगी?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"तो बस, फिर अब इधर-उधर भटकने की क्या ज़रूरत है, वहीं पक्का कर लो।"

"मैं अभी शंभूनाथ के पास जाता हूँ।" यह कहकर राधाकृष्ण ने तुरंत कपड़े पहने, और शंभूनाथ के पास पहुँचे। उस समय संध्या के सात बज चुके थे। शंभूनाथ अपने कमरे में बैठे कुछ लिख रहे थे। राधाकृष्ण को देखते ही वह मुस्किराकर बोले—"आओ भाई!"

राधाकृष्ण—"क्या हो रहा है?"

"एक पत्र लिख रहा हूँ।"

राधाकृष्ण ने कहा—"अच्छा, तो दो मिनट मेरी बातें सुनकर पहले मेरे भाग्य का फ़ैसला कर दो, तब कुछ करो।"

"बोलो।"

"बात यह है कि सुभद्रा के विवाह की मुझे बड़ी चिंता है। कोई योग्य वर मिलता नहीं। इस कारण मैं चाहता हूँ कि उसका विवाह तुम्हारे ही साथ क्यों न कर दूँ? तुम्हें भी अपना विवाह करना है, और मुझे भी सुभद्रा का विवाह करना है। ऐसी दशा में सदैव की तरह इस कार्य में भी हम एक दूसरे की सहायता क्यों न करें। यह रिश्ता हो जाने से हमारे-तुम्हारे स्नेह की गाँठ और भी दृढ़ हो जायगी।"

शंभूनाथ समझ गए कि पुरोहितजी ने अपना काम कर डाला, अन्यथा राधाकृष्ण को स्वयं यह बात कभी न सूझती। अतएव उन्होंने कहा—"इसके लिये तो मेरे माता-पिता से बातचीत करो, उनके होते हुए मैं इस संबंध में क्या कहूँ?"

उनसे तो बातचीत कर ही लूँगा, परंतु पहले तुम्हारी स्वीकृति तो मिल जाय।"

"मेरी स्वीकृति क्या! मैं तो जो तुम कहोगे, जो तुम्हारी इच्छा होगी, वही करूँगा। मैं तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध कोई काम नहीं कर सकता।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"वही मेरे दोस्त शंभूनाथ, जो अभी डिप्टी-कलक्टर हुए हैं।"

"हाँ बेटा, वह तो बड़ा सुघड़ लड़का है।"

राधाकृष्ण—"सुघड़ तो है, पर साथ ही बड़ा योग्य, बड़ा सज्जन है। उस-जैसा लड़का दीपक लेकर ढूँढ़ोगी, तब भी न मिलेगा।"

"और घर भी अच्छा है।"

"घर को छोड़ो, लड़के को देखो। जो स्वयं डिप्टी-कलक्टर है, उसके घर को क्या देखना?"

"तो बस, ठीक है। कुंडली मिलवाकर देख लो। कुंडली मिल जाय, तो ब्याह पक्का कर लो।"

राधाकृष्ण ने कहा—"वह सब देख लिया जायगा।"

माता से बातें करके राधाकृष्ण पत्नी के पास पहुँचे और बोले—"देखो, इतने दिन व्यर्थ चिंता की, प्रत्येक समय साथ रहता रहा; पर यह बात न सूझी। वही कहावत हुई कि लड़का बगल में ढिंढोरा नगर में।"

पत्नी ने कहा—"चलो, बड़ा अच्छा हुआ। ऐसा लड़का दूसरा न मिलता।"

"अरे राम भजो! यह सुभद्रा के भाग्य ने ज़ोर मारा। नहीं तो मुझे तो यह बात कभी न सूझती। मैं केवल मित्रता ही में रहता।"

तुम्हारी और बहू की बातें सुभद्रा सुनती रही। उसके मुख से मालूम पड़ता है कि इस समय उसके पेट में आनंद समा नहीं रहा है।"

"यह और भी प्रसन्नता की बात है। लड़का लड़की को पसंद है, इससे बढ़कर और क्या हो सकता है, और पसंद क्यों न हो; शंभूनाथ में कोई ऐब भी तो नहीं। देखने-सुनने में सुंदर है, सज्जन है। ऐसी अभागी लड़की कौन होगी, जो शंभूनाथ को पसंद न करेगी?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"तो बस, फिर अब इधर-उधर भटकने की क्या ज़रूरत है, वहीं पक्का कर लो।"

"मैं अभी शंभूनाथ के पास जाता हूँ।" यह कहकर राधाकृष्ण ने तुरंत कपड़े पहने, और शंभूनाथ के पास पहुँचे। उस समय संध्या के सात बज चुके थे। शंभूनाथ अपने कमरे में बैठे कुछ लिख रहे थे। राधाकृष्ण को देखते ही वह मुस्किराकर बोले—"आओ भाई!"

राधाकृष्ण—"क्या हो रहा है?"

"एक पत्र लिख रहा हूँ।"

राधाकृष्ण ने कहा—"अच्छा, तो दो मिनट मेरी बातें सुनकर पहले मेरे भाग्य का फ़ैसला कर दो, तब कुछ करो।"

"बोलो।"

"बात यह है कि सुभद्रा के विवाह की मुझे बड़ी चिंता है। कोई योग्य वर मिलता नहीं। इस कारण मैं चाहता हूँ कि उसका विवाह तुम्हारे ही साथ क्यों न कर दूँ? तुम्हें भी अपना विवाह करना है, और मुझे भी सुभद्रा का विवाह करना है। ऐसी दशा में सदैव की तरह इस कार्य में भी हम एक दूसरे की सहायता क्यों न करें। यह रिश्ता हो जाने से हमारे-तुम्हारे स्नेह की गाँठ और भी दृढ़ हो जायगी।"

शंभूनाथ समझ गए कि पुरोहितजी ने अपना काम कर डाला, अन्यथा राधाकृष्ण को स्वयं यह बात कभी न सूझती। अतएव उन्होंने कहा—"इसके लिये तो मेरे माता-पिता से बातचीत करो, उनके होते हुए मैं इस संबंध में क्या कहूँ?"

उनसे तो बातचीत कर ही लूँगा, परंतु पहले तुम्हारी स्वीकृति तो मिल जाय।"

"मेरी स्वीकृति क्या! मैं तो जो तुम कहोगे, जो तुम्हारी इच्छा होगी, वही करूँगा। मैं तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध कोई काम नहीं कर सकता।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"बस, तो ठीक है—अब मैं निश्चित हो गया। माता-पिता से पुरोहितजी बात कर ही लेंगे, और मैं भी उनसे कह लूँगा। ईश्वर जानता है, आज मुझे जितना आनंद, जितनी प्रसन्नता है, उतनी इतनी उम्र में कभी नहीं हुई।"

शंभूनाथ मुस्किराकर बोले—"परंतु आज तुम्हें बैठे-बैठे यह क्या सूझा?"

"सच बात तो यह है कि अभी पुरोहितजी गए थे। उन्होंने ही सुभद्रा के लिये तुम्हारा नाम लिया। बस, मेरे जी में उनकी बात जम गई। मुझे आश्चर्य है कि यह बात मेरे मस्तिष्क में क्यों नहीं आई। परंतु ख़ैर, किसी तरह भी हो, यह बात बड़ी उत्तम हुई।"

शंभूनाथ चुपचाप सिर झुकाए बैठे रहे।

थोड़ी देर पश्चात् राधाकृष्ण ने पूछा—"श्यामनाथ के क्या हाल हैं?"

शंभूनाथ बोले—"अभी तक तो ठीक हैं, आगे की भगवान् जाने।"

"अब वह प्रतिदिन ठीक ही होते जायँगे। विश्वनाथ और गोकुल से तो उनका साथ छूट ही गया।"

"हाँ, इस संबंध में छुट्टन ने कमाल किया।"

"मैंने तुमसे कहा था कि वह तीनों में मनोमालिन्य करा देगा। वही हुआ।"

"वह पचास रुपए तो उसे दे दिए होंगे?"

"हाँ, दे दिए। एक शुभ संवाद और सुनाता हूँ।"

"वह क्या?"

"क़मरुन्निसा और शम्सुन्निसा की शादी ठीक हो रही है।"

"सच?"

"हाँ! हाँ! मलाक़ भोड़े ही करता हूँ!"

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"किसके साथ ?"

"मेरे मित्र सज्जादहुसैन को तो जानते होगे ?"

"हाँ वही, जिन्हें बंदीजान के यहाँ नियुक्त किया है।"

"हाँ, वही ! उन्हीं के दो मित्र हैं—उन्हीं से।"

"वे दोनो किस हैसियत के हैं ?"

"अच्छे खाते-कमाते आदमी हैं। ख़ानदान के भी अच्छे हैं।"

"क्या करते हैं ?"

"अदालत जज़ी के महाफ़िज़ दफ़्तर हैं।"

"ख़ूब ! और दूसरा ?"

"वह रेलवे में नौकर है।"

"यह तुमने बड़ा शुभ संवाद सुनाया, बड़ी प्रसन्नता हुई।" राधाकृष्ण कुछ क्षणों तक मौन रहकर बोले—"परंतु बेगम को शादी के लिये एक हज़ार रुपया देना पड़ेगा।"

"मैं बाबू व्रजमोहनलाल से दिला दूँगा, फिर मैं धीरे-धीरे उन्हें दे दूँगा।"

"बाबू व्रजमोहनलाल से क्यों माँगोगे, मैं सब प्रबंध कर दूँगा, तुम निश्चिंत रहो ?"

"अरे नहीं, तुम क्यों दोगे ?"

"मुझे आज इतनी प्रसन्नता है कि यह एक हज़ार तुम्हारे ऊपर से न्योछावर करके इन कन्याओं के विवाह के लिये दान कर दूँगा।"

शंभूनाथ हँसकर बोले—"अच्छा ऐसी ख़ुशी में आ गए ?"

"मैं ख़ुश, मेरी आत्मा ख़ुश ! हमारे तुम्हारे स्नेह की गाँठ इस संबंध से और अधिक दृढ़ हो रही है, मेरी बहन को तुम्हारा-सा वर मिला है, यह क्या कम प्रसन्नता की बात है। मेरे लिये तो इससे अधिक हर्ष तथा आनंद की बात और हो ही नहीं सकती।"

CC-0. Public Domain. Funding by IKS-MoE

 Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अपने प्रति राधाकृष्ण का यह स्नेह देखकर शंभूनाथ के नेत्रों में प्रेमाश्रु छलछला आए। थोड़ी देर तक मौन रहकर शंभूनाथ बोले—"तो उनकी शादी कब तक हो जावेगी ?"

"बातचीत पक्की हो रही है। जहाँ पक्की हो गई, बस, शादी हो जावेगी। अधिक-से-अधिक एक मास के अंदर दोनों का विवाह हो जावेगा।"

चलो, यह बड़ा पुण्य-कार्य किया। दो कन्याओं का उद्धार कर दिया। अन्यथा वे दोनों वेश्या हो जातीं।"

"हाँ, वेश्या होने के तो सामान ही हो रहे थे। यह तुम्हारी कृपा है, जो वे इससे बच गईं।"

"नहीं, यह श्रेय तो तुम्हीं को प्राप्त है।"

"कदापि नहीं, यदि तुम ज़ोर न देते, तो मैं उनके विवाह के लिये कभी चेष्टा न करता। तुम्हारे ही कहने से मैंने इस ओर ध्यान दिया।"

"ख़ैर, वह किसी के कारण हुआ, पर हो तो गया ; यही मुख्य है। विश्वनाथ को तो बेगम के वर्तमान स्थान का पता लगा नहीं होगा ?"

"अजी राम ! अब विश्वनाथ के पीर भी वहाँ नहीं पहुँच सकते।"

"यह विश्वनाथ भी कितना भयानक आदमी है। ओफ़्! ओह ! ऐसे आदमी से ईश्वर बचावे। ऐसे ही आदमी रईसों-अमीरों के लड़कों को सत्यानाश कर देते हैं।"

"इसमें क्या संदेह है। इसीलिये तो नवयुवकों को दुष्ट-संग से बचाने की बड़ी आवश्यकता है। अधिकांश नवयुवक केवल इसीलिये बिगड़ जाते हैं कि उनकी संगति दुराचारियों से हो जाती है।"

"बिलकुल ठीक है।"

CC-0. Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"अब वह और किसी को ढूँढ़ लेंगे।"

"क्या बताऊँ, क़ानून में इस प्रकार के लोगों के लिये कोई दंड ही नहीं है। जो सच पूछिए, तो ऐसे लोग चोरों, डाकुओं से भी अधिक भयानक हैं। चोर तो केवल धन ही चुराते हैं, परंतु ये लोग तो एक भले आदमी का जीवन ही नष्ट कर देते हैं। भगवान् जानता है, यदि विश्वनाथ कभी किसी मामले में फँसे—और मेरी अदालत में मुक़दमा आवे, तो मैं बिना सज़ा दिए न छोड़ूँ—चाहे निरपराध ही क्यों न हो।"

राधाकृष्ण मुस्किराकर बोले—"तुमसे उस समय ऐसा न हो, यदि वह निरपराध सिद्ध हो, तो तुम उसे सज़ा कभी नहीं दे सकते।"

"क्यों?"

"मैं तुम्हारी प्रकृति जानता हूँ। यदि तुम्हें मालूम हो जाय कि निरपराध है, तो फिर तुम कभी सज़ा न दोगे।"

"हाँ भाई, कहते तो ठीक हो, मेरी आत्मा तो ऐसा करने की सम्मति देगी नहीं।"

"और जब तक तुम्हारी आत्मा सम्मति नहीं देगी, तब तक कुछ कर भी नहीं सकोगे।"

"कहते तो ठीक हो।"

"अच्छा, तो अब तुम अपना काम करो। मैं भी चलता हूँ। पुरोहितजी तुम्हारे माता-पिताजी से मिलेंगे ही, मैं भी किसी दिन मिल लूँगा, और विवाह के लिये ठीक-ठाक कर लूँगा। क्यों, है न ठीक?"

"हाँ, ठीक है।"

"मैं चाहता हूँ कि अगले मास में विवाह हो जाय!"

शंभुनाथ ने इसका कोई उत्तर न दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राधाकृष्ण उठकर बोले—"तुमसे यदि पूछा जाय, तो तुम अपनी सम्मति दे देना।"

शंभूनाथ मुस्किराकर बोले—"और जो उन्हें यह संबंध पसंद न आया, तो ?"

राधाकृष्ण—"यह कभी संभव ही नहीं हो सकता। आख़िर कोई कारण भी तो बताएँगे। मुझमें कोई ऐब होगा या लड़की में कोई दोष होगा, अथवा मेरे कुल में कोई हेटापन होगा, तभी वह कुछ आना-कानी कर सकेंगे। परंतु जब ऐसी कोई बात न होगी, तो वह क्या कहकर अस्वीकार करेंगे। साथ ही तुम्हारा भी तो कुछ प्रभाव पड़ेगा। हाँ, यदि तुम्हीं को पसंद न हो, तो बात दूसरी है।"

शंभूनाथ मृदु हास्य करके बोले—"नहीं जी, मैंने केवल हँसी में कह दिया। तुम्हारे संबंध में मुझे तो किसी दशा में कोई आपत्ति है ही नहीं, और माता-पिता को भी न होगी। दूसरे, मैं कुछ बच्चा तो हूँ नहीं—मैं भी अपना भला-बुरा समझता हूँ, अतएव जो मैं चाहूँगा, वही होगा।"

राधाकृष्ण—"यह मैं जानता हूँ कि अब वह परिस्थिति नहीं रही कि तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध तुम्हारे माता-पिता कुछ करें। अब तो वह प्रत्येक कार्य तुम्हारे ही इच्छानुसार करेंगे। जहाँ उन्हें यह ज्ञात हो गया कि तुम इस संबंध को पसंद करते हो, बस, वह स्वीकार कर लेंगे। भइ, अब तो कमाऊ पूत हो गए, और ऐसे-वैसे भी नहीं—डिप्टी-कलक्टर। अब किसमें इतना साहस है, जो तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध कुछ कर सके। अब आजकल पिताजी किस प्रकार बातचीत करते हैं ?"

शंभूनाथ मुस्किराकर बोले—"अजी, अब तो काया-पलट हो गई। अब तो सिवा जी के बात नहीं करते थे। जब कुछ कहना होता, तो कहते—'शंभूनाथजी, बेटा शंभूनाथजी !' मुझे उनके इस संबोधन से

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बड़ी लज्जा मालूम होती थी। अंत को मैंने एक दिन कहा कि आप मुझे जी मत कहा कीजिए। तब से अब शंभूनाथ, बेटा शंभूनाथ कहने लगे।"

राधाकृष्ण ने पूछा—"और माताजी क्या कहती हैं?"

"उनके लिये मुझमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ—वह जैसे तब 'संभू', 'अरे संभू' कहती थीं, वैसे ही अब भी कहती हैं।"

"उनकी दृष्टि तो सत्य को देखती है, और सत्य में कभी परिवर्तन होता ही नहीं। अच्छा, जय रामजी की।"

"जय रामजी की।"

ग्यारहवाँ परिच्छेद

उपर्युक्त घटना के पश्चात् दो मास व्यतीत हो गए।

शंभूनाथ अपने माता-पिता-सहित कानपुर चले गए।

सुभद्रा से शंभूनाथ का विवाह होना निश्चित हो गया।

इधर श्यामा अर्थात् चुन्नी का स्वास्थ्य प्रतिदिन बिगड़ता ही गया। शंभूनाथ के कानपुर चले जाने के पश्चात् उसकी दशा और भी बिगड़ने लगी।

प्रातःकाल का समय था। बाबू वृंदावनलाल के कमरे में दो वैद्य तथा दो डॉक्टर बैठे हुए थे। गोकुलप्रसाद भी एक ओर चिंतित भाव से खड़े थे। एक डॉक्टर कह रहा था—"मुझे तो अब कोई आशा दिखाई नहीं पड़ती। एक फेफड़ा तो बेकार हो चुका है और दूसरा भी बिगड़ना आरंभ हो गया है। ऐसी दशा में जब तक रोगी जीवित रहे, तभी तक ग़नीमत समझिए।"

बाबू वृंदावनलाल दुःख-पूर्ण स्वर में बोले—"तो क्या अब इलाज बंद कर देना चाहिए?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

एक वैद्यराज बोले—"सो तो नहीं होना चाहिए। चिकित्सा तो बराबर होती रहनी चाहिए। जब तक श्वासा, तब तक आशा।"

डॉक्टर ने भी कहा—"हाँ, इलाज तो जारी ही रहना चाहिए। मैंने रोगी की सच्ची दशा आपसे बता दी, और वह केवल इसलिये कि आप किसी मिथ्या आशा में न रहें।" बाबू वृंदावनलाल ने अप्रतिभ होकर सिर झुका लिया। कुछ क्षणों पश्चात् वह बोले—"तो अब इलाज कौन होना चाहिए—डॉक्टरी या वैद्यक ?"

डॉक्टर ने कहा—"इलाज जो चाहे कीजिए, एक ही बात है।"

"जो मुनासिब हो, वह बताइए।" वृंदावनलाल ने कहा।

डॉक्टर ने वैद्यों की ओर देखकर पूछा—"क्यों, आप लोगों की क्या राय है ?"

एक वैद्य महोदय सिर खुजलाते हुए बोले—"हमारा तात्पर्य यह है कि चिकित्सा अवश्य होती रहनी चाहिए, चाहे डॉक्टरी हो, चाहे आयुर्वेद की हो।"

"इस समय पर उचित कौन रहेगी ?" डॉक्टर ने पूछा।

"यह आप स्वयं सोच सकते हैं—आप भी तो डॉक्टर हैं।" वैद्यराज किंचित् मुस्किराकर बोले।

डॉक्टर साहब कुछ क्षणों तक विचार करके अपने साथी दूसरे डॉक्टर से अँगरेज़ी में बोले—"मेरा विचार है कि वैद्यों का ही इलाज होने दीजिए। हम लोग तो अब विशेष कुछ कर नहीं सकते।"

दूसरे डॉक्टर ने कहा—"ठीक है, मेरी भी यही राय है।"

डॉक्टर ने वृंदावनलाल से कहा—"तो बस, यही तय रहा। इलाज वैद्यक ही चलने दीजिए, बीच-बीच में हम लोग भी देखते रहेंगे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वृंदावनलाल दाँत निकालकर बोले—"जैसा आप लोग उचित समझें। मैं तो इस संबंध में कुछ जानता नहीं।"

"तो बस, यही तय रहा।" यह कहकर डॉक्टर महोदय उठ खड़े हुए। उनके साथ ही दूसरे डॉक्टर साहब भी उठे। वृंदावनलाल ने दोनो को फ़ीस दी—दोनो बिदा हुए। डॉक्टरों के चले जाने के पश्चात् एक वैद्यराज बोले—"डॉक्टरों ने तो कंधा डाल दिया, परंतु हम लोग अभी निराश नहीं हुए हैं। हम अभी एक ज़ोर लगावेंगे। आगे भगवान् मालिक है!"

वैद्य के इस कथन से वृंदावनलाल को पुनः कुछ आशा हुई। वह बोले—"हाँ-हाँ, अवश्य ज़ोर लगाइए। मुझे विश्वास है कि भगवान् आपको सफलता देगा। डॉक्टर लोग तो कंधा डाल ही देते हैं। वे तो बस चीर-फाड़ का काम अधिक अच्छा जानते हैं। चिकित्सा तो केवल आयुर्वेद-शास्त्र ही में है।"

"आपका कथन यथार्थ है। वे लोग चिकित्सा करना क्या जानें? हाँ, हाथ-पैर कटवाना हो, तो यह अच्छा काम कर सकते हैं। हम लोगों को उसका अभ्यास नहीं है। और, हमारे यहाँ चीर-फाड़ की कभी आवश्यकता ही नहीं पड़ती—सारा काम ओषधियों से लिया जाता है। आयुर्वेद में ऐसी-ऐसी ओषधियाँ पड़ी हैं कि उनका प्रयोग करने से चीर-फाड़ की नौबत ही नहीं आती।"

वृंदावनलाल श्रद्धा-पूर्वक बोले—"इसमें क्या संदेह है। आयुर्वेद के समान डॉक्टरी थोड़ा ही हो सकती है। अच्छा, तो अब आप औषध का निर्णय करके उसका प्रयोग कीजिए।"

वैद्य महोदय कुछ क्षणों तक दूसरे वैद्य से परामर्श करके बोले—"आज हम जो औषध देते हैं, उसे दीजिए—देखिए, ईश्वर क्या करता है।"

इसके पश्चात् वैद्यराज ने औषध लिख दी, और फ़ीस लेकर दोनो बिदा हुए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुलप्रसाद भीतर माता के पास पहुँचे। माता ने पूछा—"क्यों बेटा, डॉक्टर-वैद्यों ने क्या बताया?"

गोकुलप्रसाद बोले—"डॉक्टरों ने तो साफ़ जवाब दे दिया। पर वैद्य लोग कहते हैं कि अभी अच्छे होने की आशा है।"

माता बोली—"ठीक बात है—'जब तक स्वासा, तब तक आसा।' डॉक्टर निगोड़े तो ऐसे ही बक देते हैं। तो अब वैद्यों ही की दवा होगी न?"

"हाँ, वैद्यों की ही दवा होगी। दवा वह लिख गए हैं। आदमी लेने गया है।"

"देखो, सायत भगवान् ने उन्हीं को जस देना सोच रक्खा हो।"

यद्यपि गोकुलप्रसाद तथा उनके माता-पिता को यह विश्वास था कि चुन्नी का बचना एक प्रकार से असंभव-सा है, परंतु फिर भी अपने हृदय को शांति देने के लिये वे उसे धोका दे रहे थे। मनुष्य अशांति तथा मानसिक क्लेश से बचने के लिये बहुधा अपने को धोका दिया करता है।

माता के पास से होकर गोकुलप्रसाद चुन्नी के पास पहुँचे। चुन्नी के पास एक दासी बैठी हुई थी। गोकुलप्रसाद के पहुँचते ही वह वहाँ से हट गई। चुन्नी आँखें बंद किए पड़ी थी। उसका शरीर कृश हो गया था। मुख का वर्ण पीला पड़ गया था—आँखें गड्ढे में चली गई थीं। गोकुलप्रसाद ने उसके माथे पर हाथ रक्खा, और बोले—"इस समय कैसा जी है?"

चुन्नी ने आँखें खोलीं, और पति को कुछ क्षणों तक पथराई हुई दृष्टि से देखकर धीमे स्वर में बोली—"जैसा था, वैसा ही है।"

गोकुलप्रसाद उसके सिर पर हाथ फेरते हुए बोले—"आज से वैद्यों की दवा होगी। भगवान् ने चाहा, तो अब तुम शीघ्र ही अच्छी हो जाओगी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चुन्नी के अधरों पर विषाद-युक्त मुस्कान प्रस्फुटित हुई। उसने कहा—"क्यों रुपया बर्बाद करते हो, मैं अब अच्छी-वच्छी कुछ न होऊँगी।"

"वाह, अच्छी कैसे न होगी, अभी बिगड़ा क्या है?"

उसी समय चुन्नी को खाँसी का दौरा आया। गोकुल ने उसे तकिए के सहारे कुछ ऊँचा कर दिया। चुन्नी के मुख से बहुत-सा रक्त-मिश्रित कफ निकला। कुछ देर तक वह चुपचाप पड़ी रही। तत्पश्चात् बोली—"माताजी और भाईजी को देखने की बड़ी इच्छा है। उन्हें बुला देते।" गोकुलप्रसाद का गला भर आया, और वह गद्‌गद कंठ से बोले—"अच्छी बात है, बुला दूँगा। आज ही चिट्ठी लिख दूँगा।"

"अवश्य लिख देना। ऐसा न हो, मन की मन ही में रह जाय।"

"तुम भी क्या बातें करती हो। मन की मन में कैसे रह जायगी? ईश्वर सब अच्छा करेंगे।"

चुन्नी गोकुलप्रसाद की बात पर ध्यान न देकर पुनः बोली—"और श्यामू भैया को भी देखने को जी चाहता है। उसे भी बुलवा लो।"

श्यामनाथ का नाम सुनकर गोकुलप्रसाद का मुख कुछ क्षणों के लिये श्वेत पड़ गया। परंतु उन्होंने शीघ्र ही सँभलकर कहा—"उन्हें भी बुलवा लूँगा। वह तो यहीं रहते हैं। जिस समय कहोगी, बुलवा दूँगा।"

"आज ही बुलवा लो, और बड़े भैया को भी आज ही चिट्ठी लिख देना। श्यामू भैया को तो मेरी बीमारी का हाल मालूम ही होगा।"

गोकुलप्रसाद कुछ सिटपिटाकर बोले—"कह नहीं सकता, मालूम है या नहीं—इधर बहुत दिनों से उनसे भेंट नहीं हुई। ख़ैर, न [illegible] तो आज ही जायगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुलप्रसाद ने उसी दिन शंभूनाथ को पत्र लिख दिया। और एक चिट श्यामनाथ के पास भी भिजवा दी।

संध्या-समय श्यामनाथ आया। जब से लुट्टन ने दोनों को एक दूसरे के विरुद्ध भड़काया था, तब से दोनों में परस्पर मनोमालिन्य का भाव उत्पन्न हो गया था। श्यामनाथ गोकुलप्रसाद से किंचित् शुद्धता-पूर्वक बोला—"क्यों भइ, यह कब से बीमार हैं? मुझको आज तुम्हारी चिट से पता लगा।"

गोकुलप्रसाद ने उत्तर दिया—"बीमार तो बहुत दिनों से हैं। पहले तो हम लोगों को पता ही न चला। जब पता चला, तो साधारण ज्वर और खाँसी समझी गई। इधर दो महीने से बीमारी बहुत बढ़ गई, और आजकल तो उठना-बैठना भी कठिन है।"

"अच्छा, यह दशा है!"

"हाँ, तभी तो तुम्हें सूचना दी।"

श्यामनाथ श्यामा के पास पहुँचा। श्यामनाथ को देखकर उसका कांति-हीन मुख कुछ क्षणों के लिये खिल उठा।

श्यामनाथ उसके सिरहाने के पास कुर्सी पर बैठकर बोला—"क्यों जीजी, कैसी तबीयत है?"

चुन्नी बोली—"अच्छी नहीं है, अब दो-चार दिन की मेहमान हूँ। तुम्हें देखने को बड़ा जी करता था, इसलिये बुलवाया। अम्मा और बड़े भैया को और देख लूँ—बस!"

इतना कहते-कहते चुन्नी के नेत्रों की कोरों में दो अश्रु-बिंदु आ गए। चुन्नी की बात सुनकर और उसकी दयनीय दशा देखकर श्यामनाथ की आँखों में भी आँसू छलछला आए। अपने जीवन में आज प्रथम बार उसने पूर्णतया यह अनुभव किया कि चुन्नी उसकी भगिनी है। यह अनुभव होने के साथ ही उसके हृदय में चुन्नी के प्रति स्नेह उमड़ पड़ा। उसने दुःखित होकर कहा—"जीजी, घबराओ नहीं, तुम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अच्छी हो जाओगी। क्या कहूँ, मुझे तो आज ही पता लगा, नहीं तो मैं भी कुछ चेष्टा करता। ख़ैर, अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है। भगवान् की दया होगी, तो अवश्य अच्छी हो जाओगी।" चुन्नी बोली—"ना भैया, अब तो मैं चिता पर अच्छी होऊँगी।" गोकुल-प्रसाद चुन्नी के पैताने की ओर खड़े थे। उन्होंने कहा—"यह क्या वाहियात बकती हो?" श्यामनाथ भी बोल उठा—"ऐसी बातें मत करो जीजी, तुम निश्चय अच्छी हो जाओगी।" श्यामनाथ कुछ देर बैठकर और चुन्नी को सांत्वना देकर उठा। चुन्नी बोली—"भैया, जब तक मेरी साँस चल रही है, तब तक आते रहना।"

श्यामनाथ बोला—"आता रहूँगा जीजी, सुबह-शाम दोनो समय आऊँगा।"

चुन्नी के कमरे से बाहर आकर श्यामनाथ ने गोकुल से पूछा—"कानपुर चिट्ठी लिख दी?"

"हाँ, लिख दी।" गोकुल ने उत्तर दिया।

"तो शायद दो-तीन दिन में सब आ जायँ।"

"हाँ, आशा तो ऐसी ही है।"

"डॉक्टर-वैद्य क्या कहते हैं? कुछ आशा है?"

"डॉक्टर तो बिलकुल निराश हैं। हाँ, वैद्यों ने अभी आशा नहीं छोड़ी है।"

"देखो, ईश्वर मालिक है। दशा तो अच्छी नहीं है।"

"हाँ, दशा तो ख़राब ही है।" गोकुलप्रसाद एक दीर्घ निःश्वास छोड़कर बोले।

"अच्छी बात है, तो मैं शाम को फिर आऊँगा।" यह कहकर श्यामनाथ बिदा हुआ।

कानपुर चिट्ठी लिखने के तीसरे दिन घासीराम सुलोचना को लेकर लखनऊ आ गए। बाबू व्रजमोहनलाल का एक मकान ख़ाली था, उसी में अस्थायी रूप से ठहर गए।

CC-0. Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चुन्नी की दशा देखकर सुलोचना बहुत अधीर हो गई। चुन्नी ने माता से कहा—"अम्मा, मेरा कहा-सुना क्षमा करना, अब मैं जाती हूँ।"

सुलोचना अत्यंत व्याकुल हो बोली—"मुझे इस बुढ़ापे में छोड़कर कहाँ जायगी? हाय, तू क्या से क्या हो गई!"

चुन्नी बोली—"क्या करूँ अम्मा, जब यहाँ कोई मेरी बात पूछनेवाला नहीं, तब रहकर क्या करूँ। बड़े भैया भी नहीं आए?"

"उसे छुट्टी नहीं मिली। शाम को आवेगा।"

"बड़े भैया को और देख लूँ—बस!"

सुलोचना फूट-फूटकर रोने लगी। घासीराम सुलोचना से बोले—"तू न-जाने कैसी है। रोगी के सामने बैठकर रोती है। उसे धीरज बँधाना चाहिए, न कि स्वयं उल्टे में-में करने बैठ गई।"

"फिर करूँ क्या, मेरा तो कलेजा नुचा आता है। मेरी कुंदन-सी लड़की की क्या दशा हो गई।"

"जो भगवान् की इच्छा होगी, सो होगा—में-में करने से क्या फ़ायदा।"

शाम को शंभूनाथ भी आ गए। चुन्नी की दशा देखकर उन्हें भी बड़ा शोक हुआ। उन्होंने गोकुलप्रसाद को अलग ले जाकर कहा—"गोकुलप्रसाद, श्यामा की यह दशा क्यों हुई, जानते हो?"

गोकुलप्रसाद बोला—"बीमारी के कारण हो गई।"

"बीमारी के कारण हो गई या तुम्हारी बदचलनी और उसके प्रति तुम्हारे विश्वासघात के कारण हुई?"

गोकुलप्रसाद का हृदय धड़कने लगा। वह घबराकर बोला—"मेरी बदचलनी कैसी?"

"तुम्हारी बदचलनी! अगर संक्षेप में पूछना चाहते हो, तो मैं इतना ही कहता हूँ कि तुम स्वयं तो बदचलन थे ही; तुमने श्यामनाथ को भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बिगाड़ दिया। यदि ब्योरेवार सुनना चाहते हो, तो ब्योरेवार बताऊँ।"

गोकुलप्रसाद शंभूनाथ की बात सुनकर थर्रा गया। उसने लड़खड़ाती हुई जिह्वा से कहा—"यह आप कैसे कहते हैं?"

"यह मैं ऐसे कहता हूँ कि मैं तुम्हारी सब करतूतें जानता हूँ।"

गोकुलप्रसाद ने निरुत्तर होकर सिर झुका लिया। उसके मुँह से बात नहीं निकली। शंभूनाथ बोले—"यदि श्यामा मर गई—और मर जायगी, बचने की कोई आशा नहीं है—तो उसकी हत्या का भार तुम्हारे सिर पर होगा। और, साथ ही इतना याद रखना कि श्यामा-जैसी लक्ष्मी पत्नी तुम्हें इस जन्म में नहीं मिलेगी। रत्न पाकर तुमने उसकी क़द्र नहीं की। काँच के टुकड़ों के लिये तुम उसका अनादर करते रहे—उसे क्लेश पहुँचाते रहे। तुम्हें इसका प्रायश्चित्त करना पड़ेगा।"

गोकुलप्रसाद के नेत्रों से अश्रुपात होने लगा। वह बोले—"भाई साहब, आप बहुत ठीक कहते हैं। मैं भी कई दिन से यही महसूस कर रहा हूँ। इसमें सारा अपराध मेरा ही है। परंतु अब क्या हो सकता है। यदि मेरे प्राणों से भी इसका प्रायश्चित्त हो सके, तो मैं करने के लिये तैयार हूँ।"

"प्रायश्चित्त तुम्हें करना पड़ेगा, परंतु श्यामा अब तुम्हें नहीं मिलेगी। मैंने तुम्हें शिक्षित और सच्चरित्र समझकर तुमसे अपनी श्यामा का विवाह किया था। मुझे क्या पता था कि तुम्हारे आचरण ऐसे हैं। परंतु ख़ैर, यदि चुन्नी का बलिदान तुम्हारी आँखें खोल दे, तो मैं उसका बलिदान सुफल समझूँगा।"

"भाई साहब, आँखें तो मेरी उसी दिन खुल चुकी थीं, जिस दिन मुझे आपकी भगिनी के असली रोग का पता चला था; परंतु क्या करता—आँखें इतनी देर से खुलीं, जब बात अपने वश के बाहर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"खैर, श्यामा का जीवन तुम्हारे वश के बाहर की बात हो गई है, परंतु अभी तुम्हारा भविष्य तुम्हारे वश के बाहर की बात नहीं हुई है। अब भी समय है। यदि तुम ठीक रास्ते पर आ जाओ, तो तुम्हारा भविष्य उज्ज्वल हो सकता है। तुमने तो नीचता की परा काष्ठा कर दी। स्वयं तो रसातल में गिरे ही थे, अपने साथ श्यामनाथ को भी ले डूबे। तुम्हें इतनी शर्म भी न आई कि वह तुम्हारा छोटा साला है। राम! राम!"

गोकुलप्रसाद लज्जा के मारे पसीने-पसीने हो गया, वह हाथ जोड़कर बोला—"भाई साहब, अब मुझे अधिक काँटों में मत घसीटिए। मैं तो स्वयं पश्चात्ताप की अग्नि में भस्म हो रहा हूँ। आपकी यह बात बिलकुल ठीक है। श्यामा-सी पत्नी इस जीवन में मुझे नहीं मिलेगी। ऐसी पत्नी पाकर भी मैंने उसकी क़द्र नहीं की। मुझसे नीच इस संसार में और कौन है?"

गोकुल की बात सुनकर और उसका करुणा-पूर्ण रूप देखकर शंभूनाथ दयार्द्र हो उठे। वह नम्रता-पूर्वक बोले—"खैर, वह तो जो होना था, हो चुका; अब आगे के लिये सचेत रहना।"

"अब तो भगवान् ही ने सचेत कर दिया।"

उसी दिन श्यामनाथ भी ऐसे समय पर आए, जब चुन्नी के पास घासीराम, सुलोचना तथा शंभूनाथ मौजूद थे। सुलोचना श्यामनाथ को देखते ही तुरंत पहचान गई। परंतु श्यामनाथ सुलोचना को नहीं पहचान सका। यद्यपि अनुमान से वह यह समझ रहा था कि सुलोचना उसकी माता है। सुलोचना स्थिर दृष्टि से श्यामनाथ को कई मिनट तक देखती रही। घासीराम श्यामनाथ से बोले—"यह तुम्हारी मा है। पहचाना नहीं क्या?"

श्यामनाथ माता को प्रणाम करके कुछ शर्माते हुए बोला—"अच्छी तरह नहीं पहचाना था।"

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलोचना बोली—"कैसे पहचानता, इधर कई बरसों से देखा कहाँ। खैर, बेटा, तू सुखी रहे, फले-फूले, मेरे लिये यही बहुत है। पहचान, चाहे न पहचान।"

इस अवसर पर इससे अधिक और कोई बातचीत न हुई। सबका ध्यान चुन्नी की ओर था।

इसके पश्चात् चुन्नी चार दिन जीवित रही। शंभूनाथ नित्य शाम को आ जाते थे, और सवेरे कानपुर चले जाते थे। चौथे दिन शाम से चुन्नी की दशा बिगड़ने लगी। और, रात के ग्यारह बजते-बजते उसका देहांत हो गया। सुलोचना बहुत रोई। उसके बैन सुनकर सुननेवालों का हृदय फटता था। "हाय मेरी श्यामा, तू जैसी पैदा हुई थी, वैसी ही चली गई। हाय बेटी! तुझे न-जाने किसकी नज़र खा गई। हाय मेरी चुन्नी! तूने संसार का कोई सुख न देखा। जब से पैदा हुई, दुख ही भोगा। जब खाने-खेलने के दिन आए, तो चली गई। इससे तो मैं मर जाती, तो अच्छा था, यह दिन तो न देखती। हाय मेरी बच्ची, तूने मेरा बुढ़ापा बिगाड़ दिया।"

इसी प्रकार सुलोचना सुननेवालों का कलेजा फाड़ रही थी। बासीराम भी सुलोचना के बैन सुनकर रो पड़े। शंभूनाथ चुपचाप गंभीर बैठे थे, परंतु आँखों से आँसू बह रहे थे। श्यामनाथ भी "हाय जीजी" कहकर रो रहा था। और गोकुलप्रसाद! उसकी आँखों में आँसू नहीं थे। उसका मुख भयानक हो रहा था। सिर के बाल बिखरे हुए, पागलों की तरह सबका मुख ताक रहा था।

दूसरे दिन प्रातःकाल दाह-संस्कार हुआ। शंभूनाथ के अतिरिक्त और सब वहाँ मौजूद थे। शंभूनाथ को सवेरे ही कानपुर चला जाना पड़ा था।

दाह-संस्कार हो जाने के तीसरे दिवस श्यामनाथ गोकुलप्रसाद से पुनः मिला। गोकुलप्रसाद विक्षिप्त-सा बैठा था। श्यामनाथ ने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुल श्यामनाथ की ओर स्थिर दृष्टि से देखता हुआ बोला—"हाल क्या है, जो पाप किए हैं, उनका फल भोग रहा हूँ।"

श्यामनाथ बोला—"जो होना था, हो चुका, अब सब्र करो।"

"सब्र! सब्र तो करूँगा ही, और क्या कर सकता हूँ। श्यामनाथ मेरी यह बात याद रक्खो—बुरे कामों का फल मिलता अवश्य है, चाहे जल्दी मिले, चाहे देर में। मैं स्वयं भ्रष्ट था, तुम्हें भी मैंने भ्रष्ट होने दिया, यह मेरा बहुत बड़ा पाप था। तुम्हारी भगिनी-जैसी सुंदर पत्नी पाकर भी मैं इधर-उधर मुँह काला करता फिरा। वह देवी थी, इस अपमान को सहकर कैसे जीवित रह सकती थी। उसने अपने प्राण देकर मेरी आँखें खोल दीं। और कोई उपाय न था, यदि उसकी मृत्यु न होती, तो मैं अब भी वैसा ही रहता। आह! उसकी याद इस जीवन में भूल सकूँगा, इसमें संदेह है। जिस समय उसकी बातें याद आती हैं, तो मेरा हृदय विदीर्ण होने लगता है।"

इतना कहते-कहते गोकुलप्रसाद बच्चों की भाँति रोने लगा रोते-रोते बोला—"श्यामनाथ, उसकी जिन बातों से उस समय मैं चिढ़ता था, वे ही बातें अब मुझे याद आ रही हैं। आह! यदि मैं उसकी बातों पर ध्यान देता, तो—परंतु ध्यान कैसे देता? वह शैतान विश्वनाथ जो मेरे पीछे लगा हुआ था। उसी के कारण मेरा सर्वनाश हुआ। श्यामनाथ, मेरी दशा देखो, और सबक़ लो। ख़बरदार, किसी ऐसे आदमी की संगत में मत बैठो, जो तुम्हारी रुचि बुरे कामों की ओर ले जाय। पत्नी घर की लक्ष्मी होती है। उसे क्लेश पहुँचाकर कोई सुखी नहीं हो सकता।"

श्यामनाथ बोला—"ठीक कहते हो। मैंने भी यह बात म[illegible] की है, और इसीलिये मैंने शाम को घर से निकलना तक छो[illegible] है कि न बाहर जाऊँगा, न इन बातों में पड़ने का मौक़ा मिले

"[illegible] अच्छा करते हो। मैंने भी यह बात महसूस कर

CC-0. In Public Domain. Funding by MoE-IKS

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और तुम्हारी बहन के जीवन में ही महसूस कर ली थी, परंतु उस समय, जब तीर हाथ से निकल चुका था—जब तुम्हारी बहन की मृत्यु का संदेश मिल चुका था।"

इसी प्रकार बड़ी देर तक श्यामनाथ तथा गोकुल में वार्तालाप होता रहा। इसके पश्चात् श्यामनाथ बिदा हुआ।

तेरहवीं संस्कार हो जाने के पश्चात् सुबोचना तथा घासीराम कानपुर चले गए। जिस दिन ये लोग कानपुर के लिये चले, उस दिन के एक दिन पहले शंभूनाथ राधाकृष्ण से मिले। इसके पहले केवल एक बार थोड़ी देर के लिये भेंट हुई थी। राधाकृष्ण से शंभूनाथ ने कहा—"कल प्रातःकाल पिता तथा माताजी को कानपुर लिए जा रहा हूँ।"

राधाकृष्ण बोले—"हाँ, अब तेरहवीं तो हो ही गई। कैसी शोक-जनक मृत्यु हुई है।"

"हाँ, भइ, ईश्वर को यही मंज़ूर था। क्या किया जाय? परंतु इसमें भी कुछ अच्छाई थी?"

"क्या अच्छाई थी?"

"अच्छाई यह थी कि गोकुलप्रसाद सुधर गया। उसे यह ऐसा अच्छा सबक़ मिला है कि जन्म-भर याद रहेगा।"

"अरे, ऐसे लोगों का क्या विश्वास? साल-छ महीने बाद जहाँ भूल जायँगे, फिर जैसे-के-तैसे हो जायँगे।"

"नहीं, यह बात नहीं है। उसने हृदय से उसकी मृत्यु के दुःख को अनुभव किया है। इसमें संदेह नहीं कि गोकुलप्रसाद श्यामा से [illegible] रता था, परंतु कुसंगति के कारण वह उस प्रेम को निबाह नहीं वास्तव में वह इन बातों को एक खेल और मनोरंजन समझता रहा। [illegible]प्न में भी यह विश्वास नहीं था कि इस खेल का यह परि-[illegible]गा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुल श्यामनाथ की ओर स्थिर दृष्टि से देखता हुआ बोला—"हाल क्या है, जो पाप किए हैं, उनका फल भोग रहा हूँ।"

श्यामनाथ बोला—"जो होना था, हो चुका, अब सब्र करो।"

"सब्र! सब्र तो करूँगा ही, और क्या कर सकता हूँ। श्यामनाथ मेरी यह बात याद रक्खो—बुरे कामों का फल मिलता अवश्य है, चाहे जल्दी मिले, चाहे देर में। मैं स्वयं भ्रष्ट था, तुम्हें भी मैंने भ्रष्ट होने दिया, यह मेरा बहुत बड़ा पाप था। तुम्हारी भगिनी-जैसी सुंदर पत्नी पाकर भी मैं इधर-उधर मुँह काला करता फिरा। वह देवी थी, इस अपमान को सहकर कैसे जीवित रह सकती थी। उसने अपने प्राण देकर मेरी आँखें खोल दीं। और कोई उपाय न था, यदि उसकी मृत्यु न होती, तो मैं अब भी वैसा ही रहता। आह! उसकी याद इस जीवन में भूल सकूँगा, इसमें संदेह है। जिस समय उसकी बातें याद आती हैं, तो मेरा हृदय विदीर्ण होने लगता है।"

इतना कहते-कहते गोकुलप्रसाद बच्चों की भाँति रोने लगा रोते-रोते बोला—"श्यामनाथ, उसकी जिन बातों से उस समय मैं चिढ़ता था, वे ही बातें अब मुझे याद आ रही हैं। आह! यदि मैं उसकी बातों पर ध्यान देता, तो—परंतु ध्यान कैसे देता? वह शैतान विश्वनाथ जो मेरे पीछे लगा हुआ था। उसी के कारण मेरा सर्वनाश हुआ। श्यामनाथ, मेरी दशा देखो, और सबक़ लो। ख़बरदार, किसी ऐसे आदमी की संगत में मत बैठो, जो तुम्हारी रुचि बुरे कामों की ओर ले जाय। पत्नी घर की लक्ष्मी होती है। उसे क्लेश पहुँचाकर कोई सुखी नहीं हो सकता।"

श्यामनाथ बोला—"ठीक कहते हो। मैंने भी यह बात म[illegible] की है, और इसीलिये मैंने शाम को घर से निकलना तक छो[illegible] है कि न बाहर जाऊँगा, न इन बातों में पड़ने का मौक़ा मिले[illegible]

—"[illegible] अच्छा करते हो। मैंने भी यह बात महसूस कर[illegible]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और तुम्हारी बहन के जीवन में ही महसूस कर ली थी, परंतु उस समय, जब तीर हाथ से निकल चुका था—जब तुम्हारी बहन की मृत्यु का संदेश मिल चुका था।"

इसी प्रकार बड़ी देर तक श्यामनाथ तथा गोकुल में वार्तालाप होता रहा। इसके पश्चात् श्यामनाथ विदा हुआ।

तेरहवीं संस्कार हो जाने के पश्चात् सुलोचना तथा घासीराम कानपुर चले गए। जिस दिन ये लोग कानपुर के लिये चले, उस दिन के एक दिन पहले शंभूनाथ राधाकृष्ण से मिले। इसके पहले केवल एक बार थोड़ी देर के लिये भेंट हुई थी। राधाकृष्ण से शंभूनाथ ने कहा—"कल प्रातःकाल पिता तथा माताजी को कानपुर लिए जा रहा हूँ।"

राधाकृष्ण बोले—"हाँ, अब तेरहवीं तो हो ही गई। कैसी शोक-जनक मृत्यु हुई है।"

"हाँ, भइ, ईश्वर को यही मंज़ूर था। क्या किया जाय? परंतु इसमें भी कुछ अच्छाई थी?"

"क्या अच्छाई थी?"

"अच्छाई यह थी कि गोकुलप्रसाद सुधर गया। उसे यह ऐसा अच्छा सबक़ मिला है कि जन्म-भर याद रहेगा।"

"अरे, ऐसे लोगों का क्या विश्वास? साल-छ महीने बाद जहाँ भूल जाँयँगे, फिर जैसे-के-तैसे हो जायँगे।"

"नहीं, यह बात नहीं है। उसने हृदय से उसकी मृत्यु के दुःख को अनुभव किया है। इसमें संदेह नहीं कि गोकुलप्रसाद श्यामा से [illegible] रता था, परंतु कुसंगति के कारण वह उस प्रेम को निबाह नहीं [illegible] यार्थवह इन बातों को एक खेल और मनोरंजन समझता रहा। [illegible]प्न में भी यह विश्वास नहीं था कि इस खेल का यह परि-[illegible]णाम होगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुल श्यामनाथ की ओर स्थिर दृष्टि से देखता हुआ बोला—"हाल क्या है, जो पाप किए हैं, उनका फल भोग रहा हूँ।"

श्यामनाथ बोला—"जो होना था, हो चुका, अब सब्र करो।"

"सब्र ! सब्र तो करूँगा ही, और क्या कर सकता हूँ। श्यामनाथ मेरी यह बात याद रक्खो—बुरे कामों का फल मिलता अवश्य है, चाहे जल्दी मिले, चाहे देर में। मैं स्वयं भ्रष्ट था, तुम्हें भी मैंने भ्रष्ट होने दिया, यह मेरा बहुत बड़ा पाप था। तुम्हारी भगिनी-जैसी सुंदर पत्नी पाकर भी मैं इधर-उधर मुँह काला करता फिरा। वह देवी थी, इस अपमान को सहकर कैसे जीवित रह सकती थी। उसने अपने प्राण देकर मेरी आँखें खोल दीं। और कोई उपाय न था, यदि उसकी मृत्यु न होती, तो मैं अब भी वैसा ही रहता। आह ! उसकी याद इस जीवन में भूल सकूँगा, इसमें संदेह है। जिस समय उसकी बातें याद आती हैं, तो मेरा हृदय विदीर्ण होने लगता है।"

इतना कहते-कहते गोकुलप्रसाद बच्चों की भाँति रोने लगा रोते-रोते बोला—"श्यामनाथ, उसकी जिन बातों से उस समय मैं चिढ़ता था, वे ही बातें अब मुझे याद आ रही हैं। आह ! यदि मैं उसकी बातों पर ध्यान देता, तो—परंतु ध्यान कैसे देता ? वह शैतान विश्वनाथ जो मेरे पीछे लगा हुआ था। उसी के कारण मेरा सर्वनाश हुआ। श्यामनाथ, मेरी दशा देखो, और सबक़ लो। ख़बरदार, किसी ऐसे आदमी की संगत में मत बैठो, जो तुम्हारी रुचि बुरे कामों की ओर ले जाय। पत्नी घर की लक्ष्मी होती है। उसे क्लेश पहुँचाकर कोई सुखी नहीं हो सकता।"

श्यामनाथ बोला—"ठीक कहते हो। मैंने भी यह बात म[illegible] की है, और इसीलिये मैंने शाम को घर से निकलना तक छो[illegible] है कि न बाहर जाऊँगा, न इन बातों में पड़ने का मौक़ा मिले [illegible]

—"[illegible] अच्छा करते हो। मैंने भी यह बात महसूस कर[illegible]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और तुम्हारी बहन के जीवन में ही महसूस कर ली थी, परंतु उस समय, जब तीर हाथ से निकल चुका था—जब तुम्हारी बहन की मृत्यु का संदेश मिल चुका था।"

इसी प्रकार बड़ी देर तक श्यामनाथ तथा गोकुल में वार्तालाप होता रहा। इसके पश्चात् श्यामनाथ विदा हुआ।

तेरहवीं संस्कार हो जाने के पश्चात् सुलोचना तथा घासीराम कानपुर चले गए। जिस दिन ये लोग कानपुर के लिये चले, उस दिन के एक दिन पहले शंभूनाथ राधाकृष्ण से मिले। इसके पहले केवल एक बार थोड़ी देर के लिये भेंट हुई थी। राधाकृष्ण से शंभूनाथ ने कहा—"कल प्रातःकाल पिता तथा माताजी को कानपुर लिए जा रहा हूँ।"

राधाकृष्ण बोले—"हाँ, अब तेरहवीं तो हो ही गई। कैसी शोक-जनक मृत्यु हुई है।"

"हाँ, भइ, ईश्वर को यही मंज़ूर था। क्या किया जाय? परंतु इसमें भी कुछ अच्छाई थी?"

"क्या अच्छाई थी?"

"अच्छाई यह थी कि गोकुलप्रसाद सुधर गया। उसे यह ऐसा अच्छा सबक़ मिला है कि जन्म-भर याद रहेगा।"

"अरे, ऐसे लोगों का क्या विश्वास? साल-छ महीने बाद जहाँ भूल जाँयगे, फिर जैसे-के-तैसे हो जायँगे।"

"नहीं, यह बात नहीं है। उसने हृदय से उसकी मृत्यु के दुःख को अनुभव किया है। इसमें संदेह नहीं कि गोकुलप्रसाद श्यामा से प्रेम करता था, परंतु कुसंगति के कारण वह उस प्रेम को निबाह नहीं सका। वास्तव इन बातों को एक खेल और मनोरंजन समझता रहा। स्वप्न में भी यह विश्वास नहीं था कि इस खेल का यह परि-णाम होगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुल श्यामनाथ की ओर स्थिर दृष्टि से देखता हुआ बोला—"हाल क्या है, जो पाप किए हैं, उनका फल भोग रहा हूँ।"

श्यामनाथ बोला—"जो होना था, हो चुका, अब सब्र करो।"

"सब्र! सब्र तो करूँगा ही, और क्या कर सकता हूँ। श्यामनाथ, मेरी यह बात याद रक्खो—बुरे कामों का फल मिलता अवश्य है, चाहे जल्दी मिले, चाहे देर में। मैं स्वयं भ्रष्ट था, तुम्हें भी मैंने भ्रष्ट होने दिया, यह मेरा बहुत बड़ा पाप था। तुम्हारी भगिनी-जैसी सुंदर पत्नी पाकर भी मैं इधर-उधर मुँह काला करता फिरा। वह देवी थी, इस अपमान को सहकर कैसे जीवित रह सकती थी। उसने अपने प्राण देकर मेरी आँखें खोल दीं। और कोई उपाय न था, यदि उसकी मृत्यु न होती, तो मैं अब भी वैसा ही रहता। आह! उसकी याद इस जीवन में भूल सकूँगा, इसमें संदेह है। जिस समय उसकी बातें याद आती हैं, तो मेरा हृदय विदीर्ण होने लगता है।"

इतना कहते-कहते गोकुलप्रसाद बच्चों की भाँति रोने लगा। रोते-रोते बोला—"श्यामनाथ, उसकी जिन बातों से उस समय मैं चिढ़ता था, वे ही बातें अब मुझे याद आ रही हैं। आह! यदि मैं उसकी बातों पर ध्यान देता, तो—परंतु ध्यान कैसे देता? वह शैतान विश्वनाथ जो मेरे पीछे लगा हुआ था। उसी के कारण मेरा सर्वनाश हुआ। श्यामनाथ, मेरी दशा देखो, और सबक़ लो। ख़बरदार, किसी ऐसे आदमी की संगत में मत बैठो, जो तुम्हारी रुचि बुरे कामों की ओर ले जाय। पत्नी घर की लक्ष्मी होती है। उसे क्लेश पहुँचाकर कोई सुखी नहीं हो सकता।"

श्यामनाथ बोला—"ठीक कहते हो। मैंने भी यह बात म[illegible] की है, और इसीलिये मैंने शाम को घर से निकलना तक छो[illegible] है कि न बाहर जाऊँगा, न इन बातों में पड़ने का मौक़ा मिले

—[illegible] कहते हो। मैंने भी यह बात महसूस कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और तुम्हारी बहन के जीवन में ही महसूस कर ली थी, परंतु उस समय, जब तीर हाथ से निकल चुका था—जब तुम्हारी बहन की मृत्यु का संदेश मिल चुका था।"

इसी प्रकार बड़ी देर तक श्यामनाथ तथा गोकुल में वार्तालाप होता रहा। इसके पश्चात् श्यामनाथ विदा हुआ।

तेरहवीं संस्कार हो जाने के पश्चात् सुलोचना तथा घासीराम कानपुर चले गए। जिस दिन ये लोग कानपुर के लिये चले, उस दिन के एक दिन पहले शंभूनाथ राधाकृष्ण से मिले। इसके पहले केवल एक बार थोड़ी देर के लिये भेंट हुई थी। राधाकृष्ण से शंभूनाथ ने कहा—"कल प्रातःकाल पिता तथा माताजी को कानपुर लिए जा रहा हूँ।"

राधाकृष्ण बोले—"हाँ, अब तेरहवीं तो हो ही गई। कैसी शोक-जनक मृत्यु हुई है।"

"हाँ, भइ, ईश्वर को यही मंज़ूर था। क्या किया जाय? परंतु इसमें भी कुछ अच्छाई थी?"

"क्या अच्छाई थी?"

"अच्छाई यह थी कि गोकुलप्रसाद सुधर गया। उसे यह ऐसा अच्छा सबक़ मिला है कि जन्म-भर याद रहेगा।"

"अरे, ऐसे लोगों का क्या विश्वास? साल-छ महीने बाद जहाँ भूल जाँयँगे, फिर जैसे-के-तैसे हो जायँगे।"

"नहीं, यह बात नहीं है। उसने हृदय से उसकी मृत्यु के दुःख को अनुभव किया है। इसमें संदेह नहीं कि गोकुलप्रसाद श्यामा से [illegible] रता था, परंतु कुसंगति के कारण वह उस प्रेम को निबाह नहीं [illegible] वास्तव इन बातों को एक खेल और मनोरंजन समझता रहा। [illegible]प्न में भी यह विश्वास नहीं था कि इस खेल का यह परि-[illegible]णाम होगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुल श्यामनाथ की ओर स्थिर दृष्टि से देखता हुआ बोला—"हाल क्या है, जो पाप किए हैं, उनका फल भोग रहा हूँ।"

श्यामनाथ बोला—"जो होना था, हो चुका, अब सब्र करो।"

"सब्र ! सब्र तो करूँगा ही, और क्या कर सकता हूँ। श्यामनाथ मेरी यह बात याद रक्खो—बुरे कामों का फल मिलता अवश्य है, चाहे जल्दी मिले, चाहे देर में। मैं स्वयं भ्रष्ट था, तुम्हें भी मैंने भ्रष्ट होने दिया, यह मेरा बहुत बड़ा पाप था। तुम्हारी भगिनी-जैसी सुंदर पत्नी पाकर भी मैं इधर-उधर मुँह काला करता फिरा। वह देवी थी, इस अपमान को सहकर कैसे जीवित रह सकती थी। उसने अपने प्राण देकर मेरी आँखें खोल दीं। और कोई उपाय न था, यदि उसकी मृत्यु न होती, तो मैं अब भी वैसा ही रहता। आह ! उसकी याद इस जीवन में भूल सकूँगा, इसमें संदेह है। जिस समय उसकी बातें याद आती हैं, तो मेरा हृदय विदीर्ण होने लगता है।"

इतना कहते-कहते गोकुलप्रसाद बच्चों की भाँति रोने लगा रोते-रोते बोला—"श्यामनाथ, उसकी जिन बातों से उस समय मैं चिढ़ता था, वे ही बातें अब मुझे याद आ रही हैं। आह ! यदि मैं उसकी बातों पर ध्यान देता, तो—परंतु ध्यान कैसे देता ? वह शैतान विश्वनाथ जो मेरे पीछे लगा हुआ था। उसी के कारण मेरा सर्वनाश हुआ। श्यामनाथ, मेरी दशा देखो, और सबक़ लो। ख़बरदार, किसी ऐसे आदमी की संगत में मत बैठो, जो तुम्हारी रुचि बुरे कामों की ओर ले जाय। पत्नी घर की लक्ष्मी होती है। उसे क्लेश पहुँचाकर कोई सुखी नहीं हो सकता।"

श्यामनाथ बोला—"ठीक कहते हो। मैंने भी यह बात म[illegible] की है, और इसीलिये मैंने शाम को घर से निकलना तक छो[illegible] है कि न बाहर जाऊँगा, न इन बातों में पड़ने का मौक़ा मिले[illegible]

—"[illegible] अच्छा करते हो। मैंने भी यह बात महसूस कर[illegible]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और तुम्हारी बहन के जीवन में ही महसूस कर ली थी, परंतु उस समय, जब तीर हाथ से निकल चुका था—जब तुम्हारी बहन की मृत्यु का संदेश मिल चुका था।"

इसी प्रकार बड़ी देर तक श्यामनाथ तथा गोकुल में वार्तालाप होता रहा। इसके पश्चात् श्यामनाथ विदा हुआ।

तेरहवीं संस्कार हो जाने के पश्चात् सुलोचना तथा बासीराम कानपुर चले गए। जिस दिन ये लोग कानपुर के लिये चले, उस दिन के एक दिन पहले शंभूनाथ राधाकृष्ण से मिले। इसके पहले केवल एक बार थोड़ी देर के लिये भेंट हुई थी। राधाकृष्ण से शंभूनाथ ने कहा—"कल प्रातःकाल पिता तथा माताजी को कानपुर लिए जा रहा हूँ।"

राधाकृष्ण बोले—"हाँ, अब तेरहवीं तो हो ही गई। कैसी शोक-जनक मृत्यु हुई है।"

"हाँ, भइ, ईश्वर को यही मंज़ूर था। क्या किया जाय? परंतु इसमें भी कुछ अच्छाई थी?"

"क्या अच्छाई थी?"

"अच्छाई यह थी कि गोकुलप्रसाद सुधर गया। उसे यह ऐसा अच्छा सबक़ मिला है कि जन्म-भर याद रहेगा।"

"अरे, ऐसे लोगों का क्या विश्वास? साल-छ महीने बाद जहाँ भूल जायँगे, फिर जैसे-के-तैसे हो जायँगे।"

"नहीं, यह बात नहीं है। उसने हृदय से उसकी मृत्यु के दुःख को अनुभव किया है। इसमें संदेह नहीं कि गोकुलप्रसाद श्यामा से [illegible] करता था, परंतु कुसंगति के कारण वह उस प्रेम को निबाह नहीं [illegible] वास्तव में इन बातों को एक खेल और मनोरंजन समझता रहा। [illegible]प्न में भी यह विश्वास नहीं था कि इस खेल का यह परि-[illegible]णाम होगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोकुल श्यामनाथ की ओर स्थिर दृष्टि से देखता हुआ बोला—"हाल क्या है, जो पाप किए हैं, उनका फल भोग रहा हूँ।"

श्यामनाथ बोला—"जो होना था, हो चुका, अब सब्र करो।"

"सब्र ! सब्र तो करूँगा ही, और क्या कर सकता हूँ। श्यामनाथ मेरी यह बात याद रक्खो—बुरे कामों का फल मिलता अवश्य है, चाहे जल्दी मिले, चाहे देर में। मैं स्वयं भ्रष्ट था, तुम्हें भी मैंने भ्रष्ट होने दिया, यह मेरा बहुत बड़ा पाप था। तुम्हारी भगिनी-जैसी सुंदर पत्नी पाकर भी मैं इधर-उधर मुँह काला करता फिरा। वह देवी थी, इस अपमान को सहकर कैसे जीवित रह सकती थी। उसने अपने प्राण देकर मेरी आँखें खोल दीं। और कोई उपाय न था, यदि उसकी मृत्यु न होती, तो मैं अब भी वैसा ही रहता। आह ! उसकी याद इस जीवन में भूल सकूँगा, इसमें संदेह है। जिस समय उसकी बातें याद आती हैं, तो मेरा हृदय विदीर्ण होने लगता है।"

इतना कहते-कहते गोकुलप्रसाद बच्चों की भाँति रोने लगा रोते-रोते बोला—"श्यामनाथ, उसकी जिन बातों से उस समय मैं चिढ़ता था, वे ही बातें अब मुझे याद आ रही हैं। आह ! यदि मैं उसकी बातों पर ध्यान देता, तो—परंतु ध्यान कैसे देता ? वह शैतान विश्वनाथ जो मेरे पीछे लगा हुआ था। उसी के कारण मेरा सर्वनाश हुआ। श्यामनाथ, मेरी दशा देखो, और सबक़ लो। ख़बरदार, किसी ऐसे आदमी की संगत में मत बैठो, जो तुम्हारी रुचि बुरे कामों की ओर ले जाय। पत्नी घर की लक्ष्मी होती है। उसे क्लेश पहुँचाकर कोई सुखी नहीं हो सकता।"

श्यामनाथ बोला—"ठीक कहते हो। मैंने भी यह बात म[illegible] की है, और इसीलिये मैंने शाम को घर से निकलना तक छो[illegible] है कि न बाहर जाऊँगा, न इन बातों में पड़ने का मौक़ा मिले [illegible]

—"[illegible] अच्छा करते हो। मैंने भी यह बात महसूस कर [illegible]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और तुम्हारी बहन के जीवन में ही महसूस कर ली थी, परंतु उस समय, जब तीर हाथ से निकल चुका था—जब तुम्हारी बहन की मृत्यु का संदेश मिल चुका था।"

इसी प्रकार बड़ी देर तक श्यामनाथ तथा गोकुल में वार्तालाप होता रहा। इसके पश्चात् श्यामनाथ विदा हुआ।

तेरहवीं संस्कार हो जाने के पश्चात् सुबोचना तथा घासीराम कानपुर चले गए। जिस दिन ये लोग कानपुर के लिये चले, उस दिन के एक दिन पहले शंभूनाथ राधाकृष्ण से मिले। इसके पहले केवल एक बार थोड़ी देर के लिये भेंट हुई थी। राधाकृष्ण से शंभूनाथ ने कहा—"कल प्रातःकाल पिता तथा माताजी को कानपुर लिए जा रहा हूँ।"

राधाकृष्ण बोले—"हाँ, अब तेरहवीं तो हो ही गई। कैसी शोक-जनक मृत्यु हुई है।"

"हाँ, भइ, ईश्वर को यही मंज़ूर था। क्या किया जाय? परंतु इसमें भी कुछ अच्छाई थी?"

"क्या अच्छाई थी?"

"अच्छाई यह थी कि गोकुलप्रसाद सुधर गया। उसे यह ऐसा अच्छा सबक़ मिला है कि जन्म-भर याद रहेगा।"

"अरे, ऐसे लोगों का क्या विश्वास? साल-छ महीने बाद जहाँ भूल जायँगे, फिर जैसे-के-तैसे हो जायँगे।"

"नहीं, यह बात नहीं है। उसने हृदय से उसकी मृत्यु के दुःख को अनुभव किया है। इसमें संदेह नहीं कि गोकुलप्रसाद श्यामा से प्रेम करता था, परंतु कुसंगति के कारण वह उस प्रेम को निबाह नहीं सका। वास्तव में वह इन बातों को एक खेल और मनोरंजन समझता रहा। स्वप्न में भी यह विश्वास नहीं था कि इस खेल का यह परि-णाम होगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"हाँ, यदि ऐसा हो, तो तुम्हारा कथन ठीक है। इसमें सदेह नहीं कि ऐसे लोग भी होते हैं, जो इन बातों को साधारण बातें समझते हैं। उन्हें यह विचार नहीं होता कि ऐसी बातों से कभी कोई दुर्घटना भी घट सकती है। संभव है, गोकुल भी ऐसे ही आदमियों में हो। अच्छा, श्यामनाथ के क्या हाल हैं?"

"जहाँ तक मुझे मालूम है, आजकल वह बिल्कुल ठीक है। कहीं नहीं जाता।"

"बाबू व्रजमोहनलाल भी यही कहते थे। आजकल वह श्यामनाथ के आचरणों से पूर्णतया संतुष्ट हैं।"

"अब ईश्वर चाहेगा, तो वह संतुष्ट ही रहेंगे। हाँ, एक शुभ समाचार सुनाना तो भूल ही गया।"

"वह क्या?"

"बेगम की दोनो लड़कियों का विवाह हो गया।"

"उन्हीं के साथ, जिनका ज़िक्र तुमने किया था?"

"हाँ, उन्हीं के साथ।"

"चलो, अच्छा हुआ। उन बेचारियों का भी उद्धार हो गया।"

"बेगम का गुज़ारा कैसे चलेगा?"

"उन्हें वसीक़ा मिलता है। पंद्रह रुपए मासिक का वसीक़ा है। वह उनके लिये बहुत है। दूसरे, दोनो दामाद भी सहायता करते रहेंगे।"

"हाँ, इन लोगों में तो लड़की का धन खाना कुछ नहीं ऐब समझा जाता।"

"ऐब भी समझा जाता हो, तो किया क्या जाय। लड़कियाँ क़सब कराकर यदि वह गुज़र चलाती, तो वह क्या अच्छी होती? उससे तो यह कहीं अच्छा है।"

"हाँ, इसमें क्या संदेह है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

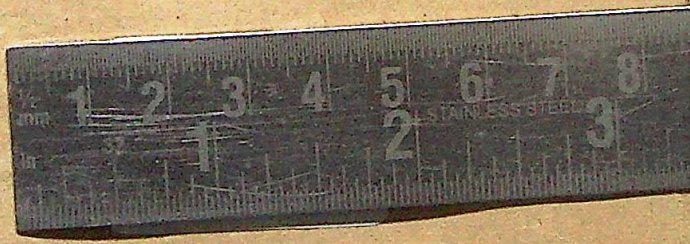

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

H83 Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

This book was taken from the library on the date last stamped. A fine of one anna will be charged for each day the book is kept overdue.

22.7.62	1.8.62		
15-12-62	[illegible]		
23-8-63	[illegible]		
[illegible]	7.3.67		
4.5-69			
17-11-69			
20.6.69			
28.12.69			

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

3104: 17-11-11
5580: 15-12-11
1121: 3-6-55
D-31: 26-7-55
5654: 23-8-55
5479: 28-9-55
5616: 8-10-55
1924: 18-1-56
4188: 25-3-56
5630: 25-5-
5682: 7-
5496:
4(

6041: 14-7-58
6158: 4-8-58
6100: 3-5-59
1244: 29-7-59
6477: 3-10-5
6472: 5
5761
6

A book borrowed must be returned within one month of its issue. It may be reissued for fifteen days, if not requisitioned by another member. Members residing outside Srinagar may return books within forty days of their issue.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE